MAED-15

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

माध्यमिक शिक्षा
Secondary Education

MAED-15

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

माध्यमिक शिक्षा
Secondary Education

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

संयोजक एवं समन्वयक

संयोजक

डॉ. दामीना चौधरी
सहआचार्य, शिक्षा
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

सदस्य

- **प्रो. सोहन वीर सिंह चौधरी**
  इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
  नई दिल्ली
- **प्रो. मंजूलिका श्रीवास्तव**
  दूरस्थ शिक्षा परिषद
  इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
- **प्रो. एस.पी. मल्होत्रा**
  कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र
- **डॉ. अनिल शुक्ला**
  लखनऊ विश्वविद्यालय,लखनऊ (उ.प्र.)
- **प्रो. डी.आर. गोयल**
  एम.एस. विश्वविद्यालय, बड़ौदा, गुजरात

संपादन तथा पाठ्यक्रम-लेखन

संपादक

प्रो. रेनू गुप्ता
हिन्दू कॉलेज ऑफ एजुकेशन, सोनीपत (हरियाणा)

पाठ लेखक

- **डॉ. निर्मला देवी**
  हिन्दू कॉलेज ऑफ एजुकेशन,
  सोनीपत (हरियाणा)
- **डॉ. उर्मिला गोयल**
  हिन्दू कॉलेज ऑफ एजुकेशन,
  सोनीपत (हरियाणा)
- **श्रीमती सुषमा त्यागी**
  जे.वी.एम. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,
  सोनीपत (हरियाणा)
- **श्रीमती मीनू सिंह चौधरी**
  गौर ब्राह्मण कॉलेज ऑफ एजुकेशन,
  रोहतक (हरियाणा)
- **डॉ. अमित कुमार अग्रवाल**
  पी.डी.एम. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,
  बहादुरगढ़ (हरियाणा)
- **डॉ.अनुराधा सिंगवानी**
  के.एम. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,
  भीवानी (हरियाणा)
- **श्रीमती नीलम मालिक**
  जे.वी.एम. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,
  सोनीपत (हरियाणा)
- **डॉ. मीनू ग्रोवर**
  जे.वी.एम. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,
  सोनीपत (हरियाणा)

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. नरेश दाधीच	**प्रो. एम.के. घड़ोलिया**	**योगेन्द्र गोयल**
कुलपति	निदेशक	प्रभारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	**संकाय विभाग**	**पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी, **वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा**

पुनः उत्पादन - जून 2010 ISBN No. : 13/978-81-8496-048-8

इस सामग्री के किसी भी अंश को व. म. खु. वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप मे 'मिमियोग्राफी' (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।व. म. खु. वि., कोटा के लिये कुलसचिव व. म. खु. वि., कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

MAED-15

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

माध्यमिक शिक्षा

अनुक्रमणिका

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
खण्ड- 1	**माध्यमिक शिक्षा प्रणाली - इसका विकास**	
1	स्वतन्त्रता से पूर्व भारत में माध्यमिक शिक्षा का विकास	8–25
2	माध्यमिक शिक्षा का विकास - 1947 से 1964	26–44
3	माध्यमिक शिक्षा का विकास - 1966 से 1985	45–62
4	माध्यमिक शिक्षा का विकास - 1886 और उसके बाद	63–86
खण्ड- 2	**माध्यमिक शिक्षा का बोधन**	
5	माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्य	87–110
6	माध्यमिक शिक्षा पद्धति में सुधार एवं इसकी गुणवत्ता	111–133
7	माध्यमिक स्तर पर स्कूल प्रणाली	134–151
8	विकसित देशों मे माध्यमिक शिक्षा	152–173
खण्ड- 3	**माध्यमिक शिक्षा प्रणाली : कुछ विचारणीय विषय**	
9	माध्यमिक शिक्षा पर व्यावसायीकरण	174–194
10	माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम	195–215
11	माध्यमिक स्तर पर मूल्यांकन	216–239
12	माध्यमिक स्तर पर अध्यापक शिक्षा	240–262
खण्ड- 4	**माध्यमिक शिक्षा का प्रबंधन**	
13	संवैधानिक दायित्व तथा माध्यमिक शिक्षा के लिए केन्द्र एवं राज्य का योगदान	263–279
14	माध्यमिक शिक्षा में निजीकरण	280–298
15	माध्यमिक शिक्षा में वित्त व्यवस्था	299–317
16	माध्यमिक शिक्षा में प्रशासन	318–337

खण्ड- 5	**माध्यमिक शिक्षा में प्रवृत्तियाँ**	
17	माध्यमिक स्तर पर शिक्षण विधियाँ	338–366
18	माध्यमिक स्तर पर विशिष्ट विद्यार्थियों के लिए शिक्षण	367–397
19	माध्यमिक स्तर पर विशिष्ट विचारणीय विषय	398–419
20	माध्यमिक शिक्षा में उदीयमान प्रवृत्तियाँ	420–440

इकाई- 1

भारत में स्वतन्त्रता से पूर्व माध्यमिक शिक्षा (Development of Secondary Education in India Before Independence)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

1.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

1.1 वैदिक युग में शिक्षा (Education in Vedic Period)

1.2 ब्राह्मण युग में शिक्षा (Education in Brahmanic period)

1.3 बौद्ध काल में शिक्षा (Education in Buddhist Period)

1.4 मुस्लिम शिक्षा (Muslim Education)

1.5 ईस्ट इंडिया कम्पनी युग की शिक्षा (Education in the Period of East India Company)

1.6 ब्रिटिश युग में शिक्षा (Education during British Period)

1.7 भारत में स्वतंत्र. से पूर्व माध्यमिक शिक्षा का विस्तार (Exapansion of Secondary Education in India before Independence)

1.8 भारत में स्वतन्त्रता से पूर्व माध्यमिक शिक्षा की समीक्षा (An Overview of Secondary Education in India Before Independence)

1.9 सारांश (Summary)

1.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप:

1. विद्यार्थी प्राचीन समय से भारतीय समाज में माध्यमिक शिक्षा की प्रकृति को समझ सकेंगें।
2. प्राचीन काल तथा माध्यमिक काल के बीच माध्यमिक शिक्षा में परिवर्तन की तुलना कर सकेंगे।
3. मध्यकालीन युग तथा ब्रिटिश काल के बीच परिवर्तनों की तुलना कर सकेंगे।
4. प्रत्येक काल में प्रचलित सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक संदर्भ में माध्यमिक शिक्षा में परिवर्तन को संबंधित कर सकेगें।
5. भारत में स्वतन्त्रता से पूर्व माध्यमिक शिक्षा के विकास की व्याख्या कर सकेगे।

6. भारत में स्वतन्त्रता से पूर्व माध्यमिक शिक्षा के दोषों का उल्लेख कर सकेंगे।
7. स्वतन्त्रता से पूर्व माध्यमिक शिक्षा पर ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली के प्रभाव की समीक्षा कर सकेंगे।
8. स्वतन्त्रता से पूर्व भारत में माध्यमिक शिक्षा के विस्तार का विश्लेषण कर सकेंगे।
9. भारत की शिक्षा प्रणाली के प्रति ईस्ट इंडिया कंपनी की अभिवृति को समझ सकेंगे।

प्राचीन भारत के इतिहास के जो भी लिखित साक्ष्य उपलब्ध है, उससे यह स्पष्ट है कि उच्च वर्ग जैसे- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य जाति के बच्चों को ही औपचारिक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था। वे जनसंख्या की दृष्टि से अल्पसंख्यक थे।

प्रारंभ से ही भारतीय समाज की सोच का बिंदू यही प्रश्न रहा है कि शिक्षा कौन प्राप्त करेगा? प्राचीन काल में धार्मिक व्यवस्था से शिक्षा की नीति निर्धारित होती थी। यद्यपि इस इकाई में शिक्षा के इतिहास से माध्यमिक शिक्षा के बारे में कुछ निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया गया है, तथापि घटनाओं के अनुक्रम पर ध्यान केन्द्रित नहीं किया गया है। इसकी अपेक्षा इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि दूसरे प्रकार की सामाजिक व्यवस्थाओं की आवश्यकतानुसार माध्यमिक शिक्षा सामाजिक व्यवस्थाओं के रूप में किस प्रकार प्रतिक्रिया करती है। यह प्रतिक्रिया माध्यमिक शिक्षा को नियंत्रित करने बाली सामाजिक व्यवस्थाओं के संदर्भ में होती है।

1.1 वैदिक युग में शिक्षा (Education in Vedic Period)

प्राचीन भारत के मनीषी इस तब से भली-भांति परिचित थे कि शिक्षा- व्यक्ति के सर्वागीण विकास, समाज की चतुर्मुखी उन्नति और सभ्यता की बहुमुखी प्रगति की आधारशिला है। यह मनुष्य की जन्मजात मूल प्रवृत्तियों को शोधित कर उसमें विवेक उत्पन्न कर अन्वेष्ण की प्रवृत्ति पैदा करती है। विद्वानों ने शिक्षा की ऐसी प्रशंसनीय प्रणाली का प्रतिपादन किया जिसमें न केवल विशाल वैदिक साहित्य को सुरक्षित रखा, वरन् ज्ञान के विविध क्षेत्रों में मौलिक विचारकों को भी जन्म दिया।

आज की पद्धति पर जो शिक्षा का स्वरूप है बह उस समय नहीं था। उस समय प्राथमिक शिक्षा के बाद उच्च शिक्षा होती थी। इस शिक्षा का अधिकार केवल ब्राहमणों, क्षत्रियों एवं वैश्यों को था। इन जातियों के बालक सामान्य रूप से क्रमश: 8, 11 और 12 वर्ष की आयु में शिक्षा-संस्था में प्रवेश करते थे। साहित्य एवं धर्मशास्त्र के अध्ययन की अवधि 10 वर्ष और एक वेद के अध्ययन की अवधि 12 वर्ष होती थी।. उस समय की शिक्षा के उद्देश्य निम्नलिखित हैं:-

- ज्ञान के अनुभव पर बल
- चरित्र का निर्माण
- नागरिक एवं सामाजिक कर्तव्य- पालन की ज्ञान व अनुभव पर बल
- चित्त वृत्तियों का निरोध
- आध्यात्मिक विकास

– भावना का समावेश
– सामाजिक कुशलता की उन्नति
– राष्ट्रीय संस्कृति का प्रसार एवं संरक्षण

वैदिक युग के शैक्षिक आदर्श किसी न किसी रुप में आज भी समाज में मिलते है। जैसे नारी की शिक्षा वैदिक युग में समाज कर्म के आधार पर विभाजित हो रही थी। इसलिए शिक्षा ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य तथा शुद्र में ढलने लगी। शिक्षा इसी आधार पर वर्गों में सीमित हो गई। शुद्र वर्ग के लिए शिक्षा के अवसर कम थे।

1.2 ब्राह्मण युग में शिक्षा (Education in Brahmanic Period)

वैदिक युग के बाद ब्राह्मण युग का सूत्रपात हुआ। यह शिक्षा वेदकालीन शिक्षा का ही परिकृत रूप है। इस युग में पुरोहितवाद बढ़ रहा था। उपनिषद, आरण्यक, ब्राह्मण आदि ग्रन्थों की रचना इस युग की देन है। इस युग की शिक्षा में कुछ दोष आ गए थे।

शिक्षा धर्म प्रधान हो गई थी। सांसारिक विकास की और कम महत्व दिया जाने लगा। इस युग में शिक्षा धर्म प्रधान थी। इस युग तक आते आते लिखने की कला का विकास हो चुका था। लिखने के साथ-साथ मौखिक कार्य पर अधिक बल दिया जाता था। लेखन कार्य भोजपत्र पर होता था। शुद्ध उच्चारण पर बल दिया जाता था। लेखन कार्य के लिए अभ्यास

कराया जाता था और पाण्डुलिपी की नकल कराई जाती थी। व्याकरण ज्योतिष में प्रयोगात्मक कार्य पर बल दिया जाता था। वेदों के अध्ययन को प्रमुखता दी जाती थी। व्याकरण, गणित, रेखागणित, ज्योतिष, अर्थशास्त्र, इतिहास, राजनीति, कृषि, सैनिक विज्ञान, न्याय-दर्शन पाठ्यक्रम के प्रमुख विषय थे। छात्रों को रस, छन्द अलंकार आदि पढ़ाये जाते थे। इसी आधार पर वेदों की संहिता की रचना की गई थी। छन्द आदि के पिंगल शास्त्र की रचना की गई थी। शंका समाधान, प्रश्नोत्तर वादविवाद आदि के माध्यम से शिक्षा दी जाती थी। शिक्षा समाप्त होने पर गुरु शिष्य को 'सत्यवाद', 'धर्मचर', 'स्वाध्यायात्मा प्रमद' का उपदेश देते थे।

इस युग की शिक्षा में दर्शन के अध्ययन पर अधिक बल दिया जाता था। इस युग में कुलीनता के विकास के कारण शुद्रों को शिक्षा का अधिकार नहीं था। इस युग मे स्त्री शिक्षा की भी अपेक्षा की गई थी। वर्ण व्यवस्था में संकीर्णता आने लगी, हस्तकला करने वालों को हीन समझा जाने लगा। अनेक विषयों के उद्भव के बाद भी इस युग में समन्वय का अभाव पाया गया। संस्कृत बोलचाल की भाषा थी परन्तु जनशिक्षा न बन सकी।

1.3 बौद्ध काल में शिक्षा (Education in Buddhist Period)

बौद्ध धर्म सामान्य जन को आध्यात्मिक मार्ग पर अग्रसर करने के लिए विकसित हुआ। इसी आध्यात्मिक ज्ञान के लिए और सामान्य जीवन व्यतीत करने के लिए बौद्ध धर्म की शिक्षाएं तथा सिद्धान्तों का विकास हुआ। आरम्भ में बौद्ध धर्म में शिक्षा का उद्देश्य धर्म प्रसार करना था। धार्मिक आयोजन मठों में किए जाते थे जिन्हें संघ कहा जाता था। शिक्षा की सुविधा उन्हीं को

थी जो बौद्ध धर्म ग्रहण करते थे। कालान्तर में सामान्य जनों को भी मठों, संघों तथा विहारों मे शिक्षा दी जाने लगी।

बौद्ध काल में शिक्षा के 2 स्तर थे:-

1. प्राथमिक शिक्षा
2. उच्च शिक्षा

मदरसों में बालकों की उच्च शिक्षा की व्यवस्था थी। ये राज्य द्वारा सहायता प्राप्त करते थे। उच्च शिक्षा की अवधि 10 से 12 वर्ष की थी। इसका पाठ्यक्रम 2 भागों में विभाजित था:-

1. धार्मिक शिक्षा- इसमें कुरान की आयतों को कण्ठस्थ करना पड़ता था और उनका सूक्ष्म आलोचनात्मक अध्ययन करना पडता था। इसके इलावा उन्हें सूफी सिद्धान्तों एवं इस्लामी इतिहास, कानून सिद्धान्तों और परम्पराओं का अध्ययन करना पडता था।
2. लौकिक शिक्षा- इसमें बालकों को अरबी, फारसी भाषाओं का साहित्य एवं व्याकरण, कृषि, गणित, भूगोल, कानून, ज्योतिष, अर्थशास्त्र, दर्शन शास्त्र, यूनानी चिकित्सा आदि का ज्ञान दिया जाता था।

इस युग में लौकिक और धार्मिक शिक्षा का समन्वय आरम हुआ इसलिए व्यावसायीकरण की प्रवृति विकसित हुई। शिक्षा में वस्तुनिष्ठता आ गई थी। शिक्षा केवल ज्ञान के लिए न होकर शिक्षा का उपयोगी होना एक आवश्यक शर्त हो गई थी। औरगंजेब ने राजकुमारों की व्यावसायिक शिक्षा पर विशेष बल दिया। इतिहास के विकास एवं लेखन कला में इस युग में बहुत ध्यान दिया गया। इतिहास लेखन परम्परा का आरंभ इसी युग में हुआ।

मदरसों में शिक्षण-विधि मौखिक थी। अध्यापक भाषण विधि का प्रयोग करते थे। कक्षा-नायकीय पद्धति का पर्याप्त प्रचलन था। धर्म, दर्शन, तर्कशास्त्र और राजनीतिशास्त्र के शिक्षण के लिए तर्क-विधि का प्रमुख स्थान था। संगीत, हस्तकला,

चित्रकला और चिकित्साशास्त्र आदि विषयों की शिक्षा में व्यावहारिक कार्य की समुचित व्यवस्था थी। बौद्ध काल में भारत अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा का केन्द्र था। सुदूर देशों से आने वाले छात्र अध्ययन समाप्त कर अपने देशों को लौटते थे और वही दया, प्रेम अहिंसा, बौद्धधर्म, विश्व बन्धुत्व और भारतीय संस्कृति का सदेश फैलाते थे। उस समय की शिक्षण-संस्थाए शिक्षण नियंत्रण से मुक्त थी और उनका संगठन जनतंत्रीय आधार पर किया गया था जिसकी आज भी आवश्यकता है।

1.4 मुस्लिम - शिक्षा (Muslim Education)

सन् 1192 में मोहम्मद गौरी ने दिल्ली के अंतिम राजपूत, राजा, पृथ्वी राज चौहान को पराजित करके भारत में मुस्लिम शासन की नींव रखी। उन्होंने यहां एक नवीन शिक्षा प्रणाली का सूत्रपात किया। इस युग में अरबी तथा फारसी की शिक्षा पर विशेष बल दिया। शिक्षा का आधार धर्म था इसलिए शिक्षा का उद्देश्य भी धर्म का प्रचार करना था। इस्लाम के सच्चे बन्दे होने के कारण सभी मुसलमान शासको ने शिक्षा के कुछ ऐसे उद्देश्य और आदर्श निर्धारित

किए जिनमें निश्चित एकरुपता थी। शिक्षा का माध्यम अरबी फारसी था परन्तु मुस्लिम काल में राज्य की भाषा फारसी थी। इस भाषा के ज्ञान को प्राप्त कर मनुष्यों को राजपद प्राप्त हो सकते थे। पाठ्यक्रम दो प्रकार का था- धार्मिक और लौकिक।

धार्मिक पाठयक्रम के अंतर्गत- वेदशास्त्र और बौद्धशास्त्र पढ़ाए जाते थे। लौकिक पाठ्यक्रम में समाज की भौतिक आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान दिया जाता था। इसमें लेखन, गणित, शास्त्रार्थ, कातना, बुनना, छपाई, कढ़ाई, रंगाई, सिलाई, वास्तुकला, मूर्तिकला, शिल्पकला संगीत पशुपालन और चिकित्सा आदि थी।

शिक्षण विधियों के अन्तर्गत पढने, लिखने और गणित के साथ कण्ठस्थ करने पर जोर दिया जाता था। इस प्रकार मौखिक प्रणाली का उपयोग किया जाता था। मानीटर प्रणाली तो पहले से विकसित हो चुकी थी इसीलिए पुरानी पद्धतियों पर ही शिक्षा दी जाती थी। रटन्त और भाषण प्रणाली का प्रयोग किया जाता था। इस युग में किसी नई प्रणाली का सूत्रपात न हुआ। इस समय में हस्तकलाओं और ललित कलाओं का विकास हुआ। इसी युग में व्यावसायीकरण की प्रवृत्ति का जन्म हुआ। शिक्षा में वस्तुनिष्ठता आ गई थी। इतिहास के विकास तथा लेखन कला का आरंभ इसी युग में हुआ। इस काल में व्यावसायिक शिक्षा में लेखन, गणना-रुपम, कृषि, वाणिज्य, कुटीर उद्योग, पशुपालन, हस्तज्ञान पशुओं की बोलियों का ज्ञान, अखिल धनुर्विद्या, इन्द्रिय सम्बन्धी क्रियाओं का वशीकरण, औषधि विज्ञान, वास्तुकला ये पाठ्यक्रम के विषय थे।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Question)

1. मध्यकालीन शिक्षा या मुस्लिम कालीन शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य क्या थे?
   What were the main objectives of Medieval period or Muslim Period?
2. इस युग में कौन सी भाषा की उत्पति हुई थी?
   Which language was originated in this period?
3. बौद्ध शिक्षा का मुख्य उद्देश्य क्या था?
   What was the main aim of Buddhist Education?
4. व्यवासायिक शिक्षा में किन विषयों का अध्ययन कराया जाता था?
   Which subjects are studied under vocational education in this period?
5. वैदिक काल की शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य क्या थे?
   What were the important aims of Education of Vedic Period?

1.5 ईस्ट इण्डिया कम्पनी युग की शिक्षा (Education in the period of east India Company)

भारत में पुर्तगाली, डच, डेन फ्रांसिसी और अंग्रेज मिशनरी बडी तेजी से धर्म का प्रसार कर रही थी इसीलिए उन्होंने धर्मप्रचार हेतु चर्च की स्थापना की और साथ-साथ शिक्षा के लिए विद्यालयों की स्थापना की। फ्रांर्सियों ने पांडिचेरी मण्डी यनाम, कालीकट और चन्द्रनगर में विद्यालयों की स्थापना की। डेनों ने तंजौर और सीरामपुर में अनेक विद्यालयों की स्थापना की।

भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का ध्यान सन् 1765 से पूर्व व्यापार विकास तथा धर्म प्रचार पर था। उस समय 1673 में प्रिंगल में म्रदास में एक माध्यमिक स्कूल खोला गया। कम्पनियों ने अपने कर्मचारियों के लिए विद्यालय खोले थे। इनमें सामान्य शिक्षा के साथ-साथ धर्म की शिक्षा भी दी जाती थी। 1781 ई में प्रथम गर्बनर जनरल वारेन हेस्टिंग्स के व्यक्तिगत प्रयासों से कलकता में 7 वर्षीय शिक्षा के लिए कलकता मदरसा की स्थापना की। इसमें दर्शन, अंकगणित, तर्कशास्त्र, नक्षत्रविद्या, मुस्लिम कानून और धार्मिक सिद्धान्तो की शिक्षा दी जाती थी। कलकता मदरसा स्थापित करने के मूल में वारेन हेस्टिंग्स का मूल उद्देश्य मुसलमानों की कृपा प्राप्त करने की भावना थी। इसके बाद करे लार्ड तथा माशमैन ने सिरामपुर में भी विद्यालय खोले। भारत में ब्रिटिश युग में शिक्षा वैयक्तिगत आधार पर विकसित थी। बंगाल में एक लाख से अधिक पाठशालाएं चल रही थी।

1813 में आज्ञापत्र के अनुसार शिक्षा का प्रबंध राज्य का कर्तव्य हो गया था इसलिए इस आज्ञापत्र में 10 हजार पौंड (उस समय के एक लाख रुपये) की व्यवस्था की गई थी। 20 वर्ष का समय अनिश्चित काल का समय था। धनराशि उचित रुप से खर्च न की गई और उस समय का विवाद था- प्राची-प्रवीची। यह विवाद और अस्पष्टता का युग था। इस विवाद का परिणाम यह हुआ कि 1813 के आज्ञापत्र पर कार्यवाही न हो सकी। 1814 में कम्पनी के संचालकों ने शिक्षा नीति सम्बन्धी स्पष्ट आदेश दे दिया। इसमें आर्थिक सहायता, सम्मान, सूचक उपाधियों का वितरण प्राचीन साहित्य का संरक्षण और हिन्दू शिक्षा प्रणाली को स्वीकार करने पर बल दिया गया। 1813- 1823 का काल वारेन हेंस्टिंग्स का युग था। इस युग में गुर्खो पिडारों, मराठो तथा पठानों से कम्पनियों की लडाइयों होती रही और शिक्षा प्रसार के लिए प्रयत्न शिथिल रहे। 1824 में भारत में कम्पनी शासकों में राजनैतिक चेतना आ चुकी थी। ब्रिटिश सरकार ने गर्वनर जनरल को एक संदेश भेजा कि वे भारतीयों की शिक्षा व्यवस्था में सुधार लाना चाहते है। इस समय में या तो प्राइमरी स्कूल खोले गए थे या फिर उच्च शिक्षा पर जोर दिया गया था जैसा कि बौद्ध समय में या मुस्लिम समय में था।

सन् 1834 में लार्ड मैकाले भारत में कंपनी का कानून सदस्य बनकर आया और लार्ड बैन्टिक ने उसे लोक शिक्षा समिति (Public Instruction Committee) का भी प्रधान बना दिया था। वह प्राच्यविद्या का विरोधी था और उसने भारतीय साहित्य और संस्कृत पर कुठाराघात किया था। इन्होंने भारतीय भाषाओं अरबी फारसी के साथ अंग्रेजी को भी शामिल किया। राजाराम मोहन राय जैसे विद्वानो ने इस शिक्षा मे रुचि दिखाई। इन्होंने उच्च शिक्षा की

व्यवस्था पर बल दिया तथा अधोगामी निस्यन्दल सिद्धान्त पर बल दिया। मैकाले ने शिक्षा में धार्मिक तटस्थता पर भी बल दिया। अंग्रेजी भारतीय राजकाज की भाषा बनाई।

लार्ड बैन्टिक ने जैसे ही मैकाले द्वारा प्रस्तुत शिक्षा नीत को स्वीकार किया, भारत में अंग्रेजी नीति को स्थायित्व मिल गया। तत्कालीन भारत सरकार की यह प्रथम शिक्षा नीति थी। विलियम बेंटिंक के बाद लार्ड आकलैंड भारत का गवर्नर जनरल बना। इसी समय में विलियम बैंटिक द्वारा नियुक्त विलियम एडम की भारतीय शिक्षा की रिपोर्ट आ चुकी थी। इसमें भारत के नवजागरण के लिए अच्छे सुझाव दिए गए थे- जैसे शिक्षा का माध्यम क्षेत्रीय भाषाएं हो। पाठ्य पुस्तकों का क्रमबद्ध रुप से प्रकाशन किया जाये। सभी विद्यालयों में एक समय पर परीक्षाएं आयोजित की जायें। विद्यालयों में कृषि फार्म हों। शिक्षकों के प्रशिक्षण हो आदि।

1844 में तत्कालीन गर्वनर जनरल लार्ड हार्डिग ने घोषणा की कि भारतीय सरकारी नौकरियों के योग्य तभी होंगे जब वे अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करेंगे। इस कारण अंग्रेजी शिक्षा का महत्त्व बढ़ गया और समय शिक्षा का सीधा संबंध रोजगार से जुड़ गया। इस समय में ही माध्यमिक स्कूलों की स्थापना हुई। 1833 से 1853 में बंगाल, बम्बई, मद्रास, पंजाब, उतरप्रदेश में शिक्षा की अत्याधिक प्रगति हुई और उसके साथ-साथ व्यावसायिक शिक्षा में भी उन्नति हुई। इस समय 1853 में कम्पनी के आज्ञापत्र के नवीनीकरण के समय स्थाई और व्यापक शिक्षा नीति की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी। कम्पनी का आज्ञापत्र प्रति बीस वर्ष में बदला जाता था। 1853 में इसे बदला जाना था इसलिए एक संसदीय समिति ने भारतीय शिक्षा की प्रगति का मूल्यांकन किया 1853 में शिक्षा के क्षेत्र में अनेक समस्याएं थी जिनके परिणामस्वरुप एक सर्वेक्षण किया गया जिसे वुड डिस्पैच कहा जाता है।

वुड का घोषणा पत्र (1854)

(Woods Dispatch, 1854)

सर चार्ल्स वुड जो कि उस समय के भारतीय सरकार के नियंत्रण सभा के प्रधान थे, ने माध्यमिक शिखा के प्रसार के लिए विचार किए। इस घोषणा पत्र के अनुसार नवीन शिक्षा योजनाओं, जैसे लोक अनुदेशन विभाग (Public Instruction Department) निर्देशक लोक अनुदेशन (Director of Public Instruction) के पद एवं परीक्षा लेने वाले विश्वविद्यालयों की स्थापना ये संस्थाएं तीन स्तर- प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च स्तर की शिक्षा की व्यवस्था करने लगी। इस घोषणा पत्र की मुख्य विशेषताएं थी:-

1. शिक्षा पाश्चात्य ज्ञान का भी प्रसार करेगी।
2. उच्च शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी और विद्यालय स्तर पर क्षेत्रीय भाषाएं शिक्षा का माध्यम होगी।
3. प्राच्य साहित्य के साथ-साथ पश्चिमी भाषा तथा साहित्य अध्ययन पाठ्यक्रम में रखा जाय।
4. जन शिक्षा के लिए विस्तार पर बल दिया गया।
5. सहायता अनुदान प्रणाली (Grant-in-aid) लागू की गई।
6. स्त्री शिक्षा पर बल दिया गया।

7. शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए विशेष संस्थाएं खोलने की सिफारिश की गई।
8. भारतीय भाषाओं में लेखन तथा प्रकाशन।
9. मुसलमानों की शिक्षा पर बल दिया।
10. व्यावसायिक, तकनीकी स्कूलों के साथ-साथ विश्वविद्यालयों की शिक्षा पर विचार किया गया।

वुड का घोषणा पत्र के सुझावों को कार्यान्वित करने के लिए प्रांतों में शिक्षा विभाग स्थापित किए गए। सन् 1857 में बम्बई, कलकत्ता तथा मद्रास में विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई। इन विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा का मार्ग प्रशस्त हो गया और मैट्रिक परीक्षा के द्वारा इन विश्वविद्यालयों ने माध्यमिक शिक्षा पर भी अपना अधिकार जमा लिया। अभी कुछ वर्ष पहले तक माध्यमिक शिक्षा विश्वविद्यालयों के नियन्त्रण में रही। सहायक अनुदान प्रणाली आरम्भ की गई और इससे कई स्कूलों को लाभ पहुंचाया गया। इसके परिणामस्वरूप बहुत से माध्यमिक स्कूल खुल गए। सन् 1882 में सरकार के अपने स्कूलों की संख्या 1400 थी। अन्य प्राइवेट व इसाई स्कूलों को मिलाकर यह संख्या 4000 तक पहुंच गई।

परन्तु इस काल में माध्यमिक शिक्षा के कुछ दोष स्पष्ट रुप से सामने आए जैसे:-

- शिक्षा माध्यम के रूप में मातृ-भाषा की बिल्कुल अवहेलना की गई थी।
- माध्यमिक शिक्षा के अध्यापकों के प्रशिक्षण की कोई व्यवस्था नहीं थी।
- शिक्षा कोर्स अत्यधिक शैक्षिक थे और उनका जीवन के साथ कोई संबंध नहीं था।
- तकनीकी और व्यावसायिक कोसों की कोई व्यवस्था नहीं थी।

1.6 ब्रिटिश युग में शिक्षा (Education during British Period)

इंग्लैड में जनरल कौंसिल ऑफ एजूकेशन इन इण्डिया (General Council of Education in India) नामक संस्था बनाई और लार्ड रिपन 1882 के वायसराय होने पर इस संस्थान ने उनसे भारतीय शिक्षा की स्थिति की जांच करने को कहा। लार्ड रिपन ने भारतीय शिक्षा आयोग या हन्टर कमीशन (Indian Education Commission) की नियुक्ति की जिसके कुछ सदस्य भारतीय भी थे।

राष्ट्रीय शिक्षा परिषद् 1906 में पंजीकृत हुई। हन्टर कमीशन भारत में शिक्षा के विकास का पुनरावलोकन करने के लिए नियुक्त किया गया था। इस आयोग ने पांच साल की लोअर माध्यमिक शिक्षा एवं दो वर्ष की अपर माध्यमिक शिक्षा का सुझाव दिया। माध्यमिक शिक्षा के बारे में उनके निम्न सुझाव थे:-

1. माध्यमिक शिक्षा का प्रसार एक मंहगा कार्य है। इसलिए निजी संस्थाओं को उनके लिए उत्साहित किया जाना चाहिए। सरकारी स्कूल वहीं स्थापित हो जहां निजी संस्थाओं के स्कूलों को स्थापित करना संभव नहीं।
2. एक जिले में एक माध्यमिक स्कूल की स्थापना हो।
3. सहायता प्रणाली (अनुदान प्रणाली) लागू हो।

4. आयोग ने नारी शिक्षा के विकास के लिए निशुल्क शिक्षा तथा पाठ्यक्रम पर जोर दिया। बालिका विद्यालय भी खोले जाए। आयोग ने सभी जातियों जैसे-मुस्लिम हरिजन तथा पिछडे लोगों, आदिवासियों, पहाड़ी इलाके के सभी लोगों की शिक्षा की व्यवस्था की।
5. धार्मिक शिक्षा की पूरी स्वतन्त्रता दी गई परन्तु सहायता प्रणाली से इस शिक्षा का कोई सम्बन्ध न था।
6. पाठ्यक्रम में क्षति, अंक-गणित, प्राकृतिक विज्ञान, भौतिक विज्ञान, कृषि, स्वास्थ्य एवं औद्योगिक कलाओं में प्रयोग आदि पर हो।
7. शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए नार्मल स्कूलों की स्थापना की जाए।
8. शिक्षा पर स्थानीय कोष व्यय किया जाए। प्रान्तीय सरकार 1/3 या 1/2 भाग अनुदान स्थानीय सरकार को दे। स्थानीय कोष का एक भाग स्कूल फीस, स्थानीय निकायों एवं अन्य स्त्रोतों से एकत्रित किया जाए।

यह कमीशन माध्यमिक शिक्षा के दोषों को दूर करने के लिए मौन रहा। कमीशन के समक्ष शिक्षा का माध्यम अध्यापकों का प्रशिक्षण, व्यावसायिक शिखा की समस्याएं थी। इस समय में बहुत सारे स्कूल खोले गए परन्तु शिक्षा की गुणवत्ता का इनकी मात्रा से कोई मेल न था। यहां इस तथ्य का उल्लेख करना आवश्यक है कि विभिन्न कोर्सों की व्यवस्था के प्रति न तो जनता ने रुचि दिखाई और न ही सरकार ने इस ओर कोई प्रशंसात्मक कदम उठाये क्योंकि व्यवसायिक शिक्षा के महत्व को समझने का अभी उचित समय नहीं आया था। अत: शिक्षा जीवन से अलग बनी रही और सन् 1882 से 1902 के समय में शैक्षणिक पाठ्यक्रम से युक्त माध्यमिक स्कूलों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई। माध्यमिक स्कूलों की संख्या 3916 से 5124 तक पहुंच गई और विद्यार्थियों की संख्या 2 लाख से 6 लाख तक हो गई तथा मैट्रिक पास विद्यार्थियों की संख्या 75 हजार से 22 8 हजार तक पहुंच गई परन्तु इस संख्यात्मक वृद्धि में गुणात्मक विकास 'का अभाव था। शिक्षा के स्तर में कोई विकास नहीं हुआ।

यूनिवर्सिटी कमीशन, 1902

(University Commission, 1902)

इस आयोग के सुझाव के अनुसार माध्यमिक स्कूल यूनिवर्सिटी के अंदर या उसके नीचे आने चाहिए। भारतीय महाविद्यालय अधिनियम के द्वारा माध्यमिक स्कूलों की यूनिवर्सिटी से तथा मान्यता अनिवार्य कर दी गई थी। इस कमीशन ने

मैट्रिक उच्च कक्षाओं के स्तर को ऊंचा उठाने पर बल दिया। इस अधिनियम ने माध्यमिक शिक्षा के साथ उच्च शिक्षा को व्यवस्थित स्वरुप प्रदान किया।

भारतीय विश्वविद्यालय अधिनियम, 1904

(Indian University Act, 1904)

1904 के भारतीय विश्वविद्यालय अधिनियम के अधीन स्कूलों का विश्वविद्यालयों द्वारा स्वीकृत देना आवश्यक बना दिया और इस उद्देश्य के लिए नियम भी बनाए गए।

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की स्थापना

(Esatblishment of Central Board of Education)

शीघ्र ही माध्यमिक शिक्षा पर विश्वविद्यालय के अधिकारों के दोषों को अनुभव कर लिया गया और कुछ प्रांतों में स्कूलों पर नियंत्रण करने, पाठ्यक्रमों का निर्माण करने तथा परीक्षाओं की व्यवस्था करने के लिए माध्यमिक शिक्षा बोर्डों की स्थापना की गई।

राष्ट्रीय शिक्षा समिति, 1906

(National Council of Education, 1906)

1906 में राष्ट्रीय शिक्षा की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। एनी बसेन्ट (1906) ने इस ओर कांग्रेस ध्यान दिलाया। इसके परिणाम स्वरुप इस देश में राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना हुई। आर्यसमाज, ब्रह्मसमाज, प्रार्थना समाज, आदि ने राष्ट्रीय चरित्र की शिक्षा देने वाले स्कूल खोले, इसी आंदोलन ने शांतिनिकेतन, गुरुकुल कांगडी, जामिया -मिलिया इस्लामिया, गुजरात विद्यापीठ, काशी विद्यापीठ, आदि राष्ट्रीय संस्थाओ को जन्म दिया।

1912 में सरकार ने शिक्षा नीति की घोषणा की। शिक्षा नीति की घोषणा में प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च स्तर की शिक्षा पर विचार किया गया। माध्यमिक शिक्षा को अर्थात मैट्रिक को विश्वविद्यालय से मुक्त कराने की व्यवस्था की गई। 1910 में गोपाल कृष्ण गोखले ने निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के लिए एक प्रस्ताव रखा था जो सरकार के आश्वासन पर उन्होंने वापस ले लिया। इसके बाद शिक्षा नीति संबंधी सरकार प्रस्ताव 1913 में आया जिसमें प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च एवं स्त्री शिक्षा के संबंध मे विचार किए गए।

सैडलर कमीशन, 1917-1919

(Sadler Commission, 1917-19)

14 सितम्बर 1917 को सर एम. सैडलर की अध्यक्षता में यह आयोग बनाया गया। इस आयोग ने सबसे पहले माध्यमिक शिक्षा की बात की कि स्कूल का पाठ्यक्रम 12 वर्षीय होना चाहिए। इस अयोग ने इन्टरमीडिएट परीक्षा को माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा के मध्य की कड़ी बनाया और इन्टरमीडिएट कक्षाओं को उच्च शिक्षा से हटाने की सिफारिश की। इन्होंने माध्यमिक शिक्षा परिषद् के गठन पर बल दिया और ये परिषदें नियंत्रण से मुक्त हों। इस कमीशन ने विश्वविद्यालय की शिक्षा अच्छी हो उसके लिए तो प्रयास किए ही लेकिन उन्होंने एक विश्वविद्यालय स्तरीय और स्कूल शिक्षा के बीच भी रेखा खींची। इंटरमीडिएट कॉलेज को एक परीक्षा रुप पुल पार कर विश्वविद्यालय में प्रवेश के लिए भी सुझाव दिया। सबसे पहली बार इसी कमीशन ने बोर्ड ऑफ एजुकेशन का सुझाव दिया जो हाई स्कूल शिखा और इन्टरमीडिएट शिक्षा को नियंत्रित कर सके। इस समय में शहरों और गांवों में अधिक माध्यमिक स्कूल खुले। इस आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के साथ-साथ उन शिक्षकों को जो इस स्कूलों में पढ़ाते थे उसके वेतन और प्रशिक्षण के बारे में भी सुझाव दिए।

इसके पश्चात् माध्यमिक शिक्षा का बहुत विकास हुआ। जनता की बढ़ती हुई रुचियों तथा व्यक्तियों व संस्थाओं द्वारा किए गए दान के कारण बहुत से माध्यमिक स्कूलों की स्थापना की गई। माध्यमिक स्कूलों की संख्या 7,530 हो गई और विद्यार्थियों की संख्या 6 लाख से बढ़कर 11,06,803 हो गई। परंतु शिक्षकों के प्रशिक्षण, वेतन तथा काम की शर्तो की

समस्याएं उसी प्रकार से बनी रही। शैक्षणिक प्रकार के स्कूलों के विस्तार के कारण तकनीकी स्कूलों का अभाव हो गया।

दोहरी शासन प्रणाली, 1921-37 में माध्यमिक शिक्षा

(Secondary Education Under Dyarchy, 1921-37)

दोहरी शासन प्रणाली के अंतर्गत ग्रामीण इलाकों में कई माध्यमिक स्कूल खोले गए जिनमें पिछडे वर्गों के बच्चे भी दाखिल होते थे। लड़कियां भी माध्यमिक शिक्षा की ओर आकर्षित होने लगी। इतिहास और भूगोल के शिक्षण में मातृभाषा को शिक्षा माध्यम के रुप में स्वीकार कर लिया। अध्यापकों के वेतनमान तथा उनके काम की शर्तों में भी कुछ सुधार किए गए। परन्तु ग्रामीण स्कूल गांवों की आवश्यकताओं को पूरा नहीं करते थे।

हार्टेग कमेटी, 1929

(The Hartog Committee,1929)

1929 में हार्टोंग कमेटी देश की शिक्षा प्रणाली का पुनरावलोकन करने के लिए बनाई गई थी। माध्यमिक शिक्षा के दोषों में बच्चों को फेल करने की समस्या पर हार्टोंग ने विचार किया और कहा:-

1. प्रारंभिक कक्षाओं में बालकों को उन्नति देनी चाहिए।
2. अयोग्य छात्रों को व्यापारिक तथा व्यावसायिक पाठ्यक्रम में भेजना चाहिए, योग्य विद्यार्थी ही विश्वविद्यालय स्तर पर पहुँचे। इसलिए इन बालकों के लिए उन्होंने भिन्न कोर्सों का प्रबंध स्कूलों में करने का सुझाव दिया। वाणिज्य और व्यावसायिक शिक्षा आठवीं से आरंभ करनी चाहिए।
3. देशीय मिडल स्कूल ग्रामीण लोगों की जरुरत के अनुसार होने चाहिए।
4. नये कोसों का प्रबंध होना चाहिए ताकि आज तक की शिक्षा या आधुनिक ज्ञान दिया जा सके।
5. इस आयोग ने केन्द्र में शिक्षा समिति के गठन की सिफारिश की। यह रिपोर्ट सरकार के लिए एक नीति-निर्देशक हो गई।
6. माध्यमिक शिक्षा के शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण तथा उनकी गुणवत्ता में सुधार किया जाना चाहिए।
7. माध्यमिक स्तर की शिक्षा के व्यावसायीकरण के साथ इन्होंने पुस्तकालय को समृद्ध करने पर बल दिया।
8. इस कमेटी ने माध्यमिक स्तर के साथ-साथ प्राइमरी शिक्षा में अपव्यय और अवरोधन पर प्रकाश डालते हुए बालिकाओं की शिक्षा पर भी बल दिया।

सप्रू समिति, 1934

(The Sapru Committee, 1934)

सप्रू कमेटी 1934 में उतर प्रदेश में बेकारी की जांच करने के लिए गठित की गई। इस कमेटी ने कुछ सुझाव दिए:-

1. माध्यमिक शिक्षा को एक साल और बढ़ा देना चाहिए। इसकी अवधि 6 वर्ष को होनी चाहिए और आगे भी इसे 2 स्तरों में विभाजित करना चाहिए- निम्न स्तर और उच्च स्तर।
2. मिडल कक्षा में भिन्न-भिन्न कोर्सों का प्रबंध होना चाहिए।
3. व्यावसायिक शिक्षा मिडल कक्षा के निम्न स्तर के बाद शुरु होनी चाहिए।
4. इस प्रकार के पाठ्यक्रम हों जो उनमें से एक विश्वविद्यालय स्तर पर उनके काम आए। विषय व्यापारिक, औद्योगिक तथा व्यावसायिक हो।

एबट- वुड रिपोर्ट, 1937

(The Abbot Wood Report)

1936-37 में भारत सरकार ने मैसर्स एंबॉट और वुड को आमत्रिंत किया। इन्होंने शिक्षा संबंधी समस्याओं का अध्ययन किया और इन समस्याओं को दूर करने के लिए सुझाव पेश किए। इन्होंने 1937 में अपनी रिर्पोट दी जो एबंट वुड रिपोर्ट के नाम से जानी जाती है। ये सुझाव निम्नलिखित है:-

1. इन्होंने भारत सरकार को सुझाव दिया कि व्यावसायिक एवं औद्योगिक शिक्षा संस्थानों का अधिनियंत्रण स्वतन्त्र हो और उसकी सत्ता अन्य परम्परागत विश्वविद्यालयों के समान हो।
2. हाई स्कूलों में प्राविधिक, व्यापारिक एवं कृषि जैसे विषय सामान्य पाठ्यक्रम के साथ आरंभ किए जायें।
3. बेरोजगारी को दूर करने के लिए देश में पोलिटैक्निक संस्थान खोलने चाहिए और इस ओर ध्यान भी दिया गया। इस प्रकार देश में इस प्रकार के अनेक विद्यालय खोले गए।
4. इस प्रतिवेदन में नारी शिक्षा, रुचि और अभिवृत्ति के अनुसार शिक्षा पर भी बल दिया गया।

बुनियादी शिक्षा, 1937

(Basic Education, 1937)

2 अक्टूबर 1937 को गांधी जी ने 'हरिजन' में एक लेख प्रकाशित किया। सात वर्षीय प्राथमिक शिक्षा उद्योग केन्द्रित होनी चाहिए। इस बात पर बल दिया कि वर्धा में सम्मेलन हो। शिक्षा योजना पर गहन विचार किया जाये। डा. जाकिन हुसैन की अध्यक्षता में 9 सदस्यों की एक समिति का गठन हुआ। 1938 में हरिपुरा कांग्रेस सम्मेलन मे इसे राष्ट्रीय महत्व देकर स्वीकार किया गया तथा यह शिक्षा योजना उद्योग केन्द्रित थी जो माध्यमिक शिक्षा का आधार थी। नागरिकता के गुणों का विकास करना, आत्मनिर्भरता, कार्य की स्वतन्त्रता, समाज उपयोगी पाठ्यक्रम इस की प्रमुख विशेषताएं थी। बम्बई में खेर समिति ने भी इसका समर्थन किया। बुनियादी शिक्षा अपने आप में पूर्ण होते हुए भी 1939 में स्वदेशी सरकारों ने और आलोचकों ने इसे अव्यावहारिक कह कर इसे लागू न होने दिया। माध्यमिक शिक्षा की सम्पन्नता तथा दृढता

के लिए उस व्यावसायिक बनाने के लिए गांधी जी ने एक प्रेरक नीति का आधार रखने का प्रयास किया था।

सार्जेन्ट रिपोर्ट, 1944

(The Sargent Report, 1944)

सर जॉन सार्जेट केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार परिषद् (Central advisory Board of Education) के अध्यक्ष थे। इनकी अध्यक्षता में एक सर्वेक्षण का गठन किया, जिसे शैक्षिक परिस्थितियों की जांच करनी थी और सुझाव देने थे। उन्होंने तीनों स्तर की शिक्षा के विषय में विचार किया। माध्यमिक स्तर की शिक्षा के विषय में सुधार निम्नलिखित थे:-

1. उच्च विद्यालय 2 प्रकार के होने चाहिए।
   - शैक्षिक उच्च विद्यालय **(Academic High School)**-इन स्कूलों में आर्ट्स एवं विज्ञान संबंधी शिक्षा देनी चाहिए।
   - तकनीकी उच्च विद्यालय **(Technical High School)-** इन स्कूलों में तकनीकी, विज्ञान और वाणिज्य सम्बन्धी शिक्षा देनी चाहिए।
2. शिक्षा में दिए जाने वाले निर्देशों का माध्यम मातृभाषा होनी चाहिए। नियमों में लचीलापन हो।
3. उच्च विद्यालय में दाखिला चयन विधि द्वारा होना चाहिए। बच्चों की अभिवृद्धि, रुचि और योग्यता के आधार पर उन्हें दाखिला उस कोर्स में दिया जाए जिसमें उसकी रुचि के साथ-साथ वह योग्य भी हो।
4. इन कोर्सों में दाखिले के लिए सामान्य आयु 11 वर्ष हो।
5. सरकार द्वारा स्कूलों की आर्थिक सहायता का भी प्रबंध होना चाहिए।
6. शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए भी रिपोर्ट ने उनकी गुणवत्ता पर ध्यान दिलाया। इस योजना में शिक्षण व्यवसाय में अच्छे व्यक्तियों को आकर्षित करने के लिए अच्छे वेतनमानों की सिफारिश की गई।
7. पाठ्यक्रम को व्यवहारिक बनाने पर बल दिया गया।
8. जरुरतमंद और योग्य विद्यार्थियों के लिए वजीफा तथा सहायता का प्रबंध होना चाहिए।
9. इसी रिपोर्ट के आधार पर पालिटैक्निक कॉलेज राजधानी में खोला गया।

सार्जेण्ट रिपोर्ट केवल कागजों पर ही रही क्योंकि 1944 में अंग्रेज सरकार को 'भारत छोडो' आंदोलन का सामना करना पडा और यह रिपोर्ट एक महत्वपूर्ण दस्तावेज बन कर रह गई।

1.7 भारत में स्वतन्त्रता से पूर्व माध्यमिक शिक्षा का विस्तार (Expansion of Secondary Education before Independence in India)

महत्वपूर्ण आयोगों और कमेटियों के सुझाव के परिणामस्वरुप माध्यमिक शिक्षा का अत्याधिक विस्तार हुआ जो निम्नलिखित आंकडों से स्पष्ट है:-

सारणी 1.1 - मिडल सहित माध्यमिक स्कूलों का विस्तार

वर्ष माध्यमिक	स्कूलों की संख्या**	विद्यार्थियों का नामांकन
1852	32	N.A.
1882	3916	2,14,677
1901-1902	5493	6,22,768
1921-22	7530	11,06,803
1936-37	13056	22,87,872

स्त्रोत- सईद नरुल्ला एवं जेण्पी० नाइक, 1971

**इन स्कूलों में मिडल माल भी शामिल है।

इस काल में जनसाधारण में जागृति के कारण माध्यमिक शिक्षा की मांग बढ़ गई। ग्रामीण व अर्द्ध शहरी क्षेत्रों में स्कूल खोले गए जिससे यहां रहने वाले बच्चे आसानी से माध्यमिक शिक्षा प्राप्त कर सकें। नारियों तथा कम विकसित वर्गो में भी माध्यमिक शिक्षा का प्रसार होने लगा।

सारणी 1.2 - माध्यमिक शिक्षा का विस्तार

वर्ष	कुल नामांकन	लड़कियों के नामांकन
1855-56	33,801	N.A.
1901-02	82,312	1,677
1921-1922	2,18,606	5,818
1946-47	3,70,812	83,270

स्त्रोत-वासु, अपर्णा, भारतीय शिक्षा के इतिहास में प्रस्ताव, 1981

सारणी 1.3 - माध्यमिक स्कूलों की संख्या विद्यार्थियों की संख्या तथा प्रति विद्यार्थी लागत

वर्ष	माध्यमिक स्कूलों की संख्या	माध्यमिक विद्यार्थियों की संख्या स्कूलों में	माध्यमिक स्कूल में प्रति विद्यार्थी लागत
1870-71	464	64,873	N.A.
1881-82	512	65,477	28.8
1891-92	831	1,72,463	N.A.
1896-97	930	1,92,995	35.0
1901-02	1,170	2,62,859	30.0
1906-07	1,277	2,98,276	31.5
1911-12	1,354	4,07,765	32.6
1916-17	1,750	5,72,261	36.9
1921-22	2,248	5,94,910	54.0
1926-27	2,687	7,94,201	55.2

1931-32	3,125	9,55,051	54.8
1936-37	8,632	11,32,713	52.5
1941-42	4,035	13,33,948	48.7
1946-47	3,659	15,71,541	5.6

स्त्रोत-एन.सी.ई.आर.टी-The Fourth Indian Year Book of Education: Secondary Education

1.8 भारत में स्वतन्त्रता से पूर्व माध्यमिक शिक्षा की समीक्षा (An Overview of Secondary Education in India during Pre-Independence period)

इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि स्वतन्त्रता से पूर्व भारत में माध्यमिक शिक्षा की स्थिति संतोषजनक नहीं थी। सारणी 1.2 और 1.3 दर्शाती है कि माध्यमिक शिक्षा की प्रगति बहुत धीमी थी और अपर्याप्त थी, परन्तु इसके साथ-साथ कुछ सुधार भी हुए।

माध्यमिक शिक्षा प्रणाली में सुधार

(Improvement in Secondary Education)

1. विश्वविद्यालयों तथा शिक्षा विभागों में भेदभाव समाप्त हो गया। विश्व-विद्यालयों ने स्वयं ही विभाग द्वारा परिचालित स्कूलों को स्वीकृत स्कूलों की सूची में शामिल कर लिया।
2. विभिन्न क्षेत्रों में अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा प्रदान करने की एक समान शिक्षा प्रणाली आरंभ की गई, परंतु साथ-साथ मातृभाषा को भी शिक्षा का माध्यम बनाने की छूट दी गई।
3. पाठ्यक्रम को विस्तृत किया गया और माध्यमिक शिक्षा में व्यावसायिक कोर्सों की व्यवस्था की गई।
4. प्रशिक्षित अध्यापकों की प्रतिशत वृद्धि के कारण शिक्षण स्तर में पर्याप्त सुधार हुआ।
5. माध्यमिक स्कूलों की संख्या में वृद्धि हुई।
6. माध्यमिक स्कूलों में विद्यार्थियों के नामांकन में वृद्धि हुई।

भारत में स्वतन्त्रता से पूर्व माध्यमिक शिक्षा की कमियां

(Defects in Secondary Education in India before Independent)

1. यह ग्रामीण देश में शहरी शिक्षा प्रणाली थी।
2. पाठ्यक्रम में तथा शिक्षा के अन्य पक्षों में अंग्रेजी को प्राथमिकता प्रदान की गई।
3. माध्यमिक शिक्षा अत्याधिक पुस्तकीय थीं।
4. शिक्षा प्रणाली परीक्षा केन्द्रित थी।
5. इसमें ज्ञान पर अत्याधिक बल दिया गया व अन्य पक्षों की अवहेलना की गई।
6. इसमें रटन्त प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया गया।
7. इसमें तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा की अवहेलना हुई।

8. यह आधुनिक भारत के निर्माण के फलस्वरूप आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं औद्योगिक परिवर्तनों के साथ कदम मिला कर चलने में असमर्थ सिद्ध हुई।
9. यह नवीन शिक्षा सिद्धांतों तथा अभ्यासों के अनुरुप परिवर्तित नहीं हुई।
10. शिक्षण व्यवस्था निर्जीव एवं यांत्रिक थी।
11. यह अत्याधिक खर्चीली थी।
12. यह अनियोजित थी।
13. यह समाज के कुछ ही वर्गों तक सीमित थी।
14. यह आम व्यक्ति की पहुंच से बाहर थी।
15. पाठ्य सहगामी क्रियाओं को शामिल नहीं किया गया।

गांधी जी के शब्दों ' में, "वेतनमान शिक्षा प्रणाली किसी भी रुप या आकार में देश की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करती है। अंग्रेजी माध्यम ने शिक्षित तथा अशिक्षितों के बीच एक बहुत बडी खाई बना दी है। व्यावसायिक प्रशिक्षण की कमी ने शिक्षित वर्ग को उत्पादक कार्यो के अयोग्य बना दिया है। अत: सम्पूर्ण प्रणाली कठोर थी। उसमें नीरसता, उत्काहटता तथा एकात्मकता विद्यमान थी।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. माध्यमिक शिक्षा के विकास में हन्टर कमीशन के प्रमुख सुझाव क्या थे?
   What were the main recommendations of Hunter Commission for the development of secondary education?
2. सैडलर कमीशन ने माध्यमिक शिक्षा मे कौन-कौन सी कमियों को बताया।
   What were the defects in secondary education as pointed out by Sadler Commission?
3. माध्यमिक शिक्षा में हार्टोंग कमेटी का क्या योगदान था।
   What was the contribution of Hartog Committee in secondary education?
4. बुनियादी शिक्षा से क्या अभिप्राय है?
   What is the Meaning of Basic Education?
5. सार्जेन्ट योजना को राष्ट्रीय योजना के रुप में क्यों महत्व दिया जाता है?
   Why the Sargent Planning has importance for National Planning?

1.9 सारांश
(Summary)

निष्कर्ष रुप में हम कह सकते है और प्राचीनकाल की शैक्षिक उपलब्धियां बताती है कि उस समय शिक्षा का उद्देश्य आध्यात्मिकता के साथ मनुष्य को समाज का उपयोगी सदस्य

बनाना था। बालक के चरित्र निर्माण पर पूरा ध्यान दिया जाता था और शिक्षा द्वारा उसकी सामाजिक कुशलता को विकसित किया। शिक्षा अध्यापक केन्द्रित थी। व्यावसायिक शिक्षा का भी प्रचलन था। सैनिकशिक्षा, चिकित्सा की शिक्षा, कृषि-शिक्षा और वाणिज्य शिक्षा का भी ज्ञान दिया जाता था। नारी शिक्षा भी इसी काल में अछूती नहीं रही।

आज समाज के गिरते हुए मूल्यों मे यह वैदिक शिक्षा बहुत लाभप्रद हो सकती है। यदि हम उन उद्देश्यों को। पाठ्यक्रम के कुछ भाग को आज के पाठ्यक्रम में डालें और उस समय की शिक्षण - विधियों का कुछ अंश आज भी विद्यालय में प्रयोग करें तो सच में वह ज्ञान बालक के अन्तःकरण में उतर जायेगा और सही मायने मे वह उस शान का अर्थ समझ पायेगा। वैदिक काल के वर्णव्यवस्था का रुप सामने आने लगा और ब्राह्मण युग में उसने एक स्वरुप दिखाया।

बौद्धयुगीन शिक्षा स्वयं में भिन्नता रखते हुए भी वैदिक युग की शिक्षा प्रणाली पर आधारित थी। भले ही ब्राह्मण काल में बालिकाओं की शिक्षा की अपेक्षा की थी, कुछ समय तक इस युग मे भी नारी को पुरुष से हीन माना जाता था। परन्तु बाद में भगवान बुद्ध के परमप्रिय शिष्य आनन्द के कहने पर नारियों की शिक्षा के द्वार खोल दिए थे। इस समय में गणित, शास्त्रार्थ के साथ-साथ कला कौशल, सैनिक शिक्षा, धनुर्विद्या आदि की शिक्षा दी जाती थी। शिक्षा का उद्देश्य धार्मिक और लौकिक दोनों प्रकार का था। इन्होंने शिक्षण विधि के कुछ नये प्रयोग किए- निरीक्षण, प्रवचन, सम्मेलन, भ्रमण आदि। व्यावसायिक शिक्षा पर भी जोर दिया जाता था। छात्र जीवन सुविधापूर्वक था। छात्र संस्थागत थे। पाली के साथ अन्य भाषाओ का भी प्रावधान था। इसमें कोई सदेह नहीं कि बौद्ध शिक्षा ने ब्राह्मणीय विद्यालयों के एकाधिकार को समाप्त किया और सब जातियों के लिए शिक्षा के द्वार खोल दिए। वर्ण भेद समाप्त कर सभी को विकास के लिए अवसर मिलने लगे थे। गुरु का स्थान उसकी योग्यता से आंका जाता था। शिक्षा का स्वरुप प्रजातांत्रीय हो गया था। क्योंकि शिक्षा गुरुओं के नियंत्रण में थी। शैक्षिक जीवन अनुशासित था।

इस प्रकार ब्रिटिश युग में अनेक आयोगों तथा समितियों ने शिक्षा के प्रचार तथा प्रसार सबंधी सुझाव दिए और सरकारों ने अपने प्रस्ताव पास किए। सार्जेन्ट महोदय को बिशद, योजना बनाने के लिए प्रस्तुत की। उन्होंने व्यापक 40 वर्षीय शिक्षा योजना प्रस्तुत की जिससे शिक्षा के सभी पक्षों पर विचार किया गया। इस योजना के तीन वर्ष बाद भारत स्वतन्त्र हो गया। इस योजना के महल को समझते हुए 40 वर्षीय योजना को 16 वर्षीय योजना में बदलकर प्रथम पंचवर्षीय योजना में लागू किया गया। स्वतन्त्र भारत में शिक्षा के क्षेत्र में अनेक कार्यक्रम सार्जेन्ट शिक्षा योजना से लिए गए।

1.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Basu, Aparna : "Essay in the History of Indian Education, 1981

Nurullah and Naik : A student History of Education in India, Macmillan, Calcutta, 1949

Nurullah.Syed and Naik, J.P : “Student History of Education in India, Macmillan, Calcutta, 1971

NCERT : The Fourth Indian Yearbook of Education Secondary Education, NCERT, New Delhi, 1973.

इकाई-2

माध्यमिक शिक्षा का विकास - 1947 to 1964 (Development of Secondary Education- 1947 to 1964)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

2.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

2.1 स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत में माध्यमिक शिक्षा का विकास (Development of Education after Independent in India)

2.2 ताराचन्द कमेटी, 1948 (Tara Chand Committee, 1948)

2.3 विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग, 1948-49 (University Education Commission1948-49)

2.4 माध्यमिक शिक्षा आयोग 1952-53 (Secondary Education Commission, 1952-53)

2.5 1950 से 1964 के मध्य माध्यमिक शिक्षा का विकास (Development of Secondary Education during 1950 to 1964)

2.6 पंचवर्षीय योजनाओं में माध्यमिक शिक्षा का विकास (Growth of Secondary Education under Five year Plans)

2.7 सारांश (Summary)

2.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

2.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर आप:

- स्वतन्त्रता के पश्चात् माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए स्थापित किए गए विभिन्न आयोगों के बारे में जान जाएंगे।
- स्वतन्त्रता के समय भारत में माध्यमिक शिक्षा की कमियों को समझ सकेंगे।
- भारत सरकार द्वारा माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए किए गए प्रयत्नों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- संवैधानिक शासन के पहले दो दशकों में माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित विशिष्ट विकास प्रक्रियाओं को समझ सकेंगे।
- माध्यमिक शिक्षा के योजनाबद्ध विकास में राज्य की भूमिका को समझ सकेंगे।
- माध्यमिक शिक्षा आयोग की सिफारिशों का मूल्यांकन कर सकेंगे।
- 1947 से 1964 के बीच में शिक्षा व्यवस्था का विश्लेषण कर सकेगें।

- बहु उददेशीय स्कूल व्यवस्था की आवश्यकता को समझ सकेंगे।
- माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के व्यावसायीकरण की आवश्यकता का अनुभव कर सकेंगे।
- विभिन्न आयोगों द्वारा दिए गए माध्यमिक शिक्षा संबंधी सुझावों का विश्लेषण कर सकेंगे।

भारत में 1857 की क्रान्ति के बाद राजनैतिक परिवर्तन के कारण कम्पनी का शासन समाप्त हुआ और भारत का शासन ब्रिटिश सरकार के आधीन हो गया। इस समय शिक्षा विभाग का गठन हुआ। भारतीय शिक्षा आयोग (Indian Education Commission) का गठन सर विलियम हण्टर की अध्यक्षता में किया गया। इस कमीशन ने उच्च शिक्षा देने वाले महाविद्यालयों के अनुदान देने, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, भवन निर्माण पाठ्यक्रम संशोधन एवं निर्माण, धार्मिक शिक्षा छात्रवृतियों तथा शुल्क सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिए। इसके बाद देश में अनेक विश्वविद्यालय स्थापित हुए। 1917-19 में सैडलर की अध्यक्षता में कलकता विश्वविद्यालय आयोग की स्थापना हुई। इस आयोग ने ढाका समेत अन्य विश्वविद्यालयों की स्थिति पर भी विचार किया। विद्यालयी शिक्षा के लिए अलग सैकेन्डरी एजूकेशन बोर्ड (Secondary Education Board) पर बल दिया। ए.एन. वसु के इस कथन में पूर्ण सत्य है, "आयोग की रिपोर्ट में भारतीय शिक्षा पद्धति का माध्यमिक स्तर से विश्वविद्यालय स्तर तक का अत्यधिक विस्तृत और अधिकारपूर्ण अध्ययन है। इसलिए यह बिल्कुल स्वाभाविक है कि इसने देश की माध्यमिक और उच्च शिक्षा के भावी मार्ग को अत्याधिक प्रभावित किया है।"

भारत के सौभाग्य से सरकार ने आयोग के सुझावों को स्वीकार किया। आयोग ने प्रौद्योगिक और व्यवसायिक शिक्षा के बारे में सुझाव देकर जीवन के लिए उपयोगी शिक्षा देने का उतरदायित्व रखा और इस प्रकार शिक्षा को वास्तविक जीवन से सम्बन्ध कर दिया। अर्थर मेहयू के शब्दों में, "कलकता विश्वविद्यालय आयोग की रिपोर्ट-सुझाव और सूचना का स्थायी स्त्रोत रही है। भारतीय शिक्षा के इतिहास में इसका महत्व असीम रहा है।"

इस आयोग के महत्वपूर्ण व उपयोगी गुणो के बावजूद हमें यह कहने में संकोच नहीं होना चाहिए कि इसके कुछ सुझाव दोषपूर्ण व समय से पहले थे। जैसे इसका यह सुझाव था कि माध्यमिक शिक्षा को शिक्षा विभाग के अधिकार में न रखकर बोर्ड के नियन्त्रण में रखा जाए। आयोग और उतर प्रदेश बोर्ड के सदस्य डा. जियाउद्वीन अहमद का मत है कि यह प्रयोग असफल रहा है। इसने सांप्रदायिक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित किया, क्योंकि इसने यह सुझाव दिया कि माध्यमिक शिक्षा परिषदों में हिन्दुओं और मुसलमानों के तीन'-तीन प्रतिनिधि रखे जाये। आयोग द्वारा इण्डरमीडिएट कॉलेजों की स्थापना का सुझाव भी असफल रहा।

2.1 स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत में माध्यमिक शिक्षा का विकास (Development of Secondary Education after Independence)

भारत के स्वतन्त्रता के एकदम पश्चात् पाकिस्तान के उद्भव के कारण रेफयूजयों की समस्या का समना करना पडा। केन्द्रीय स्तर पर सरकार का सबसे महत्वपूर्ण कार्य था पुर्नवास की समस्या का समाधान करना। दूसरा महत्वपूर्ण मुद्दा था प्रशासकीय संरचना का सुदृढ़ीकरण।

देश में उच्च स्तरों पर अंग्रेज विद्यमान थे जो देश को छोड़कर चले गए। तीसरा महत्वपूर्ण कार्य था अपने नए संविधान का निर्माण। केन्द्रीय सरकार के इन्हीं महत्वपूर्ण मुद्दों ने इसका ध्यान शिक्षा पर केन्द्रित नहीं होने दिया। शिक्षा के क्षेत्र में देश की मांग को देखकर डा. एस. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की नियुक्ति की गई थी। स्वतन्त्रता के पश्चात् सरकार सामाजिक एवं नागरिक सामाजिक व्यवस्था में विद्यमान प्रबंधों को निरंतर करना चाहती थी। इसलिए प्रचलित शिक्षा व्यवस्था में सुधार के लिए प्रयत्न किया जाना आवश्यक था।

अधिकतर राज्यों ने अपनी शिक्षा प्रणाली को स्कूल स्तर पर सार्जेण्ट योजना के आधार पर ही संरचित किया। उसी योजना के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों में बेसिक स्कूलों की स्थापना की गई। 1947 से 1950 का समय भारत में प्रभुत्व सम्पन्न लोकतांत्रिक समाजवादी गणतंत्र के रुप में परिवर्तित करने के कारण अत्यन्त महत्वपूर्ण था। निम्नलिखित सारणी इस काल में माध्यमिक शिक्षा के विकास को दर्शाती है।

सारणी 2.1 - 1946-1947 एवं 1950-1951 में माध्यमिक शिक्षा में परिवर्तन

वर्ष	माध्यमिक स्तर पर संस्थाओं की संख्या 1,000 में	माध्यमिक स्तर पर नामांकन (लाख में)
1946-47	3.6	13.8
1950-51	7.3	14.9

उपरोक्त सारणी यह दर्शाती है कि माध्यमिक स्तर पर संस्थाओं की संख्या तथा नामांकन दोनों में वृद्धि हुई, परन्तु संस्थाओं में वृद्धि सामान्य रही है। स्वतन्त्रता के पश्चात भारत में विभिन्न राज्यों में न केवल शिक्षा के विभिन्न स्तरों के आधार पर अपितु प्रत्येक स्तर पर शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाओं के प्रकार में भी विभिन्नता थी। माध्यमिक स्तर पर विभिन्न प्रकार की संस्थाएं निम्नलिखित थी-

माध्यमिक विद्यालय (Secondary School)- माध्यमिक स्कूल स्तर पर दो भाग थे- जूनियर तथा सीनियर। माध्यमिक स्कूलों के जूनियर स्तर को कुछ स्थानों पर मिडल स्कूल या निम्न माध्यमिक स्कूल तथा कहीं पर सीनियर बेसिक स्कूल के नाम से जाना जाता था। विभिन्न क्षेत्रों में इसका कार्यकाल भी 3 और 4 वर्षो के बीच था। अधिकतर राज्यों में यह 3 वर्ष का था। कुछ हाई स्कूलों को माध्यमिक स्कूलों का सीनियर स्कूल स्तर माना जाता था। अधिकतर क्षेत्रों में इस स्तर को तीन वर्ष की अवधि के रुप में बढ़ाया गया। कुछ राज्यों में हाई स्कूल के काल को दो वर्ष तक सीमित किया गया था तथा मिडल स्कूलों में चार वर्ष की अवधि के रुप में रखा गया।

उच्च माध्यमिक विद्यालय (Higher Secondary School)- उच्च माध्यमिक विद्यालय नवीन प्रकार की संस्थाएं थी, शिक्षा की अवधि कही पर 3 वर्ष तथा कहीं पर 4 वर्ष थी और यह राज्यों में हाई स्कूलों के लिए आवश्यक शिक्षा अवधि पर निर्भर था। विश्वविद्यालयों के इंडरमिडिऐट स्तर से लिए गए विद्यार्थियों के लिए उच्च माध्यमिक स्कूलों का अध्ययन 1 वर्ष की अवधि के रुप में बढ़ा दिया गया। स्वतन्त्र भारत के लिए वे शिक्षा के उद्देश्य उचित एवं उपयुक्त न समझे गए जो परतंत्र भारत के थे। अत: देश की आवश्यकताओं के अनुसार उसमें परिवर्तन करने की मांग की गई।

जनवरी 1948 में अपनी 14वीं सभा में केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने देश में माध्यमिक शिक्षा पर सवाल उठाए। देश की शिक्षा प्रणाली में इसके महत्व को ध्यान में रखते हुए बोर्ड ने यह सुझाव दिया कि भारत सरकार के द्वारा एक आयोग की नियुक्ति की जाए जिसका प्रमुख कार्य होगा:-

- भारत में माध्यमिक शिक्षा की वर्तमान परिस्थिति की समीक्षा, तथा
- इससे सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं के बारे में सिफारिशें देना।

जनवरी 1948 में शिक्षा मंत्री की अध्यक्षता में भारतीय शिक्षा सम्मेलन ने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया गया तथा भारत सरकार के द्वारा डा. तारा चन्द, जो उस समय भारत सरकार के शिक्षा सलाहकार थे, की अध्यक्षता में एक आयोग नियुक्त किया गया।

2.2 ताराचन्द कमेटी, 1948 (Tara Chand Committee, 1948)

इस कमेटी के महत्वपूर्ण सुझाव थे:-

1. माध्यमिक स्कूल बहुउद्देशीय प्रकार के होने चाहिए, परन्तु एक उद्देशीय स्कूलों को भी हतोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए।
2. इस कमेटी ने माध्यमिक शिक्षा की समस्याओं की जांच करने के लिए एक आयोग नियुक्त करने की आवश्यकता पर बल दिया।

भारत सरकार ने परिषद और बोर्ड की सिफारिश स्वीकार कर 4 नवम्बर 1948 को डा. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय-शिक्षा आयोग की नियुक्ति की। अध्यक्ष के नाम पर इस आयोग को राधा कृष्णन कमीशन भी कहा जाता है।

2.3 विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग, 1948-49 (University Education Commission, 1948-49)

स्वतन्त्र भारत के लिए वे शिक्षा के उद्देश्य उचित एवं उपयुक्त न समझे गए जो परतंत्र भारत में थे। अत: देश की आवश्यकताओं के अनुसार उसमें परिवर्तन करने की मांग की गई। भारत सरकार ने परिषद और बोर्ड की सिफारिश स्वीकार कर 4 नवम्बर 1948 को डा. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय -शिक्षा- आयोग (University Education Commission) की नियुक्ति की। अध्यक्ष के नाम पर इस आयोग को राधा-कृष्णन कमीशन भी कहा जाता है।

यद्यपि इस आयोग का उद्देश्य भारत में विश्वविद्यालय संबंधी शिक्षा के विभिन्न तत्वों का अध्ययन करना था, परन्तु इसने माध्यमिक शिक्षा के उन तलों पर भी विचार प्रकट किया जो विश्वविद्यालय की शिक्षा से सम्बन्धित थी। इस आयोग ने स्पष्ट रुप से कहा कि माध्यमिक शिक्षा समूची शिक्षा प्रणाली का कमजोर स्थल है और इसमें सुधार करने की आवश्यकता है।

आयोग का स्कूली शिक्षा के बारे मे विचार था कि इस स्तर पर सामान्य शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। आयोग के अनुसार यह आवश्यक है कि इस अच्छी शिक्षा के तत्वों को जाना जाए जो न केवल विद्यार्थी को विश्वविद्यालय के लिए ही तैयार करती है, अपितु इसके साथ-साथ यदि वह विश्वविद्यालय में प्रवेश नहीं करता है तो उसे अपनी आजीविका कमाने के लिए व्यावहारिक कार्य के लिए भी तैयार करती है। इसलिए स्कूल में केवल पर्याप्त कक्षाकक्षों, बौद्धिक अनुशासन की ही व्यवस्था नहीं होनी चाहिए अपितु इसके साथ-साथ विद्यार्थियों के शारीरिक प्रशिक्षण एवं सामूहिक क्रियाओं पर भी बल दिया जाना चाहिए।

आयोग का यह सुझाव इस बात का संकेत देता है कि विश्वविद्यालय शिक्षा सभी के लिए नहीं है। उसका यह सुझाव था कि कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में उन्हीं विद्यार्थियों को प्रवेश दिया जाना चाहिए, जो 12 वर्ष की विद्यालय शिक्षा समाप्त कर चुके हों। विशेषीकृत शिक्षा के दोषों का निवारण करने के लिए विश्वविद्यालय और माध्यमिक स्कूलों में सामान्य शिक्षा के सिद्धांत एवं प्रयोग का शिक्षण प्रारंभ किया जाना चाहिए। शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में सामान्य और विशेषीकृत शिक्षा में समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए। आयोग ने कहा कि माध्यमिक स्तर पर सामान्य शिक्षा के अन्तर्गत अपने भौतिक वातावरण से पूर्व परिचय के अतिरिक्त भौतिक और शारीरिक विज्ञान के मूल सिद्धांतों को जानना, संचार साधन के रुप में भाषा से स्पष्ट और प्रभावी रुप से प्रयोग करना, ऊँचे जीवन मूल्यों को, जो साहित्य में वर्णित है, उनको समझना और साथ-साथ मिलकर रहने और काम करने की प्रक्रिया को समझना सम्मिलित है। विद्यालीय शिक्षा के बारे में आयोग की चिन्ता का कारण उच्च शिक्षा के रास्ते को कुछ आसान करना था। आयोग स्पष्ट रूप से यही चाहता था कि जो विद्यार्थी विद्यालय से पास होकर निकले उनमें से अधिकांश नौकरियां करे या स्वरोजगार करें और केवल कुछ ही विद्यार्थी विद्यालय स्तर के बाद की शिक्षा प्राप्त करें।

शिक्षा के उद्देश्व एवं विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग

(Aims of Education and University Education Commission)

1. व्यक्तित्व निर्माण का विकास (Development of Personality) - छात्रों के व्यक्तित्व का शारीरिक मानसिक बौद्धिक और नैतिक विकास होना चाहिए। जन्मजात गुणों की खोज करना और प्रशिक्षण द्वारा उनका विकास करना है।
2. सामाजिक मूल्यों का विकास (Development of Social Values) - मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। आध्यात्मिक गुणों के साथ लैगिक ज्ञान का भी प्रशिक्षण होना चाहिए। समाज में जीने की कला हर व्यक्ति की आवश्यकता है। इसलिए छात्रों को बौद्धिक दूरदर्शिता, सौन्दर्यानुभूति, सामाजिक मूल्यों की परख, प्रयोगात्मक ज्ञान की आवश्यकता है।
3. आध्यात्मिक ज्ञान (Spiritual Knowledge) - लौकिक ज्ञान के साथ स्वानुभूति या आत्मानुभूति भी शिक्षा का एक आवश्यक उद्देश्य है। बिना आत्मानुभूति किए हम अपने अन्दर सुधार नहीं कर सकते।
4. समाज सुधार (Social Reform) - जिस समाज में हम रहते है उसके सुधार का नितान्त प्रयास करना चाहिए। आयोग ने आवश्यकता महसूस की थी कि उन्हें ऐसे

नेताओं का निर्माण करना है जो इतनी विभिन्नता होते हुए भी देश को एक सूत्र में बांध सके।

माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम

(Curriculum of Secondary Level)

9वीं और 10वीं कक्षाओं का पाठ्यक्रम

(Curriculum of 9th and 10th Classes)

इस पाठ्यक्रम में आयोग ने निम्नलिखित विषयों को स्थान दिया:-

मातृभाषा, संघीयभाषा या एक शास्त्रीय या आधुनिक भारतीय भाषा (उनके लिए जिनकी मातृभाषा-संघीय भाषा है) अंग्रेजी, प्रांरभिक गणित, सामान्य विज्ञान, भौतिक व जैविक, सामाजिक अध्ययन, भारत के इतिहास पर विशेष बल और विश्व इतिहास की संक्षिप्त रुपरेखा अग्रलिखित विषयों में से कम से दो- एक शास्त्रीय भाषा, एक आधुनिक भाषा, अतिरिक्त गणित, भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र, जीव विज्ञान, अतिरिक्त इतिहास, संगीत, चित्रकला, शित्पकार्य, गृहविज्ञान, पुस्तपालन और लेखा, टंकन एवं वाणिज्य व्यवहार, कृषि विज्ञान और सामान्य इन्जीनियरिंग विज्ञान।

11वीं और 12वीं कक्षाओं के लिए पाठ्यक्रम

(Curriculum for 11th and 12th Classes)

आयोग ने इन कक्षाओं के लिए पाठ्यक्रम में नीचे लिखे विषयों को स्थान दिया:-

मातृभाषा, संघीय भाषा या एक शास्त्रीय या आधुनिक भाषा, अंग्रेजी, सामान्य विज्ञान, भौतिक और जैवकीय या सामाजिक अध्ययन। अग्रलिखित विषयों में से कम से कम दो इतिहास (भारत, यूरोप और विश्व का), भूगोल और भूगर्भशास्त्र, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र, एक शास्त्रीय भाषा, संस्कृत, अरबी, फारसी, लेटिन या यूनानी, एक आधुनिक भारतीय भाषा (हिन्दी, उर्दू, बंगला, मराठी, गुजराती, तमिल, तैलगू) तर्कशास्त्र, मनोविज्ञान, संगीत, ड्राईंग, गृहविज्ञान, शरीर विज्ञान एवं स्वास्थ्य विज्ञानगणित, भौतिकशास्त्र, रसायन शास्त्र, जीवविज्ञान, लेखा-जोखा के सिद्धांत और पुस्तपालन- अधिकोषण के सिद्धान्त, व्यापार-पद्धति, अर्थशास्त्र, इतिहास और भूगोल आशुलिपी और टंकन, औद्योगिक संगठन, व्यापारिक अंक गणित, भूमिविज्ञान के तत्व आदि।

माध्यमिक शिक्षा के लिए अन्य सुझाव

(Other Recommendations for Secondary Education)

माध्यमिक शिक्षा के लिए एक कमेटी केन्द्र में और हर राज्य में बनाई जानी चाहिए ताकि वह शिक्षा की योजना बना सके। शैक्षिक समस्याओं को दूर कर सके उन समस्याओं के कारणों को ढूंढ सके। उसमें आसानी से आगामी शिक्षा का सुधार कर सके।

माध्यमिक शिक्षा के लिए एक बोर्ड बनाया जाये। उस बोर्ड का अध्यक्ष शिक्षा का निदेशक होगा। इस बोर्ड मे 25 से अधिक सदस्य नहीं होने चाहिए। इस बोर्ड को एक उपसमिति बनानी चाहिए जो विशेषकर छात्रों की परीक्षाओं से संबंधित हो। अध्यापक प्रशिक्षण के लिए भी बोर्ड बनाया जाए। उस बोर्ड द्वारा कुछ उचित शर्तें रखी जाय जो अध्यापक व्यवसाय में जाते है

उनके गुणात्मक सुधार के लिए हो। सभी स्कूलों को मान्यता प्रदान की जाए। प्रबन्धन समिति के सभी स्कूल किसी संस्था के रूप में पंजीकृत हो। स्कूलों की समस्याओं का जानने के लिए इन्सपैक्टर होने चाहिए और वे अनुभवी होने चाहिए। शिक्षा की सफलता के लिए शिक्षक का अपने विषय पर स्वामित्व, आदर्शवादिता, प्रायोगिक कार्य में सुधार, मानवता के गुण अति आवश्यक है।

शिक्षा अपने उद्देश्यों को पाठ्यक्रम के माध्यम से प्राप्त करती है। इस कमीशन ने पाठ्यक्रम पर विशेष बल दिया। स्कूली शिक्षा ही विश्वविद्यालय शिक्षा को सुदृढ बनाती है। आयोग ने व्यावसायिक शिक्षा पर भी बल दिया क्योंकि बेरोजगारी की समस्या से निपटने के लिए यह सुलभ साधन है। कृषि, वाणिज्य शिक्षा, इंजीनियरिंग एवं टैक्नोलोजी, कानून, चिकित्सा उद्योग सम्बन्धी व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की शिक्षा पर बल दिया। नारी शिक्षा पर बल दिया। सह शिक्षा की सिफारिश की। नर्सिंग शिक्षा ललित कलाओं, गृहविज्ञान आदि पर बल दिया। वास्तव में यह आयोग शिक्षा-प्रणाली में आधारभूत परिवर्तन करता है और शिक्षा से सम्बन्धित समस्याओं की विवेचना करता है। आयोग का प्रतिवेदन उच्च शिक्षा के विकास के प्रकाश स्तम्भ के समान मार्ग-दर्शक का है। यह प्रतिवेदन आज भी प्रासंगिक है क्योंकि आज भी इसके विश्वविद्यालयी शिक्षा के आधार भूत ढ़ांचे में परिवर्तन किए है। इसने जन कल्याण का ध्यान रखा है। जैसा नाम से ही स्पष्ट है कि यह आयोग विश्वविद्यालय की शिक्षा के लिए विशेष तौर पर बनाया गया था परन्तु उन्होंने इस से निम्न स्तर की शिक्षा के लिए भी सुझाव दिए है जो उस समय में भी कारगर थे और उनका आज भी महत्व है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. आयोग ने कक्षा 9वीं और 10वीं में किन- किन भाषाओं को पाठ्यक्रम में शामिल करने पर बल दिया ?

   The Commission laid stress on the inclusion of which subjects at 9th and 10th class?

2. आयोग का अध्यापक- प्रशिक्षण के प्रति क्या दृष्टिकोण था।

   What type of attitude was of the commission towards teacher ए3दुकाटीओन?

3. आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के गुणात्मक सुधार के लिए क्या सुझाव दिये ?

   What recommendations were given by the Commission for the qualitative improvement of secondary education?

स्वतन्त्रता के पश्चात् माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में अति तीव्र विकास हुआ। अनेक माध्यमिक विद्यालयों का निर्माण किया गया, और पढने वाले बच्चों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई। स्वतन्त्र भारत में राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों में बडी तीव्र गति से परिवर्तन हो रहा है। अत: उनमें सामंजस्य स्थापित करने के लिए माध्यमिक शिक्षा के पुन: निर्माण की आवश्यकता का अनुभव किया गया। 1951 में केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने

माध्यमिक शिक्षा पुनर्गठन के लिए आयोग की नियुक्ति की पुन: मांग की। उसने बलपूर्वक कहा कि माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि माध्यमिक शिक्षा एकभागीय बन गई है। उसे समाप्त करने वाले विद्यार्थियों के समक्ष विश्वविद्यालय में प्रवेश करने या नौकरी की खोज में भटकने के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है। 1949 के विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने यह विचार व्यक्त किया कि उच्च शिक्षा के विकास के लिए माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन बहुत आवश्यक है। अत: यह आवश्यक समझा गया कि माध्यमिक शिक्षा को विद्यार्थियों की रुचियों और अभिरुचियों के अनुकूल बनाया जाए, जिससे वे शिक्षा के वास्तविक लाभ उठा सके।

2.4 माध्यमिक शिक्षा आयोग, 1952-53 (Secondary Education Commission, 1952-53)

ताराचन्द कमेटी एवं केन्द्रीय शिक्षा परामर्श बोर्ड के सुझाव पर भारत सरकार ने 23 सितम्बर 1952 को डा. लक्ष्मण स्वामी मुदालियर की अध्यक्षता में माध्यमिक शिक्षा आयोग नियुक्त किया। इस आयोग का उद्देश्य माध्यमिक शिक्षा की वर्तमान स्थिति का अध्ययन करके उसके पुनर्गठन तथा सुधार में सुझाव देना था। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने वर्तमान माध्यमिक शिक्षा प्रणाली में निम्नलिखित दोषों का उल्लेख किया है:-

- जीवन से अलग
- संकीर्ण एवं एक पक्षीय
- अंग्रेजी-शिक्षा माध्यम
- दोषपूर्ण शिक्षण विधियां
- कक्षाओं में विद्यार्थियो की भीड
- दोषपूर्ण परीक्षा प्रणाली

इस आयोग ने सर्वप्रथम शिक्षा के हर पहलू पर विचार करते हुए उसकी त्रुटियों की और ध्यान दिलाया। इसने संगठित स्वरुप के साथ - साथ पाठ्यक्रम, पाठ्य-पुस्तकें, शिक्षण विधियाँ, अनुशासन, तकनीकी शिक्षा, परीक्षा प्रणाली में सुधार करने के लिए सुझाव दिए।

माध्यमिक शिक्षा का नव संगठित स्वरुप

(New Organizational Pattern of Secondary Education)

आयोग ने माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन आवश्यक बताया क्योंकि यह आयोग विश्वविद्यालय की शिक्षा के मध्य अलगाव की स्थिति को समाप्त करना चाहते थे। विषय पर निम्नलिखित सुझाव दिए:-

1. माध्यमिक शिक्षा की अवधि 7 वर्ष की रखी जाये! यह शिक्षा 11 से 17 वर्ष के बालक और बालिकाओं को दी जाय।
2. शिक्षा काल 2 भागों में बांटा जाए। पहला 3 वर्ष की मिडिल या जूनियर माध्यमिक या सीनियर बेसिक स्तर की शिक्षा और दूसरा 4 वर्ष की उच्चतर माध्यमिक शिक्षा।

3. वर्तमान इन्टरमीडिएट के स्थान पर उच्चतर माध्यमिक स्तर की स्थापना की जाये जिसकी अवधि 4 वर्ष की हो। इन्टरमीडिएट का पहला वर्ष माध्यमिक शिक्षा से तथा दूसरा. वर्ष डिग्री कोर्स से जोडा जाये।
4. हाई स्कूलों से यूनिवर्सिटी में प्रवेश पाने वाले छात्रों के लिए एक वर्ष का पूर्व विश्वविद्यालय शिक्षा कोर्स रखा जाये। उच्चतर माध्यमिक या पूर्व यूनिवर्सिटी पास करने के बाद ही व्यावसायिक कॉलेजों में प्रदेश का अधिकार होगा।
5. बहु उद्देशीय स्कूलों की स्थापना की जाय ताकि बालक अपनी रुचि और योग्यता के अनुसार पाठ्यक्रम चुन सके।
6. पोलिटेक्निक या प्रौद्योगिक संस्थाएं खोली जाए ताकि छात्रों को उच्च विशेषीकृत कोसों को लेने का अवसर प्राप्त हो सके।
7. ग्रामीण विद्यालयों में कृषि की शिक्षा का विशेष प्रबंध किया जाय। इसके साथ उद्यान विज्ञान, पशुपालन और कुटीर उद्योग धंधों की भी व्यवस्था की जाये।

तकनीकी शिक्षा

(Technical Education)

इस आयोग ने माध्यमिक स्तर पर तकनीकी शिक्षा के विकास में बहु मूल्य सुझाव दिए थे परन्तु ये विद्यालय देश की आवश्यकता की पूर्ति न कर सके। आयोग के सुझाव थे:-

1. टेक्नीकल स्कूल अधिक संख्या में या बहु उद्देशीय संस्था में चलाए जाए।
2. बड़े नगरों में सैन्ट्रल टैक्नीकल स्कूलों की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे स्थानीय स्कूलों की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके।
3. एप्रैंटिस प्रशिक्षण के नियम बनाये जाये।
4. टेक्नीकल विद्यालयों की स्थापना शिक्षाशास्त्रियों की सलाह से होनी चाहिए।
5. इंडस्ट्रियल शिक्षा पर कर लगाना चाहिए।

अन्य प्रकार के विद्यालय

(Other Type of Schools)

पब्लिक स्कूलों को 5 वर्ष तक यथावत् चलने दिया जाये। पांच वर्ष तक दी जाने वाली आर्थिक सहायता धीरे-धीरे कम कर दी जाए। इनमें से योग्य छात्रों को एक निश्चित संख्या को सरकार द्वारा छात्रवृतियां दी जाये।

1. चुने हु ए ग्रामीण क्षेत्रों में आवासीय स्कूलों की स्थापना की जाए।
2. उपयुक्त स्थानों पर आवास-दिवा-विद्यालयों की स्थापना की जाये। इनमें लाभ यह होगा शिक्षक छात्र-सम्पर्क मनोरंजन और पाठ्यचर्चा अतिरिक्त क्रियाओं के लिए अधिक उतम अवसर प्राप्त हो सके।
3. विकलांग बच्चों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बहु त बडी संख्या में स्कूल खोले जाये।
4. बालक और बालिकाओं को दी जाने वाली शिक्षा में भेद न किया जाए। सह शिक्षा के स्कूलों में बालिकाओं को गृहविज्ञान के अध्ययन की विशेष सुविधाएं दी जाये।
5. जहां लड़कियों के लिए पृथक विद्यालय की मांग है वहां अलग स्कूल खोले जाएं।

6. सहशिक्षा स्कूलों में अध्यापिकाओं की नियुक्ति हेतु नियमों का कठोरता से पालन होना चाहिए।

भाषा

(Language)

भाषा के सम्बन्ध में आयोग ने कहा कि माध्यमिक स्तर पर शिक्षा माध्यम या तो मातृभाषा होनी चाहिए या प्रादेशिक भाषा। स्कूल कोर्स में हिन्दी अनिवार्य विषय होना चाहिए। संविधान में इसे राजभाषा का दर्जा दिया गया है यह भाषा राष्ट्र को सुदृढ बनाने में भूमिका निभायेगी। आयोग ने अंग्रेजी का भी समर्थन किया है क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रगति के लिए इस भाषा का महत्व है। संस्कृत को भी आयोग ने महत्व दिया और कहा कि यह भाषा भारतीय भाषाओं की जननी है। इसके अध्ययन से ही हम भारत के महान ग्रन्थों से भरे ज्ञान को प्राप्त कर सकते है। अनेक भाषा भाषी अल्पसंख्यकों के लिए केन्द्रींय शिक्षा सलाहकार बोर्ड के सुझावों के अनुसार भाषाओं के अध्ययन के लिए विशेष सुविधाएं दी जानी चाहिए। और सैकेन्डरी स्तर पर कम से कम 2 भाषाएं अवश्य सिखाई जानी चाहिए।

पाठ्यक्रम

(Curriculum)

उच्च और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम को दो भागों में बांटा गया है-

चित्र 2.1 माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम

इस प्रकार के पाठ्यक्रम के सुझाव के लिए आचार्य नरेन्द्र देव समिति व ताराचन्द समिति ने इस दिशा में कदम उठाए थे परन्तु इस आयोग ने ठोस कदम उठाए। इस आयोग ने पाठ्यक्रम के निर्माण के सिद्धान्तों पर भी जोर दिया जैसे कि इस आयोग ने पाठ्यक्रम निर्माण करते समय छात्रों की मानसिक और शारीरिक भिन्नता, समाज और छात्रों की मांगों की पूर्ति, व्यक्तित्व के विकास का ध्यान रखा है। इन्होंने इस बात पर बल दिया कि पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जो बालक के वास्तविक जीवन से जुड़ा हो और उसमें लचीलापन हो। पाठ्यक्रम सामूहिक जीवन के साथ जुडा होना चाहिए जिससे एक सम्य नागरिक का निर्माण हो। पाठ्यक्रम में उत्पादक कार्य को भी आवश्यक स्थान मिले और अवकाश के समय में भी प्रशिक्षण मिले।

अन्य सुझाव (Other Recommendations)

पाठ्य पुस्तकें

आयोग ने पाठ्यपुस्तकें कैसी हो? इस बात पर भी रोशनी डाली है। पाठ्य पुस्तक के आन्तरिक और बाहय विशेषताओं के बारे में सुझाव दिए है। सर्वोच्च पाठ्यपुस्तक कमेटी का

निर्माण किया गया। शिक्षा निदेशक को इस कमेटी का सचिव होना चाहिए। पाठ्यपुस्तक समिति द्वारा पुस्तकों के कागज, छपाई, जिल्द पृष्ठ आदि चित्र बनाने की कला में प्रशिक्षण देने के लिए एक संस्था स्थापित की जाएँ। एक विषय के लिए विभिन्न पाठ्यपुस्तकें निर्धारित की जाये। पाठ्यपुस्तकों में किसी धर्म, समुदाय, सामाजिक परम्पराओं के प्रति द्वेष घृणा की भावना न हो। पुस्तकों को शीघ्र परिवर्तन करने की प्रथा खत्म हो।

शिक्षण विधियाँ

शिक्षण विधियों के बारे में आयोग ने कहा शिक्षण ऐसी परिस्थिति के माध्यम से किया जाना चाहिए जो साभिप्राय, मूर्त और वास्तविक हो। क्रिया पद्धति और योजना पद्धति को स्थान देना चाहिए। विभिन्न प्रकार के अभिव्यक्ति कार्यो को विद्यालय के प्रत्येक विषय के कार्यक्रमों में महत्वपूर्ण स्थान दिया जाना चाहिए। छात्रों को समूहों में कार्य करने में अधिक अवसर प्राप्त किए जाएँ। प्रगतिशील शिक्षण विधियों को लोकप्रिय बनाने के लिए प्रयोगात्मक और प्रदर्शनात्मक स्कूलों की स्थापना की जानी चाहिए। शिक्षण विधियां केवल ज्ञान देने वाली ही नहीं बल्कि मूल्यों, मनोवृत्ति व अच्छी आदतों का निर्माण करने वाली होनी चाहिए।

अनुशासन

अनुशासन की समस्या पर विचार कर आयोग ने सुझाव दिए कि सामूहिक खेलों को प्रोत्साहन मिले। सहगामी पाठ्यक्रियाओं को शिक्षण का अभिन्न अंग माना जाये। केन्द्र सरकार एन.सी.सी का प्रसार करे। प्राथमिक चिकित्सा रेडक्रास आदि को विद्यालय मे प्रोत्साहन दिया जा सके।

मार्गप्रदर्शन एवं समुपदेशन

आयोग ने इस बात पर भी जोर दिया कि छात्र, उद्योगों के विभिन्न व्यवसायों के क्षेत्र, प्रकृति और महत्व की जानकारी प्राप्त करें। इसलिए विभिन्न उद्योगों से सम्बन्धित कार्यो की फिल्म तैयार करें और छात्रों को दिखाए। साथ ही छात्रों को उद्योगों या कल-कारखानों में ले जाया जाये। विद्यालय में प्रशिक्षित मार्ग प्रदर्शन अधिकारियों और जीविकोपार्जन शिक्षकों की नियुक्ति की जाये। इनके प्रशिक्षण के लिए भी प्रावधान हो।

सभी राज्यों में स्कूल-स्वास्थ्य सेवा का सुन्दर ढंग से संगठन किया जाय। प्रत्येक छात्र की स्वास्थ्य रिपोर्ट तैयार की जाये। सभी विद्यालयों में छात्रों का स्वास्थ्य-परीक्षण हो और उसकी चिकित्सा भी हो। विद्यालय अपने वातावरण की सफाई रखे और छात्रों में श्रम-निष्ठा जागृत हो। आवासी-विद्यालयों तथा छात्रावासों में पोषक तब युक्त भोजन मिले। शारीरिक शिक्षा के प्रशिक्षण में स्वास्थ्य शिक्षा के सभी पक्षों को सम्मिलित किया जाये। शारीरिक शिक्षा के शिक्षक को वहीं स्थान दिया जाये जो अन्य विषय के शिक्षक को दिया जाता है।

परीक्षा एवं मूल्यांकन

आयोग. का विचार है कि परीक्षा और मूल्यांकन का शिक्षा के क्षेत्र में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। आयोग ने सुझाव दिया कि सैकेण्डरी स्कूल का सम्पूर्ण पाठ्यक्रम समाप्त करने के बाद केवल एक संवैधानिक परीक्षा ली जाये। परीक्षा में सभी प्रकार के प्रश्नों का समावेश हो। निबन्धात्मक प्रश्न, वस्तुनिष्ठ और लघुउतर प्रश्न हों। छात्रों के कार्यो का मूल्यांकन करते समय आन्तरिक परीक्षाओं के साथ साथ नियतकालिको जांचों और विद्यालय अभिलेखों को भी उचित

महत्व दिया जाये। बाह्य तथा आंतरिक परीक्षाओं में छात्रों का मूल्यांकन अंकों में न होकर प्रतीकात्मक रुप में किया जाये। इस आयोग ने पांच बिन्दु मापदंड का सुझाव दिया। अंतिम परीक्षा के बाद प्रमाणपत्र प्रदान किया जाये। बाहय परीक्षा में पूरक परीक्षा का भी प्रयोग किया जाये। कोई भी छात्र पाठ्यक्रम के निर्धारित सभी विषयों में उतीर्ण होने के बाद आंतरिक विषय की परीक्षा दे सकता है।

अध्यापक

आयोग ने अनुभव किया कि शिक्षा के पुनर्निमाण में अध्यापकों का स्थान महत्वपूर्ण है। आयोग ने शिक्षकों की स्थिति को सुधारने के लिए दिया कि सम्पूर्ण देश में अध्यापकों के चुनाव और नियुक्ति की विधि एक सी होनी चाहिए। समान का करने वाले अध्यापकों को समान वेतन दिया जाना चाहिए। सभी विद्यालयों में शिक्षकों की छुट्टी देने के नियम एक जैसे होने चाहिए। उनके लिए 'ट्रिपल लाभ योजना' कार्यान्वित की जानी चाहिए। माध्यमिक विद्यालयों में शिक्षक प्रशिक्षित स्नातक होने चाहिए। उनको स्वदेश या विदेश में उच्च अध्ययन के लिए भेजने की सुविधाएं देनी चाहिए। यदि शिक्षक स्वस्थ और कार्य करने योग्य है तो शिक्षक संचालक की अनुमति से उसकी 60 साल की अवस्था तक कार्य करने की आज्ञा दी जानी चाहिए। प्रशिक्षित अध्यापकों की परीवीक्षा की अवधि एक वर्ष होनी चाहिए। शिक्षकों की सामाजिक स्थिति सुधारने के लिए और उनके व्यवसाय को सम्मान देने के लिए प्रतिष्ठित लोगों द्वारा सम्मान दिया जाना चाहिए।

प्रशिक्षण विद्यालय केबल दो प्रकार के होने चाहिए।

1. उनके लिए जो उच्चतर माध्यमिक शिक्षा प्राप्त है। इनका प्रशिक्षण काल 2 वर्ष का होना चाहिए।
2. उनके लिए जो स्नातक है। इनका प्रशिक्षण काल एक वर्ष का होना चाहिए।

प्रशिक्षण विद्यालय एक बोर्ड के अधीन रखे जाने चाहिए। अध्यापकों को अतिरिक्त पाठ्य क्रियाओं में भी प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। उनके गुणात्मक सुधार के लिए अभिनव कोर्स, गहन पाठ्यक्रमों और कार्यशाला के व्यावहारिक प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए।

प्रशासन

शिक्षा के उद्देश्यों की उपलब्धि उतम प्रशासन पर निर्भर करती है। संगठन, प्रशासन, निरीक्षण, मान्यताएं एवं दशाएं, भवन एवं साधन काम के घण्टे तथा अवकाश, सार्वजनिक सेवा में भर्ती आदि के बारे में आयोग ने सुझाव दिया है कि शिक्षा-निदेशक शिक्षा मंत्री को परामर्श देने के लिए उतरदायी है। वह संयुक्त सचिव का कार्य भी करे। केन्द्र ओर प्रदेश मे शिक्षा मंत्रियों की एक समिति हो जो शिक्षा के विकास के लिए भी कार्य करे। 25 सदस्यों का एक बोर्ड हो। शिक्षा निदेशक इसका सभापति हो। एक अध्यापक प्रशिक्षण बोर्ड हो। निरीक्षकों का कार्य समस्याओं का अध्ययन करना एवं सुझाव देना हो। निरीक्षक अनुभवी हो कम से कम 10 वर्ष का अनुभव हो। नये विद्यालयों को मान्यता तभी दी जाय जब वे सभी दशाएं पूरी करते है। विद्यालय की प्रबंधन समिति में अध्यापकों के प्रतिनिधि एवं हैडमास्टर भी सदस्य हों। गृहविज्ञान, कला, संगीत को मान्यता देने के लिए विशेष पैनल की नियुक्त की जानी चहिए। ग्रामों में विद्यालयों की स्थापना हो और भवन निर्माण में सहायता मिले। 200 दिन का

कार्यवर्ष हो। 2 माह का ग्रीष्मावकाश तथा 10 एवं 15 दिन के अल्पअवकाश वर्ष में दो बार हो। विद्यालय सप्ताह में 6 दिन तक लगातार खोला जाये। प्रत्येक राज्य में शिक्षा विभाग को परामर्श देने के लिए राज्य सलाहकार बोर्ड (State Advisory Board) की स्थापना की जाए।

आयोग ने ऐसे साधन सुझाए जिनसे माध्यमिक शिक्षा के लिए धन प्राप्त किया जा सकता है। आयोग ने कुछ ऐसे विधियों की ओर भी संकेत किया जिससे शिक्षा पर होने वाले व्यय कम हो सकते है। आयोग का यह मानना था कि माध्यमिक शिक्षा के सुधार और पुनर्गठन के लिए केन्द्र और राज्य में घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित होना चाहिए। व्यावसायिक शिक्षा के लिए व्यवसायिक शिक्षा परिषद् (Board of Vocational Education) का निर्माण किया जाये। राष्ट्रीय उद्योगों जैसे- रेल, संचार, तार और डाक आदि से होने वाली आय का कुछ भाग तकनीकी शिक्षा पर खर्च किया जाये। विद्यालय जिन वैज्ञानिक यंत्रों, पुस्तकों तथा अन्य वस्तुओं को खरीदे उन पर किसी प्रकार की चुंगी न ली जाए। केन्द्र और राज्य जहां तक संभव हो वहां स्कूलों के मैदानों, कृषि के फार्म, इमारतों पर सम्पत्ति कर नहीं लगाना चाहिए।

आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन, प्रसार और प्रगति का कुछ उतरदायित्व केन्द्र पर सौंपने के लिए भी सुझाव दिए जैसे छात्रों और शिक्षकों के लिए उतम पुस्तकों का प्रकाशन, प्रविधिक विषयों में शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षण- संस्थाओं की स्थापना, माध्यमिक शिक्षा की प्रमुख समस्याओं में अनुसंधान करने के लिए केन्द्रों की स्थापना, शिक्षकों और मुख्याध्यापकों के प्रशिक्षण -के लिए अभिनव कोसों सेमिनार को सम्मेलनों का आयोजन व दृश्य श्रव्य सामग्री और शैक्षिक फिल्मों का निर्माण आदि।

इस आयोग से पूर्व अनेक आयोगों और समितियों की नियुक्तियां हुई पर उनमें से किसी के सुझाव और सिफारिशें इतनी महत्वपूर्ण नहीं थी। इस आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के सम्पूर्ण क्षेत्र का अध्ययन किया और अनेक सुधार और परिवर्तन के बारे में सुझाव दिए। आयोग का मुख्य सुझाव है- व्यक्तिगत रुचियों और क्षमताओं को संतुष्ट करने के लिए पाठ्यक्रम का विभिन्नकरण। व्यक्तिगत विभिन्नता के कारण व्यक्तिगत योग्यताओं के अनुसार विषयों का चयन करने के लिए बहु उद्देशीय विद्यालयों की स्थापना। उद्योग की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कृषि-शिक्षा की समुचित व्यवस्था। भावी व्यवसाय को चुनने के लिए छात्रों को सहायता देने के लिए मार्ग-प्रदर्शन और समुपदेशन। परीक्षा के दोषों के उन्मूलन के लिए शैक्षिक योग्यता का मूल्यांकन करने के लिए नवीन पद्धति के लिए सुझाव दिए। आयोग ने सजीव और गतिशील विधियों की सिफारिश की। माध्यमिक स्कूलों में पुस्तकालयों के महत्व को बताया और पाठ्यपुस्तकों के गुणात्मक सुधार के लिए सुझाव दिए। आयोग ने शिक्षकों के गुणातम्क सुधार के लिए ब उनके आर्थिक सुधार के लिए भी सुझाव दिए। छात्रों के चरित्र निर्माण के लिए उसने आचार संहिता, अतिरिक्त पाठ्य सहगामी क्रियाएं, एन.सी.सी. आदि पर बल दिया। यहां तक कि इस आयोग ने वित्त सम्बन्धी सुझाव दिए और अर्थ किन-किन साधनों से प्राप्त किया जा सकता है वे मार्ग सुझाए। इस प्रकार हम देखते है कि माध्यमिक शिक्षा आयोग से शिक्षा का कोई पहलू अछूता नहीं रहा है। उन्होंने हर पहलू पर सोच विचार कर अपने सुझाव दिए।

कोई भी शिक्षा आयोग कितना भी प्रयास करे कि वह शिक्षा के हर क्षेत्र के लिए सोचेगा विचारेगा और उस पर अपने विचार प्रस्तुत करेगा फिर भी वह दोष मुक्त नहीं होगा। इस प्रकार इस प्रतिवेदन को भी दोषमुक्त नहीं कहा जा सकता। पहला दोष यह है कि व्यक्तिगत विद्यालय की प्रबंधकारिणी समितियों के सदस्यों की शैक्षिक योग्यता के बारे में कुछ नहीं कहा क्योंकि शैक्षिक योग्यता के बिना वे शिक्षा में सुधार नहीं ला पायेंगें। दूसरा दोष है कि बालिकाओं की शिक्षा के विस्तार और उनके पाठ्यक्रम के बारे में कोई खास सुझाव नहीं दिए। तीसरा माध्यमिक स्तर पर आन्तरक विषय और 3 अन्य विषयों के अतिरिक्त प्रत्येक छात्र को 3 भाषाओं का अध्ययन करना पड़ेगा। चौथा, इन्टरमिडिएट कक्षाओं को समाप्त कर माध्यमिक विद्यालयों में उस कक्षा को लाना। क्या ये विद्यालय, विश्वविद्यालयों की तरह सम्पन्न साधनों वाले होंगे नहीं। इसलिए कुछ विषय विशेषकर विज्ञान की शिक्षा इतनी अच्छी प्रकार नहीं दी जायेगीं जितनी विश्वविद्यालय स्तर पर।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य क्या है ?

   What are aims of secondary education according to Secondary Education Commission?

2. माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षा के किस क्षेत्र पर अधिक बल दिया?

   On which sector of education did secondary education commission lay stress?

3. मुदालियर कमीशन के द्वारा दिए गए कोई दो सुझाव बताइए जिनका अध्यापक प्रशिक्षण की गुणवत्ता पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।

   Give two main recommendations of the Madaliyar Commission which have direct implications in the quality of teacher training.

4. माध्यमिक शिक्षा के नवीन संगठन के विषय में मुदालियर आयोग की सिफारिशों का संक्षेप में वर्णन कीजिये।

   Describe briefly the recommendations of the Mudaliyar Commission regarding the new organizational pattern of secondary education.

2.5 1950 से 1964 के मध्य माध्यमिक शिक्षा का विकास (Development of Secondary Education during 1950 to 1964)

प्राथमिक शिक्षा की प्रगति के साथ-साथ माध्यमिक शिक्षा का भी प्रसार हुआ। 1950-51 में माध्यमिक स्कूलों, छात्रों और शिक्षकों की संख्या क्रमश: 20,884, 52,32,004 तथा 21,200 थी। आंध्र प्रदेश, गुजरात, केरल, कर्नाटक, नागालैंड, आदि में माध्यमिक स्तर की शिक्षा निःशुल्क थी। राजस्थान, मध्यप्रदेश, मणिपुर, उडीसा, आदि में यह शिक्षा केवल बालिकाओं के लिए निःशुल्क थी। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के बच्चों के लिए देशभर में माध्यमिक स्तर तक शिक्षा निशुल्क थी।

भारत सरकार 1955 में स्थापित की जाने वाली अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षा परिषद् की सहायता से माध्यमिक शिक्षा में सुधार एवं प्रसार के लिए ठोस कदम उठा रही थी। शिक्षकों के प्रशिक्षण में गुणात्मक उन्नति करने के लिए दिल्ली के केन्द्रीय शिक्षा संस्थान का विस्तार किया गया। राज्यों में 1963-64 मे स्थापित किए जाने वाले राज्य शिक्षा संस्थान भी इसी दिशा में प्रगतिशील है। हैदराबाद में 1958 में स्थापित किया जाने वाला 'सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ इंग्लिश अंग्रेजी' की शिक्षा के उद्देश्यों को पुन: निर्धारण एवं शिक्षण विधियों के आधुनिकीकरण में संलग्न है।

माध्यमिक विद्यलयों के लिए सस्ती और छात्रोपयोगी पुस्तकों के निर्माण में दिल्ली में स्थापित किया जाने वाला 'केन्द्रीय पाठ्यपुस्तक अनुसंधान कार्यालय' प्रशंसनीय कार्य कर रहा है। विभिन्न राज्यों में स्थापित किए जाने वाले 'शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन के राज्य कार्यालय' जीविकोपार्जन राष्ट्रीय शिक्षकों एवं निर्देशन परामर्शदाताओं के प्रशिक्षण के कार्यक्रम को क्रियान्वित कर रहे हैं। राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान' में स्थापित किया जाने वाला विज्ञान विभाग-माध्यमिक विद्यालयों में विज्ञान शिक्षा की उन्नति में व्यस्त है।

1962 में स्थापित किया जाने वाला माध्यमिक शिक्षा का केन्द्रीय बोर्ड अखिल भारतीय उच्चतर माध्यमिक परीक्षा लेने का कार्य सफलतापूर्वक कर रहा है। इस परीक्षा का संबंध केन्द्रीय विद्यालयों से है जिनमें समान पाठ्यक्रम तथा समान शिक्षा माध्यम है। इन विद्यालयों का संबंध केवल उन्हीं केन्द्रीय कर्मचारियों के बच्चों के लिए किया गया था, जिनका सम्पूर्ण देश में यंत्र-तंत्र स्थानान्तरण होता रहा है। परन्तु बाद में इस बोर्ड ने अन्य माध्यमिक विद्यालयों को भी अपनी सेवाएं प्रदान की, जो इसके द्वारा संचालित परीक्षा में सम्मिलित होने के इच्छुक है। इस समय बोर्ड से मान्यता प्राप्त 78 प्रतिशत केन्द्रीय विद्यालय है। इन विद्यालयों के संचालन एवं प्रशासन के लिए केन्द्रीय विद्यालय संगठन नामक एक स्वतन्त्र संस्था का निर्माण किया गया

2.6 पंचवर्षीय योजनाओं में माध्यमिक शिक्षा का विकास (Growth of Secondary Education under Five Year Plans)

शताब्दियों से पराधीनता की श्रृंखलाओं में बंदी भारत ने 15 अगस्त 1947 को मुक्त होकर स्वाधीनता की पावन वायु में सांस ली। स्वाधीनता के चरम लक्ष्य की सफलता जन-जन की समृद्धि में निहित थी। भारत ने 1949 में पंडित जवाहरलाल नेहरु की अध्यक्षता में एक योजना आयोग का निर्माण किया, जिसे इस बात का आदेश दिया जाए कि वह पूंजी एवं मानव साधनों के संतुलित उपयोग के लिए एक योजना का निर्माण करे। पहली पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत माध्यमिक शिक्षा आयोग की सिफारिशों के अनुसार माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन करने का प्रयास, बहु उद्देश्य स्कूलों की स्थापना पुराने माध्यमिक स्कूलों का सुधार और माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में व्यावसायिक विषयों कृषि शिक्षा आदि का समावेश किया गया।

सारणी 1.2 माध्यमिक स्कूलों में विद्यार्थियों का नामांकन

वर्ष		9 से 11/12 में नामांकन (मिलियन मे)	9 से 11/12 में विद्यार्थियों का प्रतिशत
1950-51	लड़के	1.09	9.3
प्रथम योजना	लड़कियां	0.16	1.5
	कुल	1.25	5.5
1955-56	लड़के	1.65	13.4
द्वितीय योजना	लड़कियां	.33	2.9
	कुल	1.98	8.3
1960-61	लड़के	2.47	17.5
तृतीय योजना	लड़कियां	0.56	4.3
	कुल	3.03	11.1
1965-66	लड़के	4.08	25.5
वार्षिक योजना	लड़कियां	1.20	10.4
	कुल	5.28	16.9

स्त्रोत- नरुल्ला और नायक, 1971

1946-47 में हाई स्कूल स्तर (जिस में इन्टरमिडिएट भी शामिल है) पर विद्यार्थियों की संख्या 19 लाख थी। 1949-50 में 9वीं से 11वीं कक्षाओं में विद्यार्थियों की संख्या 10.5 लाख थी। 1960-61 में यह संख्या लगभग 30 लाख हो गई। यह बात ध्यान देने योग्य है कि लड़कियों की शिक्षा संबधी नामांकन संतोषजनक नहीं है। परंतु यह बात भी ध्यान रखनी चाहिए कि ग्रामीण तथा शहरी दोनों प्रकार के विद्यार्थियों के नामांकन में वृद्धि हुई।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा के स्वरुप में परिवर्तन करने के प्रयास बहुद्देशीय एवं जूनियर टैक्निकल स्कूलों की स्थापना, हाई स्कूलों का उच्चतर माध्यमिक स्कूलों में परिवर्तन, माध्यमिक विद्यालयों में बालिकाओं में संख्या में वृद्धि, शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था और ग्रामीण माध्यमिक स्कूलों में कृषि शिक्षा की व्यवस्था के क्षेत्र में उपलब्धियां प्राप्त हुई। बहुउद्देशीय विद्यालयों की संख्या 2115 हो गई जो प्रथम योजना के अंत तक 255 थी। इस योजनाकाल में माध्यमिक स्तर पर सन् 1950-51 की तुलना में सन् 1965-66 में प्रविष्टि संख्या में तीन गुणा वृद्धि हुई। यह वृद्धि सन् 1950-51 के आधार वर्ष की तुलना में 18 प्रतिशत अधिक है जबकि यह 1950-51 में पूरी संख्या का लगभग 5 प्रतिशत थी। विद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा की गुणवत्ता मुख्य रुप से शिक्षकों की शैक्षिक और व्यावसायिक योग्यता पर निर्भर करती है। बदले हुए परिप्रेक्ष्य में शिक्षा में शिक्षक प्रशिक्षण को अधिक महत्व मिला। 1949-50 में प्रशिक्षित शिक्षकों की संख्या 52.6 प्रतिशत (मिडल) माध्यमिक विद्यालयों में और सैकेण्डरी विद्यालयों में 53.39 प्रतिशत थी। सन् 1965-66 में यह संख्या माध्यमिक स्तर पर 77.4 प्रतिशत तथा सैकेण्डरी स्तर पर 67.7 प्रतिशत हो गई। अत: संख्यात्मक रुप से राष्ट्रीय स्तर पर जो प्रगति हुई यद्यपि वह प्रभावशाली थी, परन्तु इस वृद्धि का प्रसार असमान था। यह असमानता अलग-अलग राज्यों के अन्तर्गत तथा विभिन्न प्रांतीय क्षेत्रों में व्याप्त थी।

पहली पंचवर्षीय योजना आरंभ होने के बाद से शिक्षा की सुविधाओं में सभी स्तरों पर प्रशंसनीय विस्तार हुआ। किन्तु जब दृष्टि इस समस्या की विशालता, देश की जनशक्ति का विकास करने और ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न करने की आवश्यकता पर गई, जिनसे सबको आगे बढ़ने के समान अवसर मिल सके, तब शिक्षा के विकास की प्रगति की और भी तीव्र करने का निश्चय किया गया। तीसरी पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य माध्यमिक स्तर पर विज्ञान की शिक्षा की सुविधाओं में विस्तार करना था: प्राविधिक, प्रौद्योगिक एवं व्यावसायिक शिक्षा का देश की आवश्यकताओं के अनुसार प्रसार करना था: जिसके परिणामस्वरुप माध्यमिक स्तर पर छात्रों एवं छात्राओं की संख्या में वृद्धि, विज्ञान शिक्षा की सुविधाओं में वृद्धि, विभिन्न पाठ्यक्रमों की व्यवस्था, बहु-उद्देशीय विद्यालयों में सुधार, माध्यमिक स्कूलों को उच्चतर माध्यमिक स्कूलों में परिवर्तन तथा शिक्षा अनुसंधान पर बल दिया गया। प्राविधिक एवं व्यावसायिक शिक्षा की सुविधाओं में विस्तार किया गया।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. प्रथम पंचवर्षीय योजना से पहले माध्यमिक शिक्षा की क्या स्थिति थी?
   What was the condition of secondary education before first five year plan?
2. तीसरी पंचवर्षीय योजना के कार्यकाल में माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए क्या कार्य किए गए?

What efforts were made for the development of secondary education under the third five year plan?

3. माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में भारत सरकार की गतिविधियों का संक्षिप्त वर्णन लिखिए।

Give a short account of the activities of the Govt. of India in the field of secondary education?

2.7 सारांश

(Summary)

1947 से 1964 के काल के बीच में तीन विशेषज्ञ संस्थाओं ने माध्यमिक शिक्षा की समस्याओं का परीक्षण किया- ताराचंद कमेटी (1948), विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948-49) तथा माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53)। इन आयोगों ने माध्यमिक शिक्षा की मौजूद पद्धति के विभिन्न दोषों की ओर आकर्षित किया। विद्यार्थियों की व्यक्तिगत रुचियों व प्रवृत्तियों को संतुष्ट करने के लिए माध्यमिक चरण में कोसों में विविधता लाए जाने के सुझाव दिए गए। विद्यार्थियों को व्यावसायिक दृष्टिकोण से आत्म-निर्भर बनाने के लिए बहु-उद्देश्य विद्यालयों की स्थापना के लिए सिफारिश की गई। ताराचंद कमेटी ने माध्यमिक शिक्षा की समस्याओं की जांच करने के लिए एक आयोग नियुक्त करने की सिफारिश की थी।

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का प्रमुख उद्देश्य भारत में विश्वविद्यालय शिक्षा संबंधी तत्वों का विस्तृत अध्ययन करना था, परन्तु इसने माध्यमिक शिक्षा के उन तत्वों पर भी विचार प्रकट किया जो विश्वविद्यालय की शिक्षा से सम्बन्धित थे।

माध्यमिक शिक्षा आयोग का उद्देश्य माध्यमिक शिक्षा की वर्तमान स्थिति का अध्ययन करके उसके पुनर्गठन तथा सुधार के लिए सुझाव देना था। आयोग ने माध्यमिक शिक्षा की अवधि को दो भागो में विभाजित करने का प्रस्ताव रखा- पहला जूनियर माध्यमिक तथा दूसरा उच्चतर माध्यमिक स्तर। औद्योगिक केन्द्रों में तकनीकी स्कूलों की स्थापना का सुझाव रखा। माध्यमिक स्तर पर शिक्षा माध्यम या तो मातृभाषा होना चाहिए या प्रादेशिक भाषा। अंग्रेजी भाषा को एक अनिवार्य विषय के रुप में पढ़ा जाना चाहिए। माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम को अनुचित, अवास्तविक, मनोवैज्ञानिक प्रगतिशील, संकीर्ण, पुस्तकीय तथा परीक्षाओं से बेसिक कहकर इसका खण्डन किया गया है। पाठ्य-पुस्तकें शिक्षा स्तर को उन्नत करने का आधार है। इनका गुणात्मक सुधार होना चाहिए। केन्द्रीय संस्था को पुस्तक उत्पाद में भी आधुनिक शैलियों के अनुसार आदर्श पाठ्य-पुस्तकें तैयार करनी चाहिए। शिक्षण विधियां ऐसी होनी चाहिए जो विद्यार्थियों को स्पष्ट चिंतन तथा लेखन एवं भाषण द्वारा स्पष्ट अभिव्यक्ति के पर्याप्त अवसर प्रदान करें। यद्यपि माध्यमिक शिक्षा द्वारा दिए गए कुछ सुझाव दोषपूर्ण थे, परन्तु इनके बावजूद इसने माध्यमिक शिक्षा के विभिन्न पहलुओं के सुधारों के लिए असंख्य व्यावहारिक और उपयोगी सुझाव दिए थे।

स्वतन्त्र भारत की माध्यमिक शिक्षा के इतिहास में इस काल का महत्वपूर्ण स्थान है। क्योंकि माध्यमिक शिक्षा आयोग की सिफारिशों के आधार पर शिक्षा की प्रकृति में अत्याधिक परिवर्तन किया गया। इस आयोग की रिपोर्ट को शिक्षकों के लिए बाइबल कहा जाता है। भारतीय गणतन्त्र के संवैधानिक राज्य के अंतर्गत भी ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली में कुछ सुधार किए गए। इस काल में यद्यपि संख्यात्मक रुप से काफी सुधार किया गया, परन्तु गुणात्मक रुप से अधिक सुधार नहीं किया गया।

2.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Nurullah Syed and Naik J.P. : Student History of Education in India Macmillan Calcutta 1971

Report of the University Education Commission 1948-49, Ministry of Education, Govt. of India, New Delhi

Report of the Secondary Education Commission, 1952-53, Ministry of Education, Govt. of India, New Delhi

इकाई-3

माध्यमिक शिक्षा का विकास -1966 से 1985

(Development of Secondary Education- 1966 तो 1985)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

3.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

3.1 भारतीय शिक्षा आयोग 1964-66 (Indian Education Commission, 1964-66)

3.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 (National Education Policy,1968)

3.3 ईश्वर भाई पटेल समिति, 1977 (Ishwar Bhai Patel Committee,1977)

3.4 चौथी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा 1969-74 (Secondary Education in Fifth Five Year Plan, 1969-74)

3.5 पांचवी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा 1974-79 (Secondary Education in Fifth Five Year Plan, 1974-79)

3.6 छठी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा 1979-84 (Secondary Education in Sixth Five Year Plan, 1979-84)

3.7 सारांश (Summary)

3.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

3.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर आप:

- शिक्षा आयोग की स्थापना से पहले माध्यमिक शिक्षा की व्यवस्था को जान जाएंगे।
- माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए शिक्षा आयोग द्वारा दी गई सिफारिशों को समझ सकेंगे।
- शिक्षा आयोग द्वारा दिए गए सुझावों के आधार पर क्रियान्वयन का मूल्यांकन कर सकेंगे।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 तथा शिक्षा आयोग के सुझावों में संबंध स्थापित कर सकेंगे।
- एक राष्ट्रीय शिक्षा नीति की आवश्यकता का अनुभव कर सकेंगे।
- चौथी, पांचवी तथा छठी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा के विकास की तुलना कर सकेंगे।
- शिक्षा में माध्यमिक स्तर के क्षेत्र के लिए प्राथमिकताओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
- विभिन्न क्षेत्रों में माध्यमिक शिक्षा के प्रसार की आवश्यकताओं का अनुभव कर सकेंगे।

- 1966 से 1985 के काल में माध्यमिक शिक्षा के विस्तार का मूल्यांकन कर सकेंगे।
- माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए सुझाव दे सकेंगे।

तीसरी पंचवर्षीय योजना के पश्चात् यह देखा गया कि स्वतन्त्र भारत की प्रचलित सामाजिक एवं आर्थिक आवश्यकताओं के अनुराप स्कूली शिक्षा का विकास नहीं हो सका क्योंकि शिक्षा के क्षेत्र में भारत की राजनैतिक तथा सामाजिक शक्तियों का प्रभुत्व रहा। 1951-1971 के बीच साक्षरता दर में वृद्धि केवल 16.12 प्रतिशत थी जो प्रतिवर्ष 1 प्रतिशत की दर से भी कम है।

3.1 भारतीय शिक्षा आयोग 1964-66 (Indian Education Commission, 1964-66)

भारतीय शिक्षा के इतिहास में शिक्षा आयोग का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। पहला, यह कि आयोग ने शिक्षा के पुन: उद्धार के लिए अत्यन्त व्यापक तरीका अपनाया। दूसरे, आयोग द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति के लिए एक ढांचा तैयार किया गया। इस आयोग के मूल में तीसरी पंचवर्षीय योजना रही है जिसने बहुत स्पष्ट शब्दों में देश की शिक्षा पद्धति के पुन: विचार पर बल दिया है। ऐसा इसलिए है कि एक ओर तो शिक्षा के सार्वभौमिक की संवैधानिक प्रतिबद्धता पूरी न कर सकने की बात को माना गया है तथा दूसरी ओर शैक्षिक असमानता को दूर न कर सकने की बात को स्वीकार किया गया है। फलस्वरुप भारत सरकार ने 14 जुलाई 1964 को पारित प्रस्ताव के अनुसार एक कमीशन नियुक्त करने की घोषणा की। इस कमीशन को भारतीय शिक्षा आयोग के नाम से जाना जाता है। इस आयोग का कार्य था शिक्षा के एक राष्ट्रीय ढांचे के विषय में सरकार को परामर्श देना और इसके साथ-साथ आयोग को प्रत्येक स्तर एवं प्रत्येक पहलू पर शिक्षा के विकास के लिए सामान्य सिद्धान्तों और नीतियों पर अपनी राय देनी थी। भारतीय सरकार द्वारा स्थापित किया यह छठा आयोग था, परन्तु वास्तव में यह पहला ऐसा आयोग था जिसने विस्तार से भारतीय शिक्षा पद्धति का अध्ययन किया।

भारतीय शिक्षा आयोग के अध्यक्ष प्रो. दौलत सिंह कोठारी थे। इस कमीशन में कुल 17 सदस्य थे। इस कमीशन ने 2 अक्तूबर 1964 को पूरे देश भर में दौरा किया। तकरीबन 9000 (नौ हजार) व्यक्तियों से साक्षात्कार किया। आयोग ने कार्य का संचालन करने के लिए 12 कार्य टोलियां बनाई और 7 अध्ययन दल नियुक्त किए। इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने में 2 वर्ष का समय लगाया। इस रिपोर्ट को 29 जून 1966 को इस आयोग ने भारत सरकार के शिक्षा मंत्री श्री एम.सी. काला की सेवा में प्रस्तुत किया।

प्रतिवेदन का नाम शिक्षा और राष्ट्रीय विकास भी अत्यन्त रोचक है एवं इसके उद्देश्य को स्पष्ट करता है। प्रतिवेदन के तीन भाग है:- प्रथम भाग में शिक्षा की सामान्य समस्याओं का वर्णन है, दूसरे खंड में स्कूल शिक्षा, उच्च शिक्षा, कृषि, व्यावसायिक, तकनीकी एवं इंजीनियरिंग शिक्षा का वर्णन है तथा तीसरे खंड में क्रियान्विति पर विचार हुआ है और शिक्षा के आयोजन तथा बीस वर्ष के लिए वित्त व्यवस्था पर विचार किया गया है। इस प्रकार यह एक

ऐतिहासिक महत्व का प्रतिवेदन है। अध्यक्ष के ही शब्दों में इस प्रतिवेदन के अत्यन्त महत्वपूर्ण तथ्य निम्नलिखित है। जिनके आधार पर शैक्षिक क्रांति की आशा व्यक्त की गई है:-

- शिक्षा के सभी स्तरों पर कार्यानुभव तथा समाजसेवा को उसका अतरंग भाग बनाना
- सामाजिक दायित्व एवं नैतिक शिक्षा पर बल
- माध्यमिक शिक्षा में व्यावसायीकरण
- कृषि शिक्षा पर बल,
- स्कूलों के अध्यापकों के प्रशिक्षण एवं गुणात्मकता पर बल
- सभी स्तरों तथा क्षेत्रों में ऐसे विद्यालयों की स्थापना जो कुशलता बढाने में सहायक हों जैसे अनुकरणीय स्कूल।

यह विश्वास किया गया था कि इस आयोग के द्वारा भारतीय शिक्षा प्रणाली की पुन: संरचना में सहायता के साथ-साथ देश में शैक्षिक क्रांति लाने के लिए कुछ आधारभूत चिन्तन एवं विश्लेषणात्मक प्रारुप प्रदान किया गया। आयोग के मतानुसार हमारी राय में शिक्षा में परिवर्तन करके उसे लोगों के जीवन, आवश्यकताओं तथा आंकाक्षाओं से संबद्ध करने और इस प्रकार उसे हमारे राष्ट्रीय लक्ष्यों की पूर्ति के लिए वांछित सामाजिक, आर्थिक एवं सामाजिक रुपांतर का शक्तिशाली साधन बनाने से बढकर कोई सुधार नहीं है। ऐसा तभी संभव है जबकि शिक्षा-

- अपना संबंध उत्पादकता से जोड़े; सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करे, सरकार के लोकतांत्रिक रुप को समेकित करे तथा लोकतांत्रिक जीवन शैली के रुप को अपनाने में देश की सहायता करे।
- आधुनिकीकरण को गति दे, तथा
- सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूलों पर बल देकर चरित्र-निर्माण का प्रयत्न करे।

आयोग का यह दृढ़ विश्वास था कि जब देश विभिन्न समस्याओं जैसे जनसंख्या विस्फोट, निर्धनता, धीमा औद्योगिक विकास, कम आर्थिक विकास, बेरोजगारी, सामाजिक असमानता आदि का सामना कर रहा हो तब भारतीय समाज में ऐच्छिक परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा एक शक्तिशाली यंत्र के रुप में कार्य करती है। ये समस्याएं अन्त: सम्बन्धित है, इसलिए शिक्षा आयोग ने यह अनुभव किया है कि शिक्षा के सभी क्षेत्रों पर एक साथ ध्यान दिया जाना आवश्यक है और इसके लिए आवश्यक है भौतिक संसाधनों तथा मानव संसाधनों का विकास। आयोग का यह भी मानना था कि सबसे अधिक महत्वपूर्ण है मानव संसाधनों का विकास और इसके लिए शिक्षा के सह उपयुक्त संगठित कार्यक्रम की आवश्यकता है जिससे आवश्यक ज्ञान, कौशलों तथा अभिवृत्ति का विकास किया जा सके।

शिक्षा की संरचना

(Structure of Education)

शिक्षा आयोग का यह मानना था कि शिक्षा की नवीन संरचना के अंतर्गत माध्यमिक स्तर पर शिक्षा को दो भागों में बांटा जा सकता है। दो या तीन वर्ष की सामान्य शिक्षा संबंधी

निम्न माध्यमिक और एक से तीन वर्ष की व्यावसायिक शिक्षा। इसी आधार पर दो प्रकार के माध्यमिक स्कूलों की व्यवस्था होनी चाहिए:-

1. हाई स्कूल जिनमें 10 वर्षीय कोर्स की व्यवस्था हो और
2. हायर सैकेण्डरी स्कूल जिनमें 11 या 12 वर्षीय कोर्स की व्यवस्था हो

10वीं कक्षा के पश्चात् सामान्य शिक्षा के स्कूलों में विभिन्न धाराओं की व्यवस्था होनी चाहिए। केवल बडे तथा कुशल स्कूलों का स्तर ऊँचा किया जाना चाहिए। ऐसे स्कूलों की संख्या कुल स्कूलों के 1/4 भाग के बराबर होनी चाहिए। प्रत्येक हाई स्कूल को हायर सैकेण्डरी स्कूल में परिवर्तित नहीं करना चाहिए। 11वीं तथा 12वीं कक्षाओं के विभिन्न विषयों के विशिष्ट अध्ययन की व्यवस्था होनी चाहिए। जिन स्कूलों में 9वीं, 10वीं तथा 11वीं. का संयुक्त कोर्स संतोषजनक रुप से चल रहा है, वहां यह कोर्स तब तक चलते रहने देना चाहिए जब तक वहां 12वीं कक्षा आरंभ नहीं हो जाती। सन् 1975-76 तक प्री-यूनिवर्सिटी कोर्स को विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों से हटाकर माध्यमिक स्कूलों के साथ जोडा जाना चाहिए और 1985-86 तक यह कोर्स 2 वर्ष का कर देना चाहिए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को इस परिवर्तन का दायित्व संभालना चाहिए। इस प्रकार प्रांतीय शिक्षा विभागों द्वारा अपने आप में पूर्ण इकाइयों के रुप में उच्च माध्यमिक कक्षाएं आरंभ की जानी चाहिए। शिक्षा आयोग ने देश के विभिन्न भागो में माध्यमिक स्तर पर शिक्षा संरचना का निरीक्षण किया। निम्न सारणी 1965-66 में देश में माध्यमिक शिक्षा संरचना को दर्शाती है:-

सारणी 3.1 विभिन्न राज्यों में माध्यमिक स्तर पर शिक्षा की अवधि

राज्य	माध्यमिक	प्री-यूनिवर्सिटी	उच्च माध्यमिक
आंध्र प्रदेश	3	1	4
आसाम, नांगालैड	4	1	5
बिहार, गुजरात एवं महाराष्ट्र	4	1	-
जम्मू कश्मीर, पंजाब, राजस्थान पश्चिमी बंगाल	2	1	3
केरल	3	2	-
मध्य प्रदेश	-	-	3
मद्रास	3	1	-
मैसूर	3	1	-
उडीसा	4	1	-
उतर प्रदेश	2	-	2**

**इंटरमिडिऐट कालिज

स्त्रोत- शिक्षा आयोग की रिपोर्ट 1964-66

उपरोक्त सारणी स्पष्ट रुप से दर्शा रही है कि माध्यमिक स्तर पर शिक्षा की अवधि विभिन्न राज्यों में पृथक-पृथक थी। इसलिए आयोग सम्पूर्ण देश में एक शिक्षा संरचना का

निर्माण करना चाहता था। यद्यपि आयोग ने यह अनुभव किया कि उंची लागत तथा अध्यापकों की उपलब्धता एवं संस्थागत सुविधाओं की कमी के चलते ऐसा करना कठिन है, परन्तु फिर भी इस समस्या पर विचार किया जाना अत्यन्त आवश्यक है।

तुम प्रत्यास्मरण कर सकते हो कि विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने 10+2+3 शिक्षा संरचना की सिफारिश की थी और इसके पश्चात् माध्यमिक शिक्षा आयोग ने 11+3 के उच्च माध्यमिक संरचना की सिफारिश की। यद्यपि शिक्षा आयोग ने 10+2+3 की शिक्षा संरचना का समर्थन किया, परन्तु यह माध्यमिक शिक्षा आयोग की उच्च माध्यमिक संरचना पर आधारित था। शिक्षा आयोग का यह भी मानना था कि चौथी योजना में माध्यमिक कोर्स को बढाने की तैयारी के लिए विद्यमान सुविधाओं के सदुपयोग के प्रयास करने चाहिए। कुछ चुने हुए स्कूलों में केन्द्रीय योजना के रुप में माध्यमिक कोर्स की अवधि बढ़ानी चाहिए, परन्तु माध्यमिक कोर्स की अवधि बढ़ाने का वास्तविक कार्य पांचवी योजना से आरंभ होकर सांतवी योजना तक समाप्त हो जाना चाहिए।

इस प्रकार माध्यमिक स्तर पर शिक्षा संरचना के बारे में शिक्षा आयोग के सुझाव परस्पर विरोधी थे। एक और तो आयोग ने सुझाव दिया कि 8 वर्ष की प्राइमरी तथा मिडल कक्षा के पश्चात् 4 वर्ष की हायर सैकेण्डरी होनी चाहिए। इस प्रकार स्कूल की शिक्षा की कुछ अवधि 12 वर्ष होनी चाहिए। दूसरी ओर सुझाव दिया कि हाई स्कूल की परीक्षा पास करने वाले विद्यार्थियों के लिए एक वषीर्य प्री-यूनिवसिंटी की व्यवस्था होनी चाहिए। इस प्रकार कुल अवधि 11 वर्ष की बन जाती है। शिक्षा आयोग ने लचीले ढंग का सुझाव दिया और प्रत्येक प्रांत को शिक्षा संरचना स्वयं निर्धारित करने की छूट दी। परन्तु हमारे देश के लिए एकात्मक ढांचे की अत्याधिक आवश्यकता है। जब तक सुझावों को निश्चित रुप से सभी प्रांतों में लागू नहीं किया जाता तब तक विभिन्न प्रांतों में विद्यमान विभिन्नता को दूर नहीं किया जा सकता।

वास्तव में इस सिफारिश ने सबका ध्यान आकर्षित किया। साथ ही इस पर काफी मत भिन्नता भी रही। क्योंकि इस अवधि में शिक्षा राज्य सरकारों के अधीन थी और राज्य सरकारें संगठनात्मक और वित्तीय समस्याओं के कारण इसे स्वीकार करने को तैयार नहीं थी फिर भी सन् 1976 में भारतीय संविधान के 42वें संशोधन के फलस्वरुप शिक्षा को समवर्ती अर्थात् संघीय और राज्य सरकारों की दोनों सूचियों में रखा गया। इसका परिणाम यह हुआ कि केन्द्रीय सरकार को समान ढांचे के विषय में बात करने का अवसर मिल गया। अतत: सन् 1986 तक सभी राज्यों ने इसे अपनी स्वीकृति दे दी।

शिक्षा के वैकल्पिक माध्यम

(Alternative Means of Education)

शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के औपचारिक ढांचे में यह माना कि कुछ कारणों से शिक्षा जनसंख्या के कुछ विशेष वर्गो तक ही सीमित थी जैसे एक ही कक्षा में एक स्तर प्रवेश की बाध्यता, क्रमानुसार वार्षिक पदोन्नति और पूर्वकालीन शिक्षण और अधिगम। शिक्षा आयोग ने अंशकालीन शिक्षा और सुविधानुसार शिक्षा को भी बराबरी का दर्जा देने की सिफारिश की। इस

सुझाव में दूरगामी परिणाम निहित थें, क्योंकि इनके द्वारा ढांचे में विशेष परिवर्तन हुए, जिससे समानता और सामाजिक न्याय को बढ़ाने में सहायता मिली।

समान स्कूल पद्धति

(Common School System)

शिक्षा आयोग की महत्वपूर्ण सिफारिशों में से एक थी समानता के आधार पर सुगठित और समाज के निर्माण के लिए सम्मान स्कूल पद्धति का निर्माण करना। इस सिफारिश का प्रमुख उद्देश्य था ऐसे विद्यालयों को समाप्त करना जो केवल उच्च वर्ग के बच्चों के लिए हो। इस संदर्भ में आयोग ने दो शब्दों का प्रयोग किया- सार्वजनिक शिक्षा के लिए समान स्कूल पद्धति और पडोस विद्यालय प्रणाली। बहुत से लोगों ने इसे स्वीकार नहीं किया।

पाठ्यक्रम

(Curriculum)

स्कूली शिक्षा के उद्देश्य के बारे में शिक्षा आयोग का मत था कि स्कूल के द्वारा लोकतांत्रिक समाज के लिए नागरिक तैयार किए जाने चाहिए। जब हम ब्रिटिश साम्राज्य तथा प्राचीन काल में शिक्षा के उद्देश्य पर विचार-विमर्श करते है तो यह ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में औपचारिक शिक्षा केवल शासकीय वर्गो तक ही सीमित थी तथा ब्रिटिश साम्राज्य में ब्रिटिश प्रशासन के लिए मानवशक्ति को तैयार करना ही शिक्षा का उद्देश्य था। शिक्षा आयोग का मानना. था कि संविधान में दिए गए राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति से शिक्षा को संबंधित किया जाना चाहिए और प्रथम दस वर्षों की स्कूली शिक्षा का पाठ्यक्रम सामान्य शिक्षा के रुप में संगठित किया जाना चाहिए। आयोग का विश्वास था कि माध्यमिक स्तर का व्यापक क्षेत्रों से सम्बन्धित पाठ्यक्रम दो भागों में विभाजित किया जाना चाहिए।

1. निम्न माध्यमिक स्तर और
2. उच्च माध्यमिक स्तर

निम्न माध्यमिक स्तर पर गणित, विज्ञान, इतिहास, भूगोल एवं नागरिकशास्त्र, शारीरिक शिक्षा, कक्षा, कार्यानुभव एंव समाज सेवा, नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा के साथ-साथ तीन भाषाओं का अध्ययन किया जाना चाहिए तथा उच्च माध्यमिक स्तर पर कोई दो भाषाएँ, कोई तीन विषय (इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, तर्कशास्त्र, मनोविज्ञान, समाज-शास्त्र, कला, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, गणित, जीव-विज्ञान, भू-विज्ञान, गृह-विज्ञान, कार्य-अनुभव एवं समाज सेवा, शारीरिक शिक्षा, कला या शिल्प, नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए। आयोग का यह भी मानना था कि स्कूलों को अपनी आवश्यकतानुसार पाठ्यक्रम बनाने तथा उसका प्रयोग करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। राज्य शिक्षा बोर्ड द्वारा सभी विषयों में उच्च पाठ्यक्रम तैयार किया जाना चाहिए और उसे उन स्कूलों में क्रमश: लागू करना चाहिए जहां वांछित अध्यापक वर्ग एवं सुविधाओं की व्यवस्था हो। पाठ्यक्रम का स्तर ऊँचा करने के लिए विश्वविद्यालयों के शिक्षा विभागों, प्रशिक्षण महाविद्यालयों, राजकीय शिक्षा संस्थानों तथा स्कूल शिक्षा बोर्ड द्वारा कार्य किया जाना चाहिए।

शिक्षा आयोग का यह भी मानना था कि पाठ्यक्रम में विभिन्नीकरण की सुनिश्चित योजना होनी चाहिए। अव्यावसायिक स्कूलों में पहले दस वर्षों के लिए सामान्य शिक्षा के सामान्य पाठ्यक्रम की व्यवस्था हो। अध्ययन का विभिन्नीकरण तथा विषयों की विशेषज्ञता उच्च माध्यमिक स्तर पर ही आरम्भ होनी चाहिए। स्कूली शिक्षा के पहले दस वर्षों में गणित विज्ञान अनिवार्य विषय होने चाहिए। विज्ञान शिक्षण को शहरों में टैक्नोलोजी के साथ संबंधित किया जाना चाहिए तथा ग्रामीण इलाकों में इसे कृषि के साथ सम्बन्धित करना चाहिए। आयोग ने हाथ के काम पर भी बल दिया है। निम्न माध्यमिक स्तर पर स्कूल वर्कशाप में कार्य-अनुभव तथा उच्च माध्यमिक स्तर पर फार्म या किसी कर्मिशियल अथवा औद्योगिक संस्था में कार्य अनुभव का प्रबंध होना चाहिए।

कार्यानुभव

(Work Experience)

शिक्षा को उत्पादकता के साथ जोड़ने के उद्देश्य से शिक्षा आयोग ने सिफारिश की कि प्रत्येक स्तर पर कार्यानुभव को शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाए। गांधी जी ने बुनियादी शिक्षा का जो नया विचार दिया था उसे कार्यानुभव के रुप में शिक्षा के साथ जोड़ने के लिए शिक्षा आयोग ने उसकी परिभाषा को नया रुप दिया। आयोग के अनुसार कार्यानुभव माध्यमिक स्तर पर कार्यशाला में प्रशिक्षण का रुप ले लेगा। उच्च माध्यमिक स्तर पर जब विद्यार्थी व्यस्क हो जाते है, कार्यानुभव विद्यालय की कार्यशालाओं में दिया जाएगा। इसके साथ ही यह कृषि फार्मों, कारखानों व व्यावसायिक केन्द्रों में भी उपलब्ध होगा।

इस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए जिन समस्याओं की संभावना हो सकती है उनको भी आयोग ने समझने की चेष्टा की। इसी कारण इसने शिक्षक प्रशिक्षण, आवश्यक संस्थानों की उपलब्धि जैसे औजार की पूर्ति और सभी विद्यालय कार्यक्रमों के निरंतर विस्तार की आवश्यकता पर भी बल दिया।

उच्च माध्यमिक स्तर पर व्यावसायीकरण

(Vocationalization at the Higher Secondary Stage)

शिक्षा आयोग ने उच्च माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण पर बल दिया तथा व्यावसायिक कोर्सों के विस्तार का सुझाव दिया जिससे इस स्तर पर नामांकित विद्यार्थियों के लगभग 50 प्रतिशत भाग को शामिल किया जा सके। औद्योगिक सिखलाई संस्थाओं में कोर्सों का फैलाव किया जाए, छोटे-छोटे विभिन्न कोसों का प्रबंध किया जाए, आंशिक व्यावसायिक कोर्सो का प्रबंध औद्योगिक क्षेत्र, बहु तकनीकी संस्थाओं तथा पत्राचार आदि पर आधारित होना चाहिए। इन कोर्सों के अतिरिक्त दूसरे कोर्स जैसे वाणिज्य, प्रशासकीय, लघु-उद्योग, स्वास्थ्य आदि कोर्सों का प्रबंध भी होना चाहिए। आयोग के सुझाव के अनुसार पार्ट-टाइम कोर्सों का प्रबंध निम्न तथा उच्च माध्यमिक स्तर दोनों पर होना चाहिए। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर व्यावसायीकरण के संबंध में आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिए:-

1. उच्चतर माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम को बढ़ाकर दो वर्ष का कर दिया जाए और इसे पूर्ण रुप से विद्यालय में ही पढ़ाया जाए।

2. इस सुधार को लागू करने के लिए कम से कम बीस वर्ष का एक क्रमबद्ध कार्यक्रम बनाने का प्रयास किया जाए।
3. इस दिशा में पहले चरण के रुप में पूर्व विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम को महाविद्यालयों से हटाकर विद्यालयों में रखा जाए चाहे उनकी अवधि कितनी ही हो।
4. इसके साथ-साथ चौथी पंचवर्षीय योजना में यह प्रयास किया जाए कि वर्तमान अवधि को अधिक से अधिक उपयोगी बनाया जाए। इसके लिए शिक्षकों को दो वर्ष के पाठ्यक्रम के लिए तैयार करने के लिए स्नातकोतर स्तर को बढ़ाने व सुधारने का प्रयत्न किया जाएगा।
5. आरंभ से ही उच्चतर माध्यमिक स्तर पर, विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का प्रावधान किया जाए। ये पाठ्यक्रम एक से तीन वर्ष की अवधि के होंगे और इसके द्वारा व्यस्कों को नौकरी के लिए तैयार किया जाएगा।

इसके साथ-साथ आयोग ने यह भी सुझाव दिया था कि जिन विद्यार्थियों ने प्राथमिक स्तर के बाद पढ़ाई छोड दी हो, उनके लिए सामान्य अथवा व्यावसायिक ढंग के अंशकालिक अनौपचारिक पाठ्यक्रम भी आरंभ किए जाए। आयोग ने यह भी स्पष्ट रुप से कहा कि राज्य सरकारों को केन्द्र द्वारा निर्धारित क्षेत्रों में व्यवसायिक कार्यक्रमों को जारी रखने के लिए अनुदान भी देना चाहिए।

आयोग की उच्चतर माध्यमिक स्तर पर व्यावसायीकरण की सिफारिश की दिशा में बहुत कम प्रगति हुई क्योंकि इसके विषय में विभिन्न मत थे जैसे: प्रस्तावों में सर्टिफिकेट और डिप्लोमाधारकों के लिए अतिरिक्त नौकरियों के लिए कम सम्भावनाएं थी, इसलिए ये प्रस्ताव अवास्तविक एवं अव्यावहारिक है।

पाठ्य-पुस्तकें

(Text-Books)

राष्ट्रीय स्तर पर पाठ्यपुस्तकों के उत्पादन का विस्तृत कार्यक्रम राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान व प्रशिक्षण परिषद (N.C.E.R.T) के निर्देशानुसार होना चाहिए। राज्य स्तर पर पाठ्यपुस्तकों के उत्पादन के लिए पृथक विभाग स्थापित कर इसमें अभिवृद्धि करें। पाठ्य पुस्तकों की तैयारी, परीक्षण, मूल्यांकन का उतरदायित्व राज्य के लिए शिक्षा विभाग पर होना चाहिए। किसी भी विषय के लिए तीन या चार पुस्तकें होनी चाहिए। पाठ्यपुस्तकों का मूल्य हानि लाभ रहित रखा जाय। विशेष वैज्ञानिक तथा तकनीकी पुस्तकों का उत्पादन राष्ट्रीय स्तर पर होना चाहिए।

शिक्षण विधियाँ

(Methods of Teaching)

कोठारी आयोग ने शिक्षण-विधियों सम्बन्धी भी सुझाव दिए हैं- प्रत्येक स्कूल को आवश्यक शिक्षण सहायक सामग्री प्रदान की जानी चाहिए। शिक्षा-विभाग को आकाशवाणी, दूरदर्शन इत्यादि में पाठों के प्रसार करने का प्रंबध करना चाहिए। अध्यापकों के विकास के लिए स्वनिर्मित शिक्षण सहायक साधनों के प्रयोग का प्रशिक्षण देना, स्कूल कार्यशाला का प्रयोग

करना और कार्यानुभव के कार्यक्रमों को कार्यान्वित करना, आदि का सुझाव दिया। सैमिनार अभिनव कोर्स, शिक्षात्मक कार्यशालाओं के द्वारा अध्यापकों को नवीन शिक्षण पद्धतियों के विषय में जानकारी देने का प्रयास किया गया है।

परीक्षा-पद्धति

(Examination System)

परीक्षा पद्धति में सुधार लाने के लिए सुझाव दिया कि केवल लिखित परीक्षा ही बालकों की क्षमताओं का मापन नहीं कर सकती इसलिए ऐसी नई विधियां खोजी जाएँ जिसके द्वारा बच्चों की अभिरुचि को जाना जा सके। बाह्य परीक्षाओं में प्रश्नों को वस्तुनिष्ट बनाया जाए। आन्तरिक जांच के लिए अध्यापकों द्वारा निर्मित परीक्षाओं, मौखिक परीक्षाओं, प्रयोगात्मक परीक्षाओं, मनोवृत्तियां तथा रुचियों को जांचने के लिए विभिन्न प्रमाणीकृत परीक्षाओं का प्रयोग किया जाये। कुछ चुने हुए स्कूलों को 10वीं कक्षा के अंत में अपने स्तर पर परीक्षा आयोजित करने का अधिकार होना चाहिए। प्रयोगात्मक स्कूलों की स्थापना की जानी चाहिए।

निर्देशन एवं परामर्श

(Guidance and Counselling)

सैकेण्डरी स्कूलों के लिए न्यूनतम निर्देशन सेवा की व्यवस्था की जानी चाहिए। आसपास के 1० स्कूलों के लिए एक परामर्शदाता नियुक्त किया जाना चाहिए। चुने गए स्कूलों में विस्तृत निर्देशन सेवा की व्यवस्था होनी चाहिए और ऐसा स्कूल एक जिले में एक अवश्य होना चाहिए। निर्देशन कार्यकर्ताओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए पर्याप्त मात्रा में प्रंबध किए जाने चाहिए। सहायक कार्यक्रम भी शुरु करने चाहिए जैसे-निर्देशन साहित्य का विकास, व्यावसायिक सूचनाओं को एकत्रित करना, फिल्मे और इनकी पट्टिया तैयार करना, मनोवैज्ञानिक परीक्षाओं तथा भारतीय परिस्थितियों के अनुसार निर्देशन की समस्याओं का अनुसंधान करना इत्यादि शामिल है।

निरीक्षण

(Supervision)

आयोग ने सुझाव दिया कि निरीक्षण कर्मचारियों के वेतन बढाए जाए और उच्च कोटि के अधिकारियों की नियुक्ति की जाये। जिला स्तर पर निरीक्षकों को पर्याप्त अधिकार दिए जाएं ताकि वे कुशलतापूर्वक निरीक्षकों होकर प्रभावशाली ढंग से निरीक्षण कर सकें। सैकेण्डरी स्कूलों का वार्षिक निरीक्षण प्रांतीय शिक्षा विभाग के अधिकारियों द्वारा किया जाना चाहिए।

शारीरिक शिक्षा

(Physical Education)

छात्रों के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए आयोग ने सिफारिश की कि खेलों और शारीरिक क्रियाओं को उचित स्थान मिलना चाहिए ताकि उन बालकों की जिन की इस में विशेष रुचि है उसकी प्रतिभा को सही दिशा मिल सके। शारीरिक शिक्षा में विकासशील व्यायाम, क्रियात्मक क्रियाएं, खेल क्रियाएं, सामूहिक क्रियाएं आदि सम्मिलित होनी चाहिए। ये सभी विद्यार्थियों के लिए आवश्यक होनी चाहिए। शारीरिक क्रिया के कार्यक्रम शिक्षकों अन्य कार्यक्रमों के पूरक होने चाहिए। ऐसी क्रियाएं आयोजित की जानी चाहिए जिनसे प्रत्येक बच्चे में

व्यक्तिगत महत्व एवं सम्मान की भावना, एवं लोकतन्त्रामक सहयोग के आधार पर उतरदायित्व को बांटने की भावना का विकास होना चाहिए।

अध्यापकों की स्थिति

(Position of Teacher)

आयोग ने शिक्षकों की स्थिति में सुधार करने के लिए इस बात पर बल दिया कि शिक्षा के समस्त स्तरों पर अध्यापकों की निम्न पद से उच्च पद पर उन्नति की जाए। पदोन्नति की आशा से प्रेरित होकर वे कभी भी अपने कार्य की अवहेलना नहीं करेंगें। इससे उनकी आर्थिक और सामाजिक स्थिति सुदृढ होगी। शिक्षकों को वे सभी लाभ दिए जाय जो भारत सरकार के कर्मचारियों को दिए जाते है। आयोग ने प्रशिक्षण-संस्थाओं में भी गुणात्मक उन्नति करने के लिए अनेक सुझाव दिए है। प्रशिक्षित अध्यापक ही शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठा सकते है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि आयोग के सुझाव प्रशसनीय विवेकपूर्ण है। ऐसे सुझाव देकर उन्होंने शिक्षा को एक नयी दिशा देने का प्रयास किया है। यह समूची शिक्षा सम्बन्धी पहलूओं का संक्षेपात्मक सर्वेक्षण है। शिक्षा के उद्देश्यों को निर्धारित करते समय आयोग ने तत्कालीन व भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखा। उत्पादकता को बढ़ाने के लिए अनेक सुझाव दिए ताकि देश आर्थिक एवं सामाजिक रुप से सुदृढ बन सके।

पाठ्यक्रम में सुधार के लिए सुझाव दिए। शिक्षण-विधियों में अनुसंधान किया जाना चाहिए ताकि हम नवीन विधियों को ग्रहण कर सके। मूल्यांकन के लिए भी आयोग ने विभिन्न सुझाव दिए ताकि बच्चें के व्यक्तित्व व उसकी क्षमताओं का सही-सही मूल्यांकन किया जा सके। आयोग ने शिक्षा पद्धति में एकरुपता लाने के लिए विभिन्न प्रयास किए। निरीक्षण और परामर्श तथा शारीरिक क्रियाओं को भी शिक्षा का एक अभिन्न अंग माना। विद्यालयों के लिए शिक्षकों के प्रशिक्षण और स्तर पर विशेष बल दिया जाना चाहिए ताकि उनके सामाजिक आर्थिक एवं व्यावसायिक स्तर में सुधार आ जाये। अधिक साक्षरता के लिए आयोग ने पत्राचार कोर्स की भी सिफारिश की। इसी नीति के आधार पर पंचवर्षीय योजनाओं की रुपरेखा बनाई गई है। यह शिक्षा नीति शिक्षा पद्धति की एक अद्वितीय विस्तृत, स्पष्ट, रचनात्मक, सृजनात्मक एवं आलोचनात्मक रिपोर्ट है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. परीक्षा प्रणाली के सम्बन्ध में भारतीय शिक्षा आयोग (1964-66) की सिफारिशों का उल्लेख कीजिए।

   State the recommendations of Indian Education Commission Regarding examination system.

2. निर्देशन / परामर्श के सम्बन्ध में भारतीय शिक्षा आयोग (1964-66) की सिफारिशों का उल्लेख कीजिए।

Describe the recommendations of Education Commission regarding.Cuidance and Counselling.

3. शिक्षा आयोग ने माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम सुधार के लिए क्या सुझाव दिए?

What were the suggestions given by Education Commission regarding the improvement of Curriculum at secondary stage?

4. राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की क्या विवक्षा है?

What is the implication of National system of Education?

5. शिक्षा आयोग के समक्ष प्रमुख विचारणीय विषय क्या थे?

What were the major issues before Education Commission?

3.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 (National Education Policy, 1968)

शिक्षा आयोग की सिफारिशों ने संसद में विस्तृत रुप से वादविवाद करने के लिए एक आधार प्रदान कर दिया। एक संसदीय समिति ने विस्तारपूर्वक इस रिपोर्ट का अध्ययन किया तथा कुछ महत्वपूर्ण सिफारिशों जैसे शिक्षा की एक राष्ट्रीय प्रणाली की आवश्यकता, अनुदेशन माध्यम के रुप में क्षेत्रीय भाषा, अध्यापकों के स्तर में सुधार तथा नवीन दस वर्षीय स्कूल प्रणाली आदि का समर्थन किया। रिपोर्ट पर केन्द्रीय परामर्श शिक्षा बोर्ड तथा विश्वविद्यालयों के उपकुलपतियों की कान्फ्रेंस में विचार-विमर्श किया गया और इसके पश्चात् संसद के दोनो सदनों मे भी रिपोर्ट पर बातचीत की गई। इन सबके विचार-विमर्श का परिणाम यह निकला कि एक राष्ट्रीय नीति का निर्माण किया जाए जिसे 1968 में कैबिनेट के द्वारा अनुमति दे दी गई। संवैधानिक शासन के इतिहास में इसी बिन्दु पर शिक्षा को राज्य सरकारों के अधीन कर दिया गया। केन्द्र की भूमिका केवल एक संयोजक अथवा सहायक के रुप में रखी गई। इस प्रकार 1968 की शैक्षिक नीति एक विस्तृत रुपरेखा थी जिससे राज्य सरकारों को अपनी शिक्षा प्रणाली में सुधार करने के लिए निर्देशन मिल सके।

शिक्षा संरचना

(Structure of Education)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 के भाग 4 के परिच्छेद 17 में शिक्षा की पुन: संरचना के बारे में लिखा गया है कि पूरे देश में शिक्षा की एक विस्तृत समान रुपरेखा का होना अत्यन्त लाभकारी होगा। अन्तिम लक्ष्य 10+2+3 की शिक्षा प्रणाली को अपनाना है जिसमें उच्च माध्यमिक स्तर दो वर्ष का होगा और उसे स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार महाविद्यालयों या स्कूलों या दोनों में ही रखा जा सकता है। तुम यह जान सकते हो कि यह कथन केवल एक सुझाव था। इसके पीछे तथ्य यह था उस समय स्कूली शिक्षा केन्द्र या समवर्ती सूची में शामिल नहीं थी। यह राज्यों को भी अपनी आवश्यकताओं के अनुरुप उच्च माध्यमिक शिक्षा के प्रबंधन

के लिए लचीलापन प्रदान करती है। इस पुन: संरचना में अध्यापकों की संख्या में वृद्धि, विद्यमान भवनों की संरचना में सुधार आदि के लिए अधिक मात्रा में व्यय को शामिल किया गया और इसके साथ-साथ शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने के लिए वित्त व्यवस्थाओं में सुधार करने के लिए कहा गया और इसी के परिणामस्वरुप शिक्षा पर राष्ट्रीय आय का 6 प्रतिशत भाग खर्च करने का प्रावधान दिया गया।

भारत सरकार ने यह अनुभव किया कि शिक्षा की पुन: संरचना सरल कार्य नहीं था। केवल संसाधनों की ही कमी नहीं थी अपितु समस्याएं भी अत्यन्त जटिल थी। शिक्षा विज्ञान तथा अनुसंधान के द्वारा भौतिक तथा मानवीय संसाधनों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जाती है, इसी कारण सरकार का यह मानना था कि उसे केवल केन्द्र में ही नहीं अपितु राज्य सरकारों को भी राष्ट्रीय महत्व के कार्यक्रमों के विकास में सहायता करनी होगी। सरकार ने यह सुझाव भी दिया कि वह प्रति पांच वर्ष के पश्चात् शिक्षा में हो रही प्रगति का मूल्यांकन करेगी तथा भविष्य में विकास के लिए सुझाव देगी।

शिक्षा की गुणवत्ता

(Quality of Education)

यद्यपि शिक्षा आयोग ने शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने के लिए सुझाव दिए, परन्तु राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने शिक्षा की गुणवत्ता को अध्यापकों की गुणवत्ता से जोड़ने का प्रयास किया। उनका यह मानना था कि उन सभी कारकों में से जो शिक्षा की गुणवत्ता तथा राष्ट्रीय विकास में इसके योगदान को निश्चित करते है, अध्यापक सबसे महत्वपूर्ण है। यह उसके व्यक्तिगत गुण तथा चरित्र, उसकी शैक्षिक योग्यता तथा व्यावसायिक कुशलता ही है जिस पर शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र की सफलता निर्भर करती है। इसीलिए अध्यापक को समाज मे सम्मानीय स्थान मिलना चाहिए। उनका वेतन तथा अन्य सेवा सुविधाएं, पर्याप्त एवं संतोषजनक होनी चाहिए। उन्हें अपने अध्ययन तथा अनुसंधानों को मुद्रित करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए तथा राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर विचारणीय विषयों पर बोलने व लिखने की भी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। अध्यापक शिक्षा और विशेष रुप से सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा पर पर बल दिया जाना चाहिए।

इस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 ने समान शिक्षा पद्धति, शैक्षिक अवसरों की समानता, अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता आदि से सम्बन्धित विभिन्न विचार प्रस्तुत किए परन्तु इनके सुझावों को लागू करना कुछ कारकों पर निर्भर था जैसे केन्द्र में राजनैतिक अस्थिरता, खराब आर्थिक अवस्था, हडतालें तथा विरोध आदि के कारण इन्हें लागू करना लगभग असंभव सा प्रतीत होता था। इसके अतिरिक्त केन्द्र तथा राज्य सरकारों के द्वारा भी इस पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया। प्रचलित शैक्षिक वातावरण भी इसके अनुकूल नहीं था। परन्तु इस नीति का प्रभाव यह रहा कि इसने चौथी पंचवर्षीय योजना की रुपरेखा के निर्माण में अपना योगदान दिया।

3.3 ईश्वर भाई पटेल समिति, 1977
(Ishwar Bhai Patel Committee, 1977)

दस वर्ष की अवधि के कार्यक्रम के लक्ष्य पर विचार विमर्श करने के लिए, गुजरात विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री ईश्वर भाई पटेल की अध्यक्षता में जून 1977 में एक समिति की नियुक्ति की गई। समिति ने माध्यमिक शिक्षा के लिए निम्नलिखित लक्ष्यों की सिफारिश की:-

1. **स्व-अध्ययन (Self Study)-** शिक्षा की प्राप्ति स्व-अध्ययन की आदतों की सहायता से की जाए।
2. **सामान्य शिक्षा (General Education)-** सामान्य शिक्षा में गणित, सामाजिक अध्ययन, विज्ञान, भाषाएं तथा अन्य सामाजिक कार्य सम्मिलित किए जाए।
3. **कलात्मक गतिविधियाँ (Artistic Activities)-** कला को परखने तथा कला निर्माण में भाग लेने की सक्रिय गतिविधियों में विकासपूर्ण कार्य किया जाय।
4. **सामाजिक गतिविधियाँ (Social Activities)-** सामाजिक गतिविधियों में सक्रिय भाग तथा उन्हें बढ़ावा देने थाली सामाजिक तथा स्कूल के अन्य कार्यक्रमों में रुचि दिखाई जाये जिससे लोकतंत्र के मूल्यों की पहचान करने में उत्साह बढ़े तथा कमजोर और साधनरहित वर्ग के प्रति कार्य करके उनकी समानता की प्राप्ति की जा सके।

समिति ने पाठ्यक्रम के ढांचे तथा आंठवी और उच्च कक्षाओं के लिए समय निर्धारण की भी सिफारिश की। उन्होंने उपयोगी सामाजिक उत्पादकीय कार्य व जन समुदाय सेवा के लिए 4 घंटे तथा खेल, शारीरिक शिक्षा और निरीक्षित अध्ययन के

ईश्वरभाई पटेल समिति ने बुनियादी शिक्षा तथा शिक्षा आयोग की सिफारिशों को मिलाकर एक नवीन संप्रत्यय **'सामाजिक उपयोगी उत्पादक कार्य'** का सुझाव दिया जिसके सिद्धान्त थे- उत्पादक क्रिया, उत्पादक क्रिया तथा वातावरण के साथ पाठ्यक्रम को समवायत करना और स्थानीय समुदाय के साथ सम्पर्क स्थापित करना। परन्तु देश में सभी स्कूलों ने इस सुधार को स्वीकार नहीं किया। 1973 में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) ने एक अध्ययन के आधार पर पाया कि माध्यमिक स्तर पर 9.38 प्रतिशत तथा 26.61 प्रतिशत उच्च माध्यमिक स्कूलों में कार्य अनुभव प्रारंभ किया जबकि शिल्प कौशल 34.88 प्रतिशत माध्यमिक और 32.02 प्रतिशत उन माध्यमिक स्कूलों में शिल्प कार्य प्रारंभ किया गया था हस्तकार्य तथा कार्य-अनुभव के अन्तर्गत की जाने वाली क्रियाएँ समान थी।

चौथी, पांचवी तथा छठी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा

(Secondary Education in Fourth,Fifth and Sixth Five Year Plan)

इससे पहले की इकाईयों में आपने अध्ययन किया कि भारत सरकार ने माध्यमिक शिक्षा के विकास के प्रयास किए परन्तु जिस प्रकार से इसकी गुणवत्ता में सुधार होना चाहिए

वह नहीं हो पाया। अत: हम चौथी, पांचवी तथा छठी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा के विकास पर क्या प्रभाव पड़ा, इनका अध्ययन करेंगे।

3.4 चौथी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा 1969-74 (Secondary Education in Fourth Five Year Plan 1969-74)

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् माध्यमिक शिक्षा का विस्तार इतना अधिक हुआ कि यह पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा निर्धारित सभी लक्ष्यों को पार कर गया। 1960-61 में माध्यमिक स्कूलों की संख्या 17,226 थी जो 1970-71 में बढकर 36000 तथा 1974-75 में यह 40,000 हो गई थी।

सारणी3.2 माध्यमिक स्कूलों की संख्या

वर्ष	मध्यमिक स्कूलों की संख्या
1960-6	117,226
1970-7	136,000
1974-75	40,000

चौथी पंचवर्षीय योजना में स्कूलों की संख्या में वृद्धि होने के बावजूद भी माध्यमिक स्तर पर जितने दाखिले की आस थी, उससे कम दाखिला हुआ था। नौंवी से ग्याहरवीं बाहरवीं कक्षाओं में 97 लाख विद्यार्थी (7० लाख लड़के व 27 लाख लड़किया) दाखिल करने का लक्ष्य था, परन्तु इस योजना के अंत में अर्थात् 1973-74 में इन कक्षाओं में 85 लाख विद्यार्थी (62 लाख लड़के तथा 23 लाख लड़कियां) दाखिल थे। इस योजना में माध्यमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षा तथा शिक्षा के व्यावसायीकरण पर बल दिया गया। एन0सी0ई0आर0टी0 की सहायता से विज्ञान शिक्षण की सुविधाओं में सुधार किया गया। लड़कियों की शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए विशिष्ट कार्यक्रम बनाए गए। कई प्रांतों के माध्यमिक शिक्षा बोर्डो ने पाठ्यक्रम तथा परीक्षा प्रणाली में भी सुधार किए। इस योजना ने माध्यमिक शिक्षा की पुन: संरचना करने का प्रयास किया गया जिससे विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए तैयार करने के साथ-साथ किसी न किसी व्यवसाय के लिए तैयार किया जा सके।

3.5 पांचवी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा (1974-79) (Secondary, Education in Fifth Five Year Plan, 1974-79)

पांचवी योजना में स्कूली शिक्षा में गुणात्मक विकास करने के लिए निम्न प्रवृत्तियों पर बल दिया गया:-

- अध्यापकों की क्षमता को उन्नत करना।
- पुस्तकालयों, उपकरणों आदि को बेहतर सुविधाएँ प्रदान करना।

- शिक्षा सम्बन्धी अनुसंधान को सशक्त बनाना।
- विभिन्न शैक्षिक स्तरों का रोजगार एवं आर्थिक विकास के साथ समन्वय।
- सामाजिक न्याय के लिए शैक्षिक अवसरों की समानता।

पांचवी योजना में लक्ष्य रखा गया कि 27 लाख अतिरिक्त बच्चों के लिए शिक्षा सुविधाएँ प्रदान की जाए। इस लक्ष्य की प्रगति के पश्चात् नौंवी-दसवीं कक्षाओं में 14-17 आयु वर्ग के बच्चों की संख्या सन् 1978-79 में इस वय-वर्ग की संख्या का 26.1 प्रतिशत हो जाएगा। जबकि 1973-74 में वह संख्या केवल 22.0 प्रतिशत थी। इस प्रकार यह संख्या 85 लाख से बढ़कर 1 करोड 12 लाख हो जाएगी। इस योजना में वर्तमान की अपेक्षा ज्यादा स्कूलों में भावी कार्य सम्बन्धी सूचनाएँ एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करने का प्रावधान रखा गया। इससे दसवीं के पश्चात् विशिष्ट व्यावसायिक प्रशिक्षक का मार्ग प्रशस्त होगा। यह प्रशिक्षण स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार देने का प्रावधान रखा गया। सेवाकालीन प्रशिक्षण के साथ-साथ सामान्य शिक्षा के लिए सस्ती एवं प्रभावी समकालीन कक्षाओं की व्यवस्था की गई। औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों, पालीटैक्निक संस्थाओं तथा कृषि शिक्षण संस्थाओं में विद्यमान प्रशिक्षण सुविधाओं का पूर्ण रुप से प्रयोग किया गया। स्कूल शिक्षा का एकात्मक ढांचा अर्थात् 10+2+3 को सारे देश में लागू किया जाएगा जिसके अंतर्गत 10 वर्ष की प्रारम्भिक एवं सैकेण्डरी शिक्षा, 2 वर्ष की हायर सैकेण्डरी शिक्षा और तीन वर्ष का पहला डिग्री कोर्स सम्मिलित है। ग्याहरवीं तथा बारहवीं कक्षाएं- प्रत्येक प्रांत की स्थितियों के अनुकूल भले ही वे कॉलेजों में हैं या स्कूलों में निश्चित रुप से सैकेण्डरी शिक्षण बोर्डो के अधीन होगी और माध्यमिक शिक्षा प्रणाली का अंग होगी।

इस प्रकार पांचवी योजना में स्कूली शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने का प्रयत्न किया तथा माध्यमिक स्तर पर शिक्षा का व्यावसायीकरण किया गया। केन्द्र और प्रांतों दोनों में प्रशासन को सशक्त बनाने का प्रयास किया गया।

3.6 छठी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा, 1 979-64 (Secondary Education in Sixth Five Year Plan,1979-84)

यह छठी योजना ही थी जिसमें शिक्षा को एक समाज सेवा नहीं अपितु विकास के लिए एक अदा माना गया। अब तक माध्यमिक शिक्षा के संख्यात्मक विकास को प्राथमिकता दी गई थी, और प्रस्तावित धनराशि का बडा भाग उसी पर खर्च किया जाता रहा था। परन्तु अब यह सुझाव दिया गया कि उच्च माध्यमिक स्तर पर सामान्य शैक्षणिक धाराओं में दाखिले को नियमित बनाया जाए। इस स्तर पर सुविधाओं के विस्तार को नियोजित किया जाए, माध्यमिक स्तर पर व्यावसायीकरण पर अधिक बल दिया जाए और इस स्तर का गुणात्मक विकास किया गया। गुणात्मक विकास के लिए निम्नलिखित कार्यक्रमों का सुझाव दिया गया:-

- सामाजिक रुप से उपयोगी रचनात्मक कार्य को प्रारम्भ करना।
- भाषाओं का अपेक्षाकृत उतम शिक्षण।

- गणित एवं विज्ञान का प्रभावशाली शिक्षण।
- विद्यार्थियों को समाज सेवा में लगाना। इसमें साक्षरता का कार्य तथा प्रौढ़ शिक्षा भी शामिल है।
- योग्यता विकास इसमें अध्यापकों का प्रशिक्षण तथा शिक्षा-कार्य में लगन एवं नैतिक समर्पण सम्मिलित है।

छठी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए 398 करोड रुपयें निर्धारित किए गए परन्तु वास्तव में इस पर 530 करोड़ रुपए खर्च हुए यह कुल जय का 21 प्रतिशत था। इसमें यह प्रस्ताव रखा गया था कि नए प्रशिक्षण कार्यक्रम आरंभ करने से पहले औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं, पोलिटैक्निक संस्थाओं, कृषि संस्थाओं, पैरा-मेडिकल स्कूलों आदि में प्राप्त प्राथमिक सुविधाओं का पूरा-पूरा लाभ उठाया जाए। इन तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि संगठित व्यवसाय केन्द्र रोजगार के अधिक अवसर प्रदान नहीं कर सकेंगे, निजी रोजगार दिशाओं को प्रशस्त करने के प्रयास करने चाहिए और माध्यमिक स्कूलों के विद्यार्थियों को उनके अनुसार प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में इनकी अपेक्षाकृत अधिक आवश्यकता है क्योंकि उपयोगी रोजगार की नयी दिशाएं खोली जा सकती है।

छठी योजना में सम्मिलित मुख्य कार्यक्रम पूर्व-योजनाओं में दिए गए कार्यक्रमों से भिन्न है। उनको क्रियान्वित करने के लिए धन राशि में भी ज्यादा विशिष्ट प्रयत्नों की आवश्यकता है। इस विशिष्ट प्रयत्नों में मानव शक्ति को लगाने पर विशेष बल दिया गया है जिसके बिना शिक्षा-प्रणाली में सुधार सम्भव नहीं हो सकता। यह माना गया कि शिक्षा अभिकरणों को नये कार्यक्रमों की चुनौतियों को पूरा करने के लिए पुरानी परिपाटी से हटकर काम करना होगा। शिक्षा संस्थाओं को समुदाय के साथ निकटवर्ती संबंध स्थापित करके परस्पर सहयोग से इनके कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए प्रोत्साहन देना होगा क्योंकि समुदाय से अलग रहकर इन कार्यक्रमों को पूरा नहीं किया जा सकता।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 ने माध्यमिक शिक्षा सुधार के लिए क्या सुझाव दिए?
   What were the recommendations of NPE 1968 for the Improvement of Secondary Education?
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968) के अध्यापकों के लिए क्या सुझाव थे?
   What were the recommendations of NPE (1968) for teachers?
3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार शिक्षा संरचना क्या होनी चाहिए?
   What should be structure of Education According to NPE?
4. चौथी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए प्रमुख विचारणीय विषय क्या थे?

What were the major issues for the development of secondary education in Fourth Five Year Plan?

5. पांचवी पंचवर्षीय योजना की प्रमुख विशेषता क्या थी?

What was the most distinct Feature of Fifth Five Year Plan?

6. छठी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा पर वास्तव में कितना खर्च किया गया है

What was the actual expenditure on secondary education in Sixth Five Year Plan?

3.7 सारांश (Summary)

कोठारी आयोग ने अनुभव किया था कि प्रचलित माध्यमिक शिक्षा प्रणाली जीवन से असम्बन्धित थी और उद्देश्यों विषय वस्तु में बहुत बडी खाई विद्यमान थी। उन्होंने यह भी अनुभव किया कि कोई भी सुधार इतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि शिक्षा में सुधार करना। शिक्षा आयोग ने प्रत्येक प्रांत को शिक्षा की अपनी 'संरचना निर्धारित करने में छूट थी परन्तु अत्याधिक छूट भी वांछनीय नहीं है। स्कूल की अवधि 11 या 12 वर्ष निर्धारित करने का सुझाव दिया गया परन्तु यह निर्णय कौन करेगा। हमारे देश में एकात्मक ढांचे की अत्याधिक आवश्यकता है। शिक्षा आयोग ने पाठ्यक्रम में सुधार के लिए उपयोगी सुझाव दिए है। कार्य अनुभव एवं समाज सेवा, शारीरिक शिक्षा, कार्य एवं पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण आदि महत्वपूर्ण सुझाव आयोग द्वारा दिए गए है। शिक्षा के व्यावसायीकरण पर भी बल दिया गया है। शिक्षण विधियों में सुधार के लिए भी आयोग द्वारा दिए गए सुझाव अत्यन्त उपयोगी है। आयोग का यह भी मानना है कि निर्देशन विद्यार्थी को अपनी योग्यताएं, अभिरुचिया, रुचियां तथा कमियां समझने में सहायता करता है। इसी के द्वारा वह व्यक्तित्व एवं सामाजिक अनुभवों के आधार पर अपना मूल्यांकन कर सकता है। इसीलिए स्कूलों में निर्देशन सेवाएं आरंभ की जानी चाहिए। आयोग ने प्रशासन के बारे में भी अपने सुझाव दिए। उनका यह मानना था कि यदि नियन्त्रण कठोर हो तो शिक्षा प्रशासन सुविधापूर्वक नहीं चल सकता। प्रशासन लचीला तथा परिवर्तनशील होना चाहिए। माध्यमिक स्कूलों में प्रबन्धकों में सम्पर्क का अभाव है। इसके अतिरिक्त स्थानीय समुदाय भी शिक्षा के विकास के साथ सम्बन्धित नहीं है। अत: शिक्षा प्रशासन को अच्छी प्रकार से व्यवस्थित करने की आवश्यकता है। आयोग की सिफारिशों पर अधिकतर राज्यों में शिक्षकों के वेतनक्रम में संशोधित किए गए। 1968 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर एक प्रस्ताव अपनाया गया।

भारतीय शिक्षा आयोग की सिफारिशों और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 के अनुसार केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड के द्वारा 10+2+3 की शिक्षा संरचना को आरंभ करने की सिफारिश की गई थी। वर्तमान समय में लगभग सभी राज्यों और संयुक्त प्रदेशों ने इस संरचना

को अपना लिया है। पांचवी पंचवर्षीय योजना में राज्य सरकारों को केन्द्रीय सहायता प्रदान की गई और उसके बाद उच्च माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण के कार्यक्रम को एक राजकीय योजना के रुप में नियमित आधार पर चलाया गया। 10+2+3 के अंतर्गत कार्य अनुभव को अध्ययन की नई योजना का अभिन्न अंग बना दिया गया है। विभिन्न स्तरों पर सामाजिक एवं राष्ट्रीय सेवा को शिक्षा का एक अभिन्न अंग बना दिया गया है। नियोजन आयोग द्वारा स्थापित चौथी पंचवर्षीय योजना में शैक्षिक नियोजन, प्रशासन एवं मूल्यांकन पर नियुक्त कार्यकर्ता पार्टी ने राष्ट्रीय स्टाफ महाविद्यालय की स्थापना के लिए शिक्षा आयोग की सिफारिशों को दोहराया। यह महाविद्यालय 1971 में कार्य करने लगा था जिसे 1980 में NIEPA का नाम दिया गया जो अब NUEPA हो गया है।

3.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Naik,J.P. — Education Commission and After,Machllan, Calcutta, 1971

NCERT — Experinces is School Education (Ed.) NCERT, New Delhi,2001

Nurullah,Syed & Naik J.P — Student History of Education in India, Macmillan, Calcutta, 1971(Reprint)

Report of the Education Commission 1964-66, Ministry of Education, Govt. of India, New Delhi

सफाया रघुनाथ — भारतीय शिक्षा की समस्याएं धनपत राय एण्ड सन्ज, जालन्धर,1976

पोपली मुल्कराज — भारतीय शिक्षा पद्धति, स्वरूप एवं समस्याएं एम0टी0 पब्लिकेशन्स, लुधियाना 1989

इकाई-4

माध्यमिक शिक्षा का विकास-1986 और इसके पश्चात्

इकाई की संरचना (Structure of unit)

4.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

4.11 980 के समय में शिक्षा की पुन: समीक्षा (Reassessment of Education during the Nineteen Eighties)

4.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति के निर्माण की आवश्यकता (Need for the formulation of National Policy on Education)

4.3 माध्यमिक शिक्षा एवं राष्ट्रीय नीति (Secondary Education and National Education Policy)

4.4 1986 के कार्यान्वयन कार्यक्रम के विशेष संदर्भ में माध्यमिक शिक्षा का पुनर्वेक्षण (Review of Secondary Education with Special Reference to Programme of Action, 1986)

4.5 राममूर्ति कमेटी-1990 एवं माध्यमिक शिक्षा (Ramamurti committee 1990 and Secondary Education)

4.6 कार्यान्वयन कार्यक्रम, 1992 एवं माध्यमिक शिक्षा (Programme of Action,1992 and Secondary Education)

4.7 राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय संस्थान (National Institute of Open School)

4.8 सातवीं पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education in Seventh Five Year Plan)

4.9 1980 के अंत तक भारत में माध्यमिक शिक्षा का स्तर (Status of Secoundary Education in India by the end of Nineteen Eighties)

4.10 2002 के अंत तक भारत में माध्यमिक शिक्षा का स्तर (Status of Secoundary Education in India by the end of 2002)

4.11 सारांश (Summary)

4.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

4.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Amis and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर आप:

- शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने में शिक्षा प्रणाली की सीमाओं को पहचान सकेंगे।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 1986 की माध्यमिक शिक्षा संबंधी प्रमुख विशेषताओं पर विचार विमर्श करेंगे।

- माध्यमिक शिक्षा की गुणात्मकता के संबंध में केन्द्रीय सरकार की क्रियान्वयन नीति का विश्लेषण कर सकेंगे।
- माध्यमिक शिक्षा के संदर्भ में राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय के योगदान पर विचार विमर्श करेंगे।
- माध्यमिक शिक्षा के सुधार संबंधी महत्वपूर्ण कार्यक्रमों की प्रशंसा कर सकेंगे।
- सातवीं पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा संबंधी प्राथमिकताओं की पहचान कर सकेंगे।
- 2002 तक भारत में माध्यमिक शिक्षा के स्तर में परिवर्तन की 1993 के परिवर्तन से तुलना कर सकेंगे।
- भारत में आज माध्यमिक स्तर की शिक्षा की आवश्यकताओं को समझ सकेंगे।
- भारत में माध्यमिक शिक्षा की स्थिति को समझते हुए आने वाले समय में इसकी कमियों को दूर करने में अपना योगदान देने में समर्थ हो सकेंगे।

इससे पहले की इकाई में हमनें माध्यमिक शिक्षा से संबंधित 1964 तथा 1985 के बीच भारतीय शिक्षा पद्धति के द्वारा लाए गाए परिवर्तनों तथा विकास की परिचर्चा की। इस काल में केवल एक शिक्षा आयोग था जिसकी भारत सरकार के द्वारा स्थापना की गई जिसका कार्य उस समय की परिस्थितियों के अनुसार शिक्षा की संरचना करना था। इस आयोग का परिणाम 1968 की शिक्षा की राष्ट्रीय नीति के रुप में रहा। इसी काल में तीन पंचवर्षीय योजनाओं में भी माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए प्रयत्न किए गए। इस इकाई में हम 1985 के पश्चात् माध्यमिक शिक्षा के विकास पर चर्चा करेंगे।

4.11 980 के समय में शिक्षा की पुन: समीक्षा (Reassessment of Education During the Nineteen Eighties)

प्रत्येक समाज में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा को एक महत्वपूर्ण यंत्र माना जाता है। शिक्षा आयोग के द्वारा भी इसी तथ्य का समर्थन किया गया और शिक्षा को नवीन सामाजिक व आर्थिक संरचना का शक्तिशाली औजार माना। 1968 में जब से राष्ट्रीय नीति का निर्माण किया गया, तब से शिक्षा में उपलब्धियों व कमियों को जांचने के लिए समय-समय पर परिवर्तन किए गए। यही प्रक्रिया पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा भी की जाती है तथा उचित उपायों के सुझाव प्रदान किए जाते है। 1980 में शिक्षा की पुन: समीक्षा की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से पडी:-

1. स्वतन्त्रता के बाद के काल में साक्षरता दर में केवल 20 प्रतिशत की ही वृद्धि हो पाई। 1951 में साक्षरता दर 16.67 प्रतिशत थी जो 1981 में बढ़कर 36.23 प्रतिशत हो गई। इसी आधार पर देश में निरक्षर व्यक्तियों की संख्या 1951 में 6 करोड़ से बढ़कर 1981 में 2408 करोड हो गई। शहरी-ग्रामीण, स्त्री-पुरुष के साक्षरता दर में अत्याधिक भिन्नता थी। वास्तव में स्त्री पुरुष की साक्षरता दर में अंतर 1951 में 1630 प्रतिशत से बढ़कर 2655 प्रतिशत हो गया। इसी प्रकार

शहरी-ग्रामीण क्षेत्र में दूरी 22.49 प्रतिशत से बढ़कर 31.25 प्रतिशत हो गई। साक्षरता दर क्षेत्रीय आधार पर भी भिन्न-भिन्न थी। केरल में सबसे अधिक साक्षरता दर थी जबकि बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान तथा उतर प्रदेश पिछडे क्षेत्र थे जहां साक्षरता दर बहुत कम थी। इन क्षेत्रों में स्त्री साक्षरता दर भी सबसे कम थी। 1981 में राजस्थान में महिला साक्षरता दर केवल 5.46 प्रतिशत थी।

2. शिक्षा संस्थाओं की संख्या 1951 में 23 लाख से बढकर 1981 में 69 लाख हो गई जिनमें से 504 लाख लगभग 73 प्रतिशत स्कूल केवल प्राथमिक स्तर के थे। इस प्रकार माध्यमिक शिक्षा के लिए स्कूलों की संख्या बहुत कम थी। इसके अतिरिक्त प्रबन्धन के क्षेत्र में निजी स्कूलों की तुलना में सरकारी स्कूलों की संख्या में वृद्धि नाममात्र थी और पंचवर्षीय योजनाएं यह दर्शाती है कि यह वृद्धि समाज के गरीब वर्ग, जो शिक्षा प्राप्त करने के लिए फीस देने में असमर्थ थे, के लिए अनुपयुक्त थी। शैक्षिक अवसरों का विस्तार तथा शैक्षिक अवसरों का विस्तार तथा शैक्षिक सुविधाएं माध्यमिक शिक्षा प्रदान करने के लिए पर्याप्त नहीं थी।

3. शिक्षा आयोग के द्वारा यह सुझाव दिया गया था कि शिक्षा के क्षेत्र में कुल राष्ट्रीय उत्पाद को 6 प्रतिशत खर्च किया जाए परंतु वास्तुव में केवल 3 प्रतिशत ही खर्च किया गया। शिक्षा के सभी स्तरों पर शैक्षिक विस्तार के लिए शैक्षिक जय में वृद्धि करना आवश्यक था।

समता तथा सामाजिक न्याय के संदर्भ में प्रणाली की सीमाएँ

(Limitations of the system with reference to Equity Social Justice)

शिक्षा प्रणाली विभिन्न सामाजिक समूहों की आवश्यकताओं को पर्याप्त ढंग से पूरा करने में असमर्थ थी और इसका परिणाम यह हुआ कि बहुत से लोग निरंतर इस प्रणाली से बाहर चले गए। शैक्षिक प्रणाली की सीमाएं निम्नलिखित है:-

1. **स्कूल प्रणाली का संगठन (Organization of School System)-** प्रचलित शैक्षिक प्रणाली केवल औपचारिक शिक्षा पर ही आधारित थी, जिसका अभिप्राय है प्रवेश की सीमा, वार्षिक पदोन्नति तथा पूर्णकालिक शिक्षण अधिगम। यह प्रबन्धन जनसंख्या के एक विशेष भाग के लिए ही उपयुक्त था जबकि अन्य जो इन सीमाओं के साथ नहीं चल सकते थे, ये इस प्रणाली से बाहर हो गए। वास्तव मे स्कूल प्रणाली इतने कतरो ढंग से संगठित थी कि जब तक एक विद्यार्थी माध्यमिक सार पर कम से कम 4 वर्ष तक विद्यालय मे न रहे, तब तक यह उन क्रियात्मक कौशलों का ज्ञान प्राप्त करने मे असमर्थ है जो समाज में रहने के लिए व रोजगार प्राप्त करने के लिए आवश्यक है।

2. **सुविधाओं की कमी (Lake of Facilities)-** राज्य सरकार ने लगभग सभी स्कूलों में, विशेष रुप मे ग्रामीण क्षेत्रों मे, सार्वभौमिक स्कूल सुविधाएँ,। प्रदान की है। परन्तु इन सरकारी स्कूलों में नयनों, कक्षाकक्षों, अध्यापकों तथा अन्य शिक्षण-अधिगम सामग्री की मात्रा पर्याप्त नही थी, जिसके परिणाममरुप अभिभावक अपने

बच्चों को इन स्कूलों में भेजने को तैयार नही थे और माध्यमिक स्तर पर जो अभिभावक फीस अदा कर सकते थे, वे अपने बच्चों को शहरी क्षेत्रों में ही भेजना चाहते थे जिनमें उपयुक्त सामग्री उपलब्ध थी व शिक्षण अधिगम सुविधाएं भी कौशलपूर्ण थी।

पाठ्यक्रम

(Curriculum)

स्कूली शिक्षा जो अभी तक राज्यों का ही प्रमुख उतरदायित्व थी, उनमें पाठ्यक्रम राज के द्वारा ही प्रदान किया जाता था। ऐसे केन्द्रीयकृत पाठ्यक्रम में स्थानीय विचारधारा, संस्कृति, अधिगम अनुभव तथा पाठ्यसामग्री प्रतिबिम्बित होती थी। इसका परिणाम एक पक्षपातयुक्त पाठ्यक्रम था जो उपयुक्त तथा विषय सामग्री व अधिगम अनुभव प्रदान करने मे असमर्थ था। लड़कियों की उपलब्धि तथा योगदान अत्यधिक कम था क्योंकि स्कूल पाठ्यक्रम तथा अध्यापक व्यक्तित्व लिंग आधार पर पक्षपातपूर्ण था।

अध्यापक

(Teacher)

अध्यापक शिक्षा प्रणाली मे एक धुरी के समान होता है जिस पर स्कूली शिक्षा का भाग्य निर्भर करता है और जिसके चारों और शिक्षा प्रणाली घूमती है। अध्यापकों को दिए जाने हाले प्रशिक्षण की गुणवत्ता भी निम्न कर पर थी। ऐसी परिस्थितियों में शिक्षण-अधिगम क्रियाएं विद्यार्थियों को स्कूली कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करने में समर्थ नहीं थी। इसके अतिरिक्त अध्यापक व्यक्तित्व, व्यवहार, विचारधारा, विद्यार्थियों का मूल्यांकन आदि पक्षपातपूर्ण पाया जाता है जबकि यह स्वयं उसी शिक्षा प्रणाली का उत्पाद है। इसी के फलस्वरुप अध्यापक में निरंतर विद्यार्थियो में भेदभाव करने की प्रवृति बनी रहती है जिससे सभी विद्यार्थी शैक्षिक क्रियाओं में भाग नहीं लेते है।

परीक्षा

(Examination)

स्कूल परीक्षा में लेखन कौशल में अधिक प्राथमिकता दी जाती है जिस कारण केवल जनसंख्या का यही भाग अच्छी उपलब्धि प्राप्त कर सकता है जिसके घर मे सुदृढ़ भाषा संस्कृति विद्यमान हो।

इस प्रकार यदि समानता के साथ-साथ क्षमता व सामाजिक न्याय को प्राप्त करना है तो शैक्षिक कार्यक्रम इस प्रकार बनाए जाएं कि पाठ्यक्रम में आधुनिक विषय सामग्री का अतीत की विषय सामग्री से समावेश किया जाए तथा पाठ्यक्रम विकेन्द्रीयकृत हो, स्कूलो में अच्छी सुविधाएं प्रदान की जाए, अध्यापकों के लिए उपयुक्त प्रशिक्षण व्यवस्था लागू की जाए तथा मूल्यांकन प्रविधियों में सुधार किया जाए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. केन्द्रीयकृत पाठ्यक्रम में क्या त्रुटि पाई जाती है?

What is the defect in a centralized curriculum?

2. 1980 के सत्र में शिक्षा की पुन: समीक्षा की आवश्यकता क्यों हुई?
What were the reason responsible to reassess the education during 19th century?

3. स्कूल प्रणाली के संगठन में क्या कमी थी?
What was the defect in the organization of School System?

4.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति के निर्माण की आवश्यकता (Need for the Formulation of NPE)

शिक्षा आयोग 1964-66 ने यह सुझाव दिया कि भारत सरकार को शिक्षा की राष्ट्रीय नीति पर एक धारणा देनी चाहिए जिसके द्वारा राज्य सरकारों तथा स्थानीय अधिकारियों को शैक्षिक योजनाओं को तैयार करने व लागू करने में सहायता मिले। 1967 में भारत सरकार ने शिक्षा पर संसद सदस्यों की एक समिति का निर्माण किया जिसका कार्य शिक्षा की राष्ट्रीय नीति पर धारणा की रुपरेखा तैयार करना था। इतिहास में पहली बार समिति के द्वारा देश की लगभग सभी राजनीतिक पार्टियों के अग्रणी सदस्यों को इक्कठा किया गया और एक रुपरेखा तैयार की गई। जिस पर केन्द्रीय परामर्श शिक्षा बोर्ड के द्वारा विचार विमर्श किया गया। इस विचार विमर्श से शिक्षा पर राष्ट्रीय नीति पर एक सामान्य विचारधारा का प्रादुर्भाव हुआ। इसके पश्चात् सरकार के द्वारा 1968 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर एक अधिनियम तैयार किया गया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 के द्वारा यह सुझाव दिया गया था कि विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों के अनुसार उसके क्रियान्वयन की प्रत्येक पांच वर्ष के पश्चात् समीक्षा की जानी चाहिए, परन्तु अगले 17 वर्षो तक किसी प्रकार की समीक्षा नहीं की गई। इसलिए यह अनुभव किया गया कि समीक्षा की जानी चाहिए और तब भारत के प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने इस दिशा में प्रयास किया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के निर्माण की प्रक्रिया

(Process for the Formation of NPE)

प्रथम चरण के रुप में एक सौदा जिसका शीर्षक है (Challenges of Education : A Policy Perspective) के रुप में तैयार किया गया। मसौदे की विषय सामग्री पर देश में विभिन्न सम्मेलनों, विचार गोष्ठियों तथा अध्ययन क्षेत्रों आदि मे विचार विमर्श किया गया। यह अत्याधिक रुचिकर विषय है कि इसके दस्तावेज के सभी क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद किया गया। 5,80,000 कॉपिया अंग्रेजी में, 2,40,000 हिन्दी में, और 4000 कॉपियां उर्दू में मंत्रालय द्वारा लोगों के विभिन्न वर्गो के सुझावों के लिए वितरित की गई। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के निर्माण के लिए राष्ट्रीय स्तर पर विचार विमर्श के रुप में 12 राष्ट्रीय सैमिनारों तथा 17 प्रांतीय सेमिनारों का शिक्षा मंत्रालय तथा इसके राष्ट्रीय संगठनों द्वारा आयोजन किया गया। सभी राज्य सरकारों तथा संघीय क्षेत्रों द्वारा भी सेमिनारों, कार्यशालाओं तथा सिम्पोजिया का आयोजन किया गया।

मंत्रालय द्वारा प्राप्त सभी सुझावों का विस्तृत विश्लेषण किया गया और इसके पश्चात् मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा एक संशोधित दस्तावेज राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 एक प्रस्तुतीकरण तैयार किया गया। इस पेपर पर राजकीय शिक्षा मंत्रियों, राष्ट्रीय विकास समिति तथा केन्द्रीय परामर्श शिक्षा बोर्ड की सभाओं में विचार विमर्श किया गया। इन विचारों के प्रकाश में राष्ट्रीय शिक्षा नीति लोकसभा द्वारा 8 मई को तथा राज्य सभा द्वारा 13 मई 1986 को पास की गई। अगस्त 1986 में संसद ने नई नीति को व्यवहारिक रुप देने के लिए कार्य योजना (1986) को स्वीकृति प्रदान की। इसमें शिक्षा के विभिन्न तथ्यों से सम्बन्धित 12 भाग तक 157 धाराएं है।

4.3 माध्यमिक शिक्षा एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति (Secondary Education and National Education Policy)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के दस्तावेज के भाग V तथा VIII माध्यमिक शिक्षा से संबन्धित है। माध्यमिक शिक्षा विद्यार्थियों को सामाजिक विज्ञानों, साहित्य तथा विज्ञान की विशिष्ट भूमिकाओं के प्राय में लाती है। यह विद्यार्थियों को इतिहास का बोध कराने वाली तथा उनका राष्ट्रीय परिपेक्ष्य बनाने वाली उपयुक्त अवस्था है और यह उनको नागरिक के रुप में अपने संवैधानिक कर्तव्य तथा अधिकार जानने के अवसर प्रदान करती है। इसमे उपयुक्त ढंग से निर्धारित किए गए पाठ्यक्रम के द्वारा स्वस्थ कार्य लोकाचार तथा मानवोचित व मिश्रित संस्कृति के मूलों को देशीय बनाया जाएगा। विशेष रुप से बनाए गए संस्थानों तथा नए सिरे से निर्धारित की गई माध्यमिक शिक्षा के द्वारा किया गया शिक्षा का व्यवसायी करण आर्थिक विलास के लिए महत्वपूर्ण जनशक्ति उपलब्ध कर सकता है। माध्यमिक शिक्षा के प्रसार में वृद्धि की जाएगी ताकि वर्तमान के उन क्षेत्रों में इसे कार्यशील बनाया जा सके जो इससे वंचित रह गए थे। अन्य क्षेत्रों में इसे संगठित किए जाने पर विशेष बल दिया जाएगा।

नवोदय स्कूल

(Navodaya Schools)

सार्वभौमिक रुप से यह स्वीकार किया गया कि देश के विभिन्न भागों नें नवोदय स्कूलों की स्थापना की जाएगी जिससे तेज गति से विकास करने वाले या प्रतिभा वाले बच्चों को अवसर प्रदान किए जा सके। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अच्छी गुणवत्ता की शिक्षा बच्चों को उपलब्ध कराई जाएगी भले ही वे पैसा खर्च करने मे समर्थ भी न हो। इसके विस्तृत उद्देश्य होगे:-

- उत्कृष्टा, समानता व सामाजिक न्याय आदि तात्कालिक उद्देश्यों की पूर्ति करना (अनुसूचित जातियों व जनजातियों के लिए आरक्षण के साथ)
- राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देना
- क्षमताओं का पूर्ण विकास करना
- स्कूलों को आवासीय तथा निःशुल्क बनाना।

व्यावसायीकरण

(Vocationalization)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शिक्षा के व्यावसायीकरण संबधी निम्नलिखित प्रावधान है:-

1. व्यावसायिक शिक्षा एक अपने आपमें एक अलग धारा होगी जिसका उद्देश्य उनके काम क्षेत्रों मे फैले परिचित व्यवसायों के लिए विद्यार्थियों को तैयार करना होगा।
2. व्यवसायिक विषयों का प्रबंध साधारणतया माध्यमिक अवस्था के बाद ही किया जाएगा। व्यवसायिक शिक्षा को इसकी सुविधाओं के साथ सफलतापूर्वक जोड़ने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान की उच्चतर व्यवसायिक ढांचे को सुनिश्चित बनाएंगे।
3. स्वास्थ्य संबंधी व्यवसायिक विषयों को प्रभावशाली स्वास्थ्य नियोजन तथा स्वास्थ्य सेवा प्रबंध के लिए पाठ्यक्रम में शामिल किया जाएगा।
4. व्यवसायिक शिक्षा में दृष्टिकोण, जानकारी, स्व-रोजगार व ठेकेदारी के लिए आवश्यक योग्यताओं के विकास पर भी बल दिया जाएगा।
5. व्यवसायिक विषयों या संस्थानों की स्थापना का दायित्व सरकारी तथा निजी क्षेत्रों में सरकार और मालिकों पर होगा।
6. नव शिक्षितों, प्राथमिक शिक्षा पूरी कर चुके युवकों तथा स्कूल छोडने वाले बनो को अंश-औपचारिक, लचीले तथा आवश्यकता के अनुरुप प्रशिक्षण पर आधारित, व्यवसाय संबंधी कार्यक्रम उपलब्ध कराए जाएंगे।
7. जो युवक शैक्षिक धारा के उच्चतर माध्यमिक विषयों पर स्नातक की डिग्री ले चुके है और जिन्हें अब भी व्यवसायिक विषयों की जरुरत है, उनके लिए तृतीय स्तर के विषयों का संगठन किया जायेगा।
8. प्रशिक्षण पर आधारित व्यवसाय संबंधी विषयों के द्वारा 1990 तक 10 प्रतिशत और 1995 तक 25 प्रतिशत उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के विद्यार्थियों की जरुरतों को पूरा करने का निश्चय किया गया है। वर्तमान में इसका विस्तार क्षेत्र केवल 25 प्रतिशत है। 1987-88 से एक नयी योजना को आरंभ करने का विचार बनाया गया है जिसके अंतर्गत सांतवी योजना अवधि के दौरान 500 स्कूलों को प्रशिक्षण पर आधारित व्यवसाय संबंधी सुविधाओं से परिपूर्ण किया जाएगा।
9. प्रभावी प्रबंधकीय प्रणाली का संगठन किया जाएगा।

शिक्षों की विषय-वस्तु तथा प्रक्रिया का नवीकरण

(Reorientation of the content and Process of Education)

1. शिक्षा के पाठ्यक्रम तथा प्रक्रियाओं को हर संभव तरीके से सांस्कृतिक रूपों के द्वारा समृद्ध बनाया जाएगा।
2. लोगों की एकता और अखंडता के लिए विश्व व्यापक, सामाजिक, नैतिक तथा शाश्वत मूल्यों का विकास किया जाएगा।

3. भाषाओं के विकास से संबंधित शिक्षा नीति (1968) को अधिक शक्ति व दृढ़ संकल्प के साथ लागू किया जाएगा।

4. लोगों की पाठन संबंधी आदतों को विकासित किया जाएगा और उनको सृजनात्मक लेख लिखने को प्रोत्साहित किया जाएगा।

5. वर्तमान पुस्तकालयों में सुधार लाने व नये पुस्तकालयों की स्थापना करने के लिए एक राष्ट्रिव्यापी अभियान छेड़ा जाएगा।

6. कला व संस्कृति के प्रति जागरुकता तेज करने के लिए, लाभकारी जानकारी के प्रसार के लिए, शिक्षकों को प्रशिक्षण देने के लिए, शिक्षा की गुणवता में सुधार लाने के लिए, औपचारिक व अंशौपरिक क्षेत्रों में ठोस मूल्यों आदि को लागू करने के लिए शिक्षा तकनीकी का प्रयोग किया जाएगा।

7. कार्य-अनुभव को शिक्षा के एक अनिवार्य अंग के रुप में अपनाया जाएगा।

8. वातावरण के प्रति चेतना आवश्यक रुप से जागृत करनी चाहिए।

9. गणित शिक्षा को आधुनिक तकनीकी विधियों की पद्धति पर जाएगा।

10. विज्ञान की शिक्षा को प्रोत्साहन दिया जाएगा ताकि वह बच्चे में जांच पड़ताल,सृजनात्मकता वस्तुनिष्ठा की भावना तथा सौंदर्य संवेदनशीलता को विकसित कर सके।

11. खेलों तथा शारीरिक शिक्षा को आ' शिक्षण प्रक्रिया का एक अनिवार्य भाग बनाया जाना चाहिए खेल-कूद को प्रोत्साहन देने के हर संभव प्रयास किए जाने चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों मे उपलब्ध खुली जगह को खेल के मैदानी के लिए आरक्षित किया जाएगा। खेल संस्थानों व होस्टलों को स्थापित करने के प्रयास किए जाएंगे।

12. युवा वर्ग को राष्ट्रीय तथा सामाजिक विकास कार्य में शैक्षिक संस्थानों के माध्यम से या फिर सीधे रुप से भाग लेने के अवसर प्रदान किए जाएंगे। राष्ट्रीय सेवा योजना या राष्ट्रीय कैडेट कॉपर्स (National Cadet Corps) आदि मे विद्यार्थियों द्वारा भाग लिया जाना अनिवार्य बनाया जाएगा। संस्थानों से बाहर युवकों को विकास, सुधार और प्रसार संबधी कार्यक्रम शुरु करने के लिए प्रोत्साहन दिया जाएगा। राष्ट्रीय सेवा स्वयंसेवक योजना' (National Service Volunteer Scheme) को मजबूत बनाया जाएगा।

13. दोषरहित शैक्षिक योजना के भाग के रुप में परीक्षा प्रणाली शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाये जाने के उद्देश्य से चलाई जानी चाहिए। परीक्षा प्रणाली को नया रुप देना नीति का तात्कालिक उद्देश्य होगा, ताकि मूल्यांकन विधि की विश्वसनीयता व प्रामाणिकता को तथा अध्यापन व सीखने को सुधारने वाले एक शक्तिशाली माध्यम को सुनिश्चित बनाया जा सके। इस संबंध में निम्नलिखित उपाए किए जाएंगे:-

- रटन्त प्रणाली पर बल नहीं दिया जाएगा।
- शिक्षण सामग्री तथा विधि तंत्र में सहवर्ती परिवर्तनों (Concomitant) का प्रवेश होगा।
- व्यक्तिनिष्ठता को कम किया जाएगा।

- सैमेस्टर प्रणाली को आरंभ किया जाएगा।
- अंको के स्थान पर श्रेणी का प्रयोग किया जाएगा।
- परीक्षा संचालन में सुधार लाया जाएगा।

इस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 शिक्षा में गुणात्मक विकास के लिए उपयोगी रही थी, लेकिन नए विकास ले साथ समझौता नही कर पाई थी। इस नीति के बाद कार्यवाही का कार्य{म (Programme of Action) आरंभ किया गया जिसे संसद द्वारा अगस्त 1986 से अपनाया गया और राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के कार्यान्वित करने से सम्बन्धित रिपोर्ट ने भी इसे अपनाया। 1990 में आचार्य राममूर्ति द्वारा इस नीति का मूल्यांकन किया गया और उन्होंने भारत में राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर एक रिपोर्ट दी।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति के निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।
   Explain the process for the formation of NPE.
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति के निर्माण की क्या आवश्यकता थी?
   What was the need for the formation of NPE?
3. नवोदय स्कूल के उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।
   Describe the Objectives of Navodaya School.
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति द्वारा दिए गए माध्यमिक शिक्षा के व्यायसायीकरण संबंधी प्रावधानों का वर्णन कीजिए।
   Explain the provisions related to vocationalization of secondary education given by NEP.
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने शिक्षा की विषय वस्तु के नवीनीकरण के लिए क्या सुझाव दिए?
   What were the suggestion given by NPE for reorientation of the content of education?

4.4 1986 के कार्यान्वयन कार्यक्रम के विशेष संदर्भ में माध्यमिक शिक्षा का पुनर्वेक्षण (Review of Secondary Education with Special Reference to Programme of Action 1986)

प्रथम बार शिक्षा नीति की घोषणा के पश्चात् उसकी कार्यप्रणाली को लागू करने के लिए एक कार्यान्वयन कार्यक्रम चलाया गया। इसके द्वारा निम्नलिखित क्रियाओं को अपनाया गया।

पूर्व आवश्यकताएं एंव नीति के व्यापक मानदण्ड

(Pre-requisites and Broad Parameters of Strategy)

1. माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा उन लोगों के लिए अंतिम चरण है जो इसके पश्चात् कार्य की दुनिया में प्रदेश कर जाते है। ऐसे लोगों के लिए सशक्त व्यावसायिक योजना रणनीति का मुख्य आधार होनी चाहिए।
2. जो रोजगार की दुनिया में प्रवेश नहीं करते, उनके लिए यह उच्चतर शिक्षा के लिए तैयारी का चरण है, अत: शिक्षा द्वारा ठोस आधार प्रदान किया जाना चाहिए।
3. प्रबंधन पद्धति में सुधार, जिसमें संभवत: विद्यालय संयुक्त पद्धति और सुधार की गई पर्यवेक्षीय पद्धति अत्याधिक महत्वपूर्ण है।
4. पाठ्यक्रम और परीक्षा / मुल्यांकन सुधार के कार्यक्रम से विद्यालय क्षेत्रों में दृढ आधार के लिए परिस्थितियां प्राप्त होगी।

नीति

(The Policy)

माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित नीति का अर्थ है विद्यालय पद्धति का सेवा-विहीन क्षेत्रों में विस्तार, वर्तमान सुविधाएं संगठित करना और प्रतिभाशाली बच्चों एवं उच्च प्राप्तकर्ताओं के लिए विशेष सुविधाएं प्रदान करना। इसके लिए निम्नलिखित की आवश्यकता होगी:-

1. माध्यमिक शिक्षा तक पहुंच सुनिश्चित करने के लिए सेक-विहीन क्षेत्रों को शामिल करने हेतु कार्यक्रम की योजना बनाना।
2. अन्य क्षेत्रों / विद्यालयों में दृढ़ीकरण का कार्यक्रम।
3. नवोदय विद्यालय की स्थापना का कार्यक्रम।

कार्यक्रम और क्रियान्वयन

(Programme and Implememtation)

1. लघु अवधि कार्यवाही के रुप में राज्य-सरकारों को सेवा-विहीन क्षेत्रों में माध्यमिक विद्यालयों को खोलने के लिए राजी किया जाएगा। 1:2:5 से कम अनुपात वाले ब्लाकों को एक इकाई के रुप में किया जाएगा। निकटतम माध्यमिक विद्यालय से आवास तक की वर्तमान दूरी और सेवा-विहीन आवास स्थानों की जनसंख्या पर उचित रुप से विचार किया जाएगा।
2. पिछड़े हुऐ क्षेत्रों, अनुसुचित जातियों / अनुसूचित जनजातियों से भारी संख्या में बसे हुए क्षेत्रों और बालिकाओं के लिए विद्यालय सम्बन्धी सुविधाओं पर विशेष बल दिया जाएगा।
3. विद्यालय समूहों की स्थापना की जाएगी जिनमें सबसे आगे माध्यमिक विद्यालय होगा। इस कार्यक्रम को राजकीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (SCERT-State council of Educational Research and Training) के सहयोग मैं आरंभ किया जा सकता है। इस प्रयोग को 1988 तक पूरा किया जा सकता है और 1989 मे इसे कार्यान्वित किया जा सकता है।
4. जो कार्यरत लोग माध्यमिक और इस प्रकार की अन्य शिक्षा से वंचित है उनके लिए माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर परिवर्तनशील अंशौपचारिक

व्यवस्था की आवश्यकता है। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए 1990 तक क्रमिक देश से मुक्त विद्यालयों की स्थापना की जाएगी, साथ ही प्रत्येक जिले में एक संसाधन केन्द्र होगा।

5. अल्प अधिकार वाले लोगों के लिए विशेष रुप से ग्रामीण क्षेत्रों मे माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक विद्यालय होने चाहिए। इनमे निम्नलिखित सुविधाएं होनी चाहिए:-
   - खेल के मैदान की सुविधाएँ
   - कहा कक्ष सुविधाएं
   - प्रयोगशाला सुविधाएं
   - अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम
   - पाठ्यक्रम सुधार
   - उच्चतर माध्यमिक व माध्यमिक विद्यालयों के बीच का अनुपात 1:3 होना चाहिए।

6. उच्च प्राप्ति करने वाले वर्ग के लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नवोदय विद्यालयों की स्थापना का सुझाव दिया गया। तदानुसार सातवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि में प्रत्येक जिले में ऐसे विद्यालय खोलने का प्रयास किया गया। इनकी निम्नलिखित विशेषताएं थी:-
   - स्तरीय शिक्षा।
   - ग्रामीण बच्चों के लिए आरक्षण।
   - अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण
   - निःशुल्क शिक्षा।
   - बालिकाओं को शामिल करना।
   - नये परिवर्तन और प्रयोग क्रिया के अवसर प्रदान करना।
   - राष्ट्रीय एकीकरण को प्रोत्साहन।
   - NCERT द्वारा तैयार की गई विशेष प्रवेश परीक्षा के आधार पर चयन।
   - छात्रों की संख्या सीमित रखना।
   - केन्द्रीय माध्यमिक बोर्ड के साथ सम्बद्धता
   - केन्द्रीय सरकार / केन्द्रीय रुप से प्रायोजित एजेन्सी का निमन्त्रण।

7. प्रतिभाशाली बच्चे प्राय: एक सीमित क्षेत्र में योग्यता और अन्य विशेष क्षेत्रों में उदासीनता दिखाते है। ऐसे छात्रों के लिए कार्यक्रम निम्नलिखित है:-
   - इन्हें माडयूलर आधार पर शिक्षण / अधिगम प्रदान किया जाएगा। यह अधिगम विद्यार्थियों की रुचि के अल्प संख्या वाले विषयों में विद्यार्थियों के प्रत्येक छोटे समूह के लिए प्रदान किया जाएगा।
   - इन व्यवस्थाओं की विशिष्टता में अनेक सुविधाएं शामिल होगी।

- शिक्षण कार्यक्रमों मे व्यावसायिकों द्वारा नियमित भागीदारी शामिल होगी।

8. व्यवसायिक शिक्षा व राष्ट्रीय स्तर के बीच समन्वय स्थापित करने के उद्देश्य से मानव संसाधन का विकास मंत्रालय के द्वारा एक संयुक्त व्यावसायिक शैक्षिक संसाधन विकास मंत्रालय में व्यावसायिक क्षेत्र के लिए एक ब्यूरो बनाया जाएगा। अनुसंधान तथा विकास के लिए NCERT के अधीन एक केन्द्रीय व्यवसायिक शैक्षिक संस्थान की स्थापना की जाएगी। राज्य सरकारों द्वारा राज्य व्यावसायिक शैक्षिक परिषद, राज्य व्यावसायिक शिक्षा संस्थान, व्यावसायिक शिक्षा विभागों आदि की स्थापना जरुरत के अनुसार की जाएगी। SIVE/SCERT's और अन्य विशिष्ट क्षेत्रों, मैं चुने हुए व्यावसायिक संस्थानों में पाठ्यक्रम विकास कक्ष / केन्द्र स्थापित किए जाएंगे ।

9. विभिन्न राज्यों में राज्य व्यावसायिक शिक्षा विभागो द्वारा 8+ स्तर के विद्यार्थियों के लिए व्यावसायिक कार्यक्रमों को सीमित पैमाने पर प्रयोगात्मक आधार पर आरंभ किया जाएगा। 10+ स्तर के कार्यक्रमों को SCERT's/SIVE' द्वारा NCERT के बताए हुए निर्देशों के प्रकाश में तैयार किया जाएगा। तृतीय स्तर के कार्यक्रम जैसे व्यावसायिक विषयों में डिप्लोमा, उच्च डिप्लोमा कार्यक्रम आदि को चुने हुए पॉलिटेक्निक आदि में आरंभ किया जाएगा।

10. विकलांगों के व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए जिला व व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाए, एवं पोलिटैक्निक स्थापित किए जाएंगे।

11. अध्यापकों की चयन प्रणाली में आवश्यक सुधार किया जाएगा। शिक्षा के आयोजन तथा प्रबंधन के लिए अध्यापकों को सम्मिलित किया जाएगा

12. व्यावसायिक धारा के विद्यार्थियों में स्व-रोजगार प्रवीणताओं को पाठ्यक्रम संबंधी विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रमों तथा प्रदत प्रशिक्षुता की सुविधाओं द्वारा विकसित किया जाएगा।

4.5 राममूर्ति कमेटी 1990 एवं माध्यमिक शिक्षा (Ramamurti Committee and Secondary Education)

राममूर्ति कमेटी जो पुनर्वेक्षण कमेटी के नाम से लोकप्रिय है, 7 मई 1990 को श्री वी.पी. सिंह के नेतृत्व में जनता फ्रंट सरकार द्वारा राममूर्ति की अध्यक्षता में नियुक्त की गई थी। 17 सदस्यों से निर्मित इस कमेटी ने 26 दिसम्बर, 1990 को मानव संसाधन विकास मंत्रालय में राज्य मंत्री को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस रिपोर्ट में जिसका शीर्षक Towards on Enlightened and Humane Society) था, संसद में 9 जनवरी, 1991 को चर्चा के लिए प्रस्तुत किया गया।

राममूर्ति कमेटी का कार्यक्षेत्र

(Terms of Reference of Ramamurti Committee)

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 और इसके क्रियान्वयन का पुनर्वेक्षण करना।
- नीति के संशोधन के संबंध में सिफारिशें करना।
- समय अवधि संशोधित नीति को क्रियान्वयन के लिए आवश्यक कार्यवाही की सिफारिश करना।

कमेटी के मुख्य उपागम

(Main Approaches of Committee)

NPE 1986 के पुनर्वेक्षण और क्रियान्वयन में कमेटी का उपागम निम्नलिखित मुद्धों से निर्देशित रहा है:-

1. समानता और सामाजिक न्याय।
2. सभी स्तरों पर शैक्षिक प्रबंधन का विकेन्द्रीकरण।
3. सहभागितापूर्व शैक्षिक व्यवस्था की स्थापना।
4. प्रबंद्ध व मानवीय समाज के निर्माण के लिए अत्यावश्यक मूल्य विकसित करना।
5. कार्य के लिए अधिकृति।

माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित सुझाव

(Recommendations related to Secondary Education)

राममूर्ति कमेटी ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के द्वारा दिए गए नवोदय स्कूल के विचार का समर्थन नहीं किया। इसने यह सुझाव दिया कि यदि सरकार चाहे तो निम्नलिखित तीन विकल्पों में से निर्णय ले सकती है:-

1. नवोदय विद्यालय अब और नहीं खोले जाने चाहिए। विद्यामान 261 नवोदय विद्यालयों को पुन: संरचित किया जाए और उन्हें पर्याप्त सुविधाओं के प्रावधान से निरंतर रखा जाए। योजना पर 1992-93 में फिर से विचार किया जाए।
2. वर्तमान 261 नवोदय विद्यालयों को राज्य क्षेत्र मे हस्तांतरित कर दिया जाए और आंध्र प्रदेश के मॉडल के आधार पर राज्य के द्वारा इन्हे आवासीय केन्द्रों के रुप मे चलाया जाए।
3. नवोदय विद्यालय योजना को विस्तृत आधार नवोदय विद्यालय कार्यक्रम के रुप में बदल दिया जाए। नवोदय विद्यालयों के प्रांगण में सामान्य स्कूल पद्धति का एक डे-स्कूल (Day-School) चलाया जा सकता है।

व्यावसायिक शिक्षा तथा माध्यमिक शिक्षा में संरचनात्मक परिवर्तन

(Vocational Education and Structural Changes in Secondary Education)

व्यावसायिक को सफल बनाने के लिए माध्यमिक विद्यालयों में कुछ संरचनात्मक परिवर्तनों का परिचय दिया जाना चाहिए जैसे इकाई कोर्स, क्रेडिट प्रदान करना, सैमैस्टर प्रणाली इत्यादि। इसके साथ-साथ विद्यार्थियो के लिए प्रवेश करने के तथा बाहर जाने के अधिक रास्ते खोले जाने चाहिए अर्थात प्रवेश करने तथा छोडने की प्रक्रिया में लचीलापन होना कहिए। अन्य शब्दों में जो विद्यार्थी किसी भी व्यावसायिक कोर्स का चयन करते है तो उनके लिए कोर्स की विशेष इकाई के क्रेडिट प्राप्त करने की सुविधा होनी चाहिए।

कार्य क्षेत्र में जाने तथा अपनी सुविधा के अनुसार फिर से वापिस आने तथा अन्य इकाइयों में क्रेडिट प्राप्त करने का प्रावधान होना चाहिए। ऐसा करने से स्कूल विभिन्न विषयों- भाषा, गणित, विज्ञान तथा सामाजिक विज्ञान में विभिन्न संयोगो के साथ व्यावसायिक कोर्स प्रदान कर सकेंगे। शिक्षा पर आधारित व्यावसायिक विषयों के स्नातकों को पूर्व निर्धारित शर्तों के अनुसार व्यावसायिक विकास करने, जीविका मे सुधार लाने तथा उपयुक्त ब्रिज कोर्सों के माध्यम से सामान्य, तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा मे प्रवेश पाने के अवसर प्रदान किए जाएंगे।

जो विद्यार्थी स्कूलों में औपचारिक माध्यमिक शिक्षा प्राप्त नहीं करते, उनके लिए सामुदायिक पोलिटैक्निक्स के अन्तगत निरौपचारिक शिक्षा के द्वारा व्यावसायिक कार्यक्रम का प्रावधान हो तथा औपचारिक क्षेत्र में औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों तथा ग्रामीण संस्थानों आदि के द्वारा व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जाए।

सहभागितापूर्ण शिक्षा अवस्था

(Participative Education Order)

सहभागितापूर्ण शिक्षा व्यवस्था की संकल्पना शिक्षा के प्रत्येक चरण से सम्बंधित होती जा रही है। क्योंकि सहभागिता द्वारा सम्मिलित होने से ही व्यावसायिक सुधार के लिए वातावरण उत्पन्न किया जा सकता है। इस सम्बंध में सोची गई महत्वपूर्ण कार्यप्रणालियां है- विद्यालय शिक्षा में सुधार, विद्यालय भवनों का निर्माण, प्राथमिक विद्यालयों मिडल विद्यालयों हाई स्कूली, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों मे पारस्परिक समन्वय लाना।

मूल्य शिक्षा

(Value Education)

लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद वैज्ञानिक प्रकृति, लिंगों की समानता, ईमानदारी, निष्ठा, साहस और न्याय, जीवन के सभी स्वरूपों के लिए सम्मान, विभिन्न संस्कृतियों और भाषाएं इत्यादि मूल्यों के आदर्श का निर्माण करते है, जो देश की एकता और सम्पूर्णता के लिए अत्यावश्यक है। शिक्षा की सामग्री और प्रक्रिया इन आधारभूत मूल्यों से व्याप्त होनी चाहिए। मूल्य शिक्षा की भूमिका हाथ, मस्तिष्क और हृदय का एकीकरण करना भी है ताकि निश्चित किया जा सके कि शिक्षा के कारण C:\Users\user\Documents का परिवार, समुदाय और जीवन से अलगाव न हो। शिक्षा के सभी चरणों में कार्य संस्कृति की रचना की जाए ताकि व्यक्ति सामाजिक और आर्थिक रुप में उपयोगी मनुष्य के रुप में विकसत हो जिसके मन में सभी जीवों के लिए कल्याण की भावना हो। विद्यार्थियों सर्वोपरि, C:\Users\user\Documentsमें देश की संस्कृतिक और कलात्मक विरासत के लिए समीक्षात्मक बोध और प्रंशसात्मक दृष्टिकोण विकसित किया जाना चाहिए।

शिक्षा के लिए संसाधन

(Resources for Education)

संसाधनों के संबंध में कमेटी की महत्वपूर्ण सिफारिशें निम्नलिखित है:-

1. शिक्षा में सार्वजनिक निवेश कुल राष्ट्रीय उत्पादन के 6 प्रतिशत से अधिक होना चाहिए।

2. समस्त तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा का स्वत: आर्थिक प्रबंध किया जाना चाहिए तथा विद्यार्थी को कर्ज के रुप में उपयुक्त सहायता दी जानी चाहिए।
3. सम्बद्ध सुविधाएं या सेवाएं आदि प्रदान करने के खर्चो से संदर्भ में टयूशन शुल्क, प्रयोगशाला शुल्क, पुस्तकालय शुल्क, भवन शुल्क, क्रीडा शुल्क इत्यादि में तार्किक आधार पर वृद्धि की जानी चाहिए।
4. उच्चतर शिक्षा के आकांक्षी और आर्थिक रुप से कमजोर वर्ग के लोगों को जो वितीय संस्थानों के बढे हुए शुल्क या कर्ज का खर्च उठाने को समर्थ नहीं है, उपयुक्त छात्रवृत्तियां प्रदान की जा सकती है। केन्द्रीय सरकार द्वारा छात्रवृत्तियों के लिए प्रदान किए गए धन में काफी वृद्धि की जानी चाहिए।

रिपोर्ट द्वारा किए गए निरीक्षणों व सुझावों को अधिक महत्व नहीं दिया गया क्योंकि केन्द्र में सरकार बदल गई। यह देखा जा सकता है कि NPE 1986 को केन्द्र में कांग्रेस सरकार द्वारा निर्मित किया गया था। 1989 में जनता सरकार ने शिक्षा के साथ-साथ अन्य क्षेत्रों से सम्बन्धित अपनी कार्यनीति प्रस्तुत की। जनता सरकार कुछ ही समय तक रही और फिर कांग्रेस की सरकार आ गई।

4.6 कार्यान्वयन कार्यक्रम, 1992 एवं माध्यमिक शिक्षा (Programme of Action, 1992 and Secondary Education)

1991 में संसद के चुनाव के पश्चात् कांग्रेस की सरकार सत्ता में आ गई तथा इसने नीति परिवर्तन की पुन: समीक्षा के लिए आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री भी जनार्दन रेड्डी की अध्यक्षता में एक समिति की स्थापना की। इस समिति ने यह सुझाव दिया कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में बहुत अधिक परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है, परन्तु फिर भी विभिन्न विषय क्षेत्रों मे से 22 कार्यक्षेत्रों से सम्बन्धित सुझाव दिए गए। माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित क्षेत्रों की व्याख्या समिति की रिपोर्ट के 8वे भाग में दी गई है। 9,10,12,21 ओर 22 वे अध्याय में कम्पयूटर साक्षरता, नवोदय विद्यालय, शिक्षा का व्यावसायीकरण, मुक्त अधिगम प्रणाली, मूल्यांकन प्रणाली तथा अध्यापक शिक्षा आदि पर विचार विमर्श किया है।

कार्यक्रम और क्रियान्वयन

(Programme and Implementation)

1. सभी राज्यों में पूर्व-विश्वविद्यालय एक वर्षीय कोस, पूर्व-विश्वविद्यालय दो वर्षीय कोर्स, इन्टर महाविद्यालय आदि के समान उच्च माध्यमिक कोर्स प्रारम्भ किया जाए तथा इसकी व्यवस्था स्कूलो में की जाए। इस प्रकार सम्पूर्ण देश में माध्यमिक शिक्षा का प्रचलन समान रुप से होना चाहिए।
2. उच्च माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम निर्माण के लिए एक राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा का निर्माण किया जाए जिसका कार्य सैमेस्टर प्रणाली पर आधारित नवीन पाठ्यक्रम का निर्माण करना तथा उसी के अनुसार अनुदेशनात्मक विधियों का

सुझाव देना होगा। इसके साथ-साथ माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम की पुन: समीक्षा तथा दोहराई करनी होगी।

3. परीक्षा/मूल्यांकन में सुधार के लिए एक व्यापक योजना का निर्माण करना तथा उसका क्रियान्वयन करना।
4. असहाय वर्गो जैसे- अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, विकलांग एंव लड़के-लड़कियों आदि के लिए जो कई कारणों से औपचारिक संस्थाओं में शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ है, अशौपचारिक शिक्षा केन्द्र स्थापित किए जाए।
5. माध्यमिक एंव उच्च माध्यमिक विद्यालयों में भौतिक सुविधाएं अधिक से अधिक मात्रा में प्रदान की जाए।
6. माध्यमिक स्तर के लिए प्रचलित पूर्व सेवा अध्यापक प्रशिक्षण प्रणाली की पुन: समीक्षा की जाए तथा सुधारयुक्त अध्यापक प्रशिक्षण प्रणालियों का निर्माण किया जाए व उन्हे लागू किया जाए।
7. अनेक सांयकालीन स्कूल खोलने का प्रावधान किया गया।
8. जो व्यक्ति स्कूल नहीं जा सकते या जो समय से पहले स्कूल छोड देते हूँ उनके लिए मुक्त स्कूलों की व्यवस्था की जाए।
9. माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की कार्यप्रणाली में परिवर्तन किया जाए।
10. नवोदय विद्यालयों के अंतर्गत सभी जिलों को शामिल किया जाए तथा प्रवेश प्रक्रिया की वैधता तथा विश्यसनीयता को बढाया जाए।
11. व्यवसायिक शिक्षा के लिए मिश्रित परिषद् (Joint Council of Vocational Education) की स्थापना की जाए। महाविद्यालय स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा को सुदृढ़ बनाया जाए। व्यावसायिक परामर्श के लिए सुविधाओं को विस्तृत बनाया जाए। जिन राज्यों में प्रबंधन संरचना पर्याप्त मात्रा मे है, उन्हे वित्तीय सहायता में प्राथमिकता प्रदान की जाए।
12. अध्यापक संसाधन केन्द्र स्थापित किया जाए। अध्यापक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय परिषद् (National Council for Teaching Education) को स्वतन्त्रता प्रदान की जाए। विभिन्न विषयों जैसे- कार्य अनुभव, कला शिक्षा, तथा स्वास्थ्य एंव शारीरिक शिक्षा आदि को पढ़ाने वाले अध्यापकों के लिए विशिष्ट सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रम संगठित किए जाने चाहिए।

कार्यान्वयन 1992 के पश्चात निम्नलिखित कार्यक्रम प्रारंभ किए गए :-

1. 1986 में नवोदय विद्यालयों की संख्या 2 थी जो मार्च 2005 में बढकर 513 हो गई जिसके अंतर्गत 34 राज्यों/संघीय क्षेत्रों में 512 जिले शामिल किए गए।
2. NCTE कानून 1993 के अंतर्गत NCTE को 1995 में स्वतन्त्रता प्रदान की गई। इसके द्वारा विभिन्न प्रकार की अध्यापक प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना के लिए मानक बनाए गए है।

3. 1993 में लड़कियों को आवासीय सुविधाएं प्रदान करने के लिए योजना प्रारम्भ की गई।
4. राष्ट्रीय स्तर पर नीति निर्माण तथा समन्वय के लिए व्यावसायिक शिक्षा के लिए एक ज्वाइंट परिषद् की स्थापना की गई। व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम को तकनीकी तथा शैक्षिक समर्थन प्रदान करने के लिए 1993 में भौपाल मे सुन्दरलाल शर्मा व्यावसायिक शिक्षा केन्द्रीय संस्थान की स्थापना की गई।
5. जुलाई 2004 मे शिक्षा के क्षेत्र में केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों को परामंर्श देने के लिए उच्च स्तरीय केन्द्रीय परामर्श शिक्षा बोर्ड को पुन: संरचित किया गया। इस बोर्ड ने अगस्त 2004 में अपनी मीटिग मैं माध्यमिक शिक्षा उचित ढंग से संचालन के लिए निम्नलिखित समितियों का निर्माण किया:-
   - लड़कियों की शिक्षा तथा समान स्कूल प्रणाली
   - माध्यमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण
   - स्कूल पाठ्यक्रम मे संस्कृति की शिक्षा का एकीकरण
   - पाठ्य-पुस्तकों तथा समानांतर पाठ्य-पुस्तकों का नियमित संचालन।
6. पाठ्यक्रम में सुधार के लिए 2005 मे राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा का निर्माण हुआ।
7. माध्यमिक शिक्षा केन्द्रीय बोर्ड तथा अन्य बोर्डों के द्वारा माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक स्तर की परीक्षाओं में सुधार के लिए समय-समय पर अनेकों कदम उठाए गए।

4.7 राष्ट्रीय मुक्त संस्थान (National Institute of Open School)

मुक्त विद्यालय पद्धति माध्यमिक स्तर पर शिक्षा संबंधी मांगों को पूरा करती है। अगस्त 1974 में NCERT के निदेशक ने एक कार्यकारी दल नियुक्त किया जिसका कार्य देहली में मुक्त स्कूल की स्थापना की संभावना का परीक्षण करना था। 1975 से 1978 तक NCERT तथा CBSE व केन्द्रीय मंत्रालय के बीच हुई गोष्ठियों के परिणामस्वरुप 1979 में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के द्वारा राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय प्रारंभ किया गया। इसमें शिक्षार्थियों- विशेषकर लड़कियों, महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, निर्धनों, बेरोजगारों एवं अप्रशिक्षितों की स्थितियों एवं आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा प्राप्ति के अवसर प्रदान किए गए। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय की प्रमुख विशेषता यह है कि यह शिक्षा को अभिप्रेरित अधिगमकर्ताओं के द्वार तक ले जाता है तथा समय व स्थान की कोई सीमा निर्धारित नहीं की जाती है। इसके अतिरिक्त यह प्रत्येक को अपनी सुविधा के अनुसार अपनी ही गति से शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा प्रदान करता है। भारत सरकार ने 1989 में इसे स्वायतता प्रदान की जिस पर प्रशासनिक नियंत्रण मानव संसाधन मंत्रालय के शिक्षा विभाग का होगा। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय को माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक स्तर की परीक्षा लेने तथा अपने प्रमाणपत्र देने का अधिकार प्राप्त है।

4.8 सातवीं पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education in Seventh Five year Plan)

सातवीं पंचवर्षीय योजना का संचालन नीति की व्यापक समीक्षा से सम्बन्धित था। इसी के परिणामस्वरुप योजना के अंतर्गत शिक्षा प्रणाली की पुन: समीक्षा की गई जिससे देश को अगली सदी की चुनौतियों को पूरा करने के लिए तैयार किया जा सके। सांतवी योजना के महत्वपूर्ण क्षेत्र थे:-

- सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा की उपलब्धि प्राप्त करना।
- 15-35 वर्ष की आयु समूह में निरक्षरता को दूर करना।
- शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर व्यावसायीकरण तथा कौशल प्रशिक्षण संबंधी कार्यक्रम प्रारंभ करना।
- शिक्षा के सभी स्तरों पर कार्य के विश्व के साथ समय स्थापित करते हुए और विज्ञान व वातावरण पर एवं मूल शिक्षा पर विशेष बल देते हुए स्तरीकरण तथा आधुनिकीकरण को बढ़ावा दिया जाए।
- देश के प्रत्येक जिले में उन गुणवता तथा कौशलपूर्ण शिक्षा के लिए सुविधाओं का प्रावधान।
- तकनीकी शिक्षा का आधुनिकीकरण।

योजना के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए योजना के अंतर्गत प्रभावी विकेन्द्रीयकृत योजना निर्माण तथा संगठन सुधार, निरौपचारिक व मुक्त अधिगम प्रणाली को बढ़ावा, निम्न लागत विकल्पों का प्रयोग तथा संसाधनों का अधिकतम प्रयोग संबंधी व्यूह रचनाओं को अपनाया गया।

माध्यमिक स्तर पर सातवीं योजना की प्राथमिकताएं निम्नलिखित थी:

(Priorities of Seventh Plan on Secondary Level)

1. पाठ्यक्रम में सुधार, प्रयोगशाला सुविधाओं में वृद्धि तथा बडे-पैमाने पर अध्यापकों के लिए सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों के द्वारा विज्ञान शिक्षा का सार्वभौमिकरण तथा सुदृढीकरण करना।
2. सामाजिक रुप से उपयोगी उत्पादक कार्यो के शैक्षिक कार्यक्रमों के व्यावसायिकरण को सुदृढ करना।
3. छठी योजना में अभिप्रेरित कम्पयूटर साक्षरता के कार्यक्रम का विस्तार तथा माध्यमिक स्तर पर श्रव्य एवं दृश्य कार्यक्रमों को बढ़ावा देना।
4. सॉफ्टवेयरों का विकास करने, आधुनिक संरक्षण तकनीकों का प्रभावी प्रयोग करने तथा शिक्षा में कम्पयूटर का प्रयोग करने के लिए अध्यापकों को सेवाकालीन प्रशिक्षण प्रदान करना।
5. उच्च माध्यमिक शिक्षा में व्यावसायीकरण के लिए विभिन्नता लाई जाए जिससे इसमें कृषि, उद्योग, व्यापार, वाणिज्य, सेवाओं को शामिल किया जा सके। व्यावसायिक कोर्स उदीयमान कार्य अवसरों से सम्बन्धित थे और इसी कारण इसमें

लचीलापन था क्योंकि समाज के कार्य अवसर समय के साथ-साथ परिवर्तित होते रहते है।

6. राष्ट्रीय विचारधारा के अनुरुप मूल्य-केन्द्रित शिक्षा प्रदान करने के लिए पाठ्य-पुस्तकों का सुधार किया जाए तथा पुस्तकालों को अमूल्य बनाया जाए।

हमें इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि सांतवी योजना काल के मध्य में राष्ट्रीय नीति, 1986 प्रचलन में आई, जिसके परिणामस्वरुप इस योजना में शिक्षा से सम्बन्धित महत्वपूर्ण क्षेत्र परिवर्तित हो गए जैसे

- सार्वभौमिक नामांकन तथा सार्वभौमिक स्थिरता और
- शिक्षा की गुणवता में पर्याप्त सुधार

शिक्षा की गुणवता में सुधार के लिए आवश्यक है कि राष्ट्रीय आय का एक बडा भाग शिक्षा पर खर्च किया जाए। सांतवी पंचवर्षीय योजना में शिक्षा पर खर्च निम्न था:-

सारणी 41 शिक्षा क्षेत्र पर व्यय का अनुपात (करोड़ मे)

पंचवर्षीय योजना (सांतवी)	कुल व्यय	शिक्षा का व्यय	शिक्षा का व्यय का प्रतिशत
केन्द्र	95534	2389	2.50
राज्य	84466	3994	4.73
कुल	180000	6383	3.55

सारणी यह दर्शाती है कि शिक्षा पर व्यय यद्यपि कुल राष्ट्रीय आय का लगभग 6 प्रतिशत होना चाहिए परन्तु सांतवी पंचवर्षीय योजना में यह केन्द्रीय व राज्य सरकारों का संयुक्त रुप से 355 प्रतिशत रहा। राज्य सरकारों द्वारा किये जाने वाला खर्च केन्द्रीय सरकार की तुलना में सदा ही अधिक होता है। क्योंकि राज्यों के द्वारा ही शैक्षिक विकास का अधिक बार बहन किया जाता है। अन्य योजनाओं की तुलना में केन्द्र सरकार द्वारा किए जाने वाले खर्च में कटौती हुई थी।

4.9 1980 के अंत तक भारत में माध्यमिक शिक्षा का स्तर (Status of Secondary Education in India by the end of the Nineteen Eighties)

अब तक हमने 1980 के पश्चात् माध्यमिक शिक्षा के विस्तार की चर्चा की। अब विभिन्न सारणियों की सहायता से इस काल में माध्यमिक शिक्षा की प्रगति का अध्ययन करेंगे।

सारणी 42 स्कूलों की संख्या में प्रतिशत वृद्धि

विद्यालय	1978 में	1986 में	प्रतिशत परिवर्तन
कुल माध्यमिक	36675	52560	43.31
ग्रामीण माध्यमिक	26506	38862	46.62
कुल उच्च माध्यमिक	10429	15465	48.29

ग्रामीण उच्च माध्यमिक	4585	7136	55.64

सारणी 4.3 अध्यापकों में वृद्धि

अध्यापक	1978	1986	प्रतिशत परिवर्तन
माध्यमिक	550097	723625	31.54
उच्च माध्यमिक	288182	426199	47.89

सारणी 4.4 नामांकन में वृद्धि (मिलियन मे)

	कक्षा IX-X			कक्षा XI-XII		
	1978	1986	प्रतिशत	1978	1986	प्रतिशत परिवर्तन
कुल	7	11.5	63.67	1.8	3.5	91.41
ग्रामीण	3.6	6.5	80.26	0.6	1.3	124.64
अनुसूचित जाति	0.7	1.5	117.04	0.2	0.4	130.27
अनुसूचित जनजाति	0.2	0.5	12751	0.03	0.1	197.30
लड़कियां	2.1	3.7	74.75	0.5	1.1	137.48

4.10 2002 के अंत तक भारत में माध्यमिक शिक्षा का स्तर (Status of secondary in India by the end of 2002)

माध्यामिक शिक्षा प्रारंभिक व उच्च शिक्षा के मध्य एक पुल का काम करती है और 14-18 वर्ष की आयु वर्ग को उच्च शिक्षा में प्रदेश के लिए तैयार करती है। दसवीं पंचवर्षीय योजना में प्रमुख कार्य था। माध्यमिक शिक्षा की बढ़ती हुई मांग की पूर्ति करना। सरकार को नए माध्यमिक स्कूल खोलने में प्रोत्साहन देने में, स्कूलों की क्षमता को बढाने में, सेवा विहीन तथा अल्प सेवायुक्त क्षेत्रों तथा पिछडे क्षेत्रों में उन प्राथमिक स्कूलों को अपग्रेड करने में तथा साथ-साथ मुक्त विद्यालयों एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली की विभिन्नता तथा विकास में अपनी भूमिका निभानी थी। ऐच्छिक ऐजेंसियों के समन्वय में स्कूलों की स्थापना करना भी आवश्यक था। इसके साथ-साथ कुछ प्रतिष्ठित प्रबंधकों जैसे डी.ए.वी. आर.के गिशन आदि अनुदान राशि के रुप में धन देना भी एक विकल्प सोचा गया। जिससे उन्हें अधिक स्कूल खोलने के लिए प्रोत्साहन मिले। उन जिलों में जहां नवोदय स्कूल नहीं थे उनमें स्कूल खोलने तथा विद्यमान स्कूलों में सांस्कृतिक क्रियाओं, कप्पयूटर तथा खेल सम्बन्धी सुविधाएं प्रदान करना उद्देश्य रखा गया। इसके अतिरिक्त अन्य लक्ष्य इस प्रकार थे:-

- राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयों के अध्ययन केन्द्रों में 15 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से वृद्धि की जोए। इसमे यह प्रस्ताव रखा गया कि विद्यार्थियों का प्रवेश तथा परीक्षा उनकी सुविधा के अनुसार होगी।
- 1993 में लड़कियों के लिए आवास तथा होस्टल की सुविधा आरंभ की गई थी, उसे संशोधित किया जाए ताकि माध्यमिक स्तर पर लड़कियों के नामांकन में वृद्धि हो। ग्रामीण एवं कमजोर वर्ग के क्षेत्रों से संबन्धित लड़कियों के नामांकन में सुधार के लिए ऐच्छिक संगठनों को वित्तीय सहायता प्रदान करना।

- NACERT के द्वारा समय समय पर पाठ्यक्रम का संशोधन व आधुनिकीकारण किया जाएगा। परिषद् के द्वारा शिलांग में पांचवा केन्द्रीय शिक्षा संस्थान खोला जाए।
- CASE & CISCE (Council for Indian School Certificate Examination) कक्षा दसवीं तथा बारहवीं की समाप्ति पर सार्वजानिक परीक्षा लेगी। दोनों ही स्व-वित्त पोषित संगठन है। जिन्हें सरकार के द्वारा किसी प्रकार की वितीय सहायता प्राप्त नहीं होती। 15 अप्रैल 2001 तक CISCE के साथ 5850 स्कूल संबंद्धित थे तथा 31 अगस्त 2001 तक CISCE के साथ 1119 स्कूल रांबद्धित थे। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय एक तीसरा राष्ट्रीय सार का संगठन है जो माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर पर परीक्षाओं का आयोजन करता हे।

माध्यमिक क्षेत्र से सम्बन्धित योजनओं को निम्नलिखित चार क्षेत्रों में बांटा गया:-

1. स्कूलों में गुणात्मक सुधार
2. सूचना एवं संरक्षण तकनिकी
3. सगता एवं प्रबंधन
4. अयोग्य (Disabled) बच्चों के लिए एकीकृत शिक्षा

2001 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 1027 मिलियन है जिसने 531 मिलियन पुरुष तथा 496 मिलियन स्त्रियां है। इस दशक में जनसंख्या की वृद्धि दर 2134 प्रतिशत है। छठे तथा सांतवे सर्वेक्षण के आधार पर माध्यमिक शिक्षा की स्थिति निम्न प्रकार की थी।

सारणी 4.5 छठे तथा सांतवे सर्वेक्षण में स्कूलों की संख्या

विद्यालय/वर्ष	1993	2002	प्रतिशत परिवर्तन
शहरी माध्यमिक	17694	27128	53.32
ग्रामीण माध्यमिक	47870	63633	32.93
कुल माध्यमिक	65564	90761	38.43
शहरी उच्च माध्यमिक	12062	21083	74.79
ग्रामीण उच्च माध्यमिक	11600	22868	97.14
कुल उच्च माध्यमिक	23662	43951	85.75

सारणी 4.6 आध्यापकों की संख्या

विदयालय/वर्ष	1993	2002	प्रतिशत परिवर्तन
ग्रामीण	532328	590126	10.86
शहरी	297077	367978	23.87
कुल	829405	958105	15.52
ग्रामीण	247584	424623	71.51
शहरी	367440	578921	57.56
कुल	615024	1003544	63.17

सारणी 4.6 नामांकन की संख्या

	कक्षा IX-X			कक्षा IX-XII		
	1993	2002	प्रतिशत	1993	2002	प्रतिशत परिवर्तन
ग्रामीण	8419667	12531627	48.84	2084271	4125871	97.95
लड़कियां	2713974	4875119	79.63	620286	1592292	156.70
शहरी	6799725	9264108	36.24	3380883	5655985	67.29
लड़किया	2836508	4156921	46.55	1343079	2478129	84.51

उपर्युक्त सारणियां यह दर्शाती है कि इस काल में माध्यमिक शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों- नामांकन, अध्यापक व्यय आदि वृद्धिं हुई।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. 1976 से 1986 तक माध्यमिक स्तर पर अध्यापकों में कितनी वृद्धि हुई?
   (How much increase was in the number of teachers at secondary level during 1976-1986)
2. अध्यापक के रुप में आप वर्तमान माध्यमिक शिक्षा पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के प्रभाव के बारे में क्या सोचते हो।
   As a teacher what do you think about the implications of NPE(1986) on the present secondary education?)
3. राष्ट्रीय-शिक्षा नीति 1986 से कार्यान्वयन कार्यक्रम 1992 में माध्यमिक शिक्षा में परिवर्तनों का विषलेशण कीजिए।
   (Analyse the modification made in POA (1992) from NPE (1986) in the field of secondary education.)
4. सांतवी पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 को अपनाने के पश्चात किस व्यूह रचना को अपनाया गया?
   What was the strategy adopted in the seventh plan after adoption of NPE 1986?
5. राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय का प्रशासकीय स्तर क्या है?
   What is the administrative status of NOS?
6. माध्यमिक शिक्षा के लिए दसवीं पंचवर्षीय योजना के उद्देश्य क्या थे?
   What were the objective of Tenth five year plan regarding education?

4.11 सारांश
(Summary)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 जो कि नयी शिक्षा नीति के नाम से प्रसिद्ध है, इसको संसद की स्वीकृति दिए जाने से पहले इस नीति की आवश्यकता व इसके विषयों पर राष्ट्रीय स्तर पर एक बहस हुई, जिसमें हजारों विद्यार्थियों,अध्यापकों ,अभिभावकों विद्यार्थियों व अध्यापक संगठनों स्वयं सेवी अभिकरणों शैक्षणिक संस्थाओं, विश्व-विद्यालयों राज्य सरकारों, केन्द्रीय मंत्रियों, पंचायत समतियों तथा जिला परिषदों ने भाग लिया। विश्व भर में किसी भी नीति पर शिक्षा के इतिहास में इतनी लंबी चौड़ी बहस नहीं हुई। इस दृष्टि से देखा जाए तो यह जन साधारण की नीति है क्योंकि जिस किसी का भी शिक्षा से संबंध है उसने इस नीति निर्माण में भाग लिया।

देखा गया है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति के परिणाम प्रोत्साहित करने वाले नहीं है। इरादे और क्रिया के बीच एक बड़ा रिक्त स्थान है। यह नीति ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच असमानता को हटाने और समाज के प्रतिकूल अवस्था में रह रहे वर्गो के बीच असमानता को हटाने का लक्ष्य रखती है। वास्तविक अभ्यासों में प्रयासों और संसाधनों को इस तरफ निर्देशित नहीं किया गया है। नीति के प्रति मिश्रित प्रतिक्रियाएं है। कुछ क्रांति लाने बाले सुझाव सराहनीय है जैसे- राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति, समानता के लिए शिक्षा, विभिन्न चरणों में शिक्षा का पुनर्गठन जिसमें नवोदय विद्यालयों की स्थापना, शिक्षा का व्यावसायीकरण , नौकरियों से उपाधियों के जुड़ाव का अलग करना, शिक्षा की विषय वस्तु और प्रक्रिया को फिर से अनुकूल बनाना, शिक्षा के नियोजन ओर प्रबन्धन की पद्धति से फिर से व्यवस्थित करना आदि शामिल है। नीति हमें बढ़ती जा रही उम्मीदों के युग में ले गई है।

1986 के कार्यान्वयन कार्यक्रम के विशेष संदर्भ में माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन किया गया जिसमें माध्यमिक शिक्षा तक पहुंच सुनिश्चित करने के लिए सेव-विहीन क्षेत्रों को शामिल करने हेतु कार्यक्रम की योजना बनाई गई तथा नवोदय विद्यालयों की स्थापना के कार्यक्रम पर बल दिया गया। पिछड़े हुए क्षेत्रों में विद्यालय संबंधी सुविधाओं पर बल दिया गया। प्रखर बुद्धि बच्चों के कार्यक्रम के दो भाग मनाए गए,एक भाग संभावित रुप से उच्च प्राप्ति करने वाले छात्रों के लिए, विशेष रुप से उन क्षेत्रों गे जहां उन्हें वर्तमान पद्धति मे विशाल रुप से शामिल नहीं किया गया और दूसरे भाग में प्रतिभाशाली छात्रों का कार्यक्रम है। शिक्षा के व्यावसायीकरण के लिए विभिन्न एजेन्सियों की स्थापना पर बल दिया गया।

राममूर्ति कोटी 1990 ने अपनी रिपोर्ट में कुछ विशेष मुद्दों जैसे- समानता और सामाजिक न्याय, सभी स्तरों पर शैक्षिक प्रबंधन का विकेन्द्रीकरण, सहभागितापूर्ण शैक्षिक व्यवस्था की स्थापना आदि पर बल दिया। सामाजिक, सांस्कृतिक व राष्ट्रीय मूल्यों के विकास के लिए उचित वातावरण प्रदान करने को प्राथमिकता दी। सामाजिक, आर्थिक, प्रादेशिक और लिंग आधारित असमानताओं के सम्पूर्ण संदर्भ में कमेटी द्वारा शिक्षा पर विचार किया गया है। असमानताएं कम करने के लिए अधिगम संसाधनों के क्षेत्रीय भाषाओं मे विकसित करने के विशेष

प्रयास पर बल दिया गया। सभी स्तर पर शैक्षिक नियोजन के विकेन्द्रीकरण की आवश्यकता को अनुभव किया।

संशोधित राष्ट्रीय नीति 1992 ने अंशौपचारिक शिक्षा योजना को प्रभावशाली बनाने के लिए कार्यान्वयन कार्यक्रम की योजना बनाई ताकि इस योजना के अंतर्गत अंशौपचारिक शिक्षा को उचित ढंग से व्यावहारिक रुप दिया जा सके। स्कूल छोडने हाले व्यक्तियों के लिए मुक्त स्कूलों की व्यवस्था की गई। अध्यापक प्रशिक्षण के लिए NCTE को स्वायतता प्रदान की गई।

इन सब प्रयासों के कारण भारत सरकार ने सांतवी पंचवर्षीय योजना पर शिक्षा पर अत्याधिक बल दिया व इसके प्रचार व प्रसार के लिए अथक प्रयास किए। सरकारी व्यय में बढ़ोतरी की गई। अध्यापकों की संख्या में वृद्धि हुई। स्कूलों की संख्या में वृद्धि हुई। जिसके परिणामस्वरुप शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर नामांकन में वृद्धि हुई। माध्यमिक स्तर पर ग्रामीण तथा अन्य पिछडे वर्ग के बच्चों को गुणात्मक शिक्षा देने के लिए नवोदय स्कूलों की संख्या में भी वृद्धि की गई। इस प्रकार इस काल की सबसे बडी उपलब्धि थी भारत में एक शिक्षा नीति 10+2+3 का क्रियान्यवन होना।

4.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Aggarwal J.C — National Policy on Education 1986 and main Recommendations of national Commission Teachers: Doaba house, Delhi 1986.

NCERT — Compendium of Education Statistics (School Education), Delhi 2003

NCERT — Seventh All India School Education Survey, Dept. of Educational Surveys and Data Processing, NCERT Delhi, 2005

Nurullah, Syed and Naik, S.P. — Student History of Education in India, Macmillan Calcutta, 1971 Vth Edition.

Report of the education commission 1964-66, Ministry of education, Govt. of India, New Delhi.

इकाई-5

माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्य

(Aims and objective of Secondary Education)

इकाई की संरचना

5.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

5.1 माध्यमिक शिक्षा का महत्व एवं भारत की आवश्यकताएं (Significance Education and needs of India)

5.2 उद्देश्य की आवश्यकता एवं महत्व (Needs and Importance of Aims)

5.3 भारत में माध्यमिक शिक्षा के सामान्य उद्देश्य (General Aims of Secondary Education in India)

5.4 भारत में माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य एवं माध्यमिक शिक्षा आयोग (Aims of secondary Education and Education Commission)

5.5 माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य तथा शिक्षा आयोग (Aims of secondary Education and Education Committee1964-66)

5.6 ईश्वर भाई पटेल कमेटी के अनुसार माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य (Aims Of Secondary Education according to Ishwar bhai patel commitee)

5.7 माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य एवं आदिसेशैया समिति (1977-78) (Aims of secondary Education Adiseshiah committee 1977-78)

5.8 राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के अनुसार माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य (Aims of secondary Education according to NPE,1986)

5.9 21वी शताब्दी के लिए अंतर्राष्ट्रीय कमीशन (1993-96) के द्वारा निर्मित लक्ष्य (Aims as formulated by International Commission for 21st century 1993-96)

5.10 क्रियात्मक या व्यवहारगत रुप में माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य (Aims of secondary Education in behavioural or operations terms)

5.11 राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा, 2005 में प्रदर्शित माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य (Aims of secondary Education as its national Curriculam Framework 2005, NCRईT)

5.12 लक्ष्यों के क्षेत्र में माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता (Quality of Secondary Education in the field of Aims)

5.13 सारांश (Summary)

5.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

5.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objective)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप-

- भारत की आवश्यकताओं के अनुरुप माध्यमिक शिक्षा के महत्व को समझ सकेंगे।
- माध्यमिक शिक्षा आयोग के द्वारा माध्यमिक शिक्षा के लिए दिए गए उद्देश्यों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- शिक्षा आयोग द्वारा दिए गए माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों का उल्लेख कर सकेंगे.।
- ईश्वर भाई पटेल समिति द्वारा दिए गए माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों की व्याख्या कर सकेंगे।
- आदिसेशैया समिति के माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों को समझ सकेंगे।
- राष्ट्रीय शिक्षा समिति द्वारा दिए गए माध्यमिक शिक्षा के -उद्देश्यों की वर्तमान समय के अनुसार आवश्यकता अनुभव कर सकेगें।
- माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों को व्यवहारिक शब्दावली में लिख सकेंगे।
- राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा के अनुसार माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों की तुलना कर सकेंगे।
- विभिन्न आयोगों द्वारा प्रदत माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों की तुलना कर सकेगें।
- उद्देश्यों के आधार पर माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता को समझ सकेंगे।
- भारत की वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों का मूल्यांकन कर सकेंगे।
- भविष्य में माध्यमिक शिक्षा के स्तर को सुधारने के लिए उद्देश्यों की कल्पना कर सकेंगे।
- माध्यमिक शिक्षा के सामान्य उद्देश्यों की व्याख्या कर सकेंगे।

उद्देश्य एक पहले सोचा हुआ लक्ष्य है जो किसी क्रिया या चालक व्यवहार को एक दिशा प्रदान करता है। जीवन के प्रत्येक पहलू प्रत्येक क्रिया के साथ में एक उद्देश्य होता है। उद्देश्य शिक्षा नियोजक को दूरदर्शिता प्रदान करते है। माध्यमिक स्तर पर शिक्षा को शक्ति को शारीरिक रुप से स्वस्थ, बौद्धिक रुप से प्रबुद्ध, संवेगात्मक रुप से परिपक्व, व्यवसायिक रुप से आत्म-निर्भर, सामाजिक रुप से निपुण, नैतिक रुप से सशक्त, सांस्कृतिक रुप से परिकृष्त एवं आध्यात्मिक रुप से विकसित बनाना चाहिए। ऐसी शिक्षा ही व्यक्ति के समुचित विकास में सहायता कर सकती है और उसे समाज को बेहतर बनाने के लिए प्रभावशाली भूमिका निभाने के योग्य बना सकती है।

5.1 माध्यमिक शिक्षा का महत्व एवं भारत की आवश्यकताएं (Significance of Secondary Education and Needs of India)

माध्यमिक शिक्षा प्रारंभिक स्तर व महाविद्यालय स्तर की शिक्षा की बीच की कडी है। यह स्तर अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा जीवन को मोड देने वाला स्तर है। यहीं से विद्यार्थी को जीवन की दिशा प्राप्त होती है कि वह आगे शिक्षा प्राप्त करें या रोजगार में चला जाए। माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) ने माध्यमिक शिक्षा की महत्ता की ओर संकेत करते हुए कहा था 'हमें इस बात का ध्यान रखना होगा कि माध्यमिक शिक्षा स्वयं में एक पूर्ण इकाई है न केवल तैयारी का स्तर। इस स्तर के पश्चात् विद्यार्थी इस अवस्था में होना चाहिए, यदि उसकी इच्छा हो, तो वह जीवन के उतरदायित्व में दाखिल हो सके तथा किसी उपयोग व्यवसाय को अपना सके। यह व्यक्ति की जटिल आधुनिक समाज के उपयोगी सदस्य बनने में सहायता करनी है। भारतीय राज्य को लोकतांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष तथा समाजवाद में परिवर्तित करने की आवश्यकता है, इसलिए माध्यमिक शिक्षा को अपने कार्य प्रभावी ढंग से करने चाहिए। इस तथ्य पर भी ध्यान देना आवश्यक है। इसलिए माध्यमिक शिक्षा को अपने कार्य प्रभावी ढंग से करने चाहिए। इस तथ्य पर भी ध्यान देना आवश्यक है कि केवल 5 से 6 प्रतिशत विद्यार्थी ही माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् महाविद्यालय की शिक्षा ग्रहण करते है। इसलिए देश की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक अच्छी गुणात्मक माध्यमिक शिक्षा की आवश्यकता है।

माध्यमिक शिक्षा प्राथमिक स्कूलों के लिए अध्यापक प्रदान करती है। ऐलिमेंटरी अध्यापक प्रशिक्षण संस्थानों में प्रवेश के लिए माध्यमिक स्तर को पास करना आवश्यक है, परन्तु अब कुछ राज्यों में इन संस्थानों में प्रदेश के लिए न्यूनतम योग्यता स्नातक स्तर कर दी गई है। माध्यमिक शिक्षा के द्वारा पर्याप्त ढंग से इस आवश्यकता को पूरा किया जाना चाहिए।

माध्यमिक शिक्षा को अग्रणी स्तर उच्च शिक्षा है और यह आशा की जाती है, इस स्तर की शिक्षा की पूर्ति के पश्चात् विद्यार्थियों में आवश्यक परिपक्वता होनी चाहिए कि वह उच्च शिक्षा ग्रहण करने योग्य बन सके।

भारत अपनी शिक्षा, संस्कृति तथा दर्शन के लिए प्रसिद्ध है। भारतीय शिक्षा के उद्देश्यों के आधार पर भारतीय संस्कृति संसार का पथ प्रदर्शन कर रही है। आज भी शिक्षा शास्त्री तथा दार्शनिक पूर्ण प्रयत्न कर रहे है कि शिक्षा प्रणाली का इस प्रकार गठन किया जाए कि वह संस्कृति की निरंतर, उन्नति तथा विकास में सहायता दे सके। हमारे स्वर्गीय राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था, 'भरत लो अपने लिए ऐसी शिक्षा का चयन करना होगा जो हमारी प्राचीन संस्कृति मे से जो कुछ अच्छा हो। उससे प्रेरणा ले साथ ही साथ वर्तमान युग की आवश्यकताओ की उपेक्षा न करे।"

'India has to choose for herself a culture that derives inspirations from what is noble in your ancient culture and at the same time does not ignore the demands of the present age.

माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्यों का निर्माण करते समय **माध्यमिक शिक्षा आयोग** ने कहा था *'जैसे ही राजनैतिक, सामाजिक ओर आर्थिक अवस्थाओं मे परिवर्तन होता है ओर नई संमयाएं उत्पन्न होती है तो प्रत्येक स्तर की शिक्षा के उद्देश्य को पुन. स्पष्ट करना तक सावधानीपूर्वक जांच करना आवश्यक हो जाता है।"*

'As poltical,social and economic conditions change and new problem arise, it becomes necessary to be re-examine carefully and re-state clearly this objective of educations at each stage.'

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने मुख्य रुप से भारत की तीन आवश्यकताओं पर बल दिया है।

- भारत को धर्म निरपेक्ष लोकतांत्रिक गणतंत्र में परिवर्तित करना।
- उत्पादन कुशलता में सुधार करना।
- सांस्कृतिक विरासत को प्रेरित करना।

5.2 उद्देश्यों की आवश्यकता एवं महत्व (Needs and Importance of Aims)

शिक्षा की प्रत्येक अवस्था के लक्ष्य पहले से ही निर्धारित किए जाते हैं इसलिए माध्यमिक शिक्षा के भी अपने उद्देश्य है। उद्देश्य ही वह दर्शन है जिसे कोई भी शिक्षक व्यावहारिकता के माध्यम से उस दर्शन को सार्थक बना सकता है अर्थात् उसका अनुभव करते है। उद्देश्य ही शिक्षा प्रक्रिया की दिशा निर्धारित करते हैं। शिक्षा एक सुनियोजित किया है। उद्देश्य हमारा मार्गदर्शन करते हैं प्रेरणा देते है और हमारे प्रयत्नों को सफल बनाते हैं। इसलिए हम शिक्षा उद्देश्यों की आवश्यकता महसूस करते हैं। शिक्षा-उद्देश्यों की आवश्यकता निम्न कारणों से होती है:-

1. **कुशल स्कूल प्रबन्ध और गठन के लिए (For efficient school Administration)-**उद्देश्य स्कूल अधिकारियों को स्कूल के संगठन, सुसज्जा और प्रबन्ध में सहायता प्रदान करते हैं। स्कूल प्रबंध के विभिन्न पक्षों- अध्यापकों का उचित चुनाव, उचित पाठ्यक्रम की योजना, उचित शिक्षण विधियों का चुनाव, उचित प्रयोगशाला की व्यवस्था उचित पुस्तकालय, पाठ्यक्रियाओं व सहायक पाठ्यक्रियाओं का उचित आयोजन आदि शैक्षणिक उद्देश्यों द्वारा निर्देशित होते हैं।

2. **उद्देश्य शिक्षा की प्रक्रिया को दिशा निर्देशित करते है (Aims give direction to the process of Education)** शिक्षा की प्रक्रिया के तीन मुख्य तत्व हैं- अध्यापक, विद्यार्थी और पाठ्यक्रम। इस प्रकार शिक्षा के सामान्य उद्देश्यों की ओर सभी अध्यापक सचेत होंगे और शिक्षा के विशिष्ट उद्देश्य वे विद्यार्थी की योग्यताओं, रुचियों तथा आवश्यकताओं के अनुसार निर्धारित करेंगे। विद्यार्थी पर भी इस प्रकार शिक्षकों का असर पडेगा और वे अपने

लक्ष्य की ओर ध्यान देंगे तथा उन्हें अपना रास्ता धुंधला न दिखकर स्पष्ट दिखाई देगा और वे मेहनत के लिए प्रेरित होंगे

3. **शिक्षा-प्रक्रिया के परिणामों के मूल्यांकन के लिए उद्देश्य आवश्यक है। (Aims are necessary to assess the out comes of the education procees)-** उद्देश्यो से अध्यापक को शिक्षा - प्रक्रिया के परिणामों को जांचने में सहायता मिलती है। वे हमारे प्रयत्नों के परिणामों का स्त्रोत रखने में हमारी सहायता करते हैं। उद्देश्य एक ऐसा पैमाना है जिससे हम अपनी सफलता और असफलता को नाप सकते है। विषयवस्तु पढ़ाने के ढंग, पाठ्य एवं पाठ्येतर गतिविधियों की योजना बनाना आदि का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन कर, कुछ सुधार के लिए सोच सकते है। मूल्यांकन के बिना हम समय के साथ-साथ संशोधन या सुधार में समर्थ नहीं हो सकते।

4. **राष्ट्रीय उद्देश्यों को प्राप्त करने एवं राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने में सहायक (Helpful in achieving National goals and Solving National problems)-** प्रत्येक राष्ट्र के सुनिश्चित लक्ष्य एवं निश्चित समस्याएं होती हैं। समस्याओं को सुलझाने एवं राष्ट्रीय लक्ष्यों को प्राप्त करने का सर्वोतम साधन शिक्षा ही है। शिक्षा द्वारा ही हम सभ्य, वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा आत्मानुभूति कर सकते हैं। आज हमारे सामने कितनी विकट समस्याएं है जैसे आंतकवाद, भ्रष्टाचार साम्प्रदायिकता, आदि। इन सब समस्याओं के उन्मूलन के लिए राष्ट्रीय एकता की भावना को विकसित करना है। यह तभी संभव होगा जब हमारी पाठ्य पुस्तकों की सामग्री को इन आवश्यकताओं के अनुसार विकसित हो।

5. **उद्देश्यों के कारण ही माता-पिता तथा सामान्य जनता स्कूल के कार्य की प्रशंसा करते है। (Aims are necessary to help the parents and the general public to appreciate the work of the school)-** समाज को शिक्षा का दर्पण कहा गया है। समाज निश्चित उद्देश्यों की दृष्टि से ही स्कूल के कार्यो का आवलोकन करता है। समाज उन उद्देश्यों का आलोचनात्मक विश्लेषण करके कुछ ठोस सुझाव भी दे सकता है। वे स्कूल के अधिकारियों का ध्यान इस ओर दिला सकते हैं कि निर्धारित उद्देश्य सामाजिक आवश्यकताओं के अनुसार हैं या नहीं।

5.3 माध्यमिक शिक्षा के सामान्य उद्देश्य (General Aims of Secondary Education)

1. शारीरिक विकास (Physical Development)- जब भी हम किसी स्तर की शिक्षा की बात करते है तो सर्वप्रथम एक ही बात मस्तिष्क में आती है कि बालक का स्वस्थ ठीक हो जैसा कि महान दार्शनिक अरस्तु ने कहा भी है कि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है। अस्वस्थ मनुष्य अध्ययन करने में, चिंतन, मनन करने में असमर्थ होता है। अत: माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों का सूत्रीकरण करते समय विद्यार्थी के शारीरिक विकास पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। उसे विभिन्न रोगों के लक्षणों, कारणों व निवारण का ज्ञान दिया जाना चाहिए। आधुनिक शिक्षा 4H (Hand, Head, Heart, and Health) पर आधारित हे।

2. मानसिक विकास (Mental Development) - मानसिक विकास का अर्थ है समझ, चिन्तन, तर्क, स्मृति, कल्पना, समस्या समाधान और सृजनात्मकता का विकास। मानसिक विकास के द्वारा विचारों का आदान, प्रदान और भाषा का विकास दोनों एक साथ होते हैं। माध्यमिक स्तर पर मानसिक विकास से विद्यार्थी सूझ-बूझ द्वारा अधिगम प्राप्त करेंगे, जिससे व्यक्ति और समाज दोनों का विकास संभव होगा।

3. सामाजिक विकास (Social Development)- मनुष्य सामाजिक प्राणी है। उसका जन्म समाज में होता है, समाज में ही उसका पालन पोषण होता है। सामाजिक विकास का अर्थ है- सामाजिक मानकों, प्रथाओं, लोकाचार और प्रत्याशाओं के अनुसार व्यवहार करने की योग्यता का विकास। विद्यार्थियों में सहयोग, सहनशक्ति, समायोजन, मित्रता, समूह के प्रति वफादारी, अपनापन, प्रतिस्पर्धा की भावना के विकास को ही सामाजिक विकास कहा जाता है। सामाजिक कुशलता जीवन में व्यक्ति की सफलता का आधार बनती है।

सामाजिक विकास से सामाजिक परिपक्वता प्राप्त करने में सहायता मिलती है। सामाजिक रुप से परिपक्व व्यक्ति वह है जो-

- दूसरों के साथ सहयोगी हो।
- मित्र बना सकता हो।
- आर्थिक व सामाजिक रुप से स्वतन्त्र हो।
- अच्छा संवेगात्मक रुप से नियंत्रित हो।
- ऊँचे नैतिक सिद्धांत वाला हो।

सामाजिक परिपक्वता से ही बालक लोकतंत्र में रहने और अपनी सर्वोत्तम योग्यताओं के अनुसार अपनी भूमिका निभाने में सफल होता है।

4. नैतिक विकास (Moral Development)- माध्यमिक स्तर प्रारंभिक शिक्षा तथा विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा के बीच की कडी है। कुछ विद्यार्थी इस स्तर की शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् रोजगार में लग जाते. है, इसलिए इस स्तर पर नैतिक विकास होना अत्यावश्यक है। नैतिक विकास समाज और शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य है। चरित्र विकास और नैतिक विकास एक ही सिक्के के दो पहलू है। नैतिक विकास में मानव मूल, नैतिक व्यवहार और नैतिक धारणाएं शामिल हैं। राधाकृष्णन के शब्दों में, "भारत सहित समूर्ण विश्व की परेशानियों का कारण यह है कि शिक्षा केवल एक बौद्धिक प्रयोग बनकर रह गई है, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की प्राप्ति नहीं। ' वर्तमान समय में जब नैतिक और सामाजिक मूल्यों का

विघटन हो रहा है, जब धर्म की पकड़ छूटती जा रही है, जब शक्ति और ज्ञान का निहित स्वार्थो के लिए दुरुपयोग किया जा रहा है, जब कालाबाजारी, बर्बरता, अनुशासहीनता तेजी से फैल रही है तो यह आवश्यक हो गया है कि नैतिकता के लिए शिक्षा प्रदान की जाए। सत्यता, धर्मपरायणता और अहिंसा के रुप में नैतिकता ही एकमात्र उपाय है जिससे मानवता के घावों को भरा जा सकता है। जीवन में नैतिकता ही एक ऐसी शक्ति है जो सम्पूर्ण देश को एक सूत्र, में बांध सकती है।

5. चरित्र का विकास (Character Development)- प्राचीन शिक्षाशास्त्रियों का मानना है, 'चरित्र विकास शिक्षा का मूलभूत और अन्तिम उद्देश्य है। शिक्षा में चरित्र की शुद्धता और शक्ति विकसित होनी चाहिए। ' चरित्र स्वाभाविक प्रवृत्तियों, संवेगों, मनोभावों और इच्छा शक्ति के उचित संगठन में निहित होता है। चरित्र में व्यक्ति द्वारा कल्पना किए जाने योग्य सर्वोत्तम और श्रेष्ठ गुण शामिल होते हैं, जिन्हें विकसित किया जा सकता है। सहनशीलता, सत्यता, ईमानदारी, न्याय, भाईचारा, स्वतन्त्रता, संयम, क्षमाशीलता जैसे चरित्र सम्बन्धी गुणों से व्यक्ति की सामाजिक कार्यकुशलता को प्रोत्साहन मिलता है। अच्छा चरित्र सिखाए जाने की अपेक्षा प्राप्त किए जाने की प्रक्रिया है। पाठ्यक्रम व अन्य सहगामी क्रियाओं में ऐसे पाठ और गतिविधियों को सम्मिलित करना होगा जिनसे बालकों को चरित्र निर्माण की शिक्षा मिल सके।

6. व्यवसायी उद्देश्य (Education for Vocation)- आज अत्यन्त ज्वलंत समस्याओं जैसे बेरोजगारी, गरीबी, अकाल आदि से जूझ रहा है। इनके परिणामस्वरूप देश को आर्थिक समस्याओं का सामना करना पडता है। देश की आर्थिक समस्याओं को सुलझाने के लिए तकनीकी एवं व्यवसायिक शिक्षा का होना आवश्यक है। महात्मा गांधी जी ने ठीक ही कहा था, 'सच्ची शिक्षा के लिए बेरोजगारी के प्रति एक बीमा होनी चाहिए। ' माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार, 'यदि व्यक्ति प्राप्त ज्ञान द्वारा अपनी आजीविका नहीं कमा सकता तो यह ज्ञान व्यर्थ हे। " माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा व्यक्ति को सही दिशा प्रदान करने में सहायक होगा। यह मानवीय शक्ति को बर्बाद होने से रोकेगी। कम बुद्धि वाले बच्चों के लिए व्यावसायिक शिक्षा ही अन्तिम आशा है। व्यावसायिक उद्देश्य विद्यार्थी की आर्थिक स्वतन्त्रता तथा सामाजिक कुशलता प्राप्त करने में सहायता करता है। सामाजिक कुशलता उन व्यक्तियों के प्रयासों का फल है जो अपनी आजीविका स्वयं कमाते है और समाज पर बोझ नहीं बनते? हमारे देश की वर्तमान शिक्षा प्रणाली केवल पुस्तकीय प्रशिक्षण पर आधारित है। अत: विद्यार्थियो को संरचनात्मक गतिविधियों में संलग्न रखने के लिए, हमें माध्यमिक स्तर पर व्यवसायिक शिक्षा प्रदान करनी चाहिए।

7. भावनात्मक विकास (Emotional Development)- भावनाएं सार्वभौमिक होती हैं। केवल व्यक्ति की शारीरिक वृद्धि ही उसकी भावनात्मक संरचना से संम्बन्धित नहीं अपितु उसका बौद्धिक, सामाजिक, नैतिक एवं सौन्दर्यात्मक विकास भी भावात्मक व्यवहार एवं अनुभवों से नियन्त्रित होते हैं। माध्यमिक शिक्षा स्तर के दौरान विद्यार्थी एक ऐसी अवस्था से गुजर रहे होते है जहां भावनाएं जल्दी-जल्दी परिवर्तित होती रहती है। मनुष्य की अधिकांश दुर्दशा अनुशासनहीन या कुनिर्देशित भावों के कारण है। खुशहाल व्यक्ति वह है जिसके संवेग

सुप्रशिक्षित है। अत: माध्यमिक शिक्षा का उद्देश्य भावात्मक विकास अर्थात् संवेगों का प्रशिक्षण और संवेगात्मक शक्ति का उचित निर्दिष्टीकरण या परिष्करण होना चाहिए।

8. सांस्कृतिक विकास (Cultural Development)- मानव जाति के पास परम्पराओं, तोर-तरीकों एवं रीति-रिवाजों की एक समृद्ध विरासत है जिसे संस्कृति कहा जाता है। शिक्षा के माध्यम से इसे आने वाली पीढ़ियों तक संरक्षित, प्रेषित एवं विकसित किया जाता है। संस्कृति में भाषा, साहित्य कला, दर्शनशास्त्र, धर्म, नैतिकता, समाज की प्रथाएँ परम्पराएं, व्यवहार, लोकरीतियाँ आदर्श और मूल्य शामिल है। हुमायूँ कबीर का मानना है, ' राष्ट्र के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए सांस्कृतिक परम्पराओं की निरंतरता एक आवश्यक शर्त है। ' वर्तमान तेजी से परिवर्तित हो रहा है, आज का युग वैश्वीकरण का युग है और हमें बालक को एक अच्छे एवं खुशहाल भविष्य की ओर ले जाना है। आधुनिक संसार में संस्कृति का पारस्परिक संबंध स्वीकार नहीं किया जा सकता। आज संसार के विभिन्न राष्ट्र संस्कृति के विषय में नहीं अपितु शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के विषय में सोच रहे है। आज केवल वही व्यक्ति सुसंस्कृत है जिसे प्रजातांत्रिक नागरिकता, अन्तर्राष्ट्रीय भाईचारे, अन्तर्राष्ट्रीय स्थिरता एवं समरुपता में पूर्ण विश्वास हो। हमारी शिक्षा का उद्देश्य माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों में इस प्रकार की संस्कृति एवं सांस्कृतिक मूल्यों का विकास करना होना चाहिए।

9. आध्यात्मिक विकास (Spiritual Development)- आज हम भारतवासी भौतिकवाद के पथ पर चलने लगे है। हमारा सम्पर्क उत्तम और आध्यात्मिक मूल्यों के साथ कम होता जा रहा है। आध्यात्मिक शिक्षा की कमी के कारण संसार में शोषण, भ्रष्टाचार, विनाश, आक्रमण और घृणा पैदा होती जा रही है। इसके साथ-साथ आध्यात्मिक शिक्षा के अभाव के कारण राजनैतिक तनाव, आर्थिक परेशानियां तथा भय उत्पन्न हो रहे हैं। लोग आत्मा-हीन तथा ईश्वर-विहीन प्राणी बनते जा रहे हैं। संसार की भलाई आध्यात्मिक शिक्षा पर निर्भर करती है। आध्यात्मिक शिक्षा व्यक्ति को चरित्रवान, ईमानदार तथा शक्तिशाली बनाकर उच्च स्तर पर ले जाएगी। यह मानव को उदार, सहयोगी, सहनशील, प्रगतिशील तथा शान्तिप्रिय बना देगी। शिक्षा के द्वारा सत्य, अहिंसा और प्रेम जैसे आध्यात्मिक मूल्यों का अनुभव करना ही पर्याप्त नहीं है अपितु उन्हें कार्य या अभ्यास में प्रयुक्त करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस प्रकार माध्यमिक शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थी की आध्यात्मिक संभावनाओं का अधिकतम विकास होना चाहिए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Question)

1. अच्छे उद्देश्य की क्या आवश्यकता एवं महत्व है।
   What is the need and importantance of good aim?
2. वर्तमान भारत में आध्यात्मिक विकास को माध्यमिक शिक्षा का उद्देश्य क्यों मानना चाहिए?
   Why spiritual development should be the aim of secondary education in present India?

3. माध्यमिक शिक्षा के सामान्य उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।
Describe the general aim of secondary education.

5.4 भारत में माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य एवं माध्यमिक शिक्षा आयोग, 1952-53 (Secondary Education Commission and Aims of Secondary Education in India,1952-53)

उपर वर्णित आवश्यकताओं के अनुरुप माध्यमिक शिक्षा आयोग ने निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए है:-

1. **प्रजातांत्रिक नागरिकता का विकास(Development of Democratic Citizenship)-** लोकतंत्र मे नागरिकता एक चुनौतीपूर्ण दायित्व है, जिसके लिए प्रत्येक नागरिक को प्रशिक्षित करना आवश्यक है। प्रजातांत्रिक नागरिकता के लिए शिक्षा के द्वारा निम्नलिखित गुणों का विकास किया जाना चाहिए।

(i) स्पष्ट चिंतन की क्षमता (Capacity for clear Thinking)- इस संबंध में सबसे पहली आवश्यकता स्पष्ट चिंतन तथा नवीन विचारों को ग्रहण करने की क्षमता का विकास करना है। यह शिक्षित मस्तिष्क के लिए अत्यावश्यक है। एक लोकतांत्रिक नागरिक को इस योग्य होना चाहिए कि वह जो बुरा है उसे नकार सके, तथ्यों की पहचान कर सके तथा सत्य व असत्य में अंतर कर सके।

(ii) बोलने तथा लिखने में स्पष्टता (Clearness in Speech and writing)- लोकतंत्र में सफल जीवन के लिए स्वतन्त्र वाद-विवाद, प्रेरणा तथा विचारों के शांतिपूर्ण आदान प्रदान के लिए बोलने तथा लिखने में स्पष्टता होनी चाहिए।

(iii) रहने के लिए शिक्षा (Education for Living)- शिक्षा के द्वारा व्यक्ति को दूसरों के साथ रहने की कला में प्रवीण बनाया जाना चाहिए। इस उद्देश्य के लिए निम्नलिखित गुणों का विकास किया जाना चाहिए।

- अनुशासन सहयोग
- सामाजिक सूक्ष्मग्राहकता और सहनशीलता

(iv) सच्ची देशभक्ति की भावना (Sense of True patrotism)- शिक्षा का एक अन्य उद्देश्य सच्ची देश-भक्ति की भावना का विकास है। सच्ची देश भक्ति में तीन बातें आती है-

- अपने देश की सामाजिक तथा सांस्कृतिक प्राप्तियों के प्रति सच्चे प्रेम की भावना।
- देश की त्रुटियों को स्वीकार करने के लिए तत्पर रहना तथा उनको दूर करने का प्रयत्न करना।
- अपनी योग्यता के अनुसार उतम ढंग से देश की सेवा करने का दृढ निश्चय करना।

(v) विश्व नागरिकता की भावना (Sense of world Citizenship)- शिक्षा के द्वारा व्यक्ति में एक विश्व की भावना का विकास किया जाना चाहिए और उसी के अनुसार हमें अपने कर्तव्यों को निभाना चाहिए। वर्तमान संसार में मेरा देश गलत या ठीक से अधिक खतरनाक विचार और कोई नहीं है। वर्तमान युग अंतर्राष्ट्रीयता का युग है।

2. **व्यवसायिक कुशलता की उन्नति (Improvement of Vocational Efficiency):-** शिक्षा का दूसरा प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थियों की तकनीकी तथा व्यवसायिक कुशलता को उन्नत करना है। इसमें निम्नलिखित बातें शामिल होती है-

(i) नवीन अभिरुचियाँ विकसित करना अर्थात् समस्त कार्यो के प्रति आदर की भावना का विकास।

(ii) विद्यार्थियों को यह अनुभव करना कि स्व-निर्भरता तथा राष्ट्रीय प्रगति तभी संभव है जब प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति यह प्रयत्न करे कि जिस काम को वे अपने हाथ में ले, उसे अपनी सामर्थ्य के अनुसार कलात्मक ढंग से तथा कुशलतापूर्वक पूरा करे।

(iii) शिक्षा के सभी स्तरों पर तकनीकी कौशल और कुशलता को उन्नत करना जिससे औद्योगिक तथा तकनीकी उन्नति की योजनाओं पर कार्य करने के लिए प्रशिक्षित एवं कुशल व्यक्ति प्राप्त हो सके।

3. **व्यक्तित्व का विकास (Development of personality):-** व्यक्तित्व के विकास में शामिल है:-

   (i) विद्यार्थियों में रचनात्मक शक्ति का विकास करना जिससे वे अपनी सांस्कृतिक विरासत की प्रशंसा कर सके।

   (ii) उतम रुचियां पैदा करना।

4. **नेतृत्व के गुणों का विकास (Development of Quality of Leadership)-** इस संदर्भ में माध्यमिक शिक्षा का विशिष्ट कार्य विद्यार्थियों को समुदाय के छोटे समूहों या स्थान के सामाजिक, राजनैतिक, शिल्पीय अथवा सांस्कृतिक क्षेत्रों में नेतृत्व का दायित्व संभालने का प्रशिक्षण देना है।

5.5 माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य एवं शिक्षा आयोग, 1964-66 (Aims of Secondary Education Commission, 1964-66)

शिक्षा आयोग ने विशेष रुप से माध्यमिक शिक्षा के लिए कोई विशिष्ट लक्ष्य नहीं दिए है। माध्यमिक स्तर शिक्षा प्रक्रिया सभी स्तरों में से एक स्तर है, इसलिए शिक्षा के सर्वमान्य उद्देश्य भी इस स्तर के लिए प्रायोगिक होंगे। आयोग के अनुसार वे निम्नलिखित है-

1. **शिक्षा को उत्पादन से संबंधित करना (Relating Education to Productivity)-** शिक्षा आयोग का यह मानना है कि राष्ट्रीय आय को बढाने के लिए शिक्षा को उत्पादन से जोड़ना अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए निम्नलिखित क्रियाओं को सम्मिलित किया जाना चाहिए:-

- विज्ञान की शिक्षा
- कार्य अनुभव
- उत्पादन प्रक्रियाओं में विज्ञान का प्रयोग
- व्यावसायीकरण

2. **संवेगात्मक एवं राष्ट्रीय मूल्यों को सुदृढ़ करना (Strengthening Education and National values)-** आयोग ने संवेगात्मक एवं राष्ट्रीय मूल्यों को सुदृढ करना शिक्षा पद्धति का महत्वपूर्ण उद्देश्य माना है क्योंकि यही शक्तिशाली एवं संगठित देश का आधार है।

3. **सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता की प्राप्ति (Achieving Social and National Intergration)-** शिक्षा के द्वारा ऐसी पद्धति का विकास किया जाना चाहिए जिससे विद्यार्थियों में सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता की भावना का विकास संभव हो। इसके लिए निम्नलिखित पग उठाने चाहिए।

- सामान्य स्कूल प्रणाली
- सामाजिक एवं राष्ट्रीय सेवा
- भाषा नीति का विकास
- राष्ट्रीय चेतनता का विकास

4. **आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में गतिवर्द्धन (Accelerating the process of Modernization)-** विज्ञान पर आधारित तकनीकी का प्रयोग आधुनिक समाज की अतिविशिष्ट विशेषता है। शिक्षा के द्वारा देश के आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जानी चाहिए जिससे हमारा देश विश्व के विकसित देशों के समक्ष खड़ा हो सके। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए निम्नलिखित क्रियाओं का समावेश किया जाना चाहिए।

- ज्ञान विस्फोट के साथ कदम मिला कर चलना।
- वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना।
- जागरुकता का विकास करना।
- आवश्यक कौशलों की सहायता से अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास करना।
- क्षमताओं का विकास करना।
- नवीन सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना।
- बुद्धिजीवी वर्ग का निर्माण करना।

5. **सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का निर्माण (Cultivation of Social, Moral and Spiritual values)-** आयोग का यह मानना था कि अधिकांश रुप से अनुशासनहीनता का मुख्य कारण इन मूल्यों का अभाव है इसलिए शिक्षा में विभिन्न क्रियाओं के द्वारा इन मूल्यों का विकास किया जाना चाहिए जैसे-

- केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों की भूमिका
- निजी प्रबंध संस्थाओं की भूमिका
- समय सारणी में व्यवस्था
- विभिन्न धर्मो के अध्ययन को विकसित करना।

शिक्षा आयोग ने भौतिकवाद तथा आध्यात्मवाद में संतुलन स्थापित करने का प्रयत्न किया। उसका यह मानना था कि यदि विज्ञान और अहिंसा विश्वास तथा कार्य के निर्माणात्मक संश्लेषण मे समन्वित हो जाएं तो मानवता विकास, आध्यात्मिकता तथा उद्देश्पूर्णता के एक नवीन स्तर को प्राप्त कर लेगी। विज्ञान एवं तकनीकी के युग में यह शिक्षा ही है जो लोगों के

समृद्धि, खुशहाली एवं सुरक्षा के स्तर को निर्धारित करती है। आयोग ने स्पष्ट रुप से निम्नलिखित बातों पर बल दिया:-

- शिक्षा को वर्तमान तथा भविष्य की आवश्यकताओं के अनुसार परिवर्तित करना।
- इसे लोगों के जीवन तथा उनकी आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं के साथ सम्बन्धित करना।
- शिक्षा को राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन का सशक्त साधन बनाना।

5.6 ईश्वर भाई पटेल समिति (1977) के अनुसार माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Secondary Education According to Ishwar Bhai Patel Committee)

- तार्किकता एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना।
- सरलता, एकता एवं सहनशीलता के गुणों का विकास करना।
- संविधान में दिए गए नागरिक के प्रारुप के अनुसार अधिगमकर्ता को परिवर्तित करना।
- अधिगमकर्ता को कार्य व अधिगम मे संयोग करने के योग्य बनाना।
- हमारी सांस्कृतिक विरासत के प्रति सूझ-बूझ व प्रशंसात्मक दृष्टिकोण का विकास करना।
- अधिगम को पुस्तकीय ज्ञान से मुक्त करना तथा इसे सामाजिक उत्पादक हस्त कार्य से व देश की सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों से सम्बन्धित करना।

5.7 माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य एवं आदिसेशैया समिति, 1977-78 (Aims of Secondary Education and Adiseshiah Committee, 1997-78)

समिति द्वारा प्रस्तावित उद्देश्यों में से प्रमुख था। माध्यमिका उच्च माध्यमिक स्तर के व्यावसायीकरण के लिए क्रियात्मक योजना का सुझाव क्योंकि इस समिति की रिपोर्ट क्रिया द्वारा सीखने पर आधारित थी। समिति ने निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किए:-

- अधिगमकर्ता को ग्रामीण विकास के लिए आवश्यकता के प्रति जागरुक करना।
- अधिगमकर्ता को भारतीय अव्यवस्था में कृषि के स्थान को समझने के योग्य बनाना।
- भारत की बेरोजगारी, अल्प-रोजगार तथा आर्थिक पिछडेपन की समस्याओं के प्रति गहन सूझ-बूझ का विकास करना।
- कुटीर एवं लघु पैमाने के उद्योगों को चलाने के लिए कौशलों एवं प्रबंधन कौशलों का विकास करना।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. भारत की आवश्यकताओं के अनुरुप माध्यमिक शिक्षा का क्या महत्व है?

What is the importance of secondary education according to the needs of India?

2. माध्यमिक शिक्षा आयोग ने भारत की किन प्रमुख आवश्यकताओं पर बल दिया है?

What are the importance needs of India an which Secondary Education Commission laid emphasis?

3. माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा दिए गए माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्यों की व्याख्या कीजिए।

Explain the objectives secondary education gives by secondary education Commission.

4. भारतीय शिक्षा आयोग द्वारा दिए गए माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।

Explain the objectives of secondary education given by Indian education Commission.

5. आदिसेशैया समिति ने अपनी रिपोर्ट में किस बात पर बल दिया?

On what aspect the emphasis given by Adiseshiah Commission in its report?

6. ईश्वर भाई पटेल समिति द्वारा दिए गए माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।

Describe the aims of secondary education given by Ishwar Bhai patel Committee.

5.8 राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के अनुसार माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य (Aims of secondary Education According to National Education Policy 1986)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने माध्यमिक स्तर की शिक्षा में कुछ कमियां अनुभव की जैसे नौंवी, दसवीं कक्षाओं के अनुसार आयुवर्ग के केबल 22 प्रतिशत बच्चे ही स्कूलों में पढ़ रहे थे और यह अनुपात विकसित देशों के कही नजदीक भी नहीं है। केवल शहरी तथा समाज के उच्च वर्ग से संबन्धित बालकों के लिए ही विज्ञान व तकनीकी शिक्षा का प्रबध था। विभिन्न विद्यालयों में शिक्षा के स्तर मे विभिन्नता थी। कुछ राज्यों में 10+2+3 की शिक्षा प्रणाली आरंभ नहीं की गई थी। पास प्रतिशत में 30 से 40 प्रतिशत का अपव्यय था। छात्र-अध्यापक अनुपात बहुत अधिक था। पाठ्यक्रम अप्रभावी था। इसी के परिणामस्वरुप राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने माध्यमिक शिक्षा में सुधार के लिए निम्नलिखित उद्देश्यों का प्रस्ताव रखा-

1. विद्यार्थियों की आर्थिक सामाजिक सुदृढ़ता, योग्यता एवं सृजनात्मकता पर बल (Emphasis on the Social-Economic well being, competence and creativity of the student) इसमें सम्मिलित है:-

- व्यक्ति का शारीरिक, बौद्धिक एवं सौन्दर्यात्मक विकास करना।
- वैज्ञानिक अभिवृत्ति तथा लोकतांत्रिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का विकास।
- खोज करने के लिए तथा असामान्य परिस्थितियों का सामना करने के लिए आत्मविश्वास का विकास।
- भौतिक, सामाजिक, तकनीकी, आर्थिक एवं सांस्कृतिक वातावरण के प्रति जागरुकता का निर्माण करना!
- कठिन परिश्रम तथा श्रम के प्रति आदर के लिए स्वस्थ दृष्टिकोण का विकास।
- धर्मनिरपेक्षता एवं सामाजिक न्याय के सिद्धातो के प्रति विश्वास
- देश के प्रति सम्मान की मायना का विकास।
- अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग एवं शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की भावना का विकास।

2. **विभिन्न क्षेत्रों में ज्ञान एवं कौशलो का विकास (Development of Knowledge and Skills in Various Areas)-** व्यक्तिगत योग्यताओं के विकास के साथ-साथ शिक्षा के द्वारा तथ्यों पत्र संप्रत्ययों के बारे में ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए। ज्ञान के अतिरिक्त कौशलों के विकास के लिए पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का आयोजन किया जाना चाहिए। भाषा तथा संचरण के क्षेत्र में भी कौशलों का विकास किया जाना चाहिए।

3. **रोजगार अवसरो में ज्ञान एवं कौशलो का विकास (Development of knowledge and skills in Employment opportunities)-** आर्थिक विकास तथा रोजगार का प्रत्यक्ष संबंध होने के कारण शिक्षा के द्वारा विद्यार्थी में ऐसी योग्यताओं का विकास किया जाना चाहिए कि वे विभिन्न क्षेत्रों का न केवल ज्ञान ही प्राप्त करे अपितु विभिन्न कौशलों का विकास हो जो उन्हे रोजगार प्राप्त करने में सहायता करे। व्यवसायिक कौशलों का विकास किया जाना चाहिए जिससे उन्हे रोजगार के विभिन्न अवसर प्राप्त हो सके।

4. **उचित एवं अनुचित की भावना का विकास (Development of Sense of Right and Wrong)-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति का यह मानना था कि कोई भी नियम या प्रणाली तब तक जीवित नहीं रह सकता यदि शिक्षित व्यक्तियों में जीवन के प्रति आदर या उचित व अनुचित की भावना न हो। यदि लोगों में सहनशीलता के महत्व तथा अपने विचार से हटकर अन्य के विचारों के लिए आदर की सूझ-बूझ नहीं होगी तो देश में कभी भी लोकतंत्र व नागरिक जीवन का विकास नहीं होगा।

5. **राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली (National System of education)-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की व्यवस्था पर बल दिया है। राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली से तात्पर्य है- एक निश्चित स्तर तक सभी विद्यार्थियों को बिना किसी भेदभाव के समान शिक्षा प्रदान की जाए। इसमें निम्नलिखित सम्मिलित है:

- सामान्य शैक्षिक ढांचा अर्थात 10+2+3

- पाठ्यक्रमों की राष्ट्रीय रुपरेखा
- समानता के लिए शिक्षा
- सांस्कृतिक एवं सामाजिक प्रणालियों का बोध
- राष्ट्रीय गर्व का विकास
- सम्पर्क भाषा एवं अन्य भाषाओं का विकास
- अन्त:क्षेत्रीय गतिशीलता का विकास

6. **सामाजिक प्रणाली में व्यक्ति का एकीकरण (Integration of Individual into the Social System)-** शिक्षा के द्वारा व्यक्ति को समाज का ज्ञान दिया जाना आवश्यक है क्योंकि इसके बिना उसमें समाज में समायोजन की आदत का विकास होना संभव नहीं है। समाज व्यक्तियों का ही एक संयुक्त रुप है। इसका अर्थ है स्वास्थ्य य सम्बन्धी आदतों, मानसिक योग्यताओं का प्रयोग, समय का प्रबंध तथा भौतिक, मानसिक व संवेगात्मक शक्ति के संरक्षण की उपयुक्त आदतों का विकास किया जाना चाहिए।

7. **शिक्षा समान अवसरों के साधन के रूप में (Education as a means of Equalizing opportunities)-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शिक्षा के समान अवसर प्रदान करने तथा भेद-भाव समाप्त करने पर विशेष बल दिया गया है। नीति के दस्तावेज में स्पष्ट रुप से कहा गया है कि शिक्षा के क्षेत्र में भेद-भाव -दूर करने तथा सभी के समान अवसर प्रदान करने के हर संभव प्रयत्न किया जाएगें। इसके लिए विभिन्न क्षेत्रों को सम्मिलित किया गया:-

- नारी शिक्षा
- अनुसूचित जातियों एवं कबीलों की शिक्षा
- अल्प-संख्यकों की शिक्षा
- विकलांगों की शिक्षा
- प्रौढ़ शिक्षा का विकास

इस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के व्यावसायीकरण पर बल दिया, जिससे विद्यार्थियों में श्रम के प्रति आदर की भावना का विकास होगा और साथ ही साथ उन्हें अपनी शिक्षा पूरी करने के पश्चात रोजगार के अवसर उपलब्ध हो सकेंगे। आर्थिक विकास के लिए जनशक्ति का विकास होगा।

5.9. 21वीं शताब्दी के लिए अंतर्राष्ट्रीय आयोग के द्वारा निर्मित लक्ष्य (Aim as Formulated by the International Commission For Twenty-First Century,1993-96)

20वीं सदी में सूचना व तकनीकी का तीव्र गीत से विस्तार हुआ। विश्व गांव की कल्पना यर्थाथ में बदल गई। मानवीय कार्य विश्व स्तरीय हो गए। वैश्वीकरण ने मानव समाज के समक्ष अनेक चुनौतियां प्रस्तुत की। इनका सामना कैसे किया जाए इस संदर्भ में शिक्षा की भूमिका पर विचार करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय आयोग नियुक्त किया गया। 1996 में प्रस्तुत

इसकी रिपोर्ट का शीर्षक है, "Learning the Treasure Within." यह रिपोर्ट एक व्यापक वक्तव्य प्रस्तुत करती है जो शिक्षा के भूमंडलीय विकास को ध्यान में रखते हुए सभी देशों को अपनी-अपनी शिक्षा व्यवस्था में गुणात्मक सुधार लाने के लिए दिशा निर्देश देता है। रिपोर्ट में शिक्षा के चार स्तंभ दिए गए है:-'

चित्र 5.!- शिक्षा कें स्तंभ

1. ज्ञान के लिए सीखना(Learning to know)- इस स्तंभ को केवल ज्ञान से संबंधित किया गया है। अर्थात विद्यार्थियों को विभिन्न विषय पढ़ाना जिससे वे उनका सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त कर सके।

2. करने के लिए सीखना (Learning to do):- इसका अभिप्राय न केवल व्यावसायिक कौशलों की प्राप्ति से है अर्थात् विस्तृत रुप से ऐसी क्रियाओं के आयोजन से भी है जिससे वे समूह में विभिन्न परिस्थितियों व कार्यो का सामना योग्यतापूर्वक कर सकें।

3. सामूहिक रुप से रहने के लिए सीखना (Learning to live together):- विद्यार्थियों में अन्त: निर्भरता की भावना का विकास किया जाना चाहिए जिससे वे अन्य लोगों के विचारों को समझ सके, जो सामूहिक रुप से रहने की योग्यता का विकास करने में सहायक होगा।

4. बनने के लिए सीखना (Learning to be):- इस उद्देश्य से अभिप्राय है कि व्यक्तित्व का इस प्रकार विकास किया जाए कि वे स्वतन्त्रता, निर्णयात्मक तथा व्यक्तिगत उतरदायित्वों के साथ कार्य करने के योग्य बन सके। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षा के द्वारा व्यक्तित्व के किसी भी पक्ष - स्मृति, तार्किक शक्ति, सौंदर्य शक्ति, शारीरिक क्षमताएं तथा संचरण कौशल की अवहेलना नहीं की जानी चाहिए।

आयोग के अनुसार शिक्षा ही वह साधन है जिसके द्वारा व्यक्ति व समाज का विकास संभव है। अत: विकास के लिए शिक्षा एक ऐसा पद है जिसे भविष्य में हर विश्व स्तर पर प्रयोग में लाया जाएगा। आयोग ने इस विषय पर भी विचार किया कि क्या शिक्षा विश्वशान्ति में कुछ योगदान दे सकेगी? क्या विश्व के सभी नागरिकों से सम्बन्धित शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण किया जा सकता है? आयोग का विचार था कि शिक्षा ही भविष्य में उन संभावनाओं को खोल सकती है जिससे एक सशक्त व समग्र समाज का निर्माण किया जा सके।

5.10. व्यवहारगत शब्दावली में माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Secondary Education in Behavioural or Functional or Operational Terms)

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में उद्देश्यों का स्पष्टीकरण अधिक प्रभावी एवं उद्देश्यपूर्ण होगा यदि उन्हें व्यवहारगत शब्दावली में लिखा जाए। इसके अंतर्गत विद्यार्थी उन परिस्थितियों की पहचान करेगा जो उसके कार्य करने का कारण है और साथ ही साथ वह इस बात की भी जांच करेगा कि उसका कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न हो गया है। व्यवहारगत उद्देश्य अधिगम क्रियाओं की ओर संकेत करते है। एन.सी.ई.आर.टी. (NCERT) ने स्कूली शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा 2002 में अधिगमकर्ताओं के लिए निम्नलिखित उद्देश्य प्रदान किए:-

1. शाब्दिक व अशाब्दिक रुप से सुनने, बोलने, पढ़ने, लिखने चिन्तन करने व संचारण करने के लिए भाषा की योग्यता का विकास। इसी की सहायता से विद्यार्थी अपनी दैनिक क्रियाओं में प्रभावी ढंग से भागीदार बन सकेंगे तथा समाज में उचित ढंग से रहने योग्य बन सकेंगे।

2. प्राकृतिक व सामाजिक दोनों प्रकार के वातावरण व उनकी अन्तक्रिया की सूझ-बूझ, जिससे वे वातावरण संबंधी समस्याओं को समझ सकेगें व वातावरण संरक्षण की विधियों व ढंगों को सोच सकेगें।

3. देश की परम्पराओं तथा विरासत ब परिवर्तित तकनीकी के बीच संतुलित' संश्लेषण की आवश्यकता के प्रति प्रशंसात्मक दृष्टिकोण विकसित करने की आवश्यता क्योंकि इसी आधार पर अतीत तथा वर्तमान के बीच संतुलित दृष्टिकोण विकसित होगा।

4. राष्ट्रीय प्रतीकों का ज्ञान हो तथा उनके प्रति आदर की भावना हो जिससे उनमें राष्ट्रीय पहचान व एकता के आदर्शो को बनाए रखने की इच्छा व निश्चय का विकास होगा।

5. तार्किक मस्तिष्क के विकास के लिए गणितीय योग्यताओं का विकास जिससे बालकों को गणितीय कार्य करने तथा उन्हें दैनिक जीवन में प्रयोग करने में सहायता मिलेगी। गणित ही जीवन का आधार है।

6. भारत बहु-भाषी, बहु-धर्मी, बहु-साम्प्रदायिक, बहु-संस्कृति का देश है इसलिए माध्यमिक स्तर तक विद्यार्थियों में देश के विभिन्न भागों में रहने वाले लोगों के बारे में समझ विकसित करनी होगी जिससे वे विभिन्नता में एकता के अर्थ को समझ सकेंगे तथा उनमें देश की समन्वित सांस्कृतिक विरासत के प्रति प्रशंसात्मक दृष्टिकोण विकसित होगा।

7. यदि विद्यार्थियों में देश भक्ति की भावना का विकास करना हे तो इसके लिए आवश्यक है कि उन्हें ग्रामीण, शहरी, कमजोर वर्ग तथा भारतीय समाज के अन्य क्षेत्रों से सामाजिक कार्यकर्ताओं व स्वतन्त्रता सेनानियों द्वारा किए गए बलिदानों व योगदान से अवगत कराया जाए जिससे उनके प्रति प्रशसात्मक दृष्टिकोण का विकास होगा और वे उनके आदर्शो को अपनाने के लिए तैयार होंगे।

8. 'मेरा देश सही या गलत' यही भावना नहीं अपितु अंतर्राष्ट्रीय सदभावना का विकास किया जाना चाहिए अर्थात् 'वसुधैव कुदुम्बकम्'' की भावना के साथ-साथ राष्ट्रीयता व देशप्रेम की भावना का विकास होगा। भारत की संस्कृति हमेशा से ही विश्व की उतम संस्कृति मानी जाती रही हे।

9. देश की आवश्यकताओं के अनुरुप वैश्वीकरण, उदारीकरण तथा स्थानीयकरण की प्रक्रियाओं के सकारात्मक व नकारात्मक प्रभावों को समझना होगा। जिससे अपने देश के विकास के लिए इन्हें अपनाने में वे किसी प्रकार की हिचकिचाहट अनुभव न करे।

10. व्यक्तिगत, सामाजिक, नैतिक, आध्यात्मिक तथा राष्ट्रीय मूल्यों का विकास होगा जिससे प्रत्येक विद्यार्थी का जीवन मानवतापूर्ण तथा सामाजिक रुप से प्रभावी होगा, उसके जीवन को अर्थ मिलेगा तथा जीवन को सही दिशा प्राप्त होगी।

11. स्व अधिगम, स्व-निर्देशित अधिगम तथा जीवन पर्यन्त अधिगम के लिए आवश्यक विशेषताओं व गुणों का विकास होगा जिससे एक अधिगम युक्त समाज का निर्माण होगा।

12. केवल ज्ञान प्रात करने की प्रक्रिया के लिए क्षमता ही नहीं अपितु इस ज्ञान की सुझबूझ भी विकसित होगी जिससे बह ज्ञान अन्त:निहित बनेगा व गहनता का विकास होगा।

13. बड़े परिवारों तथा अति जनसंख्या के प्रभावों को समझेंगे तथा जनसंख्या को नियंत्रित करने की आवश्यकता का अनुभव करेंगे।

14. अधिगमकर्ताओं में ज्ञान के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित बहु कौशलों तथा सृजनात्मकता का विकास होगा।

15. सूचना आधारित और अध्यापक केन्द्रित शिक्षा के स्थान पर प्रक्रिया केन्द्रित तथा अधिगमकर्ता मैत्री शिक्षा पर बल दिया जाएगा।

इस प्रकार यह निश्चय किया गया कि राष्ट्रीय शिक्षा व्यवस्था एक राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रुपरेखा पर आधारित होगी जिसके कुछ सामान्य मूल घटक होंगे। वे घटक होंगे- भारत के स्वतन्त्रता आंदोलन का इतिहास, संवैधानिक दायित्व व वे अन्य तत्व जो राष्ट्रीय अस्मिता को प्रेषित करने के लिए आवश्यक है। ये तब बिभिन्न विषय क्षेत्रों में समाहित करने के लिए आवश्यक हे। ये तत्व विभिन्न क्षेत्रों में समाहित किए जाएंगे और उन्हें इस तरह बनाया जाएगा कि वे भारत की एक सामान्य सांस्कृतिक विरासत, समतावाद, लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, स्त्रीपुरुषों में समानता, पर्याश्रण की सुरक्षा, सामाजिक अवरोधों का निवारण, छोटे परिवार के मानदंड का पालन और वैज्ञानिक स्वभाव का पोषण आदि मूल्यों को प्रोत्साहित करे। भारत ने हमेशा शांति व राष्ट्रों के नीचे परस्पर समझ के लिए कार्य किया हे और पूरे विश्व को एक परिवार ही माना है। इस प्राचीन परम्परा पर खरा उतरते हु ए शिक्षा को इस दृष्टिकोण को प्रेषित करना है और युवा पीढ़ी को अंतर्राष्ट्रीय सहयोग ब शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए प्रेरित करना है। समता की भावना को प्रोत्साहित करने के लिए यह आवश्यक होगा कि सभी को समान अवसर उपलब्ध कराए जाए- पहुंच के स्तर पर ही नहीं बल्कि सफलता की शर्तों के स्तर पर भी। साथ ही मूल पाठ्यक्रम के माध्यम से वे सभी मनुष्यों में अत:निहित समानता की जागरुकता भी पैदा की

जाएगी। इसका उद्देश्य है सामाजिक वातावरण व जन्म की पृष्ठभूमि से जनित पूर्वाग्रहों व जटिलताओं का निराकरण।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के द्वारा दिए गए माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्यों का उल्लेख कीजिए कीजिए।

   Describe the aims of secondary education given by NPE, 1986.

2. राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली से क्या अभिप्राय है?

   What do you mean by national education system ?

3. अन्तर्राष्ट्रीय आयोग द्वारा 21वी शताब्दी के लिए दिए गए लक्ष्य कौन-कौन से है?

   What are the aims given by International Commission for 21st century

4. एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रुपरेखा-2000 में किन उद्देश्य पर बल दिया है?On what aims the emphasis was given by NCERT in National Curriculum Framework-2000?

5. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा किन मूल घटकों पर आधारित होगी?

   On what principal components National Curriculum Framework will be based?

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की सिफारिशों के बावजूद कि क्षमताओं की पहचान की जाए मूल्यों को विभिन्न अवस्थाओं में प्रेषित व विकसित किया जाए, स्कूली शिक्षा उन परीक्षाओं द्वारा और अधिक चालित होती चली गई जो महज् जानकारी से भरी पाठ्यपुस्तकों पर आधारित होती थी। वर्ष 2000 में पाठ्यचर्या रुपरेखा की समीक्षा के बाद भी पाठ्यचर्या के और परीक्षाओं की तानाशाही के विवादास्पद मुद्दे हल नहीं हुए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रुपरेखा 2005 शिक्षा के क्षेत्र में हुए सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रकार के परिवर्तनों पर ध्यान देती है और नई सदी के मोड़ पर स्कूली शिक्षा की भावी आवश्यकताओं को संबोधित करने का प्रयास करती है। इस प्रयास में अनेक परस्पर सम्बन्धित आयामों को ध्यान में रखा गया है जैसे, शिक्षा के लक्ष्य, बच्चों का सामाजिक परिप्रेक्ष्य, ज्ञान की प्राप्ति, और मानव की सीखने की प्रक्रिया।

5.11. माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य एवं राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा-2005 (Aims of Secondary Education and National Curriculum Framework,2005)

स्वतन्त्रता के पश्चात् शिक्षा प्रणाली की क्या उपलब्धि रही है, यदि हम इस ओर ध्यान दें तो सभवत: हमें कुछ संतोषजनक आंकडे मिलेगें। माध्यमिक स्तर की परीक्षा में भाग लेने वाले बच्चों में कम से कम 50 प्रतिशत बच्चे परीक्षा में उतीर्ण होते है। परन्तु अभी भी भारत में 37 प्रतिशत लोगों में साक्षरता कौशलों का अभाव है।

शिक्षा के मूल सरोकार- बच्चों को इतना सक्षम बनाना कि वे जीवन का अर्थ समझ सके और अपनी योग्यताओं का विकास कर सकें, अपने जीवन का एक उद्देश्य निश्चित करें और उसे प्राप्त करने का प्रयास करें तथा दूसरे व्यक्ति को भी ऐसा करने का अधिकार है, इस बात को पहचाने ये आज भी निस्संदेह महत्व रखते है। यदि हमें कुछ करना है तो वह मनुष्यों की परस्पर निर्भरता पर जोर देना, और यह बताना, जैसा कि टैगोर कहते है कि जब हम दूसरों के माध्यम से अनुभव करें, तभी हमें सबसे बड़ी खुशी मिलती है। राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा में शिक्षा के उद्देश्यों के निर्धारण के लिए निम्नलिखित मार्गदर्शक सिद्धांत बताए गए है:-

- ज्ञान को स्कूल के बाहरी जीवन से जोड़ना।
- पढ़ाई को रटन्त प्रणाली से अलग करने को सुनिश्चित करना।
- पाठ्यचर्या का इस तरह संवर्धन कि वह बच्चों को चहुँमुखी विकास का अवसर मुहैया करवाए बजाए इसके कि वह पाठ्यपुस्तक केन्द्रित न बन जाए।
- परीक्षा को अपेक्षाकृत अधिक लचीला बनाना व कक्षा के जीवन से जोड़ना।
- एक ऐसी पहचान का विकास जो प्रजातांत्रिक व्यवस्था के अंतर्गत राष्ट्रीय चिंताओं में स्नात हो।
- विद्यार्थियों को पर्यावरण व पर्यावरण संरक्षण के प्रति संवेदनशील बनाना।
- शांति की संस्कृति का निर्माण करना।
- विवेक पर आधारित लोकतंत्र, समानता, न्याय, परोपकार आदि मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता का निर्माण करना।
- कार्य करने की तथा आर्थिक प्रगति में योगदान देने की योग्यता का विकास करना।
- अधिगमकर्ता को इस योग्य बनाना कि वे लचीले तथा सृजनात्मक ढंग से नवीन परिस्थितियों का सामना कर सकें।
- सामाजिक परिवर्तन के लिए कार्य करने की योग्यता का विकास करना।

इस प्रकार माध्यमिक स्तर तक विद्यार्थी में रुचि, शारीरिक क्षमता, भाषिक क्षमता, अमूर्तने और सामान्यीकरण की क्षमता का विकास हो जाना चाहिए। उच्च माध्यमिक स्तर पर विकास के गुणों को देखकर प्रशिक्षित पेशेवरों द्वारा परामर्श विद्यार्थियों को आवश्यक रुप से दिया जाना चाहिए। स्व-कैरियर संबंधी चेतना, कैरियर की तलाश और योजना भी अति

आवश्यक है। इसके अतिरिक्त यह चरण किशोरावस्था का होता है जिससे परिवार मित्र मण्डली और स्कूल की परिस्थितियों के साथ समायोजन की मांग होती है। इसलिए शिक्षा को मानवीय बनाकर मानव रुचियों के विस्तृत आयामों के मुताबिक प्रासंगिक बनाना चाहिए।

5.12 शिक्षा के उद्देश्यों के संदर्भ में माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता (Quality of Secondary Education with Reference to Aims and Objectives)

माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने के लिए इसके उद्देश्य लोगों तथा देश की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं के अनुसार होने चाहिए। गुणवत्ता सुधारने के लिए माध्यमिक शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिए:

- उपादेयता में वृद्धि
- सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता में प्राप्ति
- आधुनिकीकरण की गति तेज करना
- सामाजिक नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का निर्माण
- लोकतांत्रिक नागरिकता का विकास
- नेतृत्व के गुणों का विकास
- वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं प्रयोगात्मकता
- व्यक्तित्व का विकास

यदि सभी तत्वों की ओर ध्यान दिया जाए तो यह अनुभव होता है कि राज्य द्वारा चलाए गए स्कूलों की गुणवत्ता पब्लिक स्कूलों की तुलना मे अत्यन्त निम्न है। विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने भी कहा था कि भारत की शिक्षा संस्था में माध्यमिक शिक्षा सबसे कमजोर कडी है। यह आज भी उतना ही सत्य है। सामान्य रुप से यह भी प्रदर्शित होता है कि माध्यमिक शिक्षा पूरी करने के पश्चात् भी बच्चों में मिलजुल कर रहने की भावना का विकास नहीं होता है। जो माध्यमिक शिक्षा के पश्चात् आगे की शिक्षा ग्रहण नहीं करते, वे अपनी भूमिका शिक्षा प्रणाली के अनुरुप अदा करने में समर्थ नहीं हो पाते। वे किसी भी भाषा में निपुण नहीं होते। समय-समय पर विभिन्न आयोगों, समितियों, एन.सी.ई.आर.टी; शिक्षाविदों द्वारा माध्यमिक शिक्षण के उद्देश्यों पर चर्चा की गई, परन्तु आज भी हम इसे गुणात्मक नहीं बना पाए।

हमारे विद्यार्थियों में से अधिकतर के लिए निर्धारित शिक्षा माध्यमिक स्तर पर आकर रुक जाती है। इसको गुणात्मक कडी बनाने के लिए आवश्यक है कि इसे तकनीकी व्यवसाय, व्यापार उन्मुखी कोशों को प्रदान करने और उनके लिए एक वास्तविक अन्त बनाया जाए जो कार्यक्षेत्र में प्रवेश कर रहे है अथवा उच्चतर शिक्षा के लिए पढ़ाई जारी रख रहे है। माध्यमिक शिक्षा का उद्देश्य एक संतुलित एवं समरुप व्यक्तित्व का विकास होना चाहिए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evalaution Questions)

1. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा 2005 के अनुसार माध्यमिक स्तर शिक्षा में क्या उद्देश्य है।

   What are the aims of secondary Education given by National Curriculum Framework-

2. अपने देश की वर्तमान सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के अनुसार माध्यमिक शिक्षा के क्या लंक्ष्य/ उद्देश्य होने चाहिए?

   What should be the aims/ objectives of secondary education keeping in view the present socio-economic conditions of our country ?

3. शिक्षा के उद्देश्यों के संदर्भ में माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता को कैसे सुधारा जा सकता है।

   How can quality of secondary education be improved with reference to its aims and objectives ?

4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 द्वारा माध्यमिक स्तर पर दिए गए उद्देश्यों की आज के समय में कितनी उपयोगिता है' ?

   To what extent the aims and objectives of secondary education given by NPE, 1986 are useful in present time?

5.13 सारांश

(Summary)

उद्देश्य एक पहले सोचा हुआ लक्ष्य है जो किसी क्रिया या चालक व्यवहार को एक दिशा प्रदान करता है। जीवन के प्रत्येक पहलु प्रत्येक क्रिया के साथ में एक उद्देश्य होता है। उद्देश्य शिक्षा नियोजक को दूरदर्शिता प्रदान करते है। माध्यमिक स्तर पर शिक्षा को व्यक्ति को शारीरिक रुप से स्वस्थ, बौद्धिक रुप से प्रबुद्ध, संवेगात्मक रुप से परिपक्व, व्यवसायिक रुप से आत्म-निर्भर, सामाजिक रुप से निपुण, नैतिक रुप से सशक्त, सांस्कृतिक रुप से परिष्कृत एवं आध्यात्मिक रुप से विकसित बनाना चाहिए। ऐसी शिक्षा ही व्यक्ति के समुचित विकास में सहायता कर सकती है और उसे समाज को बेहतर बनाने के लिए प्रभावशाली भूमिका निभाने के योग्य बना सकती है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने मुख्यत: चार उद्देश्य बताए है- लोकतांत्रिक नागरिकता, व्यावसायिक कुशलता, व्यक्तित्व का विकास एवं नेतृत्व का प्रशिक्षण। 1952-53 में जब इन उद्देश्यों का उल्लेख किया जो इस प्रकार है- उपादेयता में वृद्धि, सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता की प्राप्ति आधुनिकीकरण प्रक्रिया की गीत तेज करना और सामाजिक नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का विकास। ये उद्देश्य अधिक उचित प्रतीत होते है क्योंकि ये भारतीय जनता की आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं के अनुरुप है। ईश्वर भाई पटेल एवं आदिसेशैया समिति ने

माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के व्यावसायीकरण पर ही अधिक बल दिया तथा शिक्षा को सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों से सम्बन्धित करने के लिए कहा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 1966 के अंतर्गत समाजवाद, धर्म निरपेक्षता, तथा लोकतंत्र का विकास, नैतिक एवं आचरणात्मक मूल्यों का विकास, राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की व्यवस्था, आदि में सम्मिलित किया गया है। समाज की बदलती हुई आयश्यकताओं का सामना करना हमारी शिक्षा के लिए बहुत बड़ी चुनौती है। इसलिए शिक्षा के उद्देश्यों का समय-समय पर बदलते रहना आवश्यक है। किसी विशिष्ट युग में माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य कुछ भी हो परन्तु उनका लोगों के जीवन तथा उनकी आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं से संबंधित होना अत्यन्त आवश्यक है। अत: सभी समितियों द्वारा दिए गए सुझावों के आधार पर वर्तमान समय में माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य निम्नलिखित होने चाहिए:-

- लोकतांत्रिक नागरिकता के मूल्यों का विकास।
- व्यवसायिक कुशलता का विकास।
- सन्तुलित व समरुप व्यक्तित्व का विकास।
- नेतृत्व के साथ-साथ अनुशासन के गुणों का विकास।
- विद्यार्थियों को उचित भविष्य चुनने में सहायता करना।
- विद्यार्थियों को नैतिक युक्त जीवन जीने के लिए तैयार करना।
- इक्कठे मिलजुल कर रहने की कला का विकास करना।
- अधिगमकर्ता को स्व-अध्ययन के लिए प्रेरित करना।
- विषय-सामग्री का ऐसा ज्ञान प्रदान करना जो दैनिक जीवन में उपयोगी हो।
- वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ-साथ आध्यात्मिक मूल्यों का विकास करना।
- अधिगमकर्ताओं को वैज्ञानिक विकास तथा तकनीकी का प्रभावी प्रयोग करने के लिए तैयार करना।
- अधिगमकर्ता को उदारीकरण तथा वैश्वीकरण की विभिन्न प्रवृतियों को समझने तथा उनके प्रभाव को समझने के योग्य बनाना।

निष्कर्ष रुप में माध्यमिक शिक्षा का उद्देश्य अधिगमकर्ता के ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण करना होना चाहिए जो उसे सांस्कृतिक रुप से परिष्कृत, संवेगात्मक रुप से स्थिर, नैतिक रुप से सुदृढ़, मानसिक रुप से जागरुक, राष्ट्रीयता रुप से भक्ति, शारीरिक रुप से सुदृढ़, सामाजिक रुप से कुशल, आध्यात्मिक रुप से रोशन, व्यासायिक रुप से स्व-निर्भर तथा वैश्विक रुप से मानव बनाने में समर्थ हो।

5.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Aggarwal S.C — National Policy on Education 1986 and Main Recommendations of National Commission on Teachers' Doaba House, 1986

NCERT National Curriculum Framework,2005,Delhi.

Report of University Education Commission, Ministry of Education,1949 New Delhi.

Report of Secondary Education Commission, Ministry of Education,1953, New Delhi.

Report of Indian Education Commission, Ministry of Education,1964-66, New Delhi.

Report of National Policy of Education Challenges in Education, MHRD, 1986

Report of National Advisory Committee, Learning Without Burden,1993,MHRD

इकाई -06

माध्यमिक शिक्षा पद्धति में सुधार एवं इसकी गुणवत्ता (Reforms in Secondary Education Pattern and Its Quality)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

6.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

6.1 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Background)

6.2 10+2+3 की शिक्षा प्रणाली (Education pattern of 10+2+3)

6.3 10+2 पद्धति में पाठ्यक्रम (Curriculm in 10+2 System)

6.4 माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education)

6.5 माध्यमिक शिक्षा की गुणवता (Quality of Secondary Education)

6.6 सारांश (Summary)

6.7 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

6.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप-

- शिक्षा की एतिहासिक पृष्ठभूमि को समझ सकेंगे।
- 10+2+3 पद्धति का अर्थ जान सकेंगे।
- नवीन शिक्षा संरचना की विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- 10+2+3 पद्धति की आवश्यकता का अनुभव कर सकेंगे।
- नवीन शिक्षा पद्धति की प्रगति में अपना योगदान दे सकेंगे।
- 10+2+3 पद्धति को लागू करने में कठिनाइयों को समझ सकेंगे।
- नवीन शिक्षा पद्धति के अनुसार पाठ्यक्रम में किए गए परिवर्तन को जान जाएंगे तथा आधुनिक समय के अनुसार उसमें परिवर्तन करने के सुझाव दे सकेंगे।

माध्यमिक शिक्षा प्राथमिक शिक्षा तथा विश्वविद्यालय शिक्षा के बीच की कडी है तथा अत्यन्त महत्वपूर्ण स्तर है क्योंकि इसी स्तर पर विद्यार्थी यह निर्णय लेता है कि उसे इस स्तर के पश्चात पढ़ाई छोड़नी है या आगे उच्च शिक्षा प्राप्त करनी है। हमें इसी स्तर पर एक राष्ट्रीय नीति की आवश्यकता थी जो आज 10+2+3 की राष्ट्रीय प्रणाली के रुप में प्रचलित है और इसी स्तर पर सामान्य व्यवसायिक शिक्षा का प्रावधान रखा गया है। समय-समय पर इस स्तर के पाठ्यक्रम में परिवर्तन किए जाते है। राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली बनने के पश्चात् भी इस स्तर की गुणवत्ता में कोई सुधार नहीं हुआ। विभिन्न आयोगों, समितियों तथा शिक्षाविदों द्वारा सुझावों के बावजूद भी इस स्तर की शिक्षा की गुणवत्ता में कोई अधिक सुधार नहीं हो पाया।

6.1 एतिहासिक पृष्ठभूमि
(Historical Background)

10+2+3 की शिक्षा संरचना कोई नवीन, आकस्मिक या चमत्कारी सुझाव नहीं था। इसका सूत्रपात तो आज से लगभग 90 वर्ष पूर्व ही सैडलर आयोग से हो गया था। 10+2+3 की शिक्षा सरंचना की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का संक्षिप्त विवरण निम्न है:-

1. **सैडलर आयोग (1917-1919) (Sadler Commission) -** इस आयोग को कलकता यूनिवर्सिटी आयोग के नाम से भी जाना जाता है। यह आयोग माइकल सैडलर की अध्यक्षता के अधीन 1917 में स्थापित किया गया। अत: इसे सैडलर की अध्यक्षता के अधीन जाना जाता है। इसने यूनिवर्सिटी में दाखिले हेतु कम से कम योग्यता बारहवीं रखने का प्रस्ताव दिया न कि मैट्रिक। इस प्रकार इस आयोग ने 10+2+3 की योजना स्वीकार की जिसने शिक्षाविदों एवं प्रशासकों को प्रभावित किया परन्तु इसका क्रियान्वयन केवल उतर प्रदेश में ही हुआ किन्तु वह भी आशिक रुप में। प्रथम उपाधि कोर्स को 3 वर्षीय करने के सम्बन्ध में कोई कदम नहीं उठाया गया और न ही इन्टर कक्षा को व्यवसायिक बनाने का ही कोई प्रयास हुआ।

2. **विश्व-विद्यालय शिक्षा आयोग (University Education Commission 1948-49):-** स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् डा0 सर्वपल्ली राधा कृष्णन के नेतृत्व में गठित विश्व-विद्यालय आयोग ने सुझाव दिया कि स्कूल एवं महाविद्यालय कक्षाओं के लिए समूर्ण देश में 10+2+3 की शिक्षा संरचना अपनाना आवश्यक है। आयोग ने उच्चतर माध्यमिक स्तर को व्यवसायिक बनाने पर बल दिया ताकि इण्टर परीक्षा पास करने के पश्चात् विद्यार्थियों को विभिन्न व्यवसायों की तरफ गोड़ा जा सके जिससे विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों में जाने वाली भीड़ को कम किया जा सके। प्रथम डिग्री कोर्स 3 वर्ष करने के सम्बन्ध में आयोग का सशक्त था कि माध्यमिक स्तर पर गहन तैयारी एवं डिग्री कोर्स में एक वर्ष बढ़ाने के परिणामस्वरुप उच्च शिक्षा का स्तर निश्चय ही ऊंचा उठेगा। परन्तु दुर्भाग्यपूर्ण था कि इस सुझाव को व्यावहारिक रुप न दिया जा सका।

3. **माध्यमिक शिक्षा आयोग (Secondary Education Commission 1952-53):-** माध्यमिक शिक्षा आयोग ने सुझाव दिये कि वर्तमान मध्यवर्ती स्तर को उच्चतर माध्यमिक स्तर में बदल दिया जाना चाहिए. जिसकी समय.अवधि चार वर्ष हो। परन्तु बाद में इस आयोग ने अपने सुझावों में सुधार करते हुए स्कूल और कॉलेज शिक्षा में साधारण आदर्श अपनाए जाने का अनुग्रह किया। यह निर्धारित किया गया आदर्श था। 8+3+3 की शिक्षा। इसका अर्थ था कि मिडल स्कूल शिक्षा के 8 वर्ष उच्चतर माध्यमिक शिक्षा. के तीन वर्षो के साथ जोड दिए जाए। इसके पश्चात् तीन वर्ष प्रथम डिग्री को समर्पित किये जाए। परन्तु यह प्रतिदर्श भी समस्त देश में नहीं अपनाया गया। कम से कम उतर प्रदेश में उपाधि पाठ्यक्रम दो वर्ष का ही रहा।

1. **भावात्मक एकता समिति (Emotional Integration Committee):-** 1962 में डा0 सम्पूर्णानन्द की अध्यक्षता में गंठित भावात्मक एकता समिति के अनुसार स्कूली शिक्षा के

11 वर्ष की अवधि विश्वविद्यालय में प्रदेश के लिए कम है। अतएव इसमें एक वर्ष की अवधि को बढ़ाना चाहिए।

2. **राज्य शिक्षा मंत्रियों की बैठक (Meeting of State Education Ministers):-** 1964 में राज्यों के शिक्षा मंत्रियों की बैठक हुई और उसमें यह निश्चय किया गया कि डिग्री से पहले 12 वर्षीय स्कूल शिक्षा का उद्देश्य समस्त देश के समक्ष होना चाहिए।

3. **कोठारी शिक्षा आयोग (Kothari Education Commission):-** कोठारी शिक्षा आयोग (1964-66) ने सामयिक विचारधारा से प्रभावित होकर 10+2+3 की शिक्षा संरचना की संस्तुति की और उच्च माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा पर बल दिया। इस संस्तुति के परिणामस्वरुप केरल में 10+2+3 की शिक्षा प्रणाली प्रारंभ हो गई।

4. **केन्द्रीय सलाहकार समिति की 33वी बैठक (33rd Meeting of Central Advisory Board):-** अगस्त 1967 में शिक्षा मंत्री डा0 त्रिगुणसेन की अध्यक्षता में नई दिल्ली में होने वाली केन्द्रीय सलाहकार समिति की 33वी बैठक में यह निर्णय लिया गया कि 10+2+3 की शिक्षा पद्धति को 1975 तक लागू किया जाए।

5. **राष्ट्रीय शिक्षा नीति: (National Policy of Education)-** भारत में 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति को स्वतन्त्रता के बाद शिक्षा के इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इस नीति ने भी अधिकतर राज्यों में 10+2+3 प्रणाली को लागू किए जाने का प्रस्ताव स्वीकार किया।

6. **केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड (Central Advisory Board of Education):-** 1972 में केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने यह मत व्यक्त किया कि 10+2+3 की शिक्षा पद्धति को बिना किसी विलम्ब के समूर्ण भारत में लागू किया जाना चाहिए। केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड के 37बे अधिवेशन में जो 4-5 नवम्बर 1974 को प्रो0 नुरुलहस्न की अध्यक्षता में हुई। यह प्रस्ताव पास किया गया कि सलाहकार शिक्षा बोर्ड समस्त भारत में एक जैसी शिक्षा संरचना अर्थात् 10+2+3 की दिशा में होने बाली उन्नति पर संतोष प्रकट करती है। परिणामस्वरुप 1974 में केन्द्रीय शासन ने 10+2+3 पद्धति को अंतिम स्वीकृति दे दी और कुछ राज्यों ने 1975 के शिक्षासत्र से ही इस पद्धति को प्रारंभ कर दिया।

7. **शिक्षा को समवर्ती सूची में शामिल करना (Inclusion of Education in the Concurrent List):-** भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के सामयिक निर्णय से संसद ने शिक्षा को समवर्ती सूची में लेकर 10+2+3 पद्धति के लागू किए जाने की दिशा में संभावित बाधाओं को पूर्णत: नष्ट कर दिया।

8. **राष्ट्रीय शिक्षा नीति (National Education Policy):-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 एक सामान्य शिक्षात्मक ढांचे 10+2+3 की परिकल्पना करती है और समूचे देश में अब इस ढांचे को अपनाया गया है तथा अधिकतर राज्यों द्वारा 10+2+3 की प्रणाली को लागू किया जाना विकास का एक वर्णन योग्य तथ्य है।

6.2 10+2+3 की शिक्षा प्रणाली
(Education Pattern of 10+2+3)

10+2+3 की शैक्षिक संरचना में पहली संख्या 10 की है। 10 से तात्पर्य है कि सभी तथ्यों को 10 वर्ष तक सामान्य रुप से व्यापक शिक्षा दी जाएगी। 10 वर्ष के पाठ्यक्रम में सभी विषय अनिवार्य होंगे। बालकों को सभी विषयों का कुछ न कुछ ज्ञान दिया जाएगा जो उनके जीवन के लिए उपयोग होगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के अनुसार 10 का अर्थ है 5 वर्ष की निम्न प्राइमरी शिक्षा, 3 वर्ष की उच्च प्राइमरी शिक्षा और 2 वर्ष की हाई स्कूल शिक्षा। अब 8 वर्ष की प्राइमरी शिक्षा को ऐलीमेंटरी शिक्षा का नाम दिया गया है।

10 वर्ष के बाद +2 की शिक्षा होगी। इसका अर्थ है 2 वर्ष की उच्चतर सेकेंडरी / सीनियर सैकेडंरी शिक्षा। इस स्तर पर विद्यार्थी के समक्ष दो रास्ते होते है- एक रास्ता व्यावसायिक और औद्योगिक शिक्षा का है और दूसरा अकादमीय शिक्षा (Academic Education) का। इस स्तर पर विषयों का पृथकीकरण एवं विशेषीकरण विद्यार्थियों की रुचि, बुद्धि तथा कार्यक्षमता के अनुसार किया गया है। इस स्तर पर बहुत से विद्यार्थी अपना व्यवसाय अथवा अपने जीवन यापन के लिए कार्य चुन लेते है। यह सभा गया कि केवल अच्छे ग्रेड प्राप्त करने वाले विद्यार्थी ही साधारणतया 3 वर्षीय स्नातक' स्तर की शिक्षा की ओर जाएंगे।

+2 की शिक्षा के बाद 3 वर्ष की महाविद्यालय या विश्वविद्यालय की शिक्षा होगी। इस स्तर के पाठ्यक्रम को भी खान ओर राष्ट्र की आवश्यकतानुसार विस्तृत व गहरा बनाया गया है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. 10+2+3 शिक्षा प्रणाली का सूत्रपात किस आयोग के द्वारा किया गया?
   Which commission has introduced the education structure of 10+2+3?
2. माध्यमिक शिक्षा आयोग के द्वारा किस आदर्श शिक्षा का प्रावधान दिया गया?
   What type of model education was recommended by secondary Education commission?
3. 10+2+3 शिक्षा संरचना से क्या अभिप्राय है?
   What do you mean by education structure of 10+2+3?
4. 10+2+3 शिक्षा संरचना की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर संक्षिप्त नोट लिखिए।
   Write a brief note on the historical background of 10+2+3 education structure.

10+2+3 शिक्षा संरचना की विशेषताएं, आवश्यकताएं एवं उद्देश्य

(Characteristics, Need and Purposes of 10+2+3 Education Structure)

1. शैक्षिक स्तरों में एकरुपता लाना (Bringing uniformity at Education Levels):- उस समय हमारे देश के विभिन्न राज्यों में शिक्षा की विभिन्न संरचना के कारण पाठ्यक्रम तथा शिक्षा के स्तर में विभिन्नता थी। दिन-प्रतिदिन शिक्षा के स्तर का पतन हो रहा था। 10+2+3 की शिक्षा प्रणाली से शिक्षा में विभिन्नता समाप्त हो गयी तथा समस्त भारत वर्ष में दस वर्षीय विद्यालय शिक्षा, दो वर्षीय उच्चतर माध्यमिक शिक्षा तथा तीन वर्षीय स्नातकीय शिक्षा लागू होने से एक निर्धारित राष्ट्रीय स्तर बना जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर के अनुकूल है।

2. शिक्षा संरचना में एकरुपता लाना (Bringing uniformity in Education Pattern):- भारत के विभिन्न राज्यों की शिक्षा संरचना में एकरुपता नहीं थी। एक ओर तो हम राष्ट्रीय एकता की बात करते है तथा दूसरी ओर हमारी शिक्षा संरचना में ही विभिन्नता थी अर्थात किन्हीं राज्यों मे 10+1+3 की शिक्षा संरचना थी तथा कहीं पर 10+2+3 तथा कहीं पर 10+2+2 थी। इसका अभिप्राय है कहीं पर 14 वर्षीय स्नातकीय शिक्षा तथा कहीं पर 15 वर्षीय स्नातकीय शिक्षा प्रदान की जाती। हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, हिमाचल, जम्मू-कश्मीर, और मध्य प्रदेश में 14 वर्षीय स्नातक शिक्षा प्रदान की जाती थी। आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, बिहार, केरल कर्नाटक, महाराष्ट्र, पश्चिमी बंगाल और दिल्ली में 15 वर्षीय स्नातकीय शिक्षा प्रदान की जाती थी। आसाम, नागालैण्ड, मेघालय व अरुणालय में 16 वर्षीय स्नातकीय शिक्षा संरचना थी। 10+2+3 की शिक्षा संरचना से भारत में शैक्षिक बहुरुपियेपन को हटा कर एकरुपता प्राप्त हो गई।

3. व्यावसायीकरण की प्रवृति (Vocational Trend):- 10+2+3 की शिक्षा संरचना से माध्यमिक स्तर से ही व्यावसायीकरण की प्रवृति विकसित होनी आरंभ हो जाती है। इस संरचना में माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम को दो प्रकार से विभाजित किया गया, एक सामान्य-जिसमें गणित एंव विज्ञान सामान्य विषय है तथा दूसरा विशिष्टीकरण के आधार पर जिसमें व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था है। यह +2 स्तर पर लाग की गई। इससे देश के औद्योगिक विकास में सहायता मिली क्योंकि ऐसी शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात विद्यार्थी अपने पैरों पर खडे होने के योग्य बन जाते है और यदि वह आगे की शिक्षा प्राप्त नहीं करना चाहते तो वह अपना व्यवसाय चुन सकते है। इससे बेरोजगारी की समस्या के समाधान में सहायता मिली।

4. कार्य-अनुभव को विशिष्ट स्थान (Special Place to Work Experience):- +2 स्तर पर कार्य अनुभव को विशिष्ट स्थान दिया गया है। 10+2+3 की शिक्षा संरचना को सभी स्तरों पर अनिवार्यत: अपनाने को कहा गया है। कार्य-अनुभव के आधार पर विद्यार्थी शिक्षा की उपयोगिता को समझ सकेगें। इसके परिणामस्वरुप शोषण रहित समाज की स्थापना होगी, राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि होगी, शिक्षा जीवन उपयोगी होगी तथा विद्यार्थियों को अपनी आजीविका ढूंढने में सहायता मिलेगी। यदि इस स्तर पर केवल सामान्य शिक्षा की प्रवृति हो तो इसका सम्बन्ध वास्तविक परिस्थितियों से नही होता तथा शिक्षण भी नीरस बनता है, जिससे विद्यार्थियों में शिक्षा के प्रति रुचि विकसित नहीं होती है।

5. विद्यार्थियों की रुचि एवं योग्यताओं के अनुसार शिक्षा व्यवस्था (Education in accordance with interests and abilities of the pupils):- आज का युग एक ओर तो मनोवैज्ञानिक उन्नति व विकास का युग हैं तथा दूसरी ओर आर्थिक तनाव व वैश्वीकरण का। इसलिए ऐसी परिस्थितियों के लिए आवश्यक था कि शिक्षा इस प्रकार की होनी चाहिए जिससे विद्यार्थियों के समय का सदुपयोग हो और वे अपनी रुचि प्रवृत्ति, क्षमता एवं योग्यता के अनुसार ज्ञान एवं कार्यकुशलता प्राप्त कर सके। 10+2+3 की शिक्षा पद्धति इस उद्देश्य को पूरा करती है। इस पद्धति में विद्यार्थी नौवीं कक्षा में ही अपनी रुचियों के अनुसार विषय चुनते है एवं ग्याहरवीं कक्षा में जाकर अपनी योग्यता, क्षमता, रुचि आदि के अनुसार पाठ्यक्रम का चयन करते है। इस स्तर पर यदि वे व्यवसायिक प्रशिक्षण की ओर जाना चाहते है तो इसकी भी व्यवस्था है, जो उनकी रुचि एवं क्षेत्रीय व्यवस्था के अनुसार होगा। 12वीं कक्षा के पश्चात विद्यार्थी जीवन क्षेत्र में प्रवेश कर सकते है और उसके बाद भी अपनी रुचि व क्षमता कें अनुसार अग्रिम शिक्षा औपचारिक या निरौपचारिक रुप में प्राप्त कर सकते है।

6. उच्च शिक्षा की अवांछनीय भीड़ को रोकना (check on undesirable rush in higher education):- 10+2+3 संरचना से उच्च शिक्षा संस्थाओं की अवांछनीय भीड़ को रोकने में, सहायता मिली क्योंकि इस शिक्षा संरचना में परीक्षा-बिन्दु अधिक है और कोई भी विद्यार्थी रोजगार मिलने पर सामान्य शिक्षा की धारा को छोड़ सकता है।

7. भावनात्मक एकता का विकास (development of emotional integration):- भारत एक विशाल देश हे। इसमें अनेकता में एकता निहित है। यहां विभिन्न भाषाएं, धर्म, संस्कृतियां, परम्परा, वेशभूषा तथा मान्यताएं देखने को मिलती है। अत: भारत में एक राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति के परिणामस्वरुप क्षेत्रीय सुविधाओं तथा व्यवसायों को ध्यान में रखकर सम्पूर्ण देश के लिए एक जैसा पाठ्यक्रम अपनाया जाता है। जब सभी विद्यार्थी एक जैसा पाठ्यक्रम पढ़ते हैं तो निश्चित रुप से इससे भावनात्मक तथा राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा मिलता है।

8. बौद्धिक परिवक्ता (intellectual maturity)- भारत मे दसवीं कक्षा पास करने के पश्चात विद्यार्थियों के समक्ष जीवन का कोई उद्देश्य नही होता। यदि विद्यार्थियों को उच्च माध्यमिक अर्थात् 12वीं श्रेणी पास करने के पश्चात निर्णय लेने को कहा जाए तो उनके पास अनेक दिशाएँ होती है, जिनमें दे जा सकते हैं। वे अधिक परिपक्व तथा सशक्त हो जाते है। इस प्रकार बौद्धिक परिपक्वता वैयक्तिक जीवन, व्यावसायिक कार्यक्रम तथा उच्च शिक्षा के विषयों के चयन में विद्यार्थियों को अधिक सफलता प्राप्त करने के अवसर प्रदान करती है।

इस प्रकार 10+2+3 की शिक्षा संरचना से देश के विभिन्न राज्यों. में शिक्षा के जो विभिन्न ढांचे खड़े थे, वे सर्वत्र समान हो गए जिससे स्थानान्तरण आदि विशेष परिस्थितियों में किसी प्रकार की असुविधा से मुक्ति मिल गई। इससे अधिक से अधिक लोगों को अपने मनोनुकूल व्यवसाय के चयन में, सुविधा तथा उसमें दक्षता प्राप्त करने के अवसर प्राप्त होगें। साधन सुविधाओं की दृष्टि से स्थानीय साधन सुविधाओं का अधिकतम उपयोग होने लगा। अनुशासन की दृष्टि से असंतोष है अनुशासनहीनता को जन्म देता है और जब शिक्षितों में. असंतोष कम हो जाएगा तो निर्दिवाद रुप से अनुशासनहीनता की समस्या का भी काफी हद तक

समाधान हो जाता है। कार्य-कुशलता को दृष्टि से मनोनुकूल कार्य ही कार्य-कुशलता को बढ़ावा देता है और +2 की शिक्षा का उद्देश्य भी विद्यार्थियों में मनोनुकूल शिक्षा के चयन में सहायता प्रदान करके उनकी कार्य-कुशलता को बढ़ावा देना है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. भारत में शिक्षा संरचना में एकरुपता से क्या अभिप्राय है ?
   What is the meaning of uniformity in educational pattern in India?
2. +2 स्तर पर कार्य- अनुभव की क्या भूमिका है
   What is the role of work experience at 10+2 level?
3. उच्च शिक्षा की अवांछनीय भीड़ को रोकने में +2 स्तर की शिक्षा किस प्रकार उतरदायी है?
   How +2 level education is responsible to check the undesirable rush in higher education?
4. +2 स्तर की शिक्षा औद्योगिक विकास में कैसे योगदान देगी?
   How +2 level education will be helpful in industrial development ?

6.3 10+2 पद्धति में पाठ्यक्रम (Curriculum in 10 +2 system)

माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम (curriculum at secondary stage):- शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित पुस्तिका में माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम की विवेचना इस प्रकार की है:-

विषय		कालांश (सप्ताहिक)
1. एवं 2 दो भाषाएं		12
3.	गणित	7
4.	(अ) भौतिक	
	(व) रसायन शास्त्र	7
	(स) प्राणी शास्त्र	
5.	(अ इतिहास और नागरिक	
	व भूगोल, अर्थशास्त्र एवं	7
	वाणिज्य शास्त्र	
6.	कार्यानुभव समुदाय सेवा	6
7.	स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा	3

8. पाठ्यक्रमंतर क्रियाएं और अन्य 3

योग=45

10+2+3 शैक्षिक ढांचे के अंतर्गत माध्यमिक स्तर (कक्षा 9 तथा 10 के लिए) पाठ्यक्रम में विभिन्न विषय इस प्रकार है:-।

1. तीन भाषाएं- दो अनिवार्य भाषाएं तथा तृतीय ऐच्छिक भाषा
2. गणित
3. सामान्य विज्ञान- भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान
4. सामाजिक विज्ञान- इतिहास, नागरिक शास्त्र, भूगोल, अर्थशास्त्र (वाणिज्य भी सम्मिलित)
5. कार्यानुभव
6. स्वास्थ्य, शारीरिक शिक्षा तथा पाठ्येतर क्रियाएं
7. ललित कलाएं

उच्चतर माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम (Curriculum at Higher secondary stage)

1. कोई दो भाषाएं
   i) आधुनिक भारतीय भाषा
   ii) आधुनिक विदेशी भाषा और प्राचीन पाश
2. कार्य-अनुभव और समाज सेवा
3. स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा
4. कला या शिल्प
5. नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा
6. अंग्राकित विषयों में से तीन विषय
   1. एक अतिरिक्त भाषा
   2. इतिहास
   3. भूगोल
   4. अर्थशास्त्र
   5. मनोविज्ञान
   6. तर्कशास्त्र
   7. समाज विज्ञान
   8. कला
   9. भौतिकी
   10. रसायन
   11. गणित
   12. जीव-विज्ञान
   13. भू-विज्ञान

14. गह-विज्ञान

अधिकार निर्धारण हेतु कार्यशाला

(workshop for the determination of weightage)

राज्य शिक्षा संस्थान (मध्यप्रदेश) में 24 नवम्बर से 11 दिसम्बर तक एक कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें 15 स्थानीय माध्यमिक शालाओं के शिक्षकों ने भाग लिया। इस कार्यशाला का उद्देश्य कक्षा 8 तक पाठ्यक्रम को शिक्षण-इकाईयों में विभाजित करना था। इस हेतु एक वर्ष में 200 कार्यकारी दिवस माने गए। 10+2 की शिक्षा के अंतर्गत पाठ्यक्रम में निर्धारित विषयों में से प्रत्येक को कितना अधिकार दिया जाए, इस बिन्दु पर विचार-विमर्श किया गया। इस कार्यशाला द्वारा निर्धारित प्रतिशत निम्नलिखित सारणी में दर्शाया गया है।

विषय		कक्षा (प्रतिशत में) 9-10
1.	भाषा	25
2.	गणित	15
3.	सामाजिक अध्ययन	15
4.	विज्ञान	20
5.	कार्यानुभव	13
6.	शारीरिक शिक्षा	12
		कुल =100

10+2 कार्यानुभव का पाठ्यक्रम

(work- experience curriculum in 10+2)

कार्यानुभव का उद्देश्य विद्यार्थी में ऐसी क्षमता का विकास करना है, जिससे वह अपने घर, स्कूल एवं समाज के उपयोगी कार्य में सक्रिय भूमिका निभा सके। इस हेतु अंग्रकित महत्वपूर्ण क्षेत्रों का चयन किया गया:-

1. कृषि पर आधारित (based on agriculture):- कृषि, उद्यान-विज्ञान (बागवानी) खाद्य-संरक्षण दुग्ध उत्पादन-निर्माण (डेयरी फार्मिग) मधुमक्खी पालन एवं मत्स्य पालन।

2. विज्ञान एवं उद्योग पर आधारित (based on agriculture and industry):- विद्युत सेवा, रेडियों सुधार, सरल वैज्ञानिक उपकरण-निर्माण, लुहारगिरी, सिलाई छपाई (कपडे की छपाई एवं रंगाई) साबुन-निर्माण, बिस्कुट बनाना, काष्ठकला, कताई आदि।

3. ललित कला पर आधारित (based on fine art):- संगीत, चित्रकला, नृत्य, फोटोग्राफी, बुनाई-कढाई, पुतली-निर्माण (गुड़िया बनाना)

4. सेवा पर आधारित (based on service):- पाक-शास्त्र (भोजन बनाना) मातृ-शिल्प, स्काउटिंग एवं गाइडिंग, सामाजिक सेवा, प्राथमिक चिकित्सा, परिचर्चा, शाला-जलपान व्यवस्था, सहकारी विक्रय-केन्द्र आदि।

कार्यानुभव की सूची अत्यन्त विशाल है और इस सूची में समय-समय पर देश की आर्थिक और औद्योगिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर अन्य विषय भी सम्मिलित किए जा सकते है। स्कूल स्तर पर इन विषयों में कोई लिखित परीक्षा नहीं होगी, केवल कार्यानुभव कराया जाएगा। इनका मूल्यांकन आन्तरिक होता है।

6.4 माध्यमिक शिक्षा (secondary Education)

शिक्षा को औपचारिक रुप से दो भागों में बांट सकते है। स्कूल की शिक्षा तथा महाविद्यालय या विश्वविद्यालय की शिक्षा जिसे हम उच्च शिक्षा भी कहते है। स्कूल स्तर की शिक्षा के तीन स्तर है। पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च स्तर। माध्यमिक शिक्षा किशोरावस्था में दी जाती है। ऐसे विद्यालय जो किशोरों को शिक्षा देने का प्रबन्ध करते है उन विद्यालयों को माध्यमिक शिक्षा विद्यालयों के नाम से जाना जाता है। माध्यमिक शिक्षा पूर्ण रुप से अध्ययन से सम्बन्धित हो सकती है या व्यवसायिक अथवा दोनों का मिश्रित रुप भी हो सकती है। 1960 के बंगाल माध्यमिक शिक्षा के अधिनियम के अनुसार माध्यमिक शिक्षा से अभिप्राय उन बालकों की शिक्षा से है जो प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर चुके है और उसमें साधारण, तकनीकी, औद्योगिक कृषि सम्बन्धी और व्यापारिक शिक्षा सम्मिलित है।

माध्यमिक शिक्षा किसी विशेष प्रकार की शिक्षा नहीं अपितु यह तो स्कूल की शिक्षा का उच्च स्तर हे। आज समूर्ण भारतवर्ष में 10+2 की माध्यमिक शिक्षा का प्रावधान है।

माध्यमिक स्तर की विशेषताएं

(characteristics of the secondary stage)

जैसा कि उपरोक्त चित्र में दर्शाया गया है कि माध्यमिक स्तर की निम्नलिखित विशेषताएँ है।

1. संवेदनशील स्तर (sensitive स्टेज):- इस स्तर की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है कि इसमें विद्यार्थी का मस्तिष्क एवं शरीर दोनों ही परिपक्व हो जाते है। यही वह स्तर है जिसमे अमूर्त चिन्तन तथा तर्क के विकास को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। इसी स्तर पर ही विद्यार्थी अपने भावी जीवन की शिक्षा का लक्ष्य निर्धारित करते हैं। इसी प्रकार आत्म विज्ञान, आत्म-अनुभूति आदि गुणों का विकास होता है जिसके परिणामस्वरुप विद्यार्थी अपने व्यक्तित्व की पहचान करता है। उसकी रुचियों का पता चलता हे तथा आदर्शो का निर्माण होता है। इसी स्तर पर विद्यार्थी अपनी पसन्द-नापसन्द, प्रतिक्रियाएं तथा खोजें दर्शाते हैं तथा साथियों के

समूह का प्रभाव सुदृढ होता है। प्रौढ व्यक्तियों के व्यवहार, अदाओं, भूमिकाओं की नकल करने की प्रवृति का विकास होता है। पूर्व स्थापित विचारों प्रक्रियाओं की ओर यह चुनौतीपूर्ण दृष्टि से देखता है। अधिगम की रुचियां तथा अभिवृतियाँ स्थिरता की ओर बहने लगती हे। जिससे अधिगमकर्ता में भविष्य के व्यावसायिक स्तर की क्षमता का आधार विकसित होने लगता है। भविष्य के प्रति उनमें उत्सुकता बढ़ने लगती है। इस स्तर पर परामर्श तथा निर्देशन की अत्याधिक आवश्यकता होती है।

2. अधिकतम चुनौतियों का स्तर (the stage of maximum challenge):- उच्च माध्यमिक स्तर विभिन्न ढंगों में प्रामाणिक स्तर है। यह स्तर अत्याधिक चुनौतियों का स्तर है। वास्तव में, इस स्तर पर आवश्यकताओं तथा अभिरुचियों से अधिक, विद्यार्थियों की उपलब्धि तथा जागरुकता को अधिक महत्व दिया जाना आवश्यक है क्योंकि इन्हीं पर उनका भविष्य निर्भर करता है। विद्यार्थियों व उनके अमिभावकों के मस्तिष्क में इस स्तर पर यही प्रतिक्रिया चलती रहती है कि इस स्तर के पश्चात् उन्हें व्यवसाय के लिए जाना चाहिए या अपनी प्राथमिकता /रुचि के अनुसार आगे पढ़ाई का चयन करना चाहिए। यह उत्सुकता व दबाव का कारण बनता है और इससे सावधानीपूर्वक, बनाई गई योजना से बचा जा सकता है तथा उनके लिए उपयुक्त पाठ्यक्रमों का निर्माण किया जा सकता हैं जो उनके भविष्य के लिए उपयोगी हो। सामान्य तौर पर विद्यार्थी जनसंख्या का एक छोटा सा भाग ही सेवा स्तर तक पहुंच पाता है। इन्हीं में से ऐसे विद्यार्थी निकलते है जो नेता / मुखिया के रुप में उदीयमान होते हे। इन व्यक्तियों की गुणवता उनके आधार पर निर्भर करती है जो उन्हें प्रांरभिक स्तर पर अर्थात उच्च माध्यमिक स्तर पर प्रदान किया जाता है। जिसके परिणामस्वरुप जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी रहने वाले व्यक्ति प्राप्त होते है। उन्हीं से यह आशा की जाती है कि वे कृषि, उद्योग, व्यवसाय तथा अन्य विभिन्न सामाजिक सेवाओं में विकासात्मक प्रयत्नों के रुप में अर्थपूर्ण योगदान देंगे। इस स्तर पर रोजगार के अवसर बहुत कम मात्रा में प्राप्त होते है। इसलिए इस स्तर पर विद्यार्थियों को आधारभूत ज्ञान, कौशलों अभिवृतियों तथा उद्यमी के गुणों से युक्त रहना चाहिए जिससे वे यदि रोजगार उपलब्ध न हो तो वे स्व-रोजगार के लिए प्रेरित हो सकें।

विविधता एवं लचीलापन (diversification and flexibility)

युवावस्था में विद्यार्थियों की विभिन्न आवश्यकताओं एवं क्षमताओं के अनुरुप माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम की प्रमुख विशेषताएं विभिन्नता तथा लचीलापन होना चाहिए। इस उतर तक पहुंचतेपहुंचते विद्यार्थियों की रुचियों एवं अभिवृतियों लगभग स्थिर / निश्चित हो जाती है, इसीलिए उनकी प्राथमिकताओं एवं रुचियों के अनुसार ही उन्हें अपनी पढ़ाई का आगे बढ़ाने के अवसर प्रदान किए जाने चाहिए। इस स्तर पर पाठ्यक्रम में विभिन्न विषयों के इसलिए भी सम्मिलित किया जाना चाहिए कि विद्यार्थी अपनी रुचियों व क्षमताओं के अतिरिक्त समय की मांग के अनुसार विषयों का चयन कर सके। समय के साथ-साथ इस स्तर पर विषयों में परिवर्तन किया जाना आवश्यक है।

केन्द्रीय परामर्श शिक्षा बोर्ड तथा माध्यमिक शिक्षा की विशेषताएँ

(central advisory board of education and characteristics of secondary education)

माध्यमिक शिक्षा का आयु स्तर 15 से 16 तथा उच्च माध्यमिक स्तर का 17 से 18 तक प्रसारित होता है। यह स्तर युवावस्था का स्तर होता है। यह स्तर अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है क्योंकि यही से विद्यार्थी के भविष्य के जीवन का आधार निश्चित होता है तथा यही से उसका जीवन एक नया मोड लेता है। इसी स्तर पर उसकी शारीरिक संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन आते है और वह प्रौढ़ के रुप में विकसित होने लगता है। उसके जीवन का प्रारुप बदलने लगता है। बुद्धि के विभिन्न सिद्धांत भी इस तथ्य को दर्शाते है कि इस स्तर पर बुद्धि का विकास लगभग स्थायी हो जाता है, यद्यपि नवीन वंशज अनुसंधान यह संकेत देते है कि बुद्धि का विकास इस स्तर के बाद भी संभव है। बहु वृद्धि के दृष्टिकोण से भी इस स्तर को महत्वपूर्ण माना जाता है। क्योंकि इस स्तर पर क्षमताओं का विकास अत्यन्त तेजी से होता है। बचपन की आवाज परिवर्तित होती है तथा उसे स्थामित्व मिल जाता है, अधिकतर खिलाडी इस स्तर पर अपने खेल का उत्कृष्ट प्रदर्शन करते है। यह संवेगात्मक परिवर्तन तथा परिपक्वता का भी स्तर होता है। इसीलिए माध्यमिक शिक्षा को आवश्यक रुप में युवाओं की शिक्षा होना चाहिए। परिवर्तन स्थायित्व की आवश्यकता के अनुसार स्कूल के अनुभव प्राप्त होने चाहिए। इसी स्तर पर ही अधिकतर विद्यार्थी शिक्षा से कार्य के संसार में प्रवेश करते है इसलिए इस काम में परिवर्तन का स्तर भी माना जाता है। माध्यमिक शिक्षा के द्वारा परिवर्तित करने के कौशलों का भी विकास किया जाना चाहिए।

यद्यपि लडके तथा लड़कियां दोनों ही परिवर्तन का अनुभव करते है परन्तु लड़कियों की और विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। कुछ सामाजिक रुढिवादिताओं, रुकावटों तथा अन्धविश्वासों के परिणामस्वरुप लड़कियों के लिए परिवर्तन का स्तर अत्यन्त कठिन होता है। देश के अधिकतर भागों में अभी तक बाल विवाह की प्रथा जारी है। इसलिए यह प्रथा उनकी पढ़ाई के लिए एक रोड़े का काम करती है। इसलिए माध्यमिक स्तर की शिक्षा का पाठ्यक्रम लैंगिक रुप में मैत्रीपूर्ण होना चाहिए।

स्वमूल्यांकन

(self evaluation questions)

1. कक्षा 9 तथा 10 के लिए किस प्रकार के पाठ्यक्रम का सुझाव दिया गया है ?
   What type of curriculum is suggested for class 9 and 10?
2. उच्च माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम में क्या - क्या सम्मिलित होना चाहिए ?
   What should includeद in the curriculum at higher secondary stage?
3. उच्च माध्यमिक स्तर पर कार्य- अनुभव के पाठ्यक्रम में क्या - क्या शामिल होना चाहिए ?
   What should be included in the work- experience curriculum at higher secondary stage ?
4. माध्यमिक स्तर की शिक्षा की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

Explain the different characteristics of education at secondary stage.

5. केन्द्रीय परामर्श शिक्षा बोर्ड ने माध्यमिक शिक्षा की क्या विशेषताएँ दी है?, what characteristics of secondary education at secondary education are given by CABE?

6.5 माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता (quality of secondary education)

शिक्षा की गुणवत्ता कुछ मानव संसाधनों (human resource) जैसे संस्थान का मुखिया, अध्यापक, विद्यार्थी, अभिभावक और प्रबंधन तथा भौतिक संसाधनों जैसे-विद्यालय भवन व पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियाँ, प्रशासन, मूल्यांकन, पाठ्य-पुस्तकें तथा निर्देशन एवं परामर्श पर निर्भर करती है। संकुचित विचारधारा में शिक्षा की गुणवता का निर्धारण परीक्षा परिणाम के आधार पर किया जाता है। किसी भी संस्था से बाहर निकलने वाले विद्यार्थियों की गुणवत्ता को निम्नलिखित चरों के आधार पर मापा जा सकता है:-

1. ग्रेड के आधार पर पास होने वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत
2. अपव्यय तथा स्थिरता का स्तर।
3. पास होने बाले विद्यार्थियों की कमाने की क्षमता।
4. पाठ्य-सहगामी क्रियाओं जैसे खेल-नाट्कीयकरण वाद-विवाद आदि के क्षेत्र में विद्यार्थियों की उपलब्धि।
5. अच्छी प्रतिष्ठा वाली संस्थाओं या व्यवसायों में विद्यार्थियों का प्रवेश आदि।

गुणवत्ता के आधार पर कोई भी विद्यालय या अभिभावक भावी नागरिक को निम्नस्तरीय शिक्षण स्टाफ, नीरस और गैर चुनौतीपूर्ण शैक्षिक व्यवस्था और कार्यक्रमों के अन्तर्गत रहने देने का जोखिम नहीं उठा सकता। यदि विद्यार्थियों के समरुप समूहों को समान स्तर की सुविधाएँ विभिन्न संस्थाओं में प्रदान की जाए तो वही संस्था दूसरी संस्थाओं से उत्कृष्ट होगी जिसमें कुशल व योग्य अध्यापक अपने व्यावसायिक उत्तरदायित्वों से परिपूर्ण होंगे। माध्यमिक स्तर पर गुणवत्ता को निम्नलिखित आधार पर मापा जा सकता है:-

स्टाफ की गुणवत्ता (quality of the staff):-

1. स्वीकृत अध्यापकों का सामाजिक ब वित्तीय स्तर।
2. असमानताओं को दूर करने का प्रयास जैसे लिंग के आधार पर असमानता आदि।
3. योग्यता के सिद्धान्त पर आधारित स्टाफ का प्रबन्धक।
4. परिवर्तनशील समाज में अपनी भूमिका को निभाने का उतरदायित्व पूरा करने के लिए सेवाकालीन प्रशिक्षण प्रदान करना।
5. अन्त: अनुशासित विषयों में अनुसंधान के अवसर प्रदान करने की अवस्था प्रदान करना।

पाठ्यक्रम की गुणवत्ता (quality of curricula):-

1. समाज की आवश्यकताओं तथा कार्य के विश्व के अनुरुप प्रदान किए जाने वाले प्रशिक्षण के उद्देश्यों को परिभाषित कराने में विशेष ध्यान देना।
2. विद्यार्थियों को अधिक क्रियाशील बनाने के लिए तथा उनमें उद्यमी प्रवृति का विकास करने के लिए शिक्षण विधियों को अपनाना।
3. प्रशिक्षण में विस्तार तथा अत्याधिक लचीलापन जिससे वे सूचना प्रौद्योगिकी के द्वारा प्रदान की जाने वाली संभावनाओं का पूर्ण उपयोग कर सके।

विद्यार्थियों की गुणवत्ता (quality of the student):-

1. विद्यार्थियों की गुणवता (योग्यताएं व अभिप्रेरणा) की कसौटी के प्रकाश में उनकी समस्याओं पर विशेष ध्यान देना।
2. व्यक्तित्व के सर्वोतम विकास में अध्यापक द्वारा सहायता प्रदान करना।
3. विद्यार्थियों को स्व-अनुशासित, समर्पित व अच्छे नागरिक बनाना।
4. निम्न माध्यमिक शिक्षा तथा उच्च माध्यमिक शिक्षा में सामान्जस्य स्थापित करना क्योंकि शिक्षा एक अटूट कड़ी है।
5. प्रवेश नियमित करना।

भौतिक संसाधनों के संदर्भ में गुणवत्ता (quality with reference to physical resources):-

1. माध्यमिक शिक्षा प्रदान करने वाला विद्यालय विभिन्न भौतिक सुविधाओं जैसे सभा भवन, व्यायामशाला, प्रशासकीय कार्यालय, कक्षा कक्ष, भंडार राह आदि से मुक्त होना चाहिए।
2. सु-सामग्री युक्त पुस्तकालय तथा पठन कक्ष को प्रावधान।
3. सुसज्जित कम्पयूटर प्रयोगशालाओं की स्थापना।
4. बहु-प्रयोजन कक्ष की व्यावस्था।
5. सुसज्जित विषय-कक्षों की व्यवस्था।
6. पाठ्य-"सहगामी क्रियाओं का प्रावधान।
7. सुसज्जित विज्ञान प्रयोगशालाओं का प्रावधान।

शिक्षण विधियों संबंधी गुणवत्ता (quality in relation to teaching method):-

1. क्रिया और परियोजना विधि का प्रभावी उपयोग।
2. विवरण पर बल देने की अपेक्षा प्रयोग को प्रोत्साहन।
3. स्पष्ट चिंतन व स्पष्ट अभिव्यक्ति के विकास पर बल।
4. मनोवैज्ञानिक व विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षण विधियों के प्रभावी का प्रावधान।
5. स्थानीय रुप से उपलब्ध या तत्काल रचित शिक्षण सहायक सामग्री के प्रयोगों का प्रावधान।

उपरवर्णित यदि सभी तथ्यों पर ध्यान दिए जाए तो सामान्य रुप से यह प्रदर्शित होता है कि राज्य द्वारा चलाए जाने वाले स्कूलों की गुणवत्ता पब्लिक स्कूलों की अपेक्षा अत्यन्त निम्न है। विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948-49) ने भी यही कहा था कि माध्यमिक शिक्षा भारत की शिक्षा संरचना में सबसे कमजोर कड़ी है। आज भी यही सत्य है। यह देखने में आता है कि

माध्यमिक शिक्षा पूरी करने के पश्चात् भी विद्यार्थियों में इकट्ठे रहने की कला का विकास नहीं होता, वे जो माध्यमिक शिक्षा के पश्चात् अपनी शिक्षा को निरंतर नहीं करते वे शिक्षा प्रणाली द्वारा निर्धारित लक्ष्यों के अनुराप अपनी भूमिका निभाने में समर्थ नहीं होते। वे किसी भी भाषा का उचित प्रयोग करने में सक्षम नहीं होते।

माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता निम्न होने के कारण

(causes of low quality of secondary education)

1. माध्यमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम चुनौतीपूर्ण नहीं है।
2. यह अत्याधिक पुस्तकीय व सैद्धान्तिक है।
3. इसमें परीक्षा प्रणाली पर अधिक बल दिया जाता है।
4. यह पर्याप्त रुप से विद्यार्थियों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं को पूरा नहीं करती है।
5. अधिकतर स्कूलों में अध्यापकों की कमी पाई जाती है।
6. +2 स्तर की कक्षाओं को पढ़ाने वाले अध्यापकों के लिए किसी विशेष प्रशिक्षण प्रणाली का प्रावधान नहीं है।
7. इस स्तर पर संचरण व सूचना तकनीकी का प्रयोग बहुत कम किया जाता है।
8. प्रशासन पद्धति लोकतांत्रिक व प्रभावी नहीं है।
9. इस स्तर को केवल महाविद्यालय में प्रवेश की कड़ी माना जाता है।
10. अत्याधिक माध्यमिक स्कूलों में भौतिक संसाधनों की कमी पाई जाती है।
11. संख्यात्मक उपलब्धि पर अधिक बल दिया जाता है।
12. शिक्षा के उद्देश्यों तथा लक्ष्यों को समाज की बदलती हुई परिस्थितियों व आकांक्षाओं के अनुसार परिवर्तित नहीं किया जाता।

माध्यमिक शिक्षा की गुणवता में सुधार

(Improvement in the Quality of Secondary Education)

ज्ञान का विस्तार अधिक तीव्र गति से हो रहा है। इसके साथ-साथ भारत में जनसंख्या भी निंरतर गति से बढ़ रही है, जो देश के विकास के लिए खतरा बनती जा रही है। ज्ञान विस्फोट' और 'जनसंख्या विस्फोट' के साथ एक अलग विस्फोट हो रहा है जिसे 'आशा विस्फोट' कहा जाता है। अर्थात् लोग शिक्षा में अधिक से अधिक गुणवत्ता चाहते है। वैश्वीकरण की आवश्यकताओं के अनुरुप माध्यमिक शिक्षा में परिवर्तन किया जाना चाहिए। इस प्रकार प्रतियोगी मांगों के अनुरुप शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर संतुलन की आवश्यकता है। माध्यमिक शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिए समय-समय पर विभिन्न शिक्षा आयोगों, समितियों व शिक्षा शास्त्रियों ने प्रभाव किए। उन्हीं के आधार पर इसमें गुणात्मक व संख्यात्मक सुधार के लिए निम्नलिखित सुझाव है:-

1. **राज्य द्वारा संचालित स्कूलों में पर्याप्त सुविधाओं तथा उनके शैक्षिक स्तर में विकास का प्रावधान (Provision Of Adequate Facilities in State Managed Schools and Rise in their Educational Standards):-** कोठारी आयोग के द्वारा समान स्कूल पद्धति की सिफारिश की गई थी, उसी आधार पर स्थानीय प्रशासकों तथा निजी संगठनों द्वारा

चलाए गए स्कूलों में तथा राज्य सरकार द्वारा चलाए गए स्कूलों में एकीकरण होना चाहिए जिसके अंतर्गत सभी संस्थानों में शैक्षिक संस्थाओं की सफल कार्यप्रणाली के लिए आवश्यक न्यूनतम व्यवस्थाएं प्रदान की जाएं। उदाहरण के लिए प्रत्येक संस्था अपने स्थानीय समुदाय से आन्तरिक रुप से संबंधित होनी चाहिए। प्रत्येक को वैयक्तिक रुप से समझा जाना चाहिए व पर्याप्त स्वतन्त्रता प्राप्त होनी चाहिए। प्रत्येक स्कूल को अपनी क्षमता के अनुसार विकसित होने के अवसर मिलने चाहिए तथा इसके लिए प्रबन्धकों, अभिभावाकों, अध्यापकों, विद्यार्थियों एवं विभिन्न विभागों को मिल जुलकर योजना बनानी चाहिए। प्रत्येक संस्था के लिए पर्याप्त वित्तीय समर्थन होना चाहिए जिससे वह विद्यार्थियों के प्रति उतरदायित्व को पूरा कर सके। '

2. **गतिशील तथा प्रगतिशील शिक्षण विधियाँ (Dynamic and Progressive Methods of Teaching)** शिक्षा की आदर्श पद्धति में सही या उचित विधियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण है। विधि एक माध्यम कार्य पद्धति है जिसका अनुसरण अध्यापक अधिगम को रोचक, सरल व प्रभावी बनाने के लिए करता है। यह विद्यार्थियों के एक समूह के साथ अधिगम की योजना बनाने और उसका मूल्यांकन करने की प्रक्रिया है। शिक्षण की प्रभावी विधि के महल पर बल देते हुए माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा निम्नलिखित टिप्पणी की गई है। सर्वश्रेष्ठ पाठ्यक्रम और अत्याधिक परिपूर्ण पाठ्यक्रम भी तब तक निर्जीव रहता है जब तक कि शिक्षण की सही विधियों और सही प्रकार के अध्यापकों द्वारा इसे सजीव न बनाया जाए। इसलिए शिक्षण की नवीन तकनीकों को अपनाने की अत्यधिक आवश्यकता है। अपने प्रयत्नों से किस प्रकार सीखा जाए, इस बात पर बल देना चाहिए। शिक्षण विधियाँ व्यक्तिगत विभिन्नताओं, क्रिया द्वारा सीखने तथा स्वतन्त्रता के सिद्धांत पर आधारित होनी चाहिए।

3. **अधिक मात्रा में केन्द्रीय तथा नवोदय' विद्यालय (More Central and Navodaya Schools):-** यह देखा गया है कि ये योजनाएं अच्छी गुणात्मक शिक्षा प्रदान करने में अत्याधिक सहायक सिद्ध हुई है जबकि राज्य सरकार द्वारा चलाए जाने वाले स्कूलों में गुणात्मक शिक्षा प्रदान नहीं की जाती।

4. **संगठनात्मक प्रबंधक (Organizational Management):-** स्कूल इकाई, स्कूल प्रांगण और सदस्यों सहित संस्थागत योजना का विचार, माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति प्रणाली को संभव कर सकता है। यहां तक कि संस्था का आकार, भौगोलिक स्थिति, सामूहिक भागीदारी ये सभी गुणवत्ता को सुदृढ़ करने में सहायता करने के लिए इक्कठे आगे रहते है।

5. **मूल्यांकन प्रणाली (Evaluation System):-** माध्यमिक शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने के लिए मूल्यांकन की विधियों में सुधार करना अत्यन्त आवश्यक है। अगर हम परम्परागत मूल्यांकन की विधियों पर निर्भर करते है तो हम माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता की बात सोच भी नहीं सकते। इसके लिए हमें पुरानी विधियों को छोड़कर नवीन विधियों को अपनाना होगा। मूल्यांकन को अधिक से अधिक चुनौतीपूर्ण तथा वस्तुनिष्ठ बनाना चाहिए।

6. **जीवन से संबन्धित शिक्षा (Life Related Education):-** माध्यमिक शिक्षा पूरी करने के पश्चात् सभी को नौकरी प्रदान करना मुश्किल होता है। इसलिए शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो प्रदान की गई जानकारी एवं निपुणताओं के आधार पर स्वरोजगार के लिए प्रेरणा प्रदान कर सके। प्रश्न यह उठते है कि हमारा पाठ्यक्रम कहां तक इन जरुरतों की पूर्ति करता है? क्या यह

विभिन्नतापूर्ण है? क्या यह एक समान है? किन कदमों को उठाया गया है? अभी भी किस क्षेत्र में परिवर्तन की अधिक आवश्यकता है?

7. **अध्यापकों की सेवा शर्तो में कोई विभेदीकरण नहीं (No Discrimination in Teachers Service):-** सबसे पहले अध्यापकों को यह विश्वास दिलाया जाना चाहिए कि वे सरकारी अथवा सरकार सहायता प्राप्त किसी भी प्रकार की संस्था में कार्य करें, उनमे कोई विभेदीकरण नहीं होगा जो आज की प्रशासनिक व्यवस्था की सबसे बड़ी कमी पाई जाती है। इसके लिए निम्नलिखित कदम उठाए जाने चाहिए।

- विभिन्न संगठनों के अन्तर्गत कार्य कर रहे अध्यापकों में समानता का व्यवहार होना चाहिए।
- समान शिक्षा तथा उतरदायित्वों वाले अध्यापकों को समान वेतन मिलने का प्रावधान होना चाहिए।
- सभी अध्यापकों के लिए सेवानिवृत्ति लाभ की समान प्रणाली होनी चाहिए।
- विभिन्न प्रबंधनों के अंतर्गत सेवा तथा कार्य की शर्ते समान होनी चाहिए।
- विभिन्न वर्गो की संस्थाओं में अध्यापकों की नियुक्ति की प्रणाली समान होनी चाहिए।

8. **कक्षा कक्ष (Classrooms)-** स्कूलों में अधिक भरे हुए कक्षा-कक्ष पाए जाते है जिसमें सहयोगी सुविधाएं बहुत कम मात्रा में होती है। अधिकतर स्कूलों में विद्यार्थी अनुपात की आदर्श संख्या 1 : 35 या 1:40 होती है, परन्तु वर्तमान समय में किसी भी प्रकार का स्कूल इस अनुपात व्यवस्था को पूरा नहीं करता है। कक्षा-कक्ष का आकार व संख्या तो उतनी ही रहती है परन्तु बैठने वाले विद्यार्थियों की संख्या बढ़ती जाती है। माध्यमिक शिक्षा की गुणवता के लिए आवश्यक है कि सुसज्जित विषय कक्षों की व्यवस्था की जाए।

9. **सूचना तकनीकी का प्रयोग (Use Of Information Technology):-** 21 वीं शताब्दी के प्रारंभ से ही समुदाय में विभिन्न साधनों जैसे टी.वी., रेडियो, इंटरनेट आदि द्वारा सूचना प्रदान करने की अत्याधिक आवश्यकता है क्योंकि इन्हीं के द्वारा प्राप्त ज्ञान के आधार पर वे भविष्य में चुनौती का, सामना करने में सफल हो पाएंगे। इन साधनों का प्रयोग और उनका उचित उपयोग माध्यमिक शिक्षा प्रबंध, अध्यापक प्रशिक्षण और शिक्षण विधियों के लिए भविष्य में चुनौतीपूर्ण होगा।

10. **पाठ्यक्रम सुधार (Curriculum Reforms):-** माध्यमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम बहुत कमजोर रहा है, क्योंकि इसके उद्देश्य भी सार्थक नहीं थे। इसलिए माध्यमिक शिक्षा का हर पहलू गुणवत्ता की दृष्टि से कमजोर रहा। पाठ्यक्रम अत्यन्त संकीर्ण, परीक्षा सम्बन्धित तथा व्यवसाय से वंचित रहा है। वर्तमान काल में ज्ञान के विस्फोट, वैज्ञानिक खोज, भौतिक आवश्यकताओं तथा राष्ट्रीय आकांक्षाओं व सामाजिक विज्ञान की विधाओं ने हमें सोचने पर विवश कर दिया है कि माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में आमूल चूल परिवर्तन की आवश्यकता है। इसके पाठ्यक्रम को अधिक विभिन्नतापूर्ण तथा व्यावसायिक बनाना आवश्यक है।

माध्यमिक शिक्षा के गुणात्मक सुधार के लिए वर्तमान योजनाएँ

(Recent Schemes for Qualitative Improvement in Secondary Education)

माध्यमिक स्तर पर गुणात्मक सुधार के लिए कुछ क्षेत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं जैसे:-

1. गुणात्मकता
2. उपयुक्तता
3. आधुनिकीकरण
4. विभिन्नता
5. सूचना तकनीकी आदि

इसी कारण केन्द्रीय सरकार ने माध्यमिक शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिए तथा अपव्यय व अवरोधन को कम से कम करने के लिए विभिन्न योजनाओं की सिफारिशें की है। उनमें से कुछ निम्नलिखित है।

1. **माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण (Vocationalization of Secondary Education):-** शिक्षा की इस योजना को फरवरी 1988 में प्रारंभ किया गया जिससे प्रत्येक विद्यार्थी के लिए रोजगार के अवसर खुल जाए तथा कुशल मानव शक्ति की मांग तथा पूर्ति के बीच असमानता को कम से कम किया जा सके एवं उन विद्यार्थियों के लिए एक विकल्प प्रदान करना जो बिना रुचि या उद्देश्य के उन शिक्षा को प्राप्त करना चाहते है। औपचारिक क्षेत्र में राज्य सरकारे केन्द्रीय प्रायोजित योजना को +2 स्तर पर लगभग 6700 विद्यालयों के जरिए कार्यान्वित करती है।

2. **विद्यालयों में विज्ञान शिक्षा का सुधार (Improvement of Science Education In Schools):-** इस योजना को 1987-88 से कार्यान्वित किया गया है। इसके अंतर्गत केन्द्र सरकार 11 घटकों के लिए 100 प्रतिशत सहायता देती है। इसमें प्रशिक्षुता प्रशिक्षण, जिला व्यावसायिक सर्वेक्षण, पाठ्य पुस्तक विकास कार्याशालाए अनुदेशनात्मक सामग्री, प्रयोगशाला भवन, संसाधन व्यक्ति प्रशिक्षण आदि शामिल है। इस योजना के अंतर्गत उन ऐच्छिक संस्थानों को भी सहायता प्रदान की जाती है जो विज्ञान शिक्षा में कोई अनुसन्धान करना चाहते है या विज्ञान शिक्षा के विकास के लिए किन्हीं प्रोजेक्ट पर काम करना चाहते है।

3. **विद्यालयों में कम्पयूटर साक्षरता व अध्ययन (Computer Literacy and Studies in Schools):-** आज के विद्यार्थी कल की कार्य शक्ति है, इसी कारण इन्हें कम्पयूटर के प्रयोग व उपयोगिता की जानकारी होना आवश्यक है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने इलैक्ट्रोनिक्स विभाग के समन्वय में इस योजना को 1984-85 में प्रांरभ किया, जिसके अंतर्गत प्रत्येक विद्यालय में कम्पयूटर का ज्ञान प्रदान करना आवश्यक होता जा रहा है क्योंकि इसी की सहायता से आगे का विद्यार्थी पूर्ण विश्व की जानकारी प्राप्त कर सकता है।

4. **अन्तर्राष्ट्रीय विज्ञान ओलम्पियाड (International Science Olympiads):-** स्कूल स्तर पर गणित तथा विज्ञान में विद्यार्थियों की योग्यताओं को पहचानना तथा उसके विकास के लिए भारत 1989 तथा 1998 से अन्तर्राष्ट्रीय गणितीय ओलम्पियाड (International Mathematical Olympiad) एवं अन्तर्राष्ट्रीय भौतिक विज्ञान ओलम्पियाड (International Physics Olympiad) में भाग ले रहा है।

5. **शिक्षा तकनीकी (Educational Technology):-** हम विज्ञान और तकनीकी के युग में रह रहे है। शैक्षिक तकनीकी के छः राजकीय संस्थान उतर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र, गुजरात तथा आन्ध्रप्रदेश में स्थापित किए गए है जिससे विद्यार्थियों को आधुनिक तकनीकी की जानकारी प्रदान की जा सके।

अंतर्राष्ट्रीय कान्फ्रेंस एवं माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता

(International Conference and Quality of Secondary Education)

1993 में नवम्बर 6-8, में दिल्ली में माध्यमिक शिक्षा पर सबसे पहली अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेंस की गई। इस कान्फ्रेंस का प्रमुख उद्देश्य माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता का सुधार था। इसी कान्फ्रेंस द्वारा दिए गए सुझाव निम्नलिखित है जो माध्यमिक स्तर की गुणवत्ता को सुधारने में सहायक होंगे:-

1. कान्फ्रेंस सामान्य रुप से पूरे विश्व में तथा विशेष रुप से विकासशील देशों में बढ़ती हुई जनसंख्या से संबंधित थी। यह आने वाले वर्षो में इस बढ़ती हुई जनसंख्या के माध्यमिक शिक्षा पर पहुंचने बाले प्रभाव से चिंतित थी। इसलिए इसने सरकार को यह सुझाव दिया कि शिक्षा को विशेष रुप से माध्यमिक स्तर पर जनसंख्या नियन्त्रण का एक औजार बनाया जाए और ऐसा करने के लिए नवयुवको में स्वास्थवर्धक दृष्टिकोण का विकास करना होगा।
2. कान्फ्रेंस ने यह अनुभव किया कि व्यक्तिगत रुप से तथा सामाजिक रुप से सभी व्यक्तियों में हिंसा, असहनशीलता, विवाद इत्यादि की भावनाएं प्रबल रुप से बढ़ रही है। जिसके परिणामस्वरुप नवयुवकों तथा प्रोढों में नैतिक व चारित्रिक स्तर गिरता जा रहा है। इसलिए इसके द्वारा विद्यार्थियों के लिए नैतिक शिक्षा पर विशेष बल दिया जाए जिससे उन्हें जीवन की गुणवता को सुधारने के योग्य बनाया जा सके तथा उन्हें विज्ञान व तकनीकी विकास के द्वारा मानवता की प्रगति के लिए दिशा प्रदान की जा सके।
3. कान्फ्रेंस ने इस बात पर भी ध्यान दिया कि ज्ञान का विस्तार अत्यन्त तीव्र गति से हो रहा है। इसलिए यह सुझाव दिया गया कि माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा सामान्य प्रकृति की होनी चाहिए। इस स्तर पर विशिष्टीकरण के प्रयासों को हर कीमत पर रोकना चाहिए। इसलिए इस कान्फ्रेंस के द्वारा यह सुझाव दिया गया है कि स्कूल तथा राज्य स्तर पर सभी शैक्षिक अधिकारियों को इस दिशा में गहन अध्ययन करना चाहिए तथा अपने सुझाव देने चाहिए।
4. इस कान्फ्रेंस ने इस तथ्य को अनुभव किया कि शिक्षा प्रदान करने की शिक्षण विधियों का लचीलापन समाज के सभी वर्गो तथा समस्त आयु वर्ग के व्यक्तियों में अधिगम की इच्छा उत्पन्न करता है। आवश्यक रुप से शायद 21वी शताब्दी में एक व्यक्ति को इसलिए अनपढ़ नहीं माना जाता क्योंकि वह पढ़-लिख नहीं सकता, अपितु इसलिए कि वह स्व-'अध्ययन की योग्यता व इच्छा का विकास नहीं कर पाया। अब शैक्षिक नियोजकों के ध्यान का केन्द्र ही यही है कि किस प्रकार माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के मस्तिष्क को इस दिशा में मोड़ा जाए, व उनके चरित्र में इस गुण को विकसित किया जाए।

5. कान्फ्रेंस ने वर्तमान समय में हो रहे सूचना विस्फोट की ओर भी ध्यान केन्द्रित किया। आने वाले वर्षो में इस विस्फोट की गति के अधिक तीव्र होने के आसार है। सूचना विस्फोट की गति के अनुरुप ही सूचना संचरण तथा संरक्षण तकनीकी का विकास किया जाना आवश्यक है। इसलिए भविष्य में अधिगम की प्रक्रिया, सूचना के स्त्रोतों, ज्ञान को हस्तांतरित करने के स्थान पर बुद्धि के विकास पर बल दिया जाना चाहिए। परन्तु इसके साथ-साथ मूल ज्ञान की अवहेलना नहीं की जा सकती जो आवश्यक है और जिसे प्रत्येक शिक्षा की योजना के अन्तर्गत प्रदान किया जाना चाहिए।

6. भविष्य में अन्तराष्ट्रीय समुदाय को विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड रहा है इसी आधार पर कान्फ्रेंस का ध्यान वातावरण निम्नीकरण मूल्यों का हास, गरीबी में वृद्धि, घृणा, जलन, हिसा, बीमारियां:- जैसे एड्स, नशा आदि पर केन्द्रित हुआ। कान्फ्रेंस ने यह महसूस किया कि इन सभी बुराइयों को दूर करने के लिए आवश्यक है की विद्यार्थियों के दृष्टिकोण को परिवर्तित किया जाए कि मनुष्यों में ही नहीं अपितु पशुओं में भी इस ब्रहमाण्ड में एक ही आत्मा का विकास होता है। माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों का एकात्मा', वसुधैव कुटुम्बकम्' आदि सिद्धांतों में विश्वास विकसित किया जए और यही इस स्तर की शिक्षा का आधारभूत उद्देश्य होना चाहिए।

7. व्यावसायिक शिक्षा की ओर भी कान्फ्रेंस का ध्यान आकर्षित हुआ। ऐसी शिक्षा स्व-रोजगार की योग्यताओं का विकास करने के लिए तथा सम्पूर्ण विश्व में गरीबी को खत्म करने के लिए आवश्यक है। परन्तु इस सूचना विस्फोट के चलते सामान्य तथा नैतिक शिक्षा की आवश्यकता के आगे कान्फ्रेंस ने यह महसूस किया कि व्यावसायिक शिक्षा किसी भी प्रकार से सामान्य तथा नैतिक शिक्षा से ऊपर नहीं है जो मनुष्य में ऐसे गुणों का विकास करने में सहायक होती है, जिससे वह अपने विश्व में रहने के लिए एक स्वस्थ तथा खुशहाल स्थान बनाने में सफल होते है।

8. इस प्रकार कान्फ्रेंस द्वारा दिए गए सुझाव न केवल भारत में ही अपितु 21 वीं शताब्दी में सभी विकसित व विकासशील देशों में माध्यमिक स्तर की शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने में सहायक सिद्ध होंगे।

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की कार्यप्रणाली पर सुझाव

(Recommendations on the Functioning of Boards of Secondary Education)

1. बोर्ड को माध्यमिक शिक्षा को सार्वभौमिकता के बारे में विचार करना चाहिए।

2. परीक्षाओं के संचालन व अन्य संबधित तथ्यों के साथ-साथ बोर्ड के द्वारा माध्यमिक शिक्षा से संबन्धित सभी पक्षों पर सरकार को सुझाव/ परामर्श दिया जाना चाहिए।

3. सूचना तकनीकी की सहायता से शिक्षा बोर्ड का आधुनिकीकरण किया जाना चाहिए।

4. बोर्ड के द्वारा नवीन क्रियाओं को करने तथा उच्च गुणात्मक शिक्षा प्रदान करने में स्कूलों को समर्थन प्रदान किया जाना चाहिए।

5. सभी राज्य शिक्षा बोर्डो के द्वारा प्रदत पाठ्यक्रम तथा विद्यार्थियों के मूल्यांकन के स्तर तुलनात्मक होने चाहिए।

6. शैक्षिक उपलब्धि के साथ-साथ असंकज्ञानात्मक विषयों को भी माध्यमिक स्कूल सर्टिफिकेट परीक्षा में महता प्रदान की जानी चाहिए।

7. बोर्ड परीक्षा में बैठने की संख्या में लचीलापन होना चाहिए जिससे विद्यार्थियों के मानसिक दबाव को कम किया जा सके।

8. पाठ्यक्रम में आधारभूत अनुशासित विषयों को बडी संख्या में सम्मिलित किया जाना चाहिए तथा अधिगमकर्ता केन्द्रित अदा प्रदान की जानी चाहिए। अधिगमकर्ता को अपनी रुचि के अनुसार अनुशासित विषय को चयन करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

9. पाठ्यक्रम के बारे में बोर्ड को न केवल राष्ट्रीय स्तर के संदर्भ में अपितु वैश्विक स्तर पर भी विचार करना चाहिए।

10. पाठ्यक्रम निर्माण में उद्योगों, विज्ञान प्रयोगशालाओं तथा सेवा क्षेत्र को भी क्रियात्मक रुप से सम्मिलित किया जाना चाहिए तथा समय के साथ-साथ उन्हीं के अनुसार इसमें परिवर्तन भी किया जाना चाहिए।

11. स्कूल शिक्षा को उचित ढंग से चलाने के लिए शिक्षा निदेशकों तथा बोर्ड में सुदृढ समन्वय विकसित किया जाना चाहिए।

12. उद्योगों, विश्व विद्यालयों, उच्च शिक्षा संस्थानों आदि में समन्वय प्रणाली का विकास किया जाना चाहिए।

13. समय-समय पर पाठ्यक्रम का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम का विकास राष्ट्रीय स्तर रुपरेखा तथा स्थानीय क्षेत्र की आवश्यकताओं के अनुरुप किया जाना चाहिए। व्यवसायिक कार्यक्रमों पर विशेष बल दिया जाना चाहिए।

14. शिक्षा के सभी क्षेत्रों में विकास की विधियों पर विचार-विमर्श करने के लिए शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों के विभागों के मुखियों की एक तालमेल कमेटी बनाई जानी चाहिए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. शिक्षा की गुणवत्ता से क्या अभिप्राय है?
   What do you mean by quality of Education?
2. स्टाफ की गुणवत्ता से क्या अभिप्राय है?
   What do you mean by quality of staff?
3. माध्यामिक स्तर पर शिक्षा की गुणवत्ता को किस आधार पर मापा जा सकता है?
   On what basis quality of education at secondary level can be measured?
4. माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता निम्न होने के क्या कारण है?
   What are the causes of low quality in secondary education?

5. माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता में किस प्रकार सुधार लाया जा सकता है?
How the quality in secondary education can be improved?

6. 1993 में अंतर्राष्ट्रीय कान्फ्रेंस में माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने के लिए दिए गए सुझावों का उल्लेख कीजिए।
Describe the suggestions given by International Conference in 1993 to bring improvement in the quality of secondary education?

6.6 सारांश (Summary)

माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों अध्यापक प्रशिक्षण, मूल्यांकन विधियों आदि विभिन्न क्षेत्रों में परिवर्तन की आवश्यकता है यदि हम इसकी गुणवत्ता को सुधारना चाहते है। इसके लिए विभिन्न शिक्षा विभागों, विद्यालयों, अध्यापकों, प्रशासकों आदि को मिल जुलकर प्रयास करना होगा। रविचन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार किसी संस्था का प्रारंभिक लक्ष्य केवल बाजुओं एवं मन को सभी प्रकार की आपातकालीन स्थितियों के लिए कुशल तैयारी में होने के लिए शिक्षित करना नही होता अपितु जीवन एवं संसार की प्रतिक्रिया के लंबे संगीत की संपूर्ण धुन में होना चाहिए ताकि उनकी एकता के संतुलन को ढूंढा जा सके जो कि बुद्धिमता है।

21वीं शताब्दी में यदि माध्यमिक शिक्षा की गुणवता के सुधार के लिए उचित कदम उठाए जाए तो माध्यमिक स्कूलों के द्वारा कुशल नागरिक तैयार किए जा सकते है। राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक नेता और यहां तक कि शिक्षा-शास्त्री भी यही कहते है कि देश पतन की ओर जा रहा है। इस स्थिति के सुधार के लिए माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाना अत्यावश्यक है और इसके लिए शिक्षा बोर्डों को अपने प्रयास अधिक तीव्र एवं प्रभावी करने होंगे।

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Kochhar, S.k. — Secondary School Administration, Sterling Publisher, New Delhi

Mukhopadhyay — Total Quality Management is Education MurmenNIEPA, Delhi 2001

Narula Manju — Quality in School Education, Shipra Publication, New Delhi 2007

Rao, V.K and Nayak, A.K Secondary Education, APH Publishing Corporation, New Delhi

The Report of Education Commission, Govt. of India, Ministry Of Education, 1964-66, New Delhi

The Report of Education Commission, Govt. of India, Ministry Of Education, 1952-53, New Delhi

The Report of New Education Policy, Govt. of India, 1986, M.H.R.D., New Delhi.

इकाई-7

माध्यमिक स्तर पर स्कूल प्रणालियाँ
(School System at Secondary Level)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

7.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

7.1 पडौसी पाठशाला (Neighbourhood School)

7.2 समान स्कूल की पद्धति (Common School System)

7.3 नवोदय स्कूल (Navodya School)

7.4 केन्द्रीय विद्यालय (Kendriya Vidhyalya)

7.5 बहु उद्देशीय स्कूल (Multipurpose School)

7.5 सारांश (Conclusion)

7.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

7.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप

- विभिन्न प्रकार के विद्यालयों से अवगत होंगे।
- पडौसी पाठशाला के उद्देश्यों, कार्यप्रणाली को समझ सकेंगे।
- समान स्कूल पद्धति ब माध्यमिक शिक्षा स्तर पर इसके महत्व से अवगत होंगे।
- नवोदय विद्यालयों की प्रणाली व इनके योगदान को समझ सकेंगे।
- केन्द्रीय विद्यालय के विभिन्न पहलुओं से अवगत होंगे।
- विद्यालय तथा सामाजिक सम्बन्धों की वर्तमान स्थिति का अवलोकन कर उनको सशक्त बनाने का प्रयास कर सकेंगे।
- भारत में माध्यमिक स्कूलों में विभिन्न स्कूल पद्धतियों का अवलोकन कर सकेंगे।
- माध्यमिक स्तर पर विभिन्न स्कूल पद्धतियों में तुलना कर सकेंगे।

भारतीय शिक्षा तंत्र अंग्रेजों के समय से ही एक असमंजस की स्थिति में रहा है। अंग्रेजों ने भारत में आते ही भारतीय शिक्षा तंत्र की जड़ों को हिलाया और अपनी जरुरत के अनुसार उसे प्रत्यारोपित किया। वास्तव में अंग्रेज ही भारत मैं महंगी शिक्षा के संस्थापक थे।

आजादी के बाद महात्मा गांधी का ग्रामीण स्कूल अध्यापक (जो सम्प्रदाय के सहयोग पर निर्वाह करता था) एक गुरु की तरह का अस्तित्व नहीं रख पाया। वास्तव में भारतीय शिक्षा प्रणाली अभी तक अंग्रेजों द्वारा चलाई गई महंगे स्कूल व महंगी शिक्षा के सिद्धान्त को नहीं छोड़ पाई। शिक्षा के प्रचार प्रसार के लिए 'ऑपरेशन ब्लैड बोर्ड' से और 'शिक्षा सब के लिए' तक का सफर हम कर चुके हैं। लेकिन आज भी महात्मा गांधी द्वारा लंदन के 'छदम हाऊस' में

1931 में कहे गए कथन उतने ही सार्थक प्रतीत होते है। गांधी जी ने कहा था उन वर्ग व निम्न वर्ग के स्कूलों में शिक्षा स्तर के अंतर का बढ़ना शिक्षा के महंगे होने का नतीजा है।

आज भारत में कई प्रकार के स्कूल है जिसमें एक ओर महंगे प्राइवेट स्कूल भी है तो दूसरी और सरकार द्वारा चलाए गए पडौसी पाठशालाएं, समान स्कूल वाले विद्यालय, नवोदय विद्यालय व केन्द्रीय विद्यालय भी सम्मिलित है। इस इकाई में हम इन्हीं स्कूलों के विषय में पढ़ेंगे।

पडौसी पाठशाला

(Neighbourhood Schools)

जैसा कि नाम से प्रतीत होता है कि पडौसी पाठशालाएं वे पाठशालाएं है जिनमें बिना किसी वर्ग भेद के पड़ोस के सभी बच्चों को प्रवेश मिल जाता है। शिक्षा आयोग की रिपोर्ट (1964-66) के अनुसार यदि शिक्षा को सामान्यत: राष्ट्रीय विकास की और विशेषत सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकता का शक्तिशाली माध्यम बनाना है तो किसी भी तरह के अलगाव की भावना को दूर करना होगा। शिक्षा आयोग (1964-66) ने सिफारिश की कि पहले प्राथमिक स्तर पर और फिर उच्चतर स्तर पर 'पडौसी पाठशाला' की स्थापना अनिवार्य है।

शिक्षा आयोग की रिपोर्ट में पडौसी पाठशाला को ऐसी पाठशाला के रुप में परिभाषित किया गया है जहां प्रत्येक स्कूल में पडोस के सभी बालकों का जाना आवश्यक है- चाहे वे किसी भी जाति, विश्वास, सम्मप्रदाय, धर्म के हों या चाहे उनकी आर्थिक स्थिति अथवा सामाजिक हैसियत जैसी भी हो। पड़ोसी पाठशालाओं की स्थापना के पीछे अवधारणा समाज में फैली अलगाव की स्थिति को समाप्त करके सभी बालकों को शिक्षित करना है।

पडौसी पाठशालाओं के उद्देश्य

(Objectives of Neighbourhood Schools)

1. बालकों को भेदभाव रहित शिक्षा प्रदान करना।
2. समाज में अलगाव की भावना का शिक्षा के माध्यम से अंत करना।
3. समाज के हर वर्ग में बच्चों में शिक्षा का प्रसार करना।
4. पडौसी की स्थितियों व आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा प्रदान करना।
5. शिक्षा का प्रसार व शिक्षा प्रणाली में सुधार करना।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए पड़ौसी पाठशालाओं की स्थापना पर बल दिया गया। इस संदर्भ में शिक्षा आयोग रिपोर्ट (1964-66) में लिखा गया है कि पड़ौसी पाठशाला की अवधारणा को दीर्घकालीन लक्ष्य के रुप में अंगीकार किया जाना चाहिए। आगामी बीस वर्षो के लिए एक सुनियोजित कार्यक्रम बनाकर इन लक्ष्यों को प्राप्त किया जाना चाहिए।

पडौसी पाठशालाओं की कार्यप्रणाली

(Functioning Of Neighbourhood Schools)

शिक्षा अयोग ने पड़ौसी पाठशालाओं के लिए निम्न कार्यप्रणाली का सुझाव दिया:-

1. अगले दस वर्षा (1966-76) में दो कार्यक्रमों पर एक साथ अमल होना चाहिए। पहला कार्यक्रम तो यह होना चाहिए कि सभी प्राथमिक स्कूलों को निर्धारित किए गए एक

न्यूनतम स्तर पर ले आया जाए और इनमें से लगभग 10 प्रतिशत स्कूल सुधार कर उच्चतर कोटि के स्कूल बना दिए जाएं।

2. साथ ही चुने हुए क्षेत्रों में जहां लोकमत इसके अनुकूल हो, पडौसी पाठशाला पद्धति को प्रायोगिक परियोजना के रुप में उच्च प्राथमिक स्तर पर लागू कर दिया जाए।

पड़ौसी पाठशालाओं की वर्तमान स्थिति

(Present Position of Neighbourhood Schools)

शिक्षा आयोग की योजना के अनुरुप पडौसी पाठशालाओं का विस्तार नहीं हो पाया। भारत में पड़ौसी पाठशालाओं का विस्तार सीमित रहा जबकि विकसित देशों में आज भी इस प्रकार की पाठशालाएं वहां की शिक्षा प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत में आज भी पड़ौसी पाठशालाओ की आवश्यकता है परन्तु इस दिशा में क्रियान्वयन नही के बराबर है।

19 जुलाई 2008 को वडोदरा में 'पडौसी स्कूलों की आवश्यकताओ" विषय पर UGC/DSA द्वारा UNICEF के सहयोग से एक सेमीनार आयोजित किया गया। इस सेमिनार में भी अनिल सद्गोपाल (Dean of the Faculty of Education of Delhi University) ने अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा-

"अच्छी तथा गुणात्मक शिक्षा को उन्नत करने का एकमात्र साधन है- पडौसी स्कूल, क्योंकि इसमें उच्च वर्ग तथा निम्न वर्ग दोनों के बच्चे प्रवेश ले सकते है। इन स्कूलों में प्रदान की जाने वाली शिक्षा समान तथा अच्छी गुणवत्ता वाली होगी।"

(Neighbourhood School is the only one way to promote good and quality education, as children of both the elite and poor could attend the same school. The education imparted in these schools would also be uniform and of better quality.)

अत: पडौसी स्कूल समाज के निम्न व पिछडे वर्ग को विकसित वर्ग के समान शिक्षा प्रदान करने का श्रेष्ठ माध्यम हैं क्योंकि यह वर्ग अपने बच्चों को खर्चीले प्राइवेट स्कूलों में नहीं पढ़ा सकता और दूसरी तरफ सरकारी स्कूलों की बिगडी दशा के रहते इन बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति सरकारी स्कूल भी नहीं कर सकते। इन परिस्थितियों में पडौसी स्कूलों के विकास व विस्तार के लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिएं।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. 'पड़ौसी स्कूल' से क्या अभिप्राय है?
   What is the meaning of 'Neighbourhood School?
2. पड़ौसी पाठशालाओं के उद्देश्य क्या है?
   What are the objectives of Neighbourhood School
3. पड़ौसी पाठशालाओं के सामाजिक तथा शैक्षिक योगदान के बारे में अपने विचार लिखिए।

Write your views regarding social and educational contribution of Neighbourhood schools.

7.2 समान स्कूल पद्धति (Common School System)

किसी राष्ट्र की उन्नति व प्रगति के लिए, राष्ट्र की सम्पन्नता के लिए बुनियादी शिक्षा (Basic Education) का 75 प्रतिशत प्रसार आवश्यक है। राष्ट्रीय न्यादर्श सर्वेक्षण संगठन के अनुसार यह संख्या भारत में 65 प्रतिशत है।

शिक्षा के प्रचार व प्रसार के लिए सार्वजनिक स्कूल शिक्षा तथा अंशकालिक शिक्षा प्रणाली जैसे प्रयास किए गए। स्कूलों की संख्या बढाई गई, अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता की ओर ध्यान दिया गया अलग-अलग समय में गठित आयोगों ने अपने-अपने सुझावों से शिक्षा प्रणाली को अधिक सार्थक बनाने के प्रयास किए।

इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम समान स्कूल पद्धति है। यह पद्धति शिक्षा आयोग (1964-66) के सामने आई। शिक्षा आयोग ने इस पद्धति की आवश्यकता व महत्व पर प्रकाश डाला है। शिक्षा आयोग के अनुसार लोक शिक्षा की एक ऐसी समान स्कूल पद्धति का विकास किया जाए जो देश के सभी भागों के लिए हो, जो देश के सभी बालकों को शिक्षा प्रदान कर सके। इस पद्धति में सरकार व स्थानीय निकायों द्वारा चलाए जाने वाले सभी स्कूल तथा समस्त मान्यता प्राप्त और सहायता प्राप्त गैर सरकारी स्कूल सम्मिलित होंगे। यह एक ऐसी शिक्षा पद्धति होगी, जो समाज के हर वर्ग के बालकों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करेगी। यह प्रणाली भारत के शैक्षिक लक्ष्य को पूर्ण करेगी।,

कोठारी आयोग की सिफारिशे

(Recommendations of Kothari Commision)

समान शिक्षा पद्धति के स्कूलों के गुणवत्ता स्तर को बनाए रखने के लिए आयोग ने निम्न पहलूओं पर प्रकाश डाला:-

1. **समान स्कूल पद्धति में अध्यापक (Teacher in Common School System)-** समान स्कूल पद्धति में अध्यापकों के अधिकारों, योग्यताओं, उतरदायित्वों, सेवानिवृति-लाभो व नियुक्तियों के मानदण्डों का निर्धारण किया गया। इस संदर्भ में आयोग ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि - पहली जरुरी बात यह है कि विभिन्न प्रबंधक संस्थाओं- सरकारी, स्थानीय, स्थानीय स्वायत निकाय और गैर सरकारी संगठन- के अधीन काम करने वाले अध्यापकों के बीच को भेद को दूर किया जाए।

- इसके लिए सभी अध्यापकों को समान अधिकार प्राप्त होने चाहिए चाहे थे किसी भी प्रबन्धक संस्था के अधीन कार्य करते हों।
- जिन अध्यापकों की योग्यताएं और उतरदायित्व समान हो उनकी पारिश्रमिक दरें भी एक समान होनी चाहिए।
- सभी अध्यापकों के लिए सेवानिवृत्ति लाभों की एक समान पद्धति होनी चाहिए।

- सेवा प्रबन्धक संस्थानों में अध्यापकों के लिए कार्य और सेवा सम्बन्धी शर्त एक जैसी होनी चाहिए।
- विभिन्न प्रकार की संस्थाओं में अध्यापकों की नियुक्ति के तरीके भी अनिवार्यत: एक समान होने चाहिए।

2. **निःशुल्क शिक्षा (Free Education):-** आयोग ने स्कूल शिक्षा को निशुल्क बनाने पर जोर दिया ताकि निम्न व पिछड़े वर्ग के बालक भी शिक्षा प्राप्त कर सकें। उच्च व सम्पन्न वर्ग के लोग अपने बालकों को महंगे प्राईवेट स्कूलों में पढ़ाने का खर्च वहन कर सकते है परन्तु निम्न वर्ग के बालक धन के अभाव के कारण शिक्षा से वंचित रह जाते है। इस भेद को समाप्त करने के लिए समान स्कूल पद्धति' में शिक्षा को निःशुल्क रखने की सिफारिश की गई।

3. **सरकारी व गैर सरकारी स्कूलों में तालमेल (Co-ordination in Govt. and Non Govt. Schools):-** स्कूल शिक्षा के क्षेत्र में स्थानीय स्वायत निकायों और गैर सरकारी संगठनों के कार्यो तथा राज्य सरकारों के कार्यो में उपयुक्त तालमेल लाना चाहिए जिससे यह निश्चित हो सके कि शैक्षिक संस्थानों को सफल संचालन के लिए जो न्यूनतम परिस्थितियां आवश्यक हैं वे लोक शिक्षा की समान स्कूल पद्धति के अंतर्गत आने वाली प्रत्येक संस्था में मौजूद हैं- चाहे शैक्षिक संस्था का प्रबंधक कोई भी हो। प्रत्येक संस्था को स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए ताकि प्रबंधक संस्था, माता-पिता, अध्यापकों व छात्रों के सहयोग से बनाई गई योजना को कार्यरुप दिया जा सके।

4. गरीब और आर्थिक दृष्टि से पिछडे हुए वर्गों के स्कूल व धनिक और सपन्न वर्गों के स्कूलों के बीच इस समय पार्थक्य की जो स्थिति है उसे दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

कोठारी आयोग ने समान स्कूल पद्धति की नीतियों का निर्धारण किया व उन्हें लागू करने के लिए सुझाव दिए। परन्तु 1966 से आज तक की अवधि में समान स्कूल पद्धति का अनुकरण पूर्णत: नहीं हो पाया है। स्कूलों की संख्या में वृद्धि तो हुई लेकिन शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार नहीं हुआ। आज भी सरकारी स्कूलों में प्रयोगशालाओं की, अध्यापकों की कमी अनुभव की जाती है। आज भी अपव्यय व अवरोधन की दर में अधिक सुधार नहीं हुआ है। स्कूल स्तर पर शिक्षा के प्रसार व गुणवत्ता में सुधार के लिए समान स्कूल पद्धति पर अधिक ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है।

समान स्कूल पद्धति में सरकार के स्कूल, स्थानीय स्वायत निकायों के स्कूल और गैर सरकारी सहायता प्राप्त स्कूल ये तीन प्रकार के स्कूल सम्मिलित होगे। इस स्तर पर इन्हीं तीन प्रकार की शिक्षा-संस्थाओं की बहुलता है। इस पद्धति का वित्तीय भार वहन करने की शेष जिम्मेदारी पूर्णत: राज्य की होगी, यद्यपि स्थानीय स्वायत निकाय और गैर-सरकारी प्रबंधक वर्ग राज्य के प्रयत्नों में सहायता देने के लिए कुछ अपने साधन भी जुटाएगें। इससे जातीयता पर आधारित वर्तमान व्यवस्था बहुत हद तक खत्म हो जाएगी और सभी स्कूलों में कई विशेषताएं समान रुप से मिल सकेंगी, जैसे अध्यापकों के मामलें में समानता, प्रवेश संबंधी एक जैसी नीति, जिससे वर्गगत अलगाव पैदा नहीं हो सकेगा ओर उच्च कोटि की सभी संस्थाओं में

योग्यता के आधार पर प्रवेश मिल सकेगा: सीनीय समुदाय से सम्पर्क: और प्रयोग तथा सृजन के लिए वातावरण आदि।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. समान स्कूल पद्धति से आप क्या समझते है?
   What do you understand by Common School System?
2. समान स्कूल पद्धति में अध्यापक का स्थान क्या था?
   What was the position of teacher in 'Common School System'?
3. समान स्कूल पद्धति के लिए वित्तीय भार की जिम्मेदारी पर प्रकाश डालिए।
   Write about the financial support(or responsibility) for Common School System.

7.3 नवोदय विद्यालय (Navodya School)

नवोदय विद्यालय प्रणाली, विद्यार्थी शिक्षा के क्षेत्र में एक अनूठा प्रयोग है। समाज के सबसे अधिक पिछड़े हुए वर्गो सहित प्रतिभाशाली बच्चे समाज के प्रत्येक वर्ग में पाए जाते हैं। नवोदय विद्यालयों की महता ग्रामीण प्रतिभाशाली बच्चों को लक्ष्य मानकर किए गए चयन तथा उन्हें उच्च कोटि की ऐसी शिक्षा उपलब्ध कराने में निहित है जो आवासीय विद्यालयों में दी जाने वाली श्रेष्ट शिक्षा के तुलनीय है। ये प्रतिभाशाली बच्चे अधिकतर उतम आधुनिक शिक्षा से वंचित रह जाते है। जो पारम्परिक रुप से केवल शहरी क्षेत्रों में ही उपलब्ध है। ऐसी शिक्षा इन ग्रामीण क्षेत्रों के छात्रों को अपने शहरी प्रतिद्वंदियों के समान स्तर पर आगे बढ़ने का अवसर प्रदान करेगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 के अंतर्गत ऐसे आवासीय विद्यालयों की कल्पना की गई है जिन्हें जवाहर नवोदय विद्यालय का नाम दिया गया, जो सर्वश्रेष्ठ ग्रामीण प्रतिभाओं को आगे लाने में उतम प्रयास करेगी।

नवोदय विद्यालयों की अवस्थिति (Location of Navodya School):- सरकार की नीति के अनुसार प्रत्येक जिले में एक जवाहर नवोदय विद्यालय स्थापित किया जाना है। इस योजना का प्रारंभ वर्ष 1985-86 में 2 प्रयोगात्मक विद्यालयों से किया गया था। आज 515 जवाहर नवोदय विद्यालयों के रुप में विकसित है, जिनमें 169 लाख से अधिक विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर रहे है।

प्रत्येक विद्यालय में कक्षाओं, शयनशालाओं, स्टाफ आवासों, भोजन कक्ष तथा अन्य बुनियादी सुविधाओं, जैसे खेल के मैदानों, कार्यशालाओं, पुस्तकालय एवं प्रयोगशालाओं इत्यादि के लिए व्यवस्था की गई है। जहां तक संभव हो इन विद्यालयों की अवस्थिति ग्रामीण क्षेत्रों में ही होती है।

नवोदय विद्यालयों की विशेषतायें

(Features of Navodya School)

1. **योग्यता के आधार पर प्रवेश (Enrolement on the basis of ability):-** नवोदय विद्यालय में प्रवेश जवाहर नवोदय विद्यालय चयन परीक्षा के द्वारा किया जाता है। यह परीक्षा केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के द्वारा आयोजित की जाती है। इसमें जाति-वर्ग पर ध्यान दिए बिना यह सुनिश्चित किया जाता है कि ग्रामीण बच्चे शिक्षा से वंचित न रहें।

2. **ग्रामीण. अनुसूचित जाति, जनजाति तथा बालिकाओं के लिए आरक्षण (Reservation for villagers, SC, ST and Girls)-** नवोदय विद्यालय में 75 प्रतिशत स्थानों पर ग्रामीण बच्चों को प्रवेश देने का प्रावधान है, अनुसूचित जाति और अ.ज.जा. के बच्चों के लिए जिले में उनकी जनसंख्या के समानुपात में स्थान आरक्षित होते है, बशर्ते यह अनुपात राष्ट्रीय औसत की कमी नहीं हो। कुल 1/3 स्थान बालिकाओं के लिए आरक्षित है और 3 प्रतिशत स्थान विकलांग बच्चों के लिए आरक्षित है।

3. **निशुल्क सह-शिक्षा के लिए आवासीय विद्यालय (Residential Schools for Free Co- Education):-** सभी नवोदय विद्यालय, आवासीय एवं सह - शैक्षिक संस्थान हैं जहां रहने, खाने-पीने व पढ़ने की निःशुल्क व्यवस्था है इसके अलावा अवकाश के दिनों में घर आने-जाने के लिए रेल और बस किराए इत्यादि की निःशुल्क सुविधा है।

4. **राष्ट्रीय एकता का विकास (Development of National Unity):-** नवोदय विद्यालयों में भिन्न-भिन्न भाषाओं, वर्गो के छात्र पढ़ते है। इन विद्यालयों में इन्हें एक दूसरे के रीति-रिवाजों, संस्कृति को समझने का मौका मिलता है जिससे अनेकता में एकता की भावना उत्पन्न होता है।

5. **त्रिभाषा का सूत्र (Three Language Formula):-** कक्षा छटी से आठवीं तक के लिए शिक्षा का माध्यम क्षेत्रीय भाषा होती है। और कक्षा नवम् के बाद विज्ञान तथा गणित विषय अंग्रेजी में तथा मानविकी विज्ञान विषय हिन्दी में पढाए जाते है।

नवोदय विद्यालयों के उद्देश्य

(Objectives of Navodaya School)

नवोदय विद्यालयो की स्थापना निम्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए की गई, जिन्हें आज भी ज.न.वि. सकारात्क दृष्टि से प्राप्त करने के लिए अग्रसर है-

1. समता एवं सामाजिक न्याय के साथ श्रेष्ठता के उद्देश्यों की प्राप्ति।

2. देश के विभिन्न भागों, मुख्यत: ग्रामीण क्षेत्रों के प्रतिभाशाली बच्चों को एक साथ रहकर शिक्षा प्राप्त करने और अपनी क्षमताओं का पूर्ण विकास करने का अवसर प्रदान करके राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देना।

3. सर्वोतम आधुनिक शिक्षा उपलब्ध कराना जिसें संस्कृति की सशक्त पहचान, मानव मूल्यों, पर्यावरण के प्रति जागरुकता, साहसिक गतिविधियों एवं शारीरिक शिक्षा के सशक्त वटक शामिल हो।

4. त्रिभाषा-सूत्र के अंतर्गत यह सुनिश्चित करना कि नवोदय विद्यालय के सभी विद्यार्थी तीन भाषाओं में पर्याप्त योग्यता हासिल कर सके।

5. अनुभवों एवं सुविधाओं के आदान-प्रदान द्वारा प्रमुख रुप से प्रत्येक जिले में विद्यालयी शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने का प्रयास करना।

6. नवोदय विद्यालय देश की उन कुछ शिक्षा प्रणालियों में से एक से संबन्धित है जो अपने उद्देश्यों, मापदण्डों पर खरे उतरते है। नवोदय विद्यालय अपनी विशेषताओं के कारण अध्यापकों, ग्रामीण छात्रों, गरीब छात्रों, अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के छात्रों में अपनी स्थापना के समय से लेकर आज तक लोकप्रिय रहे हैं।

नवोदय विद्यालय खोलने के मानदण्ड

(Criteria for Opening NV)

हम अपने आस पास कई प्रकार के विद्यालय देख सकते है जिनमें से कुछ सरकारी, गैरसरकारी या प्राइवेट स्कूल ही अपने छात्रों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सक्षम है। बहुत से विद्यालयों की स्थिति तो विद्यालय में होने वाली शैक्षिक क्रियाओं को पूर्ण रुप से सहयोग नहीं दे पाती जैसे स्कूल में आवश्यकता अनुसार कमरे न होना, पुस्तकालय का न होना, पीने के पानी का प्रबंध न होना, शैक्षिक क्रियाकलापों मे सहयोग देने वाली बुनियादी सुविधाओं का न होना आदि।

नवोदय शिक्षा प्रणाली में अपने विद्यालयों में इन बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, विद्यालयों की स्थापना के समय से ही ध्यान दिया. जाता है। इसीलिए नवोदय विद्यालय खोलने के लिए कुछ मानदण्ड निर्धारित किए गए है।

नवोदय विद्यालय खोलने के निर्णय संबंधित राज्य 7 संघ शासित क्षेत्र से प्राप्त प्रस्ताव एवं अन्य निम्नलिखित शर्तो पर आधारित होता है-

1. 30 एकड उपयुक्त एवं मुफ्त भूमि, जिसमें परिस्थिति के अनुसार कम से कम 10 एकड तक की छूट दी जा सकती है।
2. छात्र-छात्राओं एवं कर्मचारियों के लिए कम से कम 3-4 वर्षा तक या उस अवधि के लिए पर्याप्त स्थान और अन्य बुनियादी सुविधाओं से युक्त किराया मुक्त भवन, जब तक की समिति द्वारा स्थाई स्थल पर नई इमारत का निर्माण नहीं कर लिया जाता है।

नवोदय विद्यालय समिति

(Navodya Vidyalya Samiti)

नवोदय विद्यालय समिति, सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम 1860 के अंतर्गत एक पंजीकृत समिति है। समिति, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के उच्चतर एवं माध्यमिक विभाग का एक स्वायतशासी निकाय है। माननीय मानव संसाधन विकास मंत्री नवोदय विद्यालय समिति के अध्यक्ष तथा माननीय मानव संसाधन विकास राज्य (शिक्षा) मंत्री इसके उपाध्यक्ष है। देश के सभी राज्यों एवं संघ शासित क्षेत्रों में जवाहर नवोदय विद्यालय,

जिला स्तर पर जिला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता में विद्यालय प्रबंधन समिति के माध्यम से काम कर रहे हैं।

नवोदय विद्यालय समिति के कार्य

(Functions of Navodya Vidyalya Samiti)

1. नवोदय विद्यालय केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से संबद्ध है। इन विद्यालयों में आवास एवं भोजन-व्यवस्था के साथ वर्दी, पाठ्य-पुस्तकें, लेखन-सामग्री इत्यादि सहित यहां शिक्षा निःशुल्क उपलब्ध कराई जाती है। तथापि कक्षा नौंवी से कक्षा बाहरवीं के विद्यार्थियों से नवोदय विकास निधि के रुप में प्रतिमाह 200 रुपयें का नामीय शुल्क लिया जाता है। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति से संबधित छात्रो, छात्राओं, विकलांग बच्चों और गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन करने वाले परिवारों के बच्चों को इस शुल्क में पूरी छूट दी जाती है।
2. ग्रामीण न्यूनतम 75 प्रतिशत, शहरी अधिकतम-25 प्रतिशत, बालिकाओं के लिए 33 प्रतिशत सीटें आरक्षित हैं।
3. कक्षा- छटी से बारहवीं तक पूर्णत: आवासीय सह-शिक्षा विद्यालयों की स्थापना एवं संचालन।
4. सभी विद्यार्थियों को निःशुल्क चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध करवाना।
5. अभिभावक अध्यापक संघ का निर्माण करना तथा समय-समय पर उनकी बैठकों का आयोजन करना।
6. कक्षा- छटी में केबल संबद्ध जिले के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा तैयार और आयोजित की जाने वाली मौखिक परीक्षा द्वारा प्रवेश देना।
7. किसी एक भाषा क्षेत्र में स्थित नवोदय विद्यालय की कक्षा- नौंवी के 30 प्रतिशत छात्र अपना एक शैक्षणिक वर्ष किसी दूसरी भाषा क्षेत्र के विद्यालय में बिताते है। जिससे देश की संस्कृति तथा लोगों की विविधता एवं अनेकता की समझ के द्वारा राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा मिलता है।
8. कंप्यूटर साक्षरता तथा कंप्यूटर संबंधी शिक्षा कार्यक्रमों का आयोजन करना।
9. अपने विद्यार्थियों के लिए राष्ट्रीय एकता समागम का आयोजन करना ताकि अपने नवोदय भ्रातृ-संघ में बेहतर समझ और वैचारिक आदान-प्रदान का वातावरण तैयार किया जा सके।

नवोदय विद्यालय समिति के उद्देश्य

(Objectives of N.V Samiti)

1. बच्चों को उत्कृष्ट शिक्षा उपलब्ध कराना।
2. अनेक शिक्षणेत्तर गतिविधियों द्वारा बच्चों में सामजस्यपूर्ण व्यक्तित्व का विकास करना।
3. अध्यापकों और विद्यार्थियों की प्रतिभा को उभारने के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करना।

4. आधुनिक शिक्षा तकनीकी को अपना कर आंतरिक एवं शहद जवाबदेही, प्रभावी नेतृत्व स्थानीय समुदाय के साथ संबंधों का विकास करना।
5. विद्यार्थियों में प्रतिष्ठित पांरपरिक कलाकारों की सहायता से पारंपरिक कारीगरी एवं कलाओं को मिलजुल कर सीखने से राष्ट्रीय मूल्यों को आत्मसात करने का अवसर प्रदान करना।

नवोदय विद्यालय- आलोचनात्मक विश्लेषण

(Navodya School- Critical Analysis)

कई बार नवोदय विद्यालयों को व्यंग्यातक दृष्टिकोण से गांवों के लिए दून स्कूल का विकल्प कहा जाता है। लेकिन इन शब्दों का अर्थ लोग अलग अलग तरीके से लेते है। शहरी दृष्टिकोण से ये शब्द उपहासपूर्ण है क्योंकि अपने देश की सामाजिक व आर्थिक ढांचे में दून स्कूल की बराबरी कोई ग्रामीण स्कूल नहीं कर सकता। जबकि ग्रामीण वर्ग इन शब्दों को आशावादी कथन के रुप में स्वीकार करता है क्योंकि ग्रामीण अपने गांव के नवोदय स्कूल को देश के दून स्कूल के बराबर दर्जा देते हे।

कुछ नीति निर्माताओं और शिक्षाविदों के अनुसार गांवों में नवोदय स्कूल शिक्षा के सार्वभौमिकरण की कीमत पर स्थापित किए जाते है। प्रत्येक नवोंदय स्कूल के भवन निर्माण के अतिरिक्त जो कि बहुत अधिक राशि है (लगभग 4 करोड प्रति स्कूल) हर नवोदय छात्र पर वार्षिक खर्च लगभग 9900 रु है। क्या इतना निवेश हर जिले में केवल 500 विद्यार्थियों के लिए उचित है? ऐसे ही प्रश्न आचार्य राममूर्ति रिपोर्ट तथा पश्चिम बंगाल की सरकार द्वारा उठाए गए। परिणामस्वरुप नवोदय विद्यालयों को केबल आदर्शवादी धारणाओं पर आधारित बताते हुए पश्चिम बंगाल सरकार ने अपने राज्य में नवोदय विद्यालय योजना को अस्वीकार किया।

आचार्य राममूर्ति रिपोर्ट के अनुसार नवोदय स्कूल योजना बहुत महंगी है और ये कुल विद्यालय छात्र संख्या मे से केबल सूक्ष्म भाग को ही लाभान्वित करती है जो कि समान स्कूल प्रणाली के विरुद्ध है। परन्तु ये शिक्षाविद महात्मा गांधी के उन विचारो को भूलते नजर आते है जिनके अनुसार यदि शहरों में खोले गए यूरोपियन पद्धति पर आधारित स्कूलों के समान ग्रामीण छात्रों को शिक्षा नहीं उपलब्ध करवाई गई तो ग्रामीण छात्रों की प्रतिभा उजागर नहीं हो पाएगी, ग्रामीण छात्र उच्च शिक्षा के लिए तब तक प्रतियोगी नहीं बन पाएंगे जब तक वे गांवों से शहर पलायन न कर ले। शायद इस कठोर सच्चाई को ये शिक्षाविद नहीं समझ पाए। नवोदय विद्यालय योजना की शुरुआत से सरकार ने शहरी तथा ग्रामीण शिक्षा स्तर के अंतर को मिटाने के लिए एक प्रशंसनीय कदम उठाया है।

नवोदय विद्यालय अपने उद्देश्यों पर खरे उतरते है। जवाहर नवोदय विद्यालयों में प्रमुख रुप में ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों को प्रवेश दिया जाता है, जिसमें 75 प्रतिशत स्थानों पर ग्रामीण बच्चों को प्रदेश देने का प्रावधान है। निम्न नवोदय स्कूल योजना के अनुसार ग्रामीण छात्रों की प्रतिशत के लक्ष्य व वास्तविक आंकडों को तुलनात्मक दृष्टि से दिखाता हे।

चित्र-7.1 ग्रामीण छात्रों का प्रदेश

नवोदय विद्यालय योजना के अनुसार बालिकाओं के लिए 33 प्रतिशत सीट आरक्षण का प्रावधान है। जबकि वास्तव में छात्राओं की प्रवेश प्रतिशत इससे अधिक 34.6 प्रतिशत है। निम्न चित्र छात्राओं के प्रतिशत आरक्षण के लक्ष्य और वास्तविकता को दर्शाता है।

चित्र-7.2- बालिकाओं का आरक्षण

इसके अतिरिक्त अनुसूचित जाति व अनुचित जन जाति के विद्यार्थियों की प्रतिशत अनुपात राष्ट्रीय औसत से अधिक है ।

चित्र-7.3- अजा.. तथा अजा. का प्रवेश

अत: नवोदय स्कूल भारतीय माध्यमिक शिक्षा का महत्वपूर्ण अंग है जो अपने लक्ष्यों को भलीभांति पूर्ण करते हैं तथा देश के भविष्य निर्माण में अपनी सार्थकता सिद्ध करते हैं।

7.4 केन्द्रीय विद्यालय
(Kendriya Vidyalya)

भारत विविधताओं से परिपूर्ण देश है। शिक्षा क्षेत्र भी विविधताओं से परे नही है। शिक्षा राज का विषय होने के कारण प्रत्येक राज्य अपनी स्वयं की पद्धति और माध्यम को अपनाता है जिसके कारण एक राज्य से दूसरे राज्य में आने वाले बच्चों के लिए अपनी पढ़ाई को जारी रखना वास्तव में कठिन हो जाता है। अधिकतर मामलों में उन्हें नये सिरे से पढाई करनी पडती है।

केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों के बच्चों को शिक्षा सम्बन्धी सुविधाएं जैसे एक समान पाठ्यक्रम और शिक्षा के माध्यम वाले माध्यमिक विद्यालयों को बढाने के विचार को प्रोत्साहित करने की सिफारिश दूसरे केन्द्रीय वेतन आयोग द्वारा प्रस्तुत करने के साथ-साथ सरकार द्वारा इस सुविधा के प्रावधान की संस्तुति भी अपने कर्मचारियों के लिए की गई ताकि उनके बच्चों की शिक्षा उनके बार-बार व आकस्मिक स्थानान्तरणों के कारण बाधित न हो। परिणाम स्वरुप वर्ष 1963-64 के दौरान 20 रेजीमेंटल स्कूलों को सेंट्रल स्कूल अथवा केन्द्रीय विद्यालय के रुप में परिवर्तित किया गया। दो वर्ष पश्चात 1965 में केन्द्रीय विद्यालय संगठन के नाम से एक स्वायत निकाय का गठन किया गया। तब से लेकर अब तक केन्द्रीय विद्यालयों की संख्या 929 तक पहुंच गई है। काठमांडु और मॉस्को में भी एक-एक केन्द्रीय विद्यालय है। यद्यपि अभी तक केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों के बच्चों को प्रवेश दिए जाने की प्राथमिकता दी जाती है। लेकिन स्थान उपलब्ध होने पर अन्य बच्चों को भी प्रवेश दिया जाता है। केन्द्रीय विद्यालयों को, अलग-अलग सामाजिक तथा आर्थिक परिपेक्ष से आए विद्यार्थियों में समानता व परस्पर सम्मान की भावना को बढावा देने के लिए जाना जाता है।

केन्द्रीय विद्यालय के लक्ष्य

(Objectives of Kendriya Vidyalya)

1. केन्द्रीय सरकार के स्थानान्तरित होने वाले कर्मचारियों जिनमें रक्षा तथा अर्थ- सैनिक बलों के पुलिस कर्मी भी शामिल हैं, के बच्चों को एक समान शिक्षा देकर उनकी शैक्षिक आवश्यकता को पूरा करना।
2. विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में श्रेष्ठता अपनाते हुए आदर्शो को प्रतिष्ठित करना।
3. शिक्षा से जुडे दूसरे निकायों जैसे केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड तथा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद जैसे निकायों के सहयोग से शिक्षा के क्षेत्र. में नई पद्धतियों और प्रयोगों को प्रारंभ कर उन्हें विकसित करना।
4. बच्चों में भारतीयता की अनुभूति तथा राष्ट्रीय एकता की भावना को विकसित करना।
5. इस प्रकार केन्द्रीय विद्यालयों का मिशन चहुंमुखी है।

केन्द्रीय विद्यालयो की विशेषताएं

(Characteristics of Kendriya Vidyalya)

1. केन्द्रीय विद्यालय केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से एफिलिएटिड है।
2. सभी केन्द्रीय विद्यालयों में एक समान पुस्तकें व द्वि-भाषा माध्यम से शिक्षा प्रदान की जाती है।
3. सभी केन्द्रीय विद्यालयों में सह-शिक्षा प्रणाली अपनाई जाती है।

4. कक्षा 5 से 9 तक संस्कृत भी पढ़ाई जाती है।

5. शिक्षा की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए अध्यापक शिष्य अनुपात को उपयुक्त रखा जाता है।

6. कक्षा आठवीं तक लडकों के लिए कक्षा बारहवीं तक लडकियों के लिए अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों के लिए तथा केन्द्रीय विद्यालय के कर्मचारियों के बच्चों के लिए निशुल्क शिक्षा प्रदान की जाती है।

केन्द्रीय विद्यालय संगठन

(Kendriya Vidyala Organization)

केन्द्रीय स्कूल प्रशासन केन्द्रीय विद्यालय संगठन द्वारा किया जाता हे। केन्द्रीय विद्यालय संगठन का गठन 15 दिसम्बर 1965 को एक स्वायत निकाय के रुप में हुआ, यह गठन 1960 के सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम के अंतर्गत केन्द्रीय विद्यालयों के प्रारंभ और संचालन के लिए किया गया था।

आयुक्त, संगठन के मुख्य कार्यकारी अध्यक्ष और केन्द्रीय विद्यालयों के मुख्य प्रशासक है। दे मण्डल द्वारा निर्धारित कार्यकलापों और नीतियों के उचित अनुपालन के लिए उतरदायी है। मुख्यालय में उनकी सहायता के लिए दो संयुक्त आयुक्तों, पांच उपायुक्तों अन्य अधिकारियों और स्टाफ सदस्यों को नियुक्त किया गया है।

केन्द्रीय विद्यालय संगठन को निम्न रेखाचित्र से समझा जा सकता है-

चित्र 7.4- केन्द्रीय विद्यालय का संगठन

केन्द्रीय विद्यालयों का समाज में योगदान

(Kendriya Vidyalya Contribution towards Society)

केन्द्रीय विद्यालयों का उद्देश्य विद्यार्थियों के बौद्धिक विकास पर ही सीमित नहीं है अपितु उनका सर्वोतमुखी विकास करना है। विद्यार्थियों में समानता, भाईचारे व परस्पर सहयोग की भावना का विकास करने के लिए उन्हें खेलों तथा अन्य सहपाठ्यचर्या क्रियाकलापों में भाग लेने के लिए प्रेरित किया जाता है। छात्रों को शारीरिक, ललितकला तथा नैतिक विकास में भी सहायता प्रदान की जाती है। केन्द्रीय विद्यालयों में एकेडमिक शिक्षा के साथ-साथ नए-नए खेलों, कलाओं, दस्तकारी सीखने के अवसर भी प्रदान किए जाते है। हजारों खिलाड़ियों, कलाकारों, दस्तकारों को जो रोजगार की तलाश में रहते है, रोजगार के अवसर उपलब्ध कराए जाते है।

अत: केन्द्रीय विद्यालय न केवल शिक्षा क्षेत्र में अपितु व्यवसायिक शिक्षा, खेलकूद, दस्तकारी जैसे कई आयामों में निपुणता प्राप्त करने में सहायता प्रदान करते है।

केन्द्रीय विद्यालयों की प्रगति

(Progress of Kendriya Vidyalya)

केन्द्रीय विद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा, खेलकूद के अवसरों की व्यवसायिक शिक्षा की गुणवत्ता के कारण ही इनकी संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। केन्द्रीय विद्यालय संगठन के गठन के समय यह संख्या मात्र 20 थी परन्तु आज यह आंकडा 929 का है। जिसमें से 4 विद्यालय भारत के बारह खोले गए है। केन्द्रीय विद्यालयों का प्रसार उनकी सफलता व गुणवता को दर्शाता है।

चित्र 7.5 केन्द्रीय विद्यालयों की संख्या

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. केन्द्रीय विद्यालयों की स्थपनाकिस उद्देश्य के लिए की गई?
   What was the purpose of establishment of Kendriya Vidyalya.
2. केन्द्रीय विद्यालयों की मुख्य विशेषताएं क्या है?
   What are the main feature of Kendriya Vidyalya
3. केन्द्रीय विद्यालय संगठन के विषय में लिखिए।
   Write about Kendriya Vidyalya Organisation.

7.5 बहु उद्देश्यीय स्कूल (Multipurpose School)

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के स्तर पर पाठ्यक्रम के सात विभिन्न समूहों का उल्लेख किया है:-

- मानव विज्ञान
- विज्ञान

- प्राविधिक
- वाणिज्यिक
- कृषि
- ललित कलायें
- गृह-विज्ञान

इस समय हमारे देश में माध्यमिक विद्यालय उपरोक्त समूहों में से एक, दो या अधिक से अधिक तीन की शिक्षा दे रहे है। इस प्रकार ये विद्यालय विभिन्न बालकों की विभिन्न रुचियों और आवश्यकताओं की सुझाव नहीं कर पाते। इसीलिए आयोग ने यह सुझाव दिया कि प्रत्येक माध्यमिक विद्यालय में उपर वर्णित सात समूहों के शिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए। इस प्रकार की व्यवस्था करने वाली संस्था को 'आयोग' ने बहु-उद्देश्य विद्यालय की संज्ञा दी है।

बहु उद्देशीय विद्यालय विभिन्न उद्देश्यों, रुचियों और योग्यताओं वाले छात्रों के लिए विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रमों का आयोजन करने का प्रयास करता है। यह प्रत्येक छात्र को व्यक्तिगत रूप से उसके द्वारा चयन किए गए अध्ययन के विशिष्ट पाठ्यक्रम में अपनी स्वाभाविक अभिवृत्तियों और रुझानों का प्रयोग करने और विकास करने का उपयुक्त अवसर प्रदान करने का प्रयत्न करता है।

बहु उद्देशीय विद्यालय के उद्देश्य

(Aims of Multipurpose School)

माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझावों का अध्ययन करने के लिए फोर्ड- फाउन्डेशन की भारतीय शाखा ने आठ विशेषज्ञों की एक अन्तर्राष्ट्रीय समिति नियुक्त की। इस समिति ने कहा कि बहु-उद्देशीय विद्यालयों में समूहों की विभिन्नता का उद्देश्य-व्यवसायिक सामान्य शिक्षा देना है, न कि ऐसी औद्योगिक दक्षता प्रदान करना है, जिससे छात्र एकदम उद्योग में लग जाएं। उन साधनों सामग्रियों और प्रक्रियाओं के प्रयोग की व्यापक शिक्षा प्रदान करना है, जो सभ्यता के विकास क्रम को आगे बढने में योग देती है। बहु उद्देशीय विद्यालय का उद्देश्य कारीगारों का निर्माण करना नहीं है।

जून 1957 में नैनीताल में एक शिक्षा विचार गोष्ठी आयोजित की गई। उसमें भाग लेने वाले सदस्यों ने निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए:-

- बहु उद्देशीय विद्यालयों को विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वतोमुखी विकास करना चाहिए।
- विद्यार्थियों में हस्तशिल्प की इतनी दक्षता उत्पन्न कर देनी चाहिए कि वे उससे संबंधित व्यवसाय को सुगमता से कर सके ।
- विद्यार्थियों को किसी रचनात्मक, उत्पादक और समाज के लिए लाभप्रद कार्य की शिक्षा देनी चाहिए, जिससे उनमें सहकारी जीवन के प्रति श्रद्धा हो और जीवन यापन की इतनी कुशलता आ जाए कि वे स्वावलंबी बन जाए।

बहु उद्देशीय विद्यालय की आवश्यकता

(Need for Multipurpose School)

1. माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति (Fulfillment of Objective of Secondary Education) माध्यमिक शिक्षा अपने उद्देश्यों की पूर्ति तभी कर सकती है, जब विद्यार्थी विभिन्न पाठ्यक्रमों की शिक्षा से लाभ उठा सकें।
2. माध्यमिक शिक्षा के प्रमुख दोष का अंत (End of main Drawbacks of Secondary Education)- हमारी माध्यमिक शिक्षा का एक प्रमुख दोष यह है कि यह एकमार्गीय है। इनमें सभी विद्यार्थियों को प्राय: समान शिक्षा ही ग्रहण करनी पढ़ती है। इससे उनके व्यक्तित्व का विकास अवरुद्ध हो जाता है, क्योंकि एक ही प्रकार की शिक्षा सबके लिए उपयुक्त नहीं होती है। बहु उद्देशीय विद्यालय विभिन्न पाठ्यक्रमों की शिक्षा का आयोजन करके माध्यमिक शिक्षा के इस दोष को दूर करेंगे।
3. किशोरों की आवश्यकता की पूर्ति (Fulfillment of the Need of Adolescents)- माध्यमिक विद्यालयों में पढ़ने वाले विद्यार्थी न तो बालक ही होते है और न ही युवक। वे होते है - किशोर। इस अवस्था में उनमें विभिन्न मानसिक प्रवृत्तियाँ और रुचियाँ होती है। इसलिए सबके लिए एक ही प्रकार की शिक्षा का अनुमोदन नहीं किया जा सकता। बहु उद्देशीय उनके अन्त:निहित गुणों की अभिव्यक्ति का अवसर देते है।
4. विभिन्न कौशलों के अध्ययन की व्यवस्था (Provision of study of Different Skills) वर्तमान समय में बालक के साथ-साथ अभिभावक भी यही आशा करते है कि माध्यमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों को कौशल के अध्ययन का अवसर मिलना चाहिए। बहु उद्देशीय विद्यालय अनेक कोशलों के अध्ययन का अवसर देते है।
5. शारीरिक श्रम को सम्मान (Respect of Physical Study) कुछ लोगों का विचार है कि विभिन्न पाठ्यक्रमों के लिए विभिन्न प्रकार के विद्यालय स्थापित किए जाएं। पाश्चात्य देशों में यह परीक्षण किया गया था, पर इसे सफलता नहीं मिली। अमेरिका जैसे प्रगतिशील देश में भी प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा देने वाले विद्यालयों को पुस्तकीय शिक्षा देने वाले विद्यालयों से निम्नतर समझा जाता है। हुमायूं कबीर ने लिखा है: "भारत जैसे देश में जहां परम्परा के अनुसार मानसिक श्रम को शारीरिक श्रम की अपेक्षा कहीं अधिक महत्व दिया जाता है, विभिन्न विषयों के लिए विभिन्न विद्यालयों की स्थापना ने शारीरिक श्रम के प्रति घृणा की पुष्टि कर दी होती। एक ही विद्यालय में और उन्हीं दशाओं में जिनमें पूर्णतया पुस्तकीय विषयों की शिक्षा दी जाती है, प्राविधिक, कृषि अथवा अन्य व्यवसायिक पाठ्यक्रमों की शिक्षा की व्यवस्था- इन सब शिक्षाओं में समानता उत्पन्न करेगी, और शारीरिक श्रम को हेय नहीं समझा जाएगा। ' परिणामत: बहु उददेशीय विद्यालय अति आवश्यक हैं।

सरकार ने माध्यमिक शिक्षा आयोग' को स्वीकार करके अक्टूबर, 1954 से देश में बहु उद्देशीय विद्यालयों की स्थापना का कार्यक्रम प्रारंभ किया। इस कार्यक्रम के अनुसार चुने हुए

हायर सैकेण्डरी स्कूलों को बहु उद्देशीय विद्यालयों का रूप दिया जा रहा है और नए बहु उद्देशीय स्कूलों की स्थापना की जा रही है। इन प्रियसो के फलस्वरूप अब तक 3873 बहु-उद्देशीय विद्यालयों की स्थापना की जा चुकी है। यह संख्या अति अल्प है। इसका प्रमुख कारण है कि अभिभावक चाहते है कि उनके बच्चे उनकी इच्छा के अनुसार विषयों का चयन करें न कि अपनी इच्छा से। यह एक ऐसी समस्या है जिसका समाधान अभी तक खोजा नहीं जा सका है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. बहु उद्देशीय विद्यालय से क्या अभिप्राय है?
   What is the meaning of Multipurpose School?
2. बहु उद्देशीय स्कूल की क्या आवश्यकता है?
   What is the need of Multipurpose School?
3. बहु उद्देशीय स्कूल के उद्देश्यों का उल्लेख कीजिये।
   Describe the aims of multipurpose school.

हमारे देश में माध्यमिक स्तर पर कई प्रकार के स्कूल खोले गए है। सभी विद्यालयों का दूरगामी उद्देश्य भविष्य के नागरिकों को तैयार करना है। संगठन, भाषा, आर्थिक स्तर व प्रशासन जैसी कई विशेषताओं के आधार पर इन विद्यालयों का संचालन व सफलता दर भिन्न-भिन्न है। जहां पडौसी स्कूल, समान स्कूल पद्धति माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के उद्देश्य की सार्थकता के लिए है वहीं नवोदय विद्यालय गांवों के छिपे प्रतिभाशाली बच्चों को उच्च गुणवत्ता हाली शिक्षा प्रदान करते है। केन्द्रीय विद्यालय अपनी शिक्षण गुणवत्ता, क्रीड़ाकलापों, व्यवसायिक शिक्षा तथा स्थानान्तरण की वजह से होने वाली असुविधाओं में दी जाने वाली सहायता के कारण दिन प्रतिदिन उन्नति कर रहे हैं। जहां पडौसी स्कूल 4 समान स्कूलों को भारत में अपेक्षा का सामना करना पडा बही नवोदय स्कूल व केन्द्रीय विद्यालयों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

शिक्षा आयोग के समय स्कूल पद्धति के विकास के लिए सिफारिश की गई थी कि स्कूल स्तर पर सरकारी छात्रवृतियों अर्थात सरकार और स्थानीय स्वायत निकायों द्वारा दी जाने वाली छात्रवृतियां लोकशिक्षा की समान स्कूल पद्धति के दायरे में आने वाले स्कूलों के लिए होनी चाहिए। इस स्कूल में अतत: कोई शिक्षा शुल्क नहीं लिया जाएगा और प्रत्येक बालक जा सकेगा। इतनी सुविधाओं के बावजूद भी आज भारत में पडौसी स्कूलों व समान स्कूल पद्धति की व्यवस्था नहीं है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने माध्यमिक स्तर पर एक अन्य प्रकार के स्कूल 'बहुउद्देशीय स्कूल' की स्थापना की सिफारिश की है। इन स्कूलों के माध्यम से सभी बच्चों को अपनी रुचि व योग्यता के अनुसार अध्ययन के विषय चुनने का अवसर प्राप्त होगा। इससे देश के विभिन्न व्यवसायों के लिए प्रशिक्षित व्यक्तियों का निर्माण संभव होगा। परन्तु अभी तक भारत में इनकी संख्या बहु त कम है।

7.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Nayak A.k. & Rao V.K : Secondary Education APH P publishing of Corporation , New Delhi, 2002

Report of Secondary Education Commission 1953, New Delhi, Ministry of Education.

Report of Indian Education Commission Education and National Development 1964-66, New Delhi: Ministry of Education

इकाई 8

विकसित राष्ट्रों में माध्यमिक शिक्षा

(Secondary Education in Development Countries)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

8.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

8.1 संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education in United States of America)

8.2 ब्रिटेन में माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education In Britain)

8.3 रुस में माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education in Russia)

8.4 सारांश (Summary)

8.5 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप:

- अमेरिका, ब्रिटेन और रुस की माध्यमिक शिक्षा की व्यवस्था को जान सकेंगे।
- उनकी माध्यमिक शिक्षा के विद्यालयों के वर्गीकरण के बारे में ज्ञान प्राप्त होगा।
- माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों और महत्व को जान सकेंगे।
- उनकी प्रावैंधिक शिक्षा एवं व्यवसाय चयन के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- उनकी अध्यापक शिक्षण की व्यवस्था से अवगत हो सकेंगे।

माध्यमिक शिक्षा को शिक्षा प्रणाली की एक महत्वपूर्ण कड़ी माना जाता है और विभिन्न आयोगों के द्वारा समय-समय पर इसे सुधारने के लिए सुझाव दिए गए है। यदि हम विकसित देशों में माध्यमिक शिक्षा पद्धति का विवेचन करें तो भारत की माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता को सुधार सकते है। विकसित देशों मे माध्यमिक शिक्षा में व्यवसायिक शिक्षा पर अधिक बल दिया जाता है जबकि हमारे देश में अभी भी इसका अत्यधिक विकास नहीं हो पाया है। इस इकाई में हम विकसित देशों की माध्यमिक शिक्षा का अध्ययन करेंगे।

8.1 अमेरिका में माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education in U.S.A.)

अमेरिका स्वभाव से ही स्वतन्त्रता प्रेमी है और जनतंत्र में विश्वास रखते है। इसी प्रवृति के कारण वहां की प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य और सार्वजनिक बनी। अमेरिका में प्रचलित औद्योगिक क्रांति और प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य करने पर उन्हें व्यावसायिकता की उपलब्धि की समस्या का सामना करना पड़ा। प्रत्येक साक्षर व्यक्ति को कार्य देना सरकार के लिए कठिन था। अत: जनता ने अपने पालयों को आगामी शिक्षा देने का निश्चय किया। इस प्रकार लोगों के सामूहिक तथा सार्वजनिक प्रयासों के फलस्वरुप माध्यमिक शिक्षा का विकास हुआ।

माध्यमिक शिक्षा का ऐतिहासिक विकास

(Historical Development of Secondary Education)

लेटिन ग्रामर स्कूल

(Latin Grammar School)

इन विद्यालयों का व्यय धार्मिक समुदाय और धार्मिक जनता द्वारा बहन किया जाता है। शुल्क की अधिकता और वर्गयुक्त शिक्षा की नीति के कारण इनमें केवल धनिक वर्ग के बालक ही शिक्षा प्राप्त कर सकते थे। इस प्रकार का विद्यालय 1635 ई0 में सर्वप्रथम बोस्टन नगर में स्थापित हुआ था। 19वीं शताब्दी तक लैटिन ग्रामर विद्यालय व्यवस्था लगभग पुरातन परम्पराओं पर आधारित रही। वातावरण में परिवर्तन, सामाजिक जागरुकता और शैक्षिक अभिरुचि के कारण माध्यमिक शिक्षा व्यवस्था के इन लैटिन ग्रामर विद्यालयों में सुधार हुआ।

शिक्षा अकादमी

(Educational Academics)

लोगों का विश्वास पादरियों के नेतृत्व से उठने लगा और इनका स्थान शिक्षा अकादमियों ने ले लिया। इस व्यवस्था की प्रमुख विशेषता यह रही कि यह बालक को व्यावसायिक दृष्टिकोण से भावी जीवन के लिए तैयार करती थी। यही कारण था कि माध्यमिक स्तर पर पूर्व-प्रचलित लैटिन ग्रामर विद्यालयों का आकर्षण समाप्त सा हो गया और विस्तृत उपादेय पाठ्यक्रम से युक्त शिक्षा अकादमियों का दिनोदिन विकास होता गया। शिक्षा अकादमी व्यवस्था में व्यवसायिक शिक्षा होने के साथ-साथ राजनीतिक दर्शन-शास्त्रीय तथा सैनिक शिक्षा को संबन्धित किया गया। इस व्यवस्था में स्त्री-शिक्षा को भी स्थान मिला। इन अकादमियों का प्रबंध जनतांत्रिक तथा और अर्द्ध-जनीय था। पाठ्यक्रम में भूगोल, विज्ञान तथा अंग्रेजी के साथ-साथ शास्त्रीय विषयों की व्यवस्था भी की गई है।

पब्लिक हाई स्कूल

(Public High School)

जब 19वीं शताब्दी का प्रारंभ ही हुआ था तो अमेरिका में उपनिवेशक तथा रुढ़िवादी शिक्षा के विरोध में आंदोलन चला। 1924 ई0 में न्यूयार्क में तथा 1926 ई0 में बोस्टन नगर में पब्लिक माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना हुई। बोस्टन विद्यालय स्त्री-शिक्षा विद्यालय था। 19वीं शताब्दी के अंतिम चरण में स्नातक-स्तर पर शिक्षा व्यवस्था करने की आवश्यकता पर बल दिया, अत: उच्च शिक्षा और कॉलेज स्तर की शिक्षा द्वारा स्नातक-प्रमाणपत्र देने के पाठ्यक्रम प्रचलित हुए। ये विद्यालय जनता के चंदे से चलते थे। इनमें इतनी क्षमता नहीं थी कि ये मनचाहा कार्यक्रम संचालित कर सके।

माध्यमिक शिक्षा में व्यवस्था - परिवर्तन

(Change in Secondary Education)

20वीं शताब्दी के द्तीय चरण में माध्यमिक शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन प्रारम्भ हुआ। इस समय प्राथमिक शिक्षा के 8 वर्षो को अधिक लंबा अनुभव किया गया और 6 वर्ष का पाठ्यक्रम बनाने का निश्चय हुआ। अत: मध्यम स्तर की 4 वर्षीय कक्षाओं में प्राथमिक शिक्षा के अंतिम दो वर्ष माध्यमिक स्तर की अवधि में सम्मिलित कर दिये गये। इस प्रकार अब

प्राथमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम 6 वर्ष से 12 वर्ष तक का हो गया और माध्यमिक शिक्षा की आयु सीमा 12 वर्ष से 18 वर्ष तक हो गई। पाठ्यक्रम को भी माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम में सम्मिलित कर दिया गया और इस प्रकार माध्यमिक शिक्षा की अवधि में 12 वर्ष से लेकर 20 वर्ष तक की आयु का समय हो गया एवं शिक्षा काल 4 वर्ष के स्थान पर 8 वर्ष का हो गया। इस प्रकार 16 वर्ष की शिक्षा प्रथम परिवर्तन के अनुसार प्राथमिक स्तर पर 6 वर्षीय, माध्यमिक स्तर पर 6 वर्षीय तथा कॉलेज स्तर पर 4 वर्षीय शिक्षा में परिवर्तित कर दी गई, परन्तु दूसरे परिवर्तन के अनुसार शिक्षा के 16 वर्ष क्रमश: 6 वर्षीय 8 वर्षीय तथा 2 वर्षीय कार्यकालों में विभक्त हो गये।

प्रथम 6 वर्षीय माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम को क्रमश: 3-3 वर्षीय पाठ्यक्रमों में विभाजित करके निम्न माध्यमिक विद्यालय शिक्षा तथा उच्चतर माध्यमिक विद्यालय शिक्षा का नाम दिया गया। 1902 ई0 में इलिन्वाय राज्य में प्रथम निम्नतर कॉलेज। योजना को लाग किया गया और 1910 ई0 में कैलीफ्रोनिया राज्य के अंतर्गत प्रथम निम्नतर माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना की गई।

माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य

(Aims of Secondary Education)

संयुक्त राज्य अमेरिका में आकर बसे हुए अपने धार्मिक मूल स्त्रोत को अक्षुण्ण रखने के लिए अपने परम्परागत साहित्य और सांस्कृतिक वातावरण, को बनाए रखने के लिए लैटिन ग्रामर विद्यालयों की स्थापना की थी जिनका उद्देश्य नई पीढ़ी को धार्मिक मूल स्त्रोत के प्रति एकनिष्ठ बनाना और कॉलेज स्तर की पढ़ाई के लिए तैयार करना था। यहां माध्यमिक शिक्षा पर अधिकांश स्थानीय वातावरण का प्रभाव है और उस पर स्थानीय जनता का नियंत्रण रहता है, परन्तु इन सबकी व्यवस्थाएँ राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा की सुस्तुतियों पर आधारित होते हुए प्रचलित है। 1912 में राष्ट्रीय शिक्षा सभा ने एक माध्यमिक शिक्षा पुनर्व्यवस्था आयोग की स्थापना की। इस आयोग ने 6 वर्ष के गहन अध्ययन और निरीक्षण के बाद माध्यमिक शिक्षा-पुनर्सगठन हेतु 1918 ई.0 में माध्यमिक शिक्षा के प्रमुख सिद्धांतों का निर्माण किया। माध्यमिक शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार है:-

1. **स्वास्थ्य शिक्षा (Health Education)-** समय समय पर स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रम और स्वास्थ्य को बनाए रखने वाले अवसर देना तथा राष्ट्रीय, कौटुम्बिक, सामाजिक और व्यक्तिगत कर्तव्य निर्वाह में उत्साहित रहने का अभ्यास स्वास्थ्य शिक्षा द्वारा ही उत्पन्न करना चाहिए।

2. **मूलभूत प्रक्रियाओं पर नियंत्रण (Command on Fundamental Processes)** माध्यमिक शिक्षा को अधिक विकासशील और जनोपयोगी बनाने के लिए प्राथमिक स्तर की शिक्षा की आवश्यकताओं के अनुरुप प्रारम्भिक शिक्षा की मूलभूत प्रक्रियाओं पर आधारित शिक्षा में प्रयोग तथा आवश्यक अभ्यास कराने का प्रयत्न करना चाहिए।

3. **परिवार की योग्य सदस्यता (Worthy Home Membership)-** माध्यमिक शिक्षा में इतनी क्षमता उत्पन्न करनी चाहिए कि उस शिक्षा को पाकर बालक परिवार सम्बन्धी आदर्श

व्यवहारों को करते हुए कर्त्तव्यपरायण बन सके और परिवार के योग्य सदस्य सिद्ध हो सके। उसमें पारिवारिक गुणों जैसे सहयोग, सहकारिता, सहनशीलता और सद्भावना के गुण उत्पन्न हो सके।

4. **व्यवसायिक शिक्षा (Vocational Education)-** इस स्तर पर पाठ्यक्रम में व्यावसायिक शिक्षण तथा अध्यापन को प्रमुखता देनी चाहिए जिससे विद्यार्थी जीवन निर्वाह उच्च स्तर के साथ कर सकेगा। इस शिक्षा द्वारा उसमें व्यावसायिक रुचि, सामर्थ्य तथा सहकारी भावनाओं का विकास करना चाहिए।

5. **नागरिक शिक्षा (Civic Education)-** अमेरिका के भावी नागरिकों योग्य नागरिक बनाने के लिए जिससे वे राष्ट्र, समाज, संसार तथा व्यक्ति के लिए सहयोगी और लाभप्रद सिद्ध हो सके, शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिए।

6. **अवकाश काल का सदुपयोग (Worthy use of Leisure Time)-** माध्यमिक शिक्षा द्वारा अवकाश का सदुपयोग करने की सामर्थ्य उत्पन्न होनी चाहिए। इस अवकाश के समय को बालक अपने व्यक्तित्व के निर्माण में शारीरिक तथा मानसिक स्तर के निर्माण में सफलतापूर्वक व्यतीत कर सके, ऐसी शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिए।

7. **नैतिक चरित्र का निर्माण (Formation Ethical Character)-** माध्यमिक शिक्षा के स्तर पर उन क्रियाओं को समन्वित करना चाहिए जो नागरिक के शतक चरित्र का निर्माण कर सके और राष्ट्र के नैतिक वातावरण के गठन में योग दे सके ।

1933 ई0 में माध्यमिक शिक्षा के पुनर्संगठन की आवश्यकता अनुभव हुई। इस पुनर्संगठन हेतु अमेरिका की सामाजिक एवं आर्थिक लक्ष्य निर्धारण समिति (Committee on Socio- Economic Goals of America) का निर्माण किया गया। 1918 ई0 में निर्मित समिति ने व्यक्तिवादी शिक्षा के विकास के आधार पर व्यक्तिगत विकास पर अधिक बल दिया था, परन्तु इस समिति ने सामाजिक तथा सहकारी शिक्षा - कार्यक्रमों द्वारा सामाजिक विकास पर अधिक जोर दिया।

माध्यमिक शिक्षा के कार्य

(Functions of Secondary Education)

माध्यमिक शिक्षा प्रधानाचार्य-दिमाग द्वारा संस्थापित शिक्षा-पुनर्व्यवस्था समिति ने माध्यमिक शिक्षा के अंग्राकित कार्य निर्धारित किए:-

1. **ज्ञानवृद्धि तथा समाकलन करना (Development of Knowledge and Integration):-** माध्यमिक शिक्षा का कर्तव्य है कि वह छात्र-छात्राओं की ज्ञानवृद्धि तथा समाकलन (Integration of Knowledge) निर्धारित कार्यक्रमों के अनुसार करे, भले ही वे कार्यक्रम अर्धामुख-क्रम में ही क्यों न हो। इन सबका निरंतर अभ्यास चलता रहना चाहिए।

2. **सम्भाव्य भावी आवश्यकताओं की पूर्ति करना (Fundamental of Probable Future needs)-** छात्र-छात्राओं की क्षमता रुचि और परिपक्वता को ध्यान में रखते हुए तथा उनको आवश्यकताओं के वैयक्तिक और सामाजिक मूल्यों को समझाते हुए

उनकी सम्भाव्य आवश्यकताओं को संतुष्ट करने की अधिकाधिक क्षमता देने के लिए माध्यमिक शिक्षा का पुनर्संगठन करना आवश्यक है।

3. **परम्परागत, सांस्कृतिक तथा समकालिक सामाजिक कर्तव्यों का ज्ञान देना (Providing Knowledge about the traditional , culture and contemporary social duties)-** आधुनिक माध्यमिक शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि वह भावी नागरिकों में जाति, वंश, परम्परा, संस्कृति, समाज और व्यक्ति के प्रति प्रगतिशील कार्यक्रमों की प्रवृति उत्पन्न कर सके और इनके प्रति प्रगतिशील कार्यक्रमो के माध्यम से कर्तव्य-परायणता का निर्वाह कर सके।

4. **विशिष्ट योग्यता के प्रति जागरुकता उत्पन्न करना (Create awareness towards specific ability)-** माध्यमिक शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि वह छात्र-छात्राओं में विशिष्ट अध्ययन, विशेष योग्यता प्राप्त करने की क्षमता तथा रुचि उत्पन्न करे।

5. **पूर्वज्ञान से सह-सम्बन्धी नवीन ज्ञान की व्यवस्था (Provision of new knowledge related to previous knowledge)-** माध्यमिक शिक्षा द्वारा विद्यार्थियों के पूर्व-ज्ञान पर आधारित नवीन ज्ञान की रुपरेखा इतनी क्रमबद्ध होनी चाहिए कि बालक ज्ञान के नियम, सिद्धांत और महल को जा जानकर ज्ञान को सरलतापूर्वक आत्मसात् कर ले।

6. **मानवीय कार्यो के क्षेत्र में रुचि लेने की प्रवृति उत्पन्न करना (Development of attitude to take interest in the area of human activities)-** छात्र-छात्राओं के व्यक्तिगत सुख तथा सामाजिक प्रगति को साधन बनाते हुए विस्तृत मानवीय कार्यक्षेत्र में रुचि उत्पन्न करने का कार्य भी माध्यमिक शिक्षा के द्वारा होना चाहिए।

7. **प्रगतिशील शिक्षण-विधियों, स्वतन्त्र चिंतन तथा अनुसंधानपूर्ण सिद्धांतों का उपयोग (Utilization of Progressive teaching methods, independent thinking and research principles)-** इस स्तर की शिक्षा द्वारा स्वतन्त्र विचारों की माँग अनुसंधान के प्राथमिक सिद्धांतों का कार्यान्वयन, सहकारी तथा व्यक्तिगत बुद्धिमता, स्व-निर्देशित अभ्यास आदि के शैक्षिक कार्यक्रम संचालित किए जाने चाहिए।

अनुकूल प्रदान करने वाली इस नवीन सुझावात्मक संस्तुति ने प्रत्येक विद्यालय के प्रशासन वर्ग को माध्यमिक शिक्षा के सम्बन्ध में पुन: विचार करने के लिए विवश कर दिया। धीरे-धीरे पाठ्यक्रमों में शिक्षा-नीतियों में और उद्देश्यों में जीवनी के अनुकूलन को महत्व दिया गया। स्थानीय वातावरण, आवश्यकता और परम्पराओं के अनुसार आयोग द्वारा निर्धारित नीतियों का अनुसरण किया गया। विविध कठिनाइयों के प्रस्तुत होने पर भी संतुलित और उपयोगी अनुकुलता प्रदान करने वाले पाठ्यक्रम निर्मित किए गये।

माध्यमिक शिक्षा का स्वरुप एवं संगठन

(The nature and organization of secondary education)

विविध आयोगों की नियुक्तियों और उनकी संस्तुतियों के परिणामस्वरुप समय-समय पर माध्यमिक शिक्षा के स्वरुप और संगठन में परिवर्तन आता गया और शिक्षा का स्वरुप वर्तमान स्थिति में आ सका।

माध्यमिक, विद्यालयों का वर्गीकरण

(Classification of Secondary Institution)

जूनियर माध्यमिक विद्यालयों की व्यवस्था

(Organization of Junior High School)

अमेरिकी शिक्षाविद्दों ने यह देखा कि प्राथमिक शिक्षा प्रचलित 8 वर्ष की छात्र-छात्राओं की मानसिक तथा शारीरिक आवश्यकताओं के अनुकूल नही है। अंत के 2 वर्ष किशोर-किशोरियों की आवश्यकताओं के अनुकूल नही है। साथ-साथ 4 वर्षीय माध्यमिक स्तर का पाठ्यक्रम प्राथमिक स्तरीय शिक्षा समाप्त करके आने वाले छात्र-छात्राओं के लिए पूर्णतया नवीन होता है। जिसके अनुकूल ढलने में उन्हे अधिक समय लग जाता है।

जूनियर माध्यमिक स्तर पर किशोर अवस्था का प्रारम्भ होता है। इस स्तर पर किशोर तथा किशोरियों की आयु 12 वर्ष से 14 वर्ष तक रहती है। इस पाठ्यक्रम में संयुक्त विषयों तथा एकरुपक विषयों का समावेश करके कर्मपूर्वक शिक्षण-व्यवस्था की जाती है। संयुक्त विषय एक ही शिक्षण द्वारा लंबी अवधि तक पढ़ाए जाते है। विषय-संवर्ग में अंग्रेजी, सामाजिक, अध्ययन-शास्त्र अथवा सामाजिक अध्ययन और विज्ञान अधिक सामान्य है। अतिरिक्त विषयों में गृह-अर्थशास्त्र, औद्योगिक कला, संगीत, कला आदि प्रमुख है। जूनियर माध्यमिक विद्यालय अधिकांशत: उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों से पृथक् भवनों में स्थित है।

उच्चतर माध्यमिक विद्यालय-व्यवस्था

(Organization of Senior Secondary School)

नवीन वर्ग-पद्धति के अनुसार इस स्तर पर क्रमश: दशम, एकादश तथा द्वादश कक्षाएँ सन्निहित होती है। उच्चतर माध्यमिक व्यवस्था 6 (3+3) +2 की व्यवस्था का स्वरुप है। उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में प्रवेशार्थ कोई परीक्षा नहीं ली जाती, परन्तु छात्र-छात्राओं की व्यक्तिगत रुचि, क्षमता, सामर्थ्य और अवस्था का ध्यान रखा जाता है तथा यह भी विचार किया जाता है कि यह शिक्षा प्रवेश पाने वाले बालक-बालिकाओं के लिए उपयोगी भी होगी। प्रवेश से पूर्व बालकों की मानसिक आयु का मापन किया जाता है। प्रवेश हेतु शारीरिक व्यस्कता मापन की प्रक्रिया में भार, ऊँचाई, शारीरिक माप तथा स्वास्थ्य अभिलेखों पर ध्यान दिया जाता है।

पाठ्यक्रम की दृष्टि से 3 वर्षीय तथा 4 वर्षीय पाठ्यक्रम व्यवस्थाओं में पर्याप्त समानता मिलती हैं। वे माध्यमिक विद्यालय भी जहाँ उच्चतर - निम्नतर स्तरों का प्रश्न नहीं है, शिक्षा-लक्ष्य, शिक्षा-पद्धति, मार्ग-प्रदर्शन, अध्यापक-व्यवस्था तथा छात्र-व्यवहार की दृष्टि से

समान, प्रगतिशील और उदार है। इन विद्यालयों में प्रावैधिक विद्यालय मैमी, फलोरिडा संगीत एवं कला माध्यमिक विद्यालय और ऑटोमोटिव हेड न्यूयार्क स्मरणीय है।

पाठ्यक्रम के अनुसार माध्यमिक विद्यालयों का वर्गीकरण

(Classification of Secondary Schools according to curriculum)

सामान्य विद्यालय (Common School)

सामान्य विद्यालय दो प्रकार के है:-

1. व्यापक विद्यालय (Comprehensive Schools)-

इन स्कूलों में शिक्षा की अवधि चार वर्ष की होती है। इनमें सभी को निःशुल्क शिक्षा प्रदान की जाती है। यहाँ कई विषय पढ़ाए जाते है। यहां आधुनिक शिक्षण विधियों का अभाव रहता है। ये विद्यालय ग्रामीण क्षेत्रों में लोकप्रिय होते है।

2. सीमित विद्यालय (Limited Schools)

इन विद्यालयों में स्थानीय (क्षेत्रीय) बच्चों के लिए तकनीकी और औद्योगिक शिक्षा प्रदान की जाती है। विषयों का चुना सीमित होता है।

विशिष्टीकरण विद्यालय (Specialization Schools)

इन विद्यालयों में आधारभूत और विशिष्टीकृत व्यवसायिक शिक्षा प्रदान की जाती है। इनमें तकनीकी शिक्षा भी प्रदान की जाती है। ऐसे विद्यालयों से मिलते जुलते शैक्षिक और औद्योगिक केन्द्र स्थापित किए गए है।

अंशकालिक विद्यालय (Part-Time Schools)

इन विद्यालयों की स्थापना उन प्रौढ़ों या व्यस्कों के लिए की जाती है जो किसी व्यवसाय में लगे हुए है और शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं।

माध्यमिक शिक्षा - पाठ्यक्रम एवं शैक्षिक कार्यक्रम

(Secondary Education Curriculum and Education Programmes)

शिक्षण कार्यक्रम (Educational Programmes)

प्राथमिक स्तर पर सभी विषय अनिवार्य होते है। परन्तु माध्यमिक स्तर पर विशिष्ट विषय-वर्गो की व्यवस्था की गई है। इन विषय-वर्गो की संस्थापना स्थानीय समाज की आवश्यकताओं और विद्यालय के आकार तथा क्षेत्र पर निर्भर करती है। नागरिक क्षेत्रों में विषय-वर्गो की संख्या 20 से लेकर 30 तक होती है। परन्तु देहातों में एक-वर्गीय माध्यमिक विद्यालय भी पर्याप्त संख्या में है। इस प्रकार विद्यालय में बहुत रुचिकर विषय तथा अध्ययन का अवसर मिलता है।

माध्यमिक विद्यालयों में 3 प्रकार के विषय-पाठ्यक्रम पाये जाते है। एक तो अनिवार्य जिन्हें सभी छात्र-छात्राओं को पढ़ना आवश्यक है। दूसरे अर्द्धअनिवार्य विषय है, जो सबके लिए

अनिवार्य न होकर उन छात्र-छात्राओं के लिए ही अनिवार्य है जो उन विषयों से सम्बन्धित विशिष्ट वर्ग में प्रविष्ट होना चाहते है और तीसरे परिवर्तनीय विषय (Variable Subjects) होते है जिनमें उदार वैकल्पिक पाठ्यक्रम व्यवस्था होती है। इस प्रकार प्रत्येक माध्यमिक विद्यालय में विषयों तथा विषय वर्गो की संख्या स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरुप भिन्न-भिन्न पायी जाती है। विषय चयन की अवस्था निम्नतर माध्यमिक कक्षाओं के अंतिम वर्ष में अथवा माध्यमिक स्तर के प्रथम वर्ष में ही की जाती है। 4 वर्षीय माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के प्रथम वर्ष में विषय-चयन की आवश्यकता पडती है।

माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम का विस्तार पुनर्सगठन तथा आवश्यकताओं से पूरित योजनाओं के कारण हुआ है। इस स्तर पर लगभग 290 विषयों तक की अवस्था है। बडे नगर के एक माध्यमिक विद्यालय में 100 तक विषय होते है जिन्हें छात्र अपनी रुचि क्षमता और आवश्यकताओं के अनुकूल चुनते है। इस स्तर पर कृषि, उद्योग, व्यापार आदि के आधारभूत प्रशिक्षण (Basic Training) की व्यवस्था की जाती है। इस स्तर के प्रथम वर्ष में समाजशास्त्र, प्रयोगात्मक विज्ञान, शारीरिक शिक्षा, गणित तथा अंग्रेजी भाषा का चुनाव हुआ करता है।

व्यावसायिक. सांस्कृतिक एवं पाठ्येतर कार्यक्रम

(Vocational, Cultural and Co-curricular Programmes)

कुछ स्थानों पर व्यावसायिक. तथा विशिष्ट प्रशिष्ट प्रशिक्षण विद्यालय सामान्य शिक्षा विद्यालयों से भिन्न है। सम्मिलित प्रणाली से यह लाभ होता है कि कलात्मक, वैज्ञानिक तथा वाणिज्यात्मक वर्ग के विद्यार्थी भी जीवनोपयोगी व्यावसाय के विषय को पढ़ करके जीवन-निर्वाह का साधन प्राप्त कर लेते है अथवा अधिक दक्षता प्राप्त करने के लिए विशिष्ट व्यावसायिक विद्यालयों में जाकर अतिरिक्त दक्षता प्राप्त कर लेते है और जीवनोपयोगी व्यवसाय अपना लेते है।

अमेरिका में व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम को चार वर्गो में विभाजित किया जा सकता है:-

1. औद्योगिक शिक्षा (Industrial Education)

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत मशीन जैसे मोटर इंजन, रेलवे इंजन, हवाई जहाज, रेडियों, विद्युत, खदान, पेटिंग आदि में प्रशिक्षण सम्मिलित होता है। प्रशिक्षण काल में विद्यार्थियों को सामान्य विषयों जैसे गणित, कला, विज्ञान आदि, जिनका औद्यगिक क्षेत्र में समय-समय पर प्रयोग किया जाता है, के विभिन्न प्रयोगों को सिखाया जाता है व प्रशिक्षण दिया जाता है।

2. व्यवसाय एवं वाणिज्य शिक्षा (Business and Commerce Education)

इस प्रकार के कोर्स प्रदान. करने का प्रमुख उद्देश्य नवयुवकों एवं नवयुवतियों के लिए नौकरी की सुविधा प्रदान करना तथा साथ ही साथ उन्हें अपने कार्य अधिक अच्छे कौशल तथा कुशलता से करने के योग्य बनाना है। टाइपिंग एवं शार्टहैंड के साथ-साथ इसमें होटल चलाने, मर्चेण्टशिप, स्टोरेज आदि का प्रशिक्षण भी शामिल है।

3. कृषि शिक्षा (Agricultural Education)

वर्तमान समय में कृषि शिक्षा अमेरिका में अधिक प्रगति पर है। इस प्रणाली में कक्षाकक्ष अध्ययन के साथ-साथ कृषकों के साथ खेतों में काम करना भी शामिल है और नवयुवकों को कृषि से सम्बन्धित जैसे खेत तैयार करना, उत्पादन, उत्पादन का उपयोग तथा बिक्री आदि का प्रशिक्षण दिया जाता है। कृषि शिक्षा सबंधी क्रियाओं के लिए विद्यालयों के पास अपने भवन तथा खेत होते हैं। स्कूलों के पास आधुनिक यंत्रों की भी व्यवस्था होती है।

4. गृह-आर्थिक शिक्षा (Home-Economic Education)

इस प्रकार की शिक्षा का उद्देश्य व्यस्क लड़कों एवं लड़कियों को पारिवारिक जीवन का प्रशिक्षण दिया जाता है जिससे उन्हें परिवार का योग्य सदस्य बनने के लिए तैयार किया जा सके। इसके कार्यक्रम में गृहसज्जा, खाना पकाना, स्वास्थ्य की देखभाल, बच्चों की देखभाल, पारिवारिक समायोजन आदि का प्रशिक्षण शामिल होता है।

माध्यमिक विद्यालयों में व्यावसायिक तथा सामान्य शिक्षा के शिक्षण के साथ-साथ पाठ्यक्रम, के अतिरिक्त कार्यक्रम भी संचालित होते है। इन कार्यक्रमों द्वारा नागरिकता के गुणों के विकास में सहायता प्राप्त होती है। सामूहिक खेलकूद, साहित्य सम्बन्धी योजनाओं, मनोरंजन तथा अवकाशकालीन अवसर के सदुपयोग के लिए विविध संस्थाओं की रचना की जाती है। जहां विद्यार्थी रचनात्मक कार्य करके दुर्लभ मानवीय गुणों को अर्जित करते है।

अध्यापक शिक्षा

(Teacher Education)

अमेरिका में अध्यापक शिक्षा में क्षेत्रीय भिन्नताएं स्पष्ट रुप से दिखाई देती है। भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रशिक्षण संस्थान इस कार्य में कार्यरत है। शिक्षा को एक कौशल के रुप में स्वीकार करते हुए प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। वर्तमान समय मे अमेरिका में अध्यापक प्रशिक्षण के लिए कई विभाग स्थापित लिए गए है:-

1. नार्मल विद्यालय (Normal Schools)

नार्मल विद्यालयों को माध्यमिक विद्यालयों के समान माना जाता है। वर्तमान समय में सभी नार्मल स्कूलों को प्रशिक्षण महाविद्यालयों में बदल दिया गया है।

2. अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय (Teacher's Training Colleges)

1920 तक साधारण प्रशिक्षण महाविद्यालयों की स्थापना की गई थी जहां शिक्षा विज्ञान में शिक्षा प्रदान की जाती थी। इसके बाद शिक्षा विज्ञान को व्यावसायिक रुप प्रदान किया गया और सामान्य शिक्षा के साथ-साथ अध्यापकों के व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए भी प्रबंध किया गया।

3. शिक्षा विद्यालय (Schools of Education)

शिक्षा विद्यालय किसी विश्वविद्यालय से संबंधित होते है। यहां सामान्य शिक्षा के लिए एकीकृत पाठ्यक्रम प्रदान किया जाता है और शिक्षा दर्शन, संस्कृति, साहित्य एवं विभिन्न भाषाओं की शिक्षा दी जाती है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

Self Evaluation Questions

1. संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रचलित माध्यमिक शिक्षा- व्यवस्था के विकास का वर्णन कीजिए।

   Explain the development of present secondary education structure in U.S.A.

2. संयुक्त राज्य अमेरिका में माध्यमिक शिक्षा के प्रमुख उद्देश्यों को लिखिए।

   Write the important aims of secondary education in U.S.A.

3. माध्यमिक विद्यालयों के वर्गिकरण की व्यवस्था कीजिए।

   Explain the classification of secondary schools.

4. अमेरिका मे अध्यापक शिक्षा का वर्णन कीजिए।

   Explain teacher education in U.S.A.

8.2 ब्रिटेन में माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education in Britain)

माध्यमिक शिक्षा का ऐतिहासिक विकास

(Historical development of Secondary Education)

1914-18 ई० के प्रथम विश्व युद्ध का भयानक प्रभाव इंग्लैंड की शिक्षा-अवस्था पर भी पडा। यह प्रभाव शिक्षा-क्षेत्र के लिए घातक सिद्ध हुआ, दूसरी और इससे शिक्षा-क्षेत्र में कुछ लाभ भी उत्पन्न हुए। विश्व युद्ध द्वारा प्रारम्भिक शिक्षा अधिक प्रभावित नहीं हुई। इसका प्रभाव माध्यमिक शिक्षा पर अधिक पड़ा। विश्वयुद्ध का एक अच्छा प्रभाव यह पड़ा कि प्रारम्भिक शिक्षा-क्षेत्र इससे अछूता रहा और विद्यालयों के छात्रों ने युद्धकालीन स्थिति में राष्ट्रीय समाज के लिए क्रियाशील उपयोगी समाज सेवाएँ और खेती के कार्य किये।

फिशर-अधिनियम, 1918

(Fisher Act,1918).

ग्रेट-ब्रिटेन की राष्ट्रीय शिक्षा-व्यवस्था में यह अधिनियम विशिष्ट स्थान रखता है। इस अधिनियम के अनुसार प्रारम्भिक शिक्षा निःशुल्क कर दी गयी और शिक्षा-शुल्क, अनुदान-प्रणाली एवं स्थानीय सत्ताओं की पुनर्व्यवस्था पर बल दिया गया।

इस अधिनियम के अनुसार केवल वही ज्ञान वैज्ञानिक माना गया जो शिक्षा परिषद (Education Board) द्वारा स्वीकृत एवं निर्धारित होता था। यह भी निर्धारित किया गया कि स्थानीय शिक्षा सत्ताएँ जितना कुल व्यय करेगी उसका आधा कम से कम अनुदान के रुप में उन्हें प्राप्त होगा। इस अधिनियम के अनुसार विद्यालय और उद्योगों में थोडा सम्पर्क स्थापित हो सका परन्तु इस की संस्तुतियों को पूर्णरुप से लागू नहीं किया जा सका। इसके प्रमुख कारण थे।

1. विद्यालय - भवनों और शिक्षकों का अभाव था।

2. उद्योगपतियों का इस योजना में हार्दिक सहयोग उपलब्ध नहीं था।

हैड़ो समिति रिपोर्ट, 1926

(Hadow committee Report, 1926)

1926 ई० में इंग्लैड की परामर्शदात्री-समिति के अध्यक्ष सर डब्यू० एच० हैडो (W.H.Hadow) थे। इस समिति ने बालापराधियों की शिक्षा के सम्बन्ध में अपना प्रतिवेदन 1926 ई० में प्रस्तुत किया। समिति ने परामर्श दिया कि 11 वर्ष से 15 वर्ष के सभी बालकों को माध्यमिक शिक्षा मिलनी चाहिए। 11 वर्ष तक प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् बालकों को उच्चतर प्राथमिक शिक्षा मिलनी चाहिए।

इसलिए यह आवश्यक समझा गया कि अन्य उपयोगी माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना की जाये। इन विद्यालयों को ग्रामर स्कूल, आधुनिक विद्यालय (Modern School), वरिष्ट कक्षाएँ (Senior Classes) तथा निम्न श्रेणी के प्राविधिक विद्यालय (Junior Technical Schools) एवं व्यापार-विद्यालय कहा गया। इस समिति का प्रमुख सुझाव यह था कि प्रारम्भिक शिक्षा (Elementary Education) के स्थान पर प्राथमिक शिक्षा शब्द का उपयोग किया जाना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए चुने हुए आधुनिक विद्यालयों तथा वरिष्ठ कक्षाओं की स्थापना आवश्यक समझी गयी। सभी उच्चतर प्राथमिक शिक्षा देने बाले विद्यालयों को माध्यमिक विद्यालय नाम देने का सुझाव दिया।

शिक्षा अधिनियम, 1936

(Education Act, 1936)

हैडो समिति की संस्तुतियों को कार्यान्वित करने के लिए इस अधिनियम को पारित किया गया। इसके अनुसार विद्यालय को छोडने की आयु 1 सितम्बर, 1939 से 15 वर्ष कर दी गयी।

स्पेन्स-प्रतिवेदेन, 1938

(Spens Report,1938)

इस समिति ने परीक्षणों के आधार पर छात्रों का वर्गीकरण करके विद्यालयों की स्थापना पर बल दिया। 11 वर्ष से उपर की आयु के बालकों की शिक्षा पर सुधारात्मक सुझाव प्रस्तुत किये। 13 वर्ष से अधिक आयु के बालकों के लिए पाठ्यक्रम इस प्रकार निर्मित किया जाना आवश्यक समझा गया कि छात्र - छात्राओं को उदार शिक्षा (Liberal Education) मिल सके। टेक्नीकल हाई स्कूल में एक ऐसा विद्यालय छोडने का प्रमाण पत्र चाहिए जिससे 13 वर्ष की आयु से अधिक आयु के बालकों को ग्रामर स्कूलों तथा प्राविधिक हाई स्कूलों में पारस्परिक स्थानान्तरण करने में असुविधा न हो।

नौरवुड समिति. 1914

(Narwood Committee,1914)

इस प्रतिवेदन में नौरवडु समिति ने शिक्षार्थियों को तीन वर्गो में विभक्त किया।

1. वे बालक जो प्रयोगात्मक एवं व्यवहारिक कार्यो में रुचि लेते है, सूक्ष्म बातों में रुचि न लेकर व्यावहारिक कार्य करते है।

2. वे बालक व्यवहृत कला एवं व्यवहत विज्ञान में रुचि लेते है।
3. वे बालक जो ज्ञान के लिए ज्ञान प्राप्त करते है वे किसी बात के मूल में पहुँचने का प्रयास करते है और कारणों पर विशेष ध्यान देते है।

प्रथम वर्ग के बालकों के लिए आधुनिक माध्यमिक विद्यालय (Modern Secondary School) दूसरे वर्ग के बालकों के लिए माध्यमिक प्राविधिक विद्यालय (Secondary Technical School) तीसरे वर्ग के लिए ग्रामर स्कूल उपयुक्त होंगे। इस कार्य के लिए बुद्धि परीक्षण, क्रियात्मक परीक्षण काम में लाये जा सकते है।

फलेमिंग- समिति 1942

(Flemming Committee, 1942)

सामान्य शिक्षा और पब्लिक स्कूलों के मध्य. सम्पर्क स्थापित करने के लिए इस समिति का गठन किया गया। इस समिति ने पब्लिक स्कूलों द्वारा सभी वर्गो के बालकों के लिए शिक्षा देने की योजना बनायी। ए तथा बी योजना के विद्यालय संचालित करने का सुझाव किया। नवीन योजना संचालित करने का सुझाव दिया। नवीन योजना न देकर सामंजस्य की नीति प्रयुक्त की। जनता ने इससे संतुष्टी नहीं पायी। फिर भी इसने मलिक स्कूल तथा राजकीय शिक्षा व्यवस्था के समन्वय का आधार प्रस्तुत किया।

माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य

(Objective of Secondary Education)

ब्रिटेन की माध्यमिक शिक्षा में 'ग्रामर स्कूलों' तथा सन् 1944 के अधिनियम का विशेष महत्व है। इस शिक्षा अधिनियम के अनुसार पूर्णकालीन अनिवार्य माध्यमिक शिक्षा की व्यवस्था करने का सुझाव दिया गया। छात्र-छात्राओं की अधिकतम आयु 15 वर्ष निश्चित हुई और माध्यमिक शिक्षा अवधि 3 वर्षीय स्वीकार की गयी।

ब्रिटेन की माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य इस प्रकार है:-

1. प्राचीन भाषाओं, लैटिन तथा ग्रीक का बोध कराना।
2. भाषा कौशलो- लिखने-पढने तथा बोलने का विकास करना।
3. छात्रो के शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य का विकास करना।
4. नागरिकता के गुणों एवं उत्तरदायित्वों का विकास करना।
5. राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं को समझने का विकास करना।
6. प्रजातांत्रिक गुणों तथा नेतृत्व के गुणों का विकास करना।
7. छात्रों को किसी व्यवसाय के लिए तैयार करना।
8. वैज्ञानिक' अभिवृति का विकास करना।
9. नैतिक मूल्यों एवं आचरण का विकास करना।
10. अवकाश के समय के सद्उपयोग की क्षमताओं का विकास करना।

अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं द्वारा छात्र-अध्यापकों में उपरोक्त उद्देश्यों का ज्ञान एवं कौशल का विकास किया जाता है तथा उन्हें प्रशिक्षित भी किया जाता है।

माध्यमिक विद्यालयों में प्रशिक्षित अध्यापकों की ही नियुक्ति की जानी है।

(Classification of Secondary Schools)

ब्रिटेन में वर्तमान समय में माध्यमिक विद्यालयों को निम्नलिखित भागों में वर्गीकृत किया जाता है:-

1. **द्विपक्षीय और विस्तृत विद्यालय (Bilateral and Comprehensive Schools)-** द्विपक्षीय विद्यालय दो प्रकार के हैं- मान्यता प्राप्त और अमान्यता प्राप्त। द्विपक्षीय विद्यालयों की संस्था बहुत कम है। इनमें विद्यार्थियों को मिश्रित पाठ पढ़ाया जाता है, जिसमें ग्रामर विद्यालयों के आवश्यक मूल तत्व होते हैं। इनको विस्तृत तभी माना जाता है जब यहां लड़के और लड़कियों दोनों को उनकी रुचियों, रुझानों व आवश्यकताओं के अनुरुप एक ही प्रकार की शिक्षा प्रदान की जाती है ।

2. बहुपक्षीयऔर अन्य माध्यमिक विद्यालय (Multilateral and other Secondary School)- इन विद्यालयो को बहुपक्षीय विद्यालयो कहा जाता है क्योंकि इनके पाठ्यक्रम में ग्रामर, आधुनिक और तकनीकी विद्यालयों के आवश्यक मूल-तत्वो का समावेश होता है। परन्तु इन विद्यालयों में भिन्न-भिन्न प्रकार के पाठ्यक्रमों के लिए पर्याप्त उपकरण नहीं होते। बहुपक्षीय विद्यालयो के अतिरिक्त केन्द्रीय विद्यालय, क्षेत्रीय विद्यालयो, उन श्रेणी विद्यालयो और इण्टरमीडियेट विद्यालय भी है। इनमें भी ग्रामर, तकनीकी और आधुनिक विद्यालयों के संयुक्त कोर्स प्रदान किए जाते हैं।

3. **ग्रामर विद्यालय (Grammar Schools)-** ये देश के सबसे पुराने प्रकार के विद्यालय हैं। इनमें धार्मिक शिक्षा अनिवार्य है। इनमें स्वास्थ्य शिक्षा एवं पाठ्येन्तर क्रिया-कलापों का भी प्रावधान है। शिक्षा के सामान्य प्रमाणपत्र की परीक्षा के लिए इनमें विशेष कोर्स का प्रबंध किया जाता हैं।

4. **आधुनिक माध्यमिक विद्यालय (Modern Secondary Schools)-** 1945 में उच्चतर प्राथमिक विद्यालयों को आधुनिक माध्यमिक विद्यालयों में परिवर्तित कर दिया गया। इनके द्वारा मुख्य विषयों में अंशकालिक और पूर्णकालिक विशिष्टीकृत व्यावसायिक कोर्सो. का प्रबंध किया जाता है। इनमें सामान्य कोर्स के आधुनिक विद्यालय सामान्य और विशेष शिक्षा प्रदान करने वाले, सीनियर प्राथमिक विद्यालयों से मिलते जुलते तथा कुछ विषयों में उच्च स्तरीय शिक्षा देने वाले आधुनिक विद्यालय सम्मिलित है।

5. **तकनीकी माध्यमिक विद्यालय (Technical Secondary Schools)-** तकनीकी विद्यालय ग्रामर विद्यालयों की भांति लोकप्रिय नहीं है। इन विद्यालयों में प्रवेश की आयु सीमा 12 वर्ष है जबकि अन्य विद्यालयों में 11'वर्ष है। इनमें व्यस्कों के तकनीकी साधनों का उपयोग किया जाता है।

6. **बालिकाओं हेतु निजी विद्यालय (Private Schools for Girls)-** बालिकाओं को माध्यमिक शिक्षा प्रदान करने के लिए निजी विद्यालयों की व्यवस्था अलग से की गई है। इन स्कूलों में माध्यम एवं उच्च परिवार की लड़कियां शिक्षा प्राप्त करती है। इन स्कूलों की शिक्षा का उद्देश्य एक अच्छी घरेलू महिला के गुणों का विकास करना है। इसलिए ऐसे पाठ्यक्रमों-

संगीत, चित्रकला, सिलाई, कढ़ाई, गृह-विज्ञान के साथ फ्रेंच तथा इटालियन भाषाओं का पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया।

माध्यमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम

(Curriculum of Secondary Education)

आरम्भ में माध्यमिक विद्यालयों को ग्राम स्कूलों के नाम से जाना जाता था। इनमें प्राचीन भाषाओं को विशेष महत्व दिया जाता है। शिक्षण में लैटिन के अध्ययन को पाठ्यक्रम में विशिष्ट स्थान दिया जाता था। विद्यालय में लैटिन और ग्रीक भाषाओं को पढाया जाता था। लैटिन तथा ग्रीक के अतिरिक्त अन्य स्थानीय भाषाओं का शिक्षण भी किया जाता था।

सन् 1805 से लीड्स पब्लिक स्कूलों में आधुनिक भाषा लिखने, पढने व बोलने तथा गणित को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया परन्तु अन्य पब्लिक विद्यालयों के पाठ्यक्रम में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। सन् 1844 में ग्रामर स्कूल अधिनियम बनाया गया। इस अधिनियम के अनुसार पब्लिक स्कूलों को स्वतन्त्रता दी गई। प्रधानाध्यापक अपने स्कूल में जो विषय पढ़ाना चाहता था, पाठ्यक्रम में सम्मिलित कर सकता था। परन्तु इन विषयों को पढ़ाने के लिए शिक्षकों को बाध्य नहीं किया जा सकता हैं लॉक तथा सिडनी स्मिथ ने पब्लिक स्कूलों के पाठ्यक्रमों की कमियों का उल्लेख किया है:-

1. गरीब व्यक्ति अपने बच्चों को स्कूलों में भेजने में असमर्थ रहते थे।
2. कुछ व्यक्ति ग्रामर स्कूलों का विरोध करते थे। इन स्कूलों में अपने बच्चों को पढ़ने नहीं भेजते थे।
3. क्योंकि कुछ लोग व्यापारी समुदाय से अपने बच्चों को दूर रखना चाहते थे।
4. निजी विद्यालयों में अधिक विषयों को पाठयक्रम में सम्मिलित किया जाता था। इतिहास, ' भूगोल भाषाएँ, कला तथा गणित अंग्रेजी एवं फ्रेंच भाषा, संगीत, पेंटिंग मुद्रण तथा मॉडलिग को सम्मिलित किया गया।
5. आधुनिक शिक्षण विधियों का उपयोग किया जाता था तथा प्रयोगात्मक कार्यो पर बल दिया जाता था।
6. इन स्कूलों में छात्रों को अधिक स्वतन्त्रता दी जाती थी। विद्यालय का प्रजातांत्रिक वातावरण होता था। छात्र अनुशासन का अनुरक्षण स्वयं करते थे। छात्र की त्रुटियों हेतु छात्रों की समिति ही आर्थिक दण्ड का निधारण करती थी।

सन् 1988 में शिक्षा में सुधार अधिनियम पारित हुआ। इसमें प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा के राष्ट्रीय पाठ्यक्रम का शुभारंभ किया। इंग्लैंड तथा वेल्ज में माध्यमिक तथा माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम का राष्ट्रीयकरण सन् 1989 से किया गया। जिसके अंतर्गत चार अवस्थाओं में पाठ्यक्रम को विभाजित किया प्रथम अवस्था 7 वर्ष की आयु के लिए, द्वितीय अवस्था 7 से 11 वर्ष की आयु के लिए, तृतीय अवस्था 11 से 14 वर्ष की आयु के लिए और चतुर्थ अवस्था 14 से 16 वर्ष तक रखी गई। राष्ट्रीय पाठ्यक्रम प्राय: तीन अवस्थाओं में 5 से 14 वर्ष के बालकों के लिए जिसमें अधिकांश शिक्षण का समय (17 प्रतिशत) मूल तीन विषयों अंग्रेजी, गणित तथा विज्ञान में लगाया जाये और अन्य विषयों- इतिहास, भूगोल, तकनीकी, संगीत तथा

विदेशी भाषाओं में अनिवार्य विषयों के रुप में सम्मिलित किया। माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में प्रतिदिन धार्मिक शिक्षा दी जाती है। इसाई धर्म की शिक्षा को प्राथमिकता दी जाती है। कुछ विद्यालयों में रोमन कैथोलिक धर्म की शिक्षा भी दी जाती है।

माध्यमिक शिक्षा की परीक्षा प्रणाली

(Examination of Secondary Education)

मुख्य परीक्षा माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों इंग्लैंड, वैल्स तथा आयरलैण्ड में 16 वर्ष की आयु के छात्रों हेतु आयोजित की जाती है। छात्रों के उतीर्ण होने पर माध्यमिक शिक्षा का सामान्य प्रमाण पत्र प्रदान किया जाता था। बाद में इस प्रमाण पत्र को सामान्य शिक्षा प्रमाण पत्र में बदल दिया गया। सामान्य प्रमाण पत्र के पाठ्यक्रमों को 1786 से लागू किया और माध्यमिक शिक्षा का प्रमाण-पत्र भी दिया जाने लगा। परीक्षा परिषद् परीक्षा की कार्यप्रणाली की समीक्षा भी करती रहती है। ब्रिटेन सरकार ने 1994 से अंग्रेजी, गणित तथा विज्ञान विषयों में अनिवार्य परीक्षणों का शुभारंभ से 14 वर्ष आयु के लिए किया, जिसके आधार पर छात्रों को तकनीकी पाठ्यक्रमों में प्रवेश दिया जाये।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. ब्रिटेन की माध्यमिक शिक्षा के मुख्य उद्देश्य क्या है?
   What are the main object of secondary education in Great Britain?
2. ब्रिटेन में ग्रामर स्कूल आधुनिक माध्यमिक स्कूल से किस प्रकार भिन्न है?
   How is a Grammar school different from the Modern secondary School in Britain?
3. ब्रिटेन में माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम और उसमें सुधार का वर्णन कीजिए।
   Explain the curriculam and reform in the secondary Education of Great Britain?

8.3 रुस में माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education in Russia)

प्रारंभ में रुस की सरकार ने वर्षीय से 17 वर्षीय बालकों दे लिए एक दस-वर्षीय विद्यालय योजना (Ten year school plan) को संचालित किया था। इसमें विद्यालय केन्द्रीयकरण की धारणा मुख्य थी। इस प्रकार के विद्यालयों में प्राथमिक शिक्षा से लेकर माध्यमिक स्तर की शिक्षा व्यवस्था की गई थी। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद यह योजना बंद कर दी गई और इस दस वर्षीय शिक्षा को 3 वर्गों में विभक्त कर दिया गया। पहले 4 वर्ष प्राथमिक स्तर की शिक्षा हेतु तथा अत के 6 वर्ष माध्यमिक दो वर्ग निर्धारित किए गए। इस प्रकार 1 से 4 तक प्राथमिक शिक्षा वर्ग कक्षा 5 से 7 तक निम्न माध्यमिक शिक्षा वर्ग एवं कक्षा 8 से 10

तक माध्यमिक शिक्षा वर्ग निर्धारित किए गए। निम्न माध्यमिक वर्ग 12 से 13 वर्ष की आयु के बालकों के लिए और माध्यमिक वर्ग 15 से 17 वर्ष की आयु के बालकों के लिए निर्धारित हुए।

रुस में सप्तवर्षीय व्यवस्था तथा षटवर्षीय व्यवस्था प्रचलित है। सप्तवर्षीय व्यवस्था में 4 वर्षीय प्राथमिक शिक्षा के साथ 3 वर्षीय निम्न माध्यमिक शिक्षा भी संलग्न कर दी गई है। बाद की 3 वर्षीय माध्यमिक उसी भवन में या निकट के किसी भवन में संचालित कर दी जाती है। षटवर्षीय व्यवस्था में 3 वर्ष का माध्यमिक तथा 3 वर्ष का माध्यमिक पाठ्यक्रम संचालित होता है।

लगभग 10 प्रतिशत छात्र 7 वर्ष की आयु में प्रवेश लेकर 10 वर्ष विषयों का अध्ययन करते है। लगभग 20 प्रतिशत छात्र 6 वर्ष की आयु में प्रदेश लेकर 11 वर्ष पाठ्यक्रम का अध्ययन करते तथा लगभग 10 प्रतिशत छात्र 7 वर्ष की आयु में प्रवेश लेकर 11 वर्ष पाठ्यवस्तु का अध्ययन करते है। माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करके 55 प्रतिशत छात्र उन शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश लेते है और शेष 15 प्रतिशत छात्र कोई कार्य करते और सेवारत छात्र के रुप में शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश लेते है।

रुस की सरकार ने फरवरी 1991 में एक अस्थायी अधिनियम पारित किया, जिससे सामान्य माध्यमिक शिक्षा में सुधार हुआ। इन विद्यालयों को शैक्षिक तथा आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त की गई, जिससे वे अपने पाठ्यक्रम पाठ्य-पुस्तकों तथा अन्य कार्यक्रमों का स्वयं निर्धारण कर सकते है तथा माध्यमिक स्तर के लिए अनेक प्रकार के पाठ्यक्रमों का विकास हुआ। शिक्षा मंत्रालय स्तर के लिए अनेक प्रकार के पाठ्यक्रमों का विकास हुआ। इसके परिणाम स्वरुप व्यापक माध्यमिक विद्यालय स्थापित किये गये। इन विद्यालयों में प्राथमिक, बेसिक विद्यालय तथा माध्यमिक विद्यालयों को सम्मिलित किया गया।

माध्यमिक शिक्षा योजना तथा सह शिक्षा

(Planning of Secondary education and को- Education)

10 वर्षीय विद्यालय योजना को अब प्राथमिक निम्न माध्यमिक एवं माध्यमिक कक्षाओं में बांट लिया गया है। निम्न माध्यमिक कक्षाओं (5, 6 तथा 7) को प्राथमिक कक्षाओं से जोड़कर सप्तवर्षीय विद्यालय स्थापित किये गये है। कुछ 3-3 वर्ष के पूर्व-विद्यालय है।

सहशिक्षा

(Co-Education)

केन्द्रीय सरकार की नीति के अनुसार 1943 ई0 तक प्रत्येक शिक्षा-स्तर पर बालक-बालिकाओं की शिक्षा साथ-साथ चलती रही और प्रशासन ने इस सहशिक्षा की सफलता पर गर्व अनुभव किया, परंतु 1943 ई0 में कुछ अनुशासात्मक कठिनाईयाँ उपस्थित हुई और माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में बालक-बालिकाओं की पृथक-पृथक व्यवस्थाएँ करनी पडी। केवल व्यवसायिक एवं देहाती क्षेत्रों में सह-शिक्षा निम्न माध्यमिक एवं माध्यमिक स्तर तक चलती रही। अब सहशिक्षा केवल प्राथमिक स्तर पर ही प्रचलित है। कहीं-कहीं देहाती क्षेत्रों तथा व्यवसायिक क्षेत्रों में माध्यमिक स्तर तक प्रचलित है।

कुछ लोगों ने सहशिक्षा को उचित माना और कुछ ने आलोचना की। सरकार ने उन्हें यही उतर दिया कि जब यह समझ लिया जाता है कि स्त्रियाँ सह-शिक्षा द्वारा उपयुक्त शिक्षा प्राप्त कर चुकी है तभी उनकी शिक्षा-व्यवस्था पृथक कर दी जाती है। 10 वर्ष से 17 वर्ष तक की आयु पर शिक्षा पृथक ही को गई है। अब फिर माध्यमिक स्तर पर सहशिक्षा का प्रसार हो रहा है।

माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य

(Objectives of Secondary Education)

आधुनिक संघीय रुस की माध्यमिक शिक्षा में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ है। विद्यालय पाठ्यक्रम में भी परिवर्तन हुआ क्योकि शिक्षा के उद्देश्यों में अधिक अंतर आया है। शिक्षा में मानवीय गुणों के विकास को अधिक महत्व दिया है। माध्यमिक शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार है:-

1. शिक्षा द्वारा मानवीय गुणों का विकास करना।
2. अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना का विकास करना।
3. तकनीकी शिक्षा द्वारा तकनीकी कौशलों का विकास करना।
4. छात्रों को किसी व्यवसाय के लिए तैयार करना।
5. छात्रों के व्यक्तित्व का विकास करना।
6. सांस्कृतिक एवं सामाजिक गुणों का विकास करना।
7. छात्रों की व्यक्तिगत योग्यताओं का विकास करना।
8. छात्रों की व्यक्तिगत क्षमताओं का विकास करना।
9. नागरिकता के गुणों का विकास करना।
10. छात्रों में स्थानीय तथा रुसी भाषाओं के कौशल का विकास करना।
11. छात्रों में राष्ट्रीय भावना का विकास करना।
12. विदेशी भाषाओं के कौशल का विकास करना।

माध्यमिक विद्यालय पाठ्यक्रम

(Secondary School Curriculum)

प्रथम वर्ग निम्न माध्यमिक तथा द्वितीय वर्ग माध्यमिक विद्यालय है। इनका पाठ्यक्रम पृथक है। 5वीं कक्षा में स्थानीय भाषा के साथ रुसी भाषा प्रारंभ होती है। सभी विषय पढाये जाते है। नगरों में 6 दिवसीय एवं देहातों में 7 दिवसीय सप्ताह है। अंतिम दिन अवकाश रहता है। नगर के माध्यमिक विद्यालयों में 27 घण्टें तथा देहातों में 32 घण्टे होते है। 5वीं कक्षा के घण्टे नगर व गांव में क्रमश: 26 और 31 मिनट के कक्षा शिक्षण की अवस्था में है। व्यक्तिगत शिक्षण भी दिया जाता है। संघीय रुस में क्रांति के बाद विद्यालय पाठ्यक्रम में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ। शिक्षा की नीति में दो तथ्यों को महत्व दिया:-

- प्रथम शिक्षा की पाठ्यवस्तु ऐसी होनी चाहिए जिससे विश्व के साथ चलने योग्य छात्रों को तैयार कर सके।

- द्वितीय शिक्षा की पाठ्यवस्तु ऐसी हो, जिससे मानवता के गुणों तथा अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना का विकास किया जा सके।

विद्यालय पाठ्यक्रम में व्यक्तिगत भिन्नता के विकास को भी महत्व दिया जाता है। व्यक्तिगत के विकास के लिये व्यक्तिगत शिक्षण संस्थाओं का अधिक उपयोग किया जाता है। शिक्षा समस्याओं, नवीन सीखने जैसे कार्यक्रमों को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाता है। नवीन पाठ्यपुस्तकों का प्रकाशन किया जाता है। प्राचीन काल में 100 पाठ्यपुस्तकों का उपयोग किया जाता था। परन्तु आधुनिक समय में 400 से 500 पाठ्यपुस्तकों की आवश्यकता होती है। आज सामाजिक विज्ञान मानवीय विषयों, अर्थशास्त्र तथा पर्यावरण शिक्षा (परिस्थितिकी) को विशेष महत्व दिया जाता है। आज सुधार आव्यूह अर्थात् पाठ्यक्रम में विकास हेतु निम्नांकित बातों तथा तथ्यों को ध्यान में रखने की आवश्यकता है:-

1. पाठ्यक्रम की विविधता एवं गहनता के लिए शिक्षकों को विशिष्ट ज्ञान प्रदान करने के लिए कार्यशालाओं का आयोजन किया जाए और विद्यालय। में प्रशिक्षण दिया जाये।
2. पाठ्यपुस्तकों तथा उतम आमूहों के चयन में प्रतियोगी आधार को अपनाकर शैक्षिक कार्यक्रमो का विकास करना।
3. प्रजातंत्र के लिए पाठ्यवस्तु के चयन में तथा पाठ्यक्रम विकास विशेषज्ञों -को भी सम्मिलित किया जाये।
4. आज शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का विकास अधिक तीव्रता से हो रहा है। इसलिए नवीन पाठ्य-सामग्री का रुसी भाषा में अनुवाद किया जाये। एक उपयोगों पाठ्यक्रम का विकास किया जाये। जिसे विदेशों में भी मान्यता दी जाये।
5. संघी तथा क्षेत्रीय स्त्रोतों के साथ अंतर्राष्ट्रीय सहायता के आधार पर पाठ्यक्रम के कार्यालय हेतु प्रकल्यों आयोजन किया जाए।

धर्म-शिक्षा वर्जित है। फ्रेंच, जर्मनी तथा अंग्रेजी की व्यवस्था निश्चित सीमा तक की गई है। सामाजिक अध्ययन पर ध्यान देते समय विश्व की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक जानकारी दी जाती है। शारीरिक शिक्षण अनिवार्य है। उच्च माध्यमिक स्तर पर सैनिक प्रशिक्षण जैसा प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। प्रतिभाशाली छात्रों को छात्रवृतियाँ दी जाती है।

सैनिक महत्व के दृष्टिकोण से 1944 ई0 से ही शारीरिक शिक्षा की अनिवार्य व्यवस्था की गयी थी। माध्यमिक स्तर की सभी कक्षाओं में यह अनिवार्य है तथा अंतिम तीन कक्षाओं (8, 9 तथा 10) में यह शारीरिक शिक्षा सैनिक प्रशिक्षा का रुप धारण कर लेती है। छात्रों को व्यायाम के साथ- साथ परिचारिका कला तथा टेलीफोन एवं रेडियों सम्बन्धी ज्ञान भी दिया जाता है। छात्रों के साथ- साथ उनके अध्यापक भी उपस्थित रहते है।

अध्यापक शिक्षा

(Teacher Education)

रुस में सम्पूर्ण अध्यापक प्रशिक्षण में परिवर्तन किया गया। माध्यमिक शिक्षा में महत्वपूर्ण परिवर्तनों के फलस्वरुप. नवीन शिक्षण की आवश्यकताओं के अनुरुप शिक्षकों को प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की गई। तीन प्रकार की प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थापना की गई:-

1. **शिक्षण शास्त्रीय महाविद्यालय (Pedagogical Colleges)-** ये महाविद्यालय तीन 7 चार वर्षीय शिक्षा संस्थान सामान्य माध्यमिक शिक्षा, प्राथमिक शिक्षा एवं पूर्व-प्राथमिक स्कूलों के लिए शिक्षक तैयार करते है।
2. **शिक्षण शास्त्रीय संस्थान (Pedagogical Institutions)-** इन संस्थानों में 5 वर्षीय शिक्षा की अवस्था में माध्यमिक शिक्षा के विषयों के शिक्षण हेतु प्रशिक्षण दिया जाता है।
3. **अध्यापक पुन: प्रशिक्षण संस्थान (Teacher- Retraining Institutions)-** इन संस्थानों में परास्नातक कक्षाओं के पाठ्यक्रम के साथ सेवारत शिक्षकों को प्रवेश दिया जाता है, जिससे वे अपने विषय का अद्यतन ज्ञान प्राप्त कर सकें।

अध्यापक-शिक्षा में नये आयाम

(New Dimensions in Teacher-Education)

आधुनिक समय में अध्यापक शिक्षा नये आयामो की खोज की जा रही है और अध्यापक प्रशिक्षण के लिए वैकल्पिक आयामों पर प्रयोग किये जा रहे है। इनका संबध बालकों के विकास हेतु सृजनात्मकता प्रशिक्षण से अधिक है।

'रुस का शिक्षा मंत्रालय इस प्रकार के अध्यापक प्रशिक्षण के विकास में सहयोग कर रहा है, जिससे प्रशिक्षण हेतु सामान्य आव्यूह का विकास किया जा सके। इसके मूल मे दो प्रत्यय है।

मानवीयकरण की दिशा में अनेक आयामों में अध्यापक प्रशिक्षण प्रणाली का विकास करना। भविष्य के अध्यापकों को प्रशिक्षण विषयों के आधार पर न देकर, उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु और उनकी क्षमताओं के विकास के लिए दिया जाये, जिससे विषयों के शिक्षण के माध्यम से छात्रों के व्यक्तित्व का विकास कर सके। प्रशिक्षण में वैयक्तिक भिन्नता को भी ध्यान में रखा जाये। परम्परागत प्रशिक्षण आव्यूह के स्थान पर अनेक वैकल्पिक प्रशिक्षण आव्यूह का उपयोग किया जा सकता है। व्यक्तिगत पाठ्यक्रम भी विकसित किये जा सकते है।

माध्यमिक शिक्षा व्यवसाय चयन

(secondary Education Vocational Selection)

रुस के अनिवार्य शिक्षा नियम (Low of Compulsory Education) के अनुसार 14 वर्ष की आयु तक अर्थात् कक्षा 7 तक अनिवार्य रुप से विद्यालय में उपस्थित रहना चाहिए, क्योंकि 15 वर्ष की आयु तक के बालकों पर यह नियम लागू होता है और 14 वर्ष तक के बालकों को उद्योग और कृषि संस्थाओं द्वारा किसी प्रकार के कार्य पर नहीं लगाया जा सकता। इस प्रकार कक्षा 7 शिक्षा का अंतिम मोड है। यही कारण है कि कक्षा 7 की समाप्ति पर छात्र का जीवन व्यवसाय निश्चित सा हो जाना आवश्यक है। इस व्यवस्था के अनुसार सर्वोत्तम अंक प्राप्तकर्ता को कि कक्षा के पश्चात् उच्च अध्ययन एवं प्रावैधिक प्रशिक्षण के लिए मध्यम अंक

प्राप्तकर्ता को मध्यमवर्गीय व्यवसायों के प्रशिक्षण तथा यंत्र-प्रशिक्षण के लिए और साधारण छात्र को कृषि-क्षेत्रों अथवा औद्योगिक संस्थाओं में श्रमिक कार्य के लिए चुन लिया जाता है। यह कहना उचित है कि सरकार छात्रों को उपयुक्त व्यवसाय चुनने के लिए बाध्य करती है। शेष के लिए स्वयंमेव श्रमिक पद के कार्य बचे रहते है। छात्रों को उनके व्यवसायिक चयन के लिए परामर्श दिया जाता है। कक्षा 8, 9,10 में पढने वाले छात्रों को उच्च शिक्षा के लिए तैयार किया जाता है। उच्च शिक्षा-प्रतिनिधि 10वीं पास छात्रों से मिलकर उन्हें उच्च शिक्षा की और आकर्षित भी करते है।

(Technological Education & Industrial Training System)

रुस की प्रावैधिक एवं औद्योगिक शिक्षा द्वारा मध्यवर्गी (Middle Grade Specialist) तैयार करने के 5000 के लगभग तकनीकी संस्थाएँ है। इन प्रावैधिक औद्योगिक व्यवसायों के प्रशिक्षण-कार्यक्रमों की व्यवस्था शिक्षा-मंत्रालय करता है, परन्तु इनके भवन, उपकरण एवं सामान्य व्यवस्था पर वह मंत्रालय व्यय करता है जो संबन्धित व्यवसाय का प्रशिक्षण दिलाना चाहता है;

पृथक व्यवसायों की शिक्षा देने के पश्चात् ये संस्थाएँ उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के शिक्षण की व्यवस्था करते है तथा ऐसा करने से इन परीक्षार्थियों को पूर्ण माध्यमिक शिक्षा उसी विद्यालय में सुलभ हो जाती है। जो छात्र-छात्रा असाधारण प्रतिभा के होते है उन्हें बिना मैट्रिकुलेट किए ही विश्वविद्यालय में प्रवेश मिल जाता है।

सामान्य छात्रों के लिए अर्थात वे छात्र जो कक्षा 7 साधारण प्राप्तांकों से उतीर्ण करते है?फैक्टरी विद्यालय (Factory School) बने है। इनमें प्रवेश लेकर ये छात्र श्रमिक बन जाते है। ये फैक्टरी विद्यालय 3 प्रकार के है। प्रथम प्रकार के विद्यालयों में अर्द्ध--दीक्षित श्रमिक तैयार होते है जो 6 माह तक खनिज केन्द्रों, रचनात्मक योजनाओं तथा अन्त उद्योगों का प्रशिक्षण लेते है। द्वितीय प्रकार के विद्यालय यातायात, यंत्र-मंत्रालयों, उद्योगों आदि का 2 वर्षीय पाठ्यक्रम देकर यांत्रिक (Mechanic) तैयार करते है तथा तृतीय प्रकार के विद्यालयों में रेल-तार-फोन आदि प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. रुस में प्रचलित माध्यमिक शिक्षा की योजना और अवस्था पर प्रकाश डालिए।
   Throw light on the planning and Organization of present secondary education in Russia.
2. रुस की प्रावैधिक एवं औद्योगिक प्रशिक्षण व्यवस्था का वर्णन करते हुए विविध प्रशिक्षण व्यवस्था को समझाइए।
   While describing the technological and industrial training provision in Russia, explain various training provision.
3. रुस के मध्यमिक शिक्षा के मुख्य उदेश्यों का वर्णन कीजिए।

Discuss the main objectives of Secondary Education of Russia.

8.4 सारांश (Summary)

किसी भी देश की शिक्षा पद्धति उसके लोगों और समाज की आवश्यकताओं तथा आंकाक्षाओं पर निर्भर करती है। अमेरिका में शिक्षा राज्यों और स्थानीय संगठनों की जिम्मेदारी है। वहां माध्यमिक शिक्षा अर्थात् बारहवीं तक की शिक्षा निःशुल्क है लेकिन गैर सरकारी विद्यालयों में या चर्च द्वारा चलाए गए स्कूलों में विद्यार्थियों से शुल्क लिया जाता है। शिक्षा क अधिकांश व्यय जनता (स्थानीय लोग) द्वारा उठाया जाता है। माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी अपनी सूचियों, योग्यताओं और रुझानों के अनुसार उद्योग, कृषि और प्रौद्योगिक जैसे विशेष व्यवसायों के क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रमों का चयन करने के लिए स्वतन्त्र होते हैं।

ब्रिटेन में ग्यारह वर्षों की शिक्षा अर्थात् 5 वर्ष से 16 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए शिक्षा निःशुल्क है तथा अनिवार्य है। आधुनिक माध्यमिक विद्यालयों में व्यवहारिक प्रकार की शिक्षा प्रदान की जाती है। इनमें बौद्धिक स्तर भी कायम रखा जाता है। वहा सामान्य कोर्स के आधुनिक माध्यमिक विद्यालय, सामान्य और विशेष शिक्षा प्रदान करने वाले आधुनिक माध्यमिक विद्यालय, सीनियर प्राथमिक विद्यालयों से मिलते जुलते आधुनिक माध्यमिक विद्यालय तथा कुछ विषयों, में उच्च स्तरीय शिक्षा प्रदान करने वाले आधुनिक माध्यमिक विद्यालय पाए जाते हैं। माध्यमिक विद्यालयों 'में चयन के आधार पर विद्यार्थियों को प्रवेश दिया जाता है। यह चयन प्राथमिक स्तर और वस्तुनिष्ठ प्रकार की परीक्षाओं के मूल्यांकन के आधार पर किया जाता है।

रुस की समूर्ण शिक्षा प्रणाली का अभिविन्यास एक नए सामाजिक, आर्थिक सुधार एवं विकास की ओर किया गया है। माध्यमिक शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों की व्यक्तिगत क्षमताओं का विकास करना है। इस स्तर पर विदेशी भाषाओं के कौशलों का भी विकास किया जाता है। रुस में कक्षा 7 को शिक्षा का अंतिम मोड माना जाता है क्योंकि यही से बालक के जीवन व्यवसाय की निश्चितता होनी प्रारंभ हो जाती है। कक्षा 8, 9, 10 में पढ़ने बाले बच्चों को उच्च शिक्षा के लिए तैयार किया जाता है।

8.5 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

De young C.A — Introction to American Public Education 3rd Edn. Mc Graw Hill Book Co. Inc. New York 1955

Lester-Smith — W.O. Compulsory Education in England

	UNESCO paris 1951
Meyer	A.E. The Development of Education in the Twentieth century. Prentice Hall 1949.
Russell I.D. and jodd C.H.	The American Education System Hougton Mifflin Co Boston. 1949.
चौहान और सिंह	आगरा 1959
आर० ए० शर्मा	तुलनात्मक शिक्षा आर० लाल बुक डिपो मेरठ

इकाई-9

माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण

(Vocationalization of Secondary Education)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

9.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

9.1 व्यावसायिकरण का अर्थ (Meaning of Vocationalzation)

9.2 व्यावसायीक शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Vocational Education)

9.3 `व्यावसायीकरण की आवश्यकता (Need for Vocationalization)

9.4 शिक्षा के व्यावसायीकरण का ऐतिहासिक विकास (Historical Development of Vocationalization of Education)

9.5 व्यावसायीकरण की धीमी प्रगति तथा समस्याएं (Slow Progress and Problems of Vocationalization)

9.6 स्वतन्त्र भारत में शिक्षा के व्यावसायीकरण का ऐतिहासिक विकास (Historical Development of Vocationalization of Education in free India)

9.7 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 तथा 1992 में निर्धारित किए लक्ष्य एवं उनकी प्राप्ति (Target set and Achieved in NPE 1986 and 1992)

9.8 स्कूल स्तर पर व्यावसायीकरण की वर्तमान स्थिति (present Status of `Vocationalization at the School level)

9.9 माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण को त्यरामित करंने के लिए सुझाव (Suggestion for accerationg Vocationalization of Secondary Education).

9.10 माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण एवं दसवी पंचवर्षीय योजना (Vocationalization of Secondary Education and Tenth Five year plan)

9.11 सारांश (Summary)

9.12 सन्दर्भ ग्रन्ध सूची (Bibliography)

9.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य

(Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर आप-

- माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण की आवश्यकता पर श्चिार विमर्श कर सकेंगे।
- व्यावसायीकरण पर विभिन्न आयोगों/समितियों की सिफारिशों पर - विचार विमर्श कर सकेंगे।
- स्कूल स्तर पर व्यावसायीकरण की वर्तमान परिस्थितियों का वर्णन कर सकेंगे।

- व्यवसायिक संस्थाओं के विभिन्न प्रकारों की सूची बना सकेंगे।
- शिक्षा के व्यावसायीकरण के लिए उठाए गए प्रमुख कदमों को जान जाएंगे।
- व्यवसायिक शिक्षा में नीति निर्माण की व्याख्या कर सकेंगे।
- व्यवसायिक शिक्षा की योजना निर्माण तथा लागू करने के लिए उतरदायी संगठनों की सूची बना सकेगे।
- व्यावसायीकरण की धीमी प्रगति के कारणों को समझ सकेंगें।
- शिक्षा के व्यावसायीकरण को सफल बनाने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा किए गए उपायों का वर्णन कर सकेंगे।
- माध्यमिक स्तर पर व्यावसायीकरण की गति को तेज करने के लिए सुझाव दे सकेंगे।

आज के युग की परिस्थितियों को देखते हुए यह आव्श्यक हो गया है कि शिक्षा का स्वरुप ऐसा होना चाहिए जो छात्र-छात्राओं को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बना सके। देश के नवयुवकों की बढती बेरोजगारी को दूर करने हेतु शिक्षा का व्यावसायीकरण बहुत आवश्यक हो गया है।

9.1 व्यावसायीकरण का अर्थ (Meaning of Vocationalization)

व्यावसायीकरण का शाब्दिक अर्थ होता है- किसी व्यवसाय में प्रशिक्षण अर्थात विद्यार्थी को कोई ऐसा व्यवसाय सिखाना ताकि वह अपने जीवन यापन के लिए अपनी आजीविका कमा सके। विस्तृत रुप से देखा जाए तो शिक्षा के साथ-साथ उन कोर्स की भी व्यवस्था की जानी चाहिए, जो छात्रों को शिक्षा के साथ-साथ किसी व्यावसाय में कुशल व्यक्ति बनाए। कोठारी आयोग के अनुसार *'माध्यमिक शिक्षा को तेजी से व्यावसायीकरण की ओर अग्रसर करना चाहिए तथा उच्च्तर शिक्षा में कृषि व तकनीकी शिक्षा पर बल देना चाहिए।"*

माध्यमिक स्तर पर व्यावसायीकरण का अर्थ अलग-अलग प्रकार से समझा गया है। जहाँ एक तरफ इसे व्यवसायिक प्रशिक्षण समझा गया है व शिक्षा का स्वरुप और विस्तृत बनाया गया वहीं दूसरी और व्यावसायीकरण को अधिक महत्व देते हुए साधारण शिक्षा के महत्व को कम समझा गया। वास्तव में यह दृष्टिकोण अति संकीर्ण तथा संकुचित हैं।

9.2 शिक्षा के व्यावसायीकरण के उद्देश्य (Obejectiveof Vocationalization)

छठी पंचवषीर्य योजना के तहत, व्यवसायिक शिक्षा के' निम्नलिखित उद्देश्य निश्चित किए गए:-

1. आर्थिक रुप से ससंगत तकनीक कौशल सीखना।
2. कमाते हुए सीखना।
3. रोजगार मुख्य रुप से स्वयं रोजगार के अवसरों सहित उच्च शिक्षा प्रदान करना।
4. मानवीय श्रम की गरिमा समझना।

5. सामाजिक क्रिया कलापों द्वारा सीखना।
6. ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत तकनीकी एव व्यवसायिक संस्थाओं में नई सुविधाओ की व्यवस्था पर जोर देना।

9.3 व्यावसायीकरण की आवश्यकता (Nead for Vocationlization)

प्रत्येक राष्ट्र का यही प्रयास होता है कि उसके राष्ट्र की शिक्षा का ढाचा उन्नत तथा सक्षम हो ताकि यह सभी व्यक्तियों की आवश्यकताओं तथा मांगों को पूरा कर सकें इसलिए देश में एक विशेष प्रकार की शिक्षा कि व्यवस्था की जानी चाहिए क्योंकि यह विशेष शिक्षा अर्थात् व्यवसायिक शिक्षा विभिन्न प्रकार से देश की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है:-

चित्र 9.1 व्यावसायीकरण की आवश्यकता / महत्व

उपरोक्त चित्र से स्पष्ट होता है कि जिन क्षेत्रों में व्यावसायीकरण की आवश्यकता है वे निम्नलिखित है:-

1. **आर्थिक विकास क लिए (For Ecomonic Development):-** भारत एक मात्र ऐसा देश है जिसे प्रकृति ने खुले दिल से अपने तीनों गुणो शक्ति सुंदरता तथा ताकत को भरपूर मात्र मे दिया है। प[अरन्तु एटने अच्छे तथा प्रकर्तिक साधनो के बावजूद भी हमारे देश की आर्थिक व्यवस्था उतनी सुद्र्ड नहीं है , जीतना इसे होना चाहिय था। इस अवनति का एक मुख्ये कारण प्रशिक्षित मानवीय शक्ति का आभाव होना है। यह भी सत्य है की जनसंख्या की दृष्टि से हमारा देश विश्व में दूसरे स्थान पर है। परंतु हमारी अयोग्य शिक्षा प्रणाली वह कारण है जिससे देश आर्थिक विकास की बुलंदियों को नहीं छु पा रहा है। अब समय आ गया है जेब हमे हमारी छात्र-छात्राओ को व्यवसायिक तथा व्यवहारिक रूप से कुशल बनाना होगा ताकि वे ओद्योगिक तथा तकनीकी उन्नति की योजनाओं मे सार्थक योगदान देकर देश को आर्थिक रूप से सशक्त तथा खुशहाल बना सके। इन सब बातों को ध्यान में रखते हु एभारतीय शिक्षा के चार मुख्ये लक्ष्यों मे से उत्पादन व्रिध को लक्ष्य मानकर उसकी प्राप्ति के लिए माध्यामिक शिक्षा को व्यवसायीक रूप देने की सिफ़ारिश की है।
2. **बेरोजगारी की समस्या को हल करने क लिए (To solve the problem of Unemployment):-** भारत में बेरोजगारी की समस्या दिन- प्रतिदिन बढती जा रही है। ऐसे में व्यवसायिक शिक्षा बेरोजगारी की समस्या को दूर करने के लिए सक्षम होगी। अंत: शिक्षा में व्यावसायिकरण से शिक्षित लोगो में बेरोजगारी की समस्या को दूर किया जा सकता

है। नि:सन्देह व्यावसायीकरण विद्यार्थियों को किसी एक व्यवसाय में निपुण बनाती है। महात्मा गाँधी के अनुसार "शिक्षा बेरोजगारी के विरुद्ध एक प्रकार का बीमा होना चाहिए।"

3. **विद्यार्थियों की योग्यताओं, रुचियों तथा गुणों को प्रशस्त करने के लिए (To Develop Abilities, Interests and Qualities of Students):-** आयोग के अनुसार माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायिकरण करने से विद्यार्थी अपनी-अपनी विशेष पसन्द तथा रुचियों के अनुरूप प्रशिक्षण ले सकते है। यह उनके लिए रोजगार के अवसर प्रदान कराने के साथ-साथ उनकी क्षमताओं को भी विकसित करेगा।

4. **आत्मसंतुष्टि (Self Satisfaction):-** अपने आप को व्यक्ति केवल उस समय आत्मसंतुष्ट समझता है जब उसे अपनी पसंद का व्यवसाय मिल जाता हे और शिक्षा में व्यावसायीकरण से विद्यार्थियों को पूर्ण रुप से नही तो कुछ हद तक उसकी रुचि के अनुरुप कोई न कोई व्यवसाय मिल ही जाता है।

5. **नैतिक तथा सांस्कृतिक विकास (Moral and Cultural Development):-** यदि मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताएँ रोटी, कपड़ा और मकान पूरी हो जाती है तो वह नैतिकता व संस्कृति की बात सोचता है और शिक्षा के व्यावसायीकरण से विद्यार्थी अपनी पसन्द का रोजगार प्राप्त कर सकते हैं, जो उन्हें धन के साथ-साथ संतुष्टि भी दे सकता है और आर्थिक रुप से सबल होने पर नैतिक तथा सांस्कृतिक विकास स्वत: ही प्राप्त हो जाता है।

6. **बौद्धिक विकास (Intellectual Development):-** शिक्षा में व्यावसायीकरण का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को रोजगार उपलब्ध कराना है। एक बार रोजगार प्राप्त होने पर वे दूसरे क्षेत्रों में भी कार्य करने की सोच सकते है। ऐसा करने से तथा दूसरे क्षेत्रों में रुचि लेने से उनका बौद्धिक विस्तार स्वत: ही हो जाता है।

7. **शिक्षा प्रक्रिया को उद्देश्यपूर्ण बनाना (To make education process purposeful):-** शिक्षा को ज्यादा से ज्यादा उपयोगी बनाने के लिए व्यावसायीकरण अति आवश्यक है, क्योंकि व्यावसायीकरण शिक्षा की प्रक्रिया को दिशा देने में सक्षम है। यही कारण है कि शिक्षा व्यावहारिक रुप से विद्यार्थियों के लिए उपयोगी हो सकती है।

8. **माध्यमिक शिक्षा को आत्मनिर्भर कोर्स बनाने के लिए (To make secondary education):-** वर्तमान में माध्यमिक शिक्षा का स्वरुप अत्याधिक शैक्षिक होने के कारण इसका मुख्य कार्य विद्यार्थियों को महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में प्रवेश दिलाने मात्र तक सीमित होकर रह गया है। यदि सामान्य रुप से देखा जाए तो हम पाएंगे कि इस वर्तमान शिक्षा प्रणाली में पढ़ कर महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय में जाने वाले छात्रों की संख्या 25 प्रतिशत भी नहीं होती है। माध्यमिक शिक्षा के तुरन्त बाद बे रोजी-रोटी कमाने की सोचते हैं, इसलिए इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए शिक्षा कार्यक्रम को व्यावसायिक स्वरुप देकर इस दिशा में कुछ प्रशिक्षण अवश्य दिया जाना चाहिए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. व्यावसायीकरण का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
   Clarify the meaning of vocationalization
2. शिक्षा के व्यावसायीकरण के उद्देश्य क्या है?
   What are the objectives of Vocationalization of education?
3. आर्थिक विकास के लिए व्यावसायीकरण की क्या आवश्यकता है?
   What is the need of Vocationalization for economic development?
4. व्यावसायीकरण किस प्रकार बेरोजगारी की समस्या को हल करने में सहायक होगा?
   How the vocationalization will be helpful in solving the problem of Unemployment?

9.4 शिक्षा के व्यावसायीकरण का ऐतिहासिक विकास (Historical Development of Vocationalization of Education)

यदि हम शिक्षा के इतिहास का गहन रुप से विश्लेषण करे तो यह ज्ञात होता है कि सबसे पहले किसी भी समाज में जो शिक्षा विद्यमान थी वह थी व्यावसायिक शिक्षा, यद्यपि वह निरौपचारिक रुप में या अनौपचारिक रुप में थी। प्राचीन ऐतिहासिक काल में तथा उसके पश्चात् भी जब अंग्रेज भारत में आए, व्यावसायिक शिक्षा एक वंशज से दूसरे वंशज को प्रदान की जाती थी जैसे जूता बनाने का या मिट्टी के बर्तन बनाने का व्यवसाय, कृषि, दवाई, हस्तकला या सेना आदि के क्षेत्र में वंशानुगत कौशल का प्रशिक्षण हस्तांरित हो रहा था।

भारत मे माध्यमिक शिक्षा का पुर्नावलोकन इस बात का संकेत करता है कि एक शताब्दी से अधिक समय तक शिक्षा के व्यावसायीकरण की आवश्यकता पर विचार विमर्श चलता रहा और विभिन्न समितियों तथा आयोगों ने अपने विचार निम्नलिखित ढंग से प्रस्तुत किए।

हण्टर आयोग

(Hunter Commission)

1882 में हण्टर आयोग ने यह सिफारिश की कि उच्च स्कूल स्तर पर शिक्षा के दो आयाम होने चाहिए। पहला विद्यार्थियों के उच्च शिक्षा के लिए तैयार करना तथा दूसरा विशेष व्यावसायों के लिए। अन्य शब्दों में इसने हाई स्कूल की उच्च कक्षाओं में पाठ्यक्रम के दो भागों मे बांटने पर बल दिया। पहला विश्व विद्यालयों में प्रवेश करने के लिए प्रवेश परीक्षा के लिए तैयारी तथा दूसरा व्यावहारिक जीवन के लिए विद्यार्थियों को व्यावसायिक रुप से तैयार करना। परन्तु इन सुझावों को कार्यान्वित करने के लिए कोई विशेष कदम नहीं उठाए गए।

हार्टोग कमेटी

(Hartog Committee)

1929 में हार्टोग कमेटी ने माध्यमिक स्तर पर औद्योगिक एवं वाणिज्य सम्बन्धी विषयों को सम्मिलित करने पर बल दिया और यह इच्छा प्रकट की कि विद्यार्थियों को क्लर्की तथा अन्य ऐसे कार्यों की ओर जाने से अच्छा कुछ व्यावहारिक व्यवसाय अपनाने चाहिए। इस सिफारिश का प्रभाव यह हुआ कि राज्य सरकारों ने तकनीकी, व्यावसायिक या कृषि सम्बन्धी हाई स्कूलों को प्रांरभ किया तथा उन स्कूलों की सहायता राशि भी बढ़ाई जो इस प्रकार का पाठ्यक्रम पढा रहे थे। इससे माध्यमिक स्तर पर कुछ व्यावसायिक शिक्षा का प्रादुर्भाव हुआ।

एबट वुड रिपोर्ट

(Abbot Wood Report)

1937 मे इसमें यह सुझाव दिया गया कि सामान्य एवं व्यावसायिक शिक्षा को पृथक-पृथक नहीं समझना चाहिए अपितु इन्हें निरन्तर प्रक्रिया की पहली तथा अन्तिम अवस्था तक रखना चाहिए। व्यावसायिक शिक्षा भी उसी आधार पर आधारित होनी चाहिए जिस आधार पर सामान्य शिक्षा आधारित है।

सार्जैण्ट रिपोर्ट

(Sargent Report)

1944 में सार्जैण्ट योजना में हाई स्कूलों को दो प्रकारों के स्कूलों में पुन: संगठित करने का सुझाव दिया गया। पहला सामान्य शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाएं जिनमें केवल कला तथा विज्ञान संकायों की पढ़ाई कराई जाए तथा दूसरे तकनीकी स्कूल जिनमें औद्योगिक तथा व्यावसायिक विषयों सम्बन्धी व्यावहारिक ज्ञान प्रदान किया जाए। ग्रामीण पाठ्यक्रम में कृषि पर, लड़कियों के लिए गृह विज्ञान की शिक्षा पर बल दिया जाए। इसके परिणामस्वरुप माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा की सुविधाओं में वृद्धि हुई। इनमें से कुछ निम्नलिखित थी-

- तकनीकी प्रशिक्षण के लिए तकनीकी संस्थाएं
- कुशल तथा अर्द्ध-कुशल कामगरों के लिए औद्योगिक संस्थान
- व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का प्रारम्भ
- पैरा-मैडिकल व्यक्तियों के लिए वित्त की सुविधा।
- कृषि में मध्यम स्तर के कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए कार्यक्रम

9.5 व्यावसायिक शिक्षा की धीमी गति के कारण (Causes of Slow Progress of Voationalized Education)

1. देश में व्यावसायिक कोर्सों के लिए इन विशेषज्ञ निदेशकों की अत्यधिक कमी है।
2. देश में उद्योग तथा शिक्षा जैसे विभिन्न विभागों में न तो आवश्यक तालमेल है और न ही सहयोग की भावना।
3. विद्यालयों में आवश्यकता के हिसाब से समान तथा उचित प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की नियुक्ति के मार्ग में आने वाली सबसे बडी बाधा धन की कमी है। यही कारण है

कि उचित प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों तथा आवश्यक भौतिक सुविधाओं की अनुपस्थिति में व्यावसायिक शिक्षा की उन्नति में बाधा आई है।

4. प्रान्तों के सरकारी विभागों के आपसी सम्बन्ध हमेशा ही हतोत्साहित करने वाले रहें है। जिसके परिणामस्वरुप माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण में प्रगति अपेक्षाकृत धीमी रही है।
5. अध्यापकों के तकनीकी प्रशिक्षण तथा दूसरे व्यावसायिक कोर्सों के प्रशिक्षण की ओर विशेष ध्यान न देना भी शिक्षा के व्यावसायीकरण में बाधा है।
6. वास्तविकता यह है कि केन्द्र तथा राज्य सरकारों ने शिक्षा के व्यावसायीकरण पर में गम्भीरता से प्रयास नहीं किए।
7. तकनीकी सलाहकारों की कमी भी हमारे देश में शिक्षा के व्यावसायीकरण में बाधा रही है।
8. उपरोक्त कारणों के रहते माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण मध्यम गति से चलता रहा। माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण पर स्वतन्त्र भारत में निम्नलिखित आयोगों ने अपनी सिफारिशें दी।

9.6 स्वतन्त्र भारत में शिक्षा के व्यावसायीकरण का ऐतिहासिक विकास (Historical Development of Vocationalization of Education in Free India)

माध्यमिक शिक्षा आयोग (Secondary Education Commission)

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षा के व्यावसायीकरण के लिए निम्नलिखित सिफारिशें दी है:-

– शिल्प तथा विविध कोर्सों का प्रबन्ध (Management of Craft and diversified course) सभी स्कूलों में शिल्प और उत्पादन कार्यों में अधिक बल दिया जाना चाहिए। इसके साथ-साथ माध्यमिक स्तर पर विविध कोर्सों को लागू किया जाना चाहिए, ताकि एक बडी संख्या में विद्यार्थी कृषि सम्बन्धी, तकनीकी, वाणिज्य अथवा अन्य व्यावहारिक कोर्स ले सकें जिससे उनकी अभिरुचियों को प्रशिक्षण प्राप्त हो, और जो माध्यमिक शिक्षा पास करने पर व्यावहारिक प्रयत्नों को शुरु करने अथवा तकनीकी संस्थानों में उच्च प्रशिक्षण प्राप्त करने के योग्य हो सके।

– बहु उद्देश्यीय स्कूल (Multipurpose School) पाठ्यक्रमों को लागू करने के लिए बहु उद्देश्यीय स्कूल खोले जाने चाहिए, जिससे व्यावसायिक विषयों से जुडी तथाकथित हीनभावना को समाप्त कर भिन्न-2 अध्ययन पाठ्यक्रमों में लगे विद्यार्थियों में अंतर समाप्त किया जा सके। किसी कोर्स के चयन के लिए उचित शैक्षिक मार्गदर्शन की सुविधा दी जा सके तथा विद्यार्थियों को एक स्कूल से दूसरे स्कूल में भेजने की बजाए एक कोर्स से दूसरे कोर्स में आसानी से बदला जा सके।

– माध्यमिक स्कूलों में खेती-बाडी की शिक्षा (Agricultural Education in Secondary School) सभी राज्यों को ग्रामीण क्षेत्रों में खेती-बाडी की शिक्षा सम्बन्धी और अधिक अवसर प्रदान करने चाहिए। यह शिक्षा केवल सैद्धांतिक ही नहीं होनी चाहिए, बल्कि

विद्यार्थियों को यथोर्थ परिस्थितियों के अधीन काम करने के अवसर प्रदान करने चाहिए। खेती बाड़ी के लिए विद्यार्थियों को सभी आवश्यक विधियों का ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए। कृषि की पढाई वैज्ञानिक आधार पर कराई जानी चाहिए। कृषि स्कूल ग्रामीण बहुमुखी स्कूलों के अंग होने चाहिए।

– तकनीकी शिक्षा (Technical Education) यदि इसे एक व्यवसाय के रुप में न भी अपनाया जाए, तो भी यह आत्म-अभिव्यक्ति का साधन हो सकती है। तकनीकी शिक्षा उद्योगों से संबन्धित होनी चाहिए। विद्यार्थियों को औद्योगिक केन्द्रों में शिक्षार्थी प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। तकनीकी स्कूलों में तकनीकी तथा साधारण दोनों प्रकार की शिक्षा प्रदान करनी चाहिए। तकनीकी स्थानों को औद्योगिक केन्द्रों के निकट स्थापित किया जाना चाहिए। अनेक स्थानों पर बहुमुखी स्कूल चलाए गए थे परन्तु ये न तो विद्यार्थियों को विभिन्न जीवन मार्गों की ओर मोड़ सके और न ही विश्वविद्यालय में प्रवेश के लिए अंधी दौड़ को कम कर सके।

कोठारी आयोग

(Kothari Commission)

हमारी शिक्षा प्रणाली युवकों को अधिकतर सरकारी सेवाओं के लिए प्रशिक्षण देती रही। कोठारी आयोग ने माध्यमिक शिक्षा को विशेष महत्व दिया और निम्न आधारों पर माध्यमिक शिक्षा को व्यावसायिक रुप देने की सिफारिशें की हैं, जो बहुत कारगर हैं-

लक्ष्य

(Goal)

यह आवश्यक है कि माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण किया जाये तथा उस लक्ष्य की ओर बढा जाए, जिससे निम्न माध्यमिक स्तर की कुल प्रवेश संख्या का 20 प्रतिशत से 50 प्रतिशत भाग 1986 तक व्यावसायिक शिक्षा में होगा।

निम्न माध्यमिक स्तर पर सुविधाएँ (Facilities at Lower Secondary Level)

सातवीं और आठवीं श्रेणी के बाद स्कूल छोड़ने वाले विद्यार्थियों के लिए निम्न कोर्स अपनाये जा सकते हैं।

क) औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों के दाखिले के लिए आयु की सीमा घटाकर 14 वर्ष कर दी जानी चाहिए ताकि औद्योगिक प्रशिक्षण के ऐसे कोर्सों में प्राइमरी स्कूल को छोड़ने वाले बडी संख्या में दाखिले हो सकें।

ख) जो विद्यार्थी सातवीं और आठवीं श्रेणी के बाद पारिवारिक काम-धन्धों में कदम रखने के लिए स्कूल छोड देते हैं, उनके लिए अंशकालिक आधार पर पर्याप्त संख्या में कोर्सों की सुविधा होनी चाहिए।

ग) गांव से सम्बन्धित छात्र अगर वे अपने पारिवारिक खेती से काम में जाना चाहते हैं, उन्हें अपनी व्यावसायिक कुशलता को बढ़ावा देने तथा साधारण शिक्षा देने के लिए उच्च शिक्षा का प्रबन्ध किया जाना चाहिए। इसी प्रकार जो लड़कियां अपने गृह कार्यों में लगना चाहती हैं, उनके लिए गृह-विज्ञान तथा साधारण शिक्षा का प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सुविधाएं (Facilities at Higher Secondary Stage)

इस स्तर पर निम्न कोर्सों की सुविधा होनी चाहिए।

क) कला-कौशल बढ़ाई जानी चाहिए उद्योगों में अंशकालिक व्यावसायिक कोर्सों का प्रबन्ध किया जाना चाहिए। जो कि छुट्टी वाले दिनों में पत्र-व्यवहार द्वारा अथवा किसी अन्य आधार पर भी हो सकता है।

ख) कृषि और इन्जीनियरिंग के पोलिटैक्निक्स में उन लोगों की निपुणता को बढ़ाने के लिए जो रोजगार में प्रवेश कर चुके हों अथवा पुन: प्रशिक्षण देने के लिए कुछ समय पहले परीक्षा पास कर चुके हों, संक्षिप्त कोर्सों का प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

ग) औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में विभिन्न कोर्सों की सुविधाओं का विस्तार किया जाना चाहिए।

घ) स्वास्थ्य, वाणिज्य, प्रशासन, लघु उद्योगों आदि से सम्बन्धित छ: मास से तीन वर्ष तक के प्रमाण पत्र अथवा अधिकार पत्र के कोर्सों की संख्या बढ़ाई जानी चाहिए। ऐसी सुविधाएं पहले से लगे रोजगार में लोगों को अंशकालिक अथवा पत्र-व्यवहार की विधि से दी जा सकती है।

माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण के स्वरुपों तथा कार्यक्रमों के बारे में कोठारी शिक्षा आयोग ने केवल विस्तृत आधार पर अपने विचार व्यक्त किये थे। आयोग ने उन्हें लागू करने के कोई ठोस कार्यक्रम नही सुझाया, क्योंकि वे तो केवल सम्पूर्ण शिक्षा क्षेत्र की जांच कर रहे थे। माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण का कार्यक्रम केवल साधारण शिक्षा को उत्पादन से जोड़ने के लिए विचाराधीन लाया गया था।

अभी तक तो हम माध्यमिक शिक्षा आयोग अथवा कोठारी कमीशन की सिफारिशें को ही सही रुप से कार्यक्रम नहीं दे पाएं। माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा सुझाये गए बहु मुखी स्कूल केन्द्र सामग्री जुटाए जाने पर भी अपने वास्तविक उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर पाए। अधिकतर स्कूलों में सामग्री की कमी बनी रही है, और जब किसी व्यावसायिक विषय की सुविधा आरम्भ की गई है, वहां हमेशा सामग्री की कमी आड़े आई है। कृषि खेत और कृषि के औजारों के बिना पढ़ाई की जाती रही है और व्यावसायीकरण केवल चाक और बात का विषय बन कर रह गया। अत्यन्त खेद का विषय यह है कि बीते वर्षों में व्यावसायिक शिक्षा घटिया दर्जे की शिक्षा समझी जाती रही है।

आज से कुछ वर्ष पूर्व भारतीय परिवेश में स्कूल की शिक्षा के व्यावसायीकरण के क्षेत्र में मार्गदर्शक योजनाएं बनाने के लिए एक अध्ययन मण्डल का गठन किया गया, जो ऐसे ठोस प्रस्ताव पेश करे जिन्हें मार्गदर्शन के आधार पर कुछ चुने हुए क्षेत्रों में आरम्भ किया जा सके। इसकी रिपोर्ट जनवरी, 1970 में सामने आई जिसका परीक्षण एक विशेष मण्डल द्वारा किया गया। ऐसी मार्गदर्शक योजनाओं को राज्य के कुछ चुने हुए जिलों में तथा कुछ ऐसी संस्थाओं में जिन्हें आवश्यक सुविधाएं प्राप्त है लागू करने के लिए कदम उठाए गए है। यह कार्यक्रम बीस जिलों में चलाया जाएगा और उस उद्देश्य की पूर्ति हेतु दो करोड रुपयें का प्रबन्ध किया गया, यह भी सुझाया गया कि जिन देशों में ऐसे कार्यक्रम चलाये जा चुके हैं, उन देशों से सहायता ली जा सकती है। माध्यमिक शिक्षा व्यावसायीकरण के कार्यक्रम को रोजगार की सुविधाओं से

जोडा जाना चाहिए। शिक्षा का समन्वय एक और तो प्रशिक्षण और दूसरी और अधिक विकास के साथ स्थापित किया जाना चाहिए।

व्यावसायिक शिक्षा का राष्ट्रीय सम्मेलन (National Conference of Vocationalized Education, 1976)

ग्रुप नं0 1 की रिपोर्ट (Report of Group-I)

ग्रुप का विचार था कि क्रियात्मक दस्तावेज में रखे गए सुझाव ठोस बुनियाद पर आधारित थे। शिक्षा आयोग की रिपोर्ट के पश्चात् यह पहला ठोस कदम था जो कार्यान्वित करने के लिए उठाया गया। समूचे रुप से सुझाव आयोग द्वारा किये गए शिक्षा चिन्तन के महत्वपूर्ण विकास की ओर संकेत करते हैं। ग्रुप ने यह विचार भी प्रकट किया है कि इन सुझावों को प्रभावशाली रुप से कार्यान्वित करने के लिए इन्हें और अधिक विस्तृत करना होगा। माध्यमिक-शिक्षा के व्यावसायीकरण को तब तक कार्यान्वित नहीं किया जा सकता जब तक उसके साथ-साथ सामाजिक आर्थिक क्षेत्र में कुछ निश्चित परिवर्तन न किए जाए। ग्रुप इस बात से सहमत है कि किसी भी संस्था में आरंभ किए गए व्यावसायिक कोर्सों का सम्बन्ध वहां के वातावरण के साथ होना चाहिए और वहां जिला व राज्य स्तर पर किए गए व्यावसायिक सर्वेक्षण पर आधारित होना चाहिए। ग्रुप ने इस बात पर जोर दिया है कि कुछ एक कोर्सों की मांग अधिक हो सकती है जैसे चिकित्सालय व इन्जीनीयरिंग की ओर अग्रसर करने वाले कोर्स या कामर्स एवं सविचालय प्रशिक्षण के कोर्स जिन में रोजगार के अवसर अधिक है। अत यह आवश्यक है कि इन कोर्सों में अधिक सुविधाएं दी जानी चाहिए जिनकी मांग ज्यादा है और देश के भिन्न भागों में इनका समान विभाजन होना चाहिए।

ग्रुप ने अनुभव किया कि प्रारुप में स्कूल आधारित व्यावसायिक शिक्षा पर अत्याधिक बल दिया गया है, यह आवश्यक था, क्योंकि पत्र में उस विधि पर विचार किया गया है जिसके द्वारा स्कूलों में व्यावसायिक कोर्सों को आरम्भ किया जा सके परन्तु यह बात धान में रखनी चाहिए कि +2 स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा तीन विभिन्न रुपों में दी जा सकती है।

- स्कूल आधारित
- उद्योग आधारित
- समन्वित रुप में

ग्रुप का विचार है कि क और ख के रुप में दी जाने वाली शिक्षा की सम्भावनाओं को पूरी खोज होनी चाहिए। इससे यह बात स्पष्ट होती है कि +2 स्तर पर शिक्षा के व्यावसायीकरण का दायित्व केवल शिक्षा विभाग का ही नहीं बल्कि राज्य के सभी विभागों का है। निजी संस्थाओं का भी उसमें सहयोग होना चाहिए यही कारण है कि तालमेल स्थापित करने की समस्या अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ग्रुप का विचार है कि सरकार द्वारा राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा परिषद् की स्थापना की जानी चाहिए।

ग्रुप नं0 2 की रिपोर्ट (Report of Group-II)

सम्मलेन के निर्णय के अनुसार ग्रुप नं0 2 ने डा0 जी0पी0एल0 बक्शी को अध्यक्षता में प्रारुप के अनुच्छेद 1.2 के आधार पर निम्नलिखित बातों पर विचार किया:-

1. व्यावसायिक शिक्षा के विशिष्ट तत्व क्या होने चाहिए?

2. शैक्षणिक ब व्यावसायिक धाराओं के लक्ष्यों के अनुसार किस प्रकार के कोर्सों की व्यवस्था होनी चाहिए?
3. इस प्रणाली में अंशकालिक अध्ययन स्थानान्तरण कोर्स व उपसार कोर्स को कैसे संयुक्त किया जाएगा?

ग्रुप का विचार था कि व्यावसायिक शिक्षा की धारणा के और अधिक स्पष्टीकरण की आवश्यकता है, प्रतिभागियों ने यूनेस्को की रिपोर्ट के अनुच्छेद 5.1 में दी गई व्यावसायिक शिक्षा की परिभाषा के आधार पर अपने विचार प्रकट किए और सभी इस बात से सहमत थे कि व्यावसायिक शिक्षा को सामान्य शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाना चाहिए। क्षेत्रीय आवश्यकताओं व प्राप्त शिक्षा के आधार पर व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए। शिक्षार्थियों में मानसिक योग्यताओं भौतिक कुशलता को विकसित करने का प्रयास किया जाना चाहिए। प्रत्येक राज्य में व्यावसायिक शिक्षा परिषद की स्थापना होनी चाहिए। प्रत्येक जिले में व्यावसायिक शिक्षा समिति स्थापित होनी चाहिए। इन संस्थाओं के गठन, कार्य व अंत सम्बन्धों पर NCERT को व्यापक निर्देश-रेखाओं की रचना करनी चाहिए।

इस बात पर सहमति प्रकट की गई है कि व्यावसायिक शिक्षा केवल सैद्धान्तिक नहीं होनी चाहिए। वह वास्तविक जीवन स्थिति से सम्बन्धित होनी चाहिए ताकि शिक्षा को जीवन केन्द्रित बनाया जा सकें। अध्यक्ष महोदय ने सुझाव दिया कि एक ऐसी विधि की रचना की जानी चाहिए जिससे इस प्रणाली में प्राप्त अवसरों का अधिक से अधिक विद्यार्थी लाभ उठा सकें। सभी इस बात से सहमत थे कि विद्यार्थियों को निम्नलिखित विषयों में से चुनाव करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए:-

1. मुख्यतः शैक्षणिक विषय
2. मुख्यत: व्यावसायिक विषय
3. दोनों का न्याय-संगत सम्मिश्रण

इस विधि को अपनाने में यह आशा की जा सकती है कि एक साथ ही मानसिक कौशल व भौतिक कुशलताओं को संवृद्ध एवं विकसित किया जा सके। शैक्षणिक व व्यावसायिक धाराओं के लक्ष्य के अनुसार निश्चित कोर्सों की रचना के सम्बन्ध में ग्रुप ने दूसरा सुझाव यह दिया है कि कुल समय का 20 प्रतिशत से 25 प्रतिशत भाग भाषाओं एवं सामान्य अध्ययन पर लगाया जाना चाहिए शेष 80 प्रतिशत या 75 प्रतिशत समय शैक्षणिक एवं व्यावसायिक विषयों के अध्ययन पर लगाया जाना चाहिए और आवश्यकता अनुसार प्रयोगात्मक कार्य प्रोजेक्ट सम्बन्धित व्यवसाय के ऐप्रैन्टिसशिप की व्यवस्था होनी चाहिए। क्रियात्मक प्रशिक्षण स्कूलों से बाहर प्राप्त व्यवसायों में प्रशिक्षण और रोजगार या प्रशिक्षण और उत्पादन पर आधारित होना चाहिए। स्कूलों से बाहर प्राप्त सुविधाओं का पूरा प्रयोग करना चाहिए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. किस रिपोर्ट ने सबसे पहले व्यावसायीकरण की आवश्यकता पर प्रकाश डाला?

Which report highlighted the need for vocationalization for the first time?

2. शिक्षा के व्यावसायीकरण के लिए माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा दी गई सिफारिशों का वर्णन कीजिए।

Describe the recommendations given by secondary education commission for vocationalization of education.

3. शिक्षा के व्यावसायीकरण की धीमी प्रगति के क्या कारण थे?

What were the causes responsible for slow progress of vocationalization of education.

4. व्यावसायिक शिक्षा सम्बन्धी कोठारी आयोग की सिफारिशों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

Describe in brief the recommendations given by Kothari Commission related To vocational education.

9.7 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 तथा 1992 में निर्धारित किए गए लक्ष्य व उनकी प्राप्ति (Targets set and Achieved in NPE, 1986 and 1992)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अंतर्गत यह लक्ष्य रखा गया कि 1990 तक उच्च माध्यमिक स्तर के 10 प्रतिशत विद्यार्थी तथा 1995 तक 25 प्रतिशत विद्यार्थी व्यावसायिक पाठ्यक्रम में आ जाएंगे। ऐसे कदम उठाए जाएंगे कि व्यावसायिक कार्यक्रमों के अधिकतर विद्यार्थी या तो स्व-रोजगार में लग जाएं या उन्हें रोजगार मिल जाए। प्रदान किए गए कोर्सों का निरन्तर पुर्नावलोकन किया जाएगा। सरकार भी माध्यमिक स्तर पर विभिन्नता लाने के लिए हर सम्भव प्रयास करेगी। परन्तु इन सभी सिफारिशों के लागू होने में कमियों के कारण 1992 में राष्ट्रीय नीति ने अपने लक्ष्यों को परिवर्तित किया। यह प्रस्ताव रखा गया कि 1995 तक उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों का 10 प्रतिशत तक तथा 2000 तक 25 प्रतिशत भाग व्यावसायिक कोर्स में शामिल होगा। परन्तु वास्तव में अब तक केबल 10 प्रतिशत विद्यार्थी ही व्यावसायिक कोर्सों की ओर आकर्षित हो पाए है। जैसा कि सारणी द्वारा भी दर्शाया गया है।

सारणी: 9.1 माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण की योजना के अन्तर्गत राज्यों/ संघीय क्षेत्रों में स्कूलों, विभागों तथा नामांकन की संख्या(2001-02)

क्रम संख्या	राज्य/ संघीय क्षेत्र	स्कूलों की संख्या	विभागों की संख्या	नामांकन क्षमता
1	आन्ध्र प्रदेश	668	1880	94000
2	अरुणाचल प्रदेश	4	4	200
3	आसाम	225	510	25500

4	बिहार	257	752	37600
5	देहली	38	93	4650
6	गोवा	43	106	5300
7	गुजरात	364	1032	51600
8	हरियाणा	170	876	43350
9	हिमाचल प्रदेश	40	82	4100
10	जम्मू व कश्मीर	38	38	1900
11	कर्नाटक	564	1427	71350
12	केरल	363	1008	50400
13	मध्य प्रदेश	465	1307	65350
14	महाराष्ट्र	1141	3480	17400
15	मेघालय	10	20	1000
16	मिजोरम	17	51	2550
17	नागालैंड	8	16	800
18	उडीसा	231	924	46200
19	पंजाब	282	846	42300
20	राजस्थान	155	645	23250
21	सिक्किम	7	9	450
22	तमिलनाडु	700	2140	107000
23	उतर प्रदेश	910	2350	117500
24	पश्चिमी बंगाल	39	39	1950
25	अंडमान व निकोबार	83	3	150
26	चंडीगढ	17	58	2900
27	दादर व नगर	02	2	100
28	दमन व दीयू	02	5	250
29	पांडिचेरी	12	16	800
30	त्रिपुरा	12	12	600

उपर वर्णित सारणी से स्पष्ट होता है कि विभिन्न राज्यों व संघीय क्षेत्रों में जिस प्रकार से व्यावसायिक कोर्सों का विकास व विद्यार्थियों का नामांकन होना चाहिए था वह नहीं हो पाया। इसके लिए विद्यार्थियों की सोच में परिवर्तन कोर्स में विभिन्नता तथा सरकार के द्वारा वित्तीय सहयोग की अत्यन्त आवश्यकता है।

9.8 स्कूल स्तर पर व्यावसायीकरण की वर्तमान स्थिति (Present status of vocationalization at the school level)

भारत में वर्तमान समय में निम्नलिखित संस्थानों के द्वारा व्यावसायिक शिक्षा तथा प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है।

पोलिटैक्निक्स तथा औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान

(Polytechnics and Industrial Training Institutions)

बहुत लम्बे समय से पोलिटैक्निक्स तथा औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान को स्कूल प्रणाली से बाहर व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाने के प्रमुख संस्थान माना जाता है। 1950 में काश्तकार प्रशिक्षण योजना (Craftsman Training scheme) आरम्भ की गई थी जिससे एक तरफ उद्योगों की कौशलयुक्त कार्यशक्ति की आवश्यकता की पूर्ति के लिए विभिन्न व्यावसायों में प्रशिक्षण दिया जा सके तथा दूसरी और शिक्षित नवयुवकों में बेरोजगारी को कम किया जा सके। प्रशिक्षण काल लगभग 1 वर्ष से तीन वर्ष तक होता है जबकि प्रवेश के लिए 8वीं पास या 12वीं पास या कोर्स के अनुरुप शिक्षा स्तर निश्चित किया जाता है जो राज्य स्तर/ केन्द्र स्तर पर उपयुक्त नौकरियों के लिए मान्य होता है।

पोलिटैक्निक्स के द्वारा भी विभिन्न व्यावसायों से सम्बन्धित डिप्लोमा स्तर की शिक्षा प्रदान की जाती है जिनकी औद्योगिक बाजार में मांग होती है। ऐसे व्यवसाय जो इंजीनियरिंग से सम्बन्धित है उनकी संख्या 42 है तथा ऐसे जो इंजीनियरिंग से सम्बन्धित नहीं है उनकी संख्या 22 है, का प्रशिक्षण इन संस्थानों द्वारा प्रदान किया जाता है। इनसे शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात विद्यार्थी चाहे तो रोजगार के लिए जा सकता है और यदि चाहे तो इंजीनयरिंग की डिग्री प्राप्त करने के लिए आगे शिक्षा ले सकता है।

केन्द्रीय अनुमोदित माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण

(Centrally Sponsored Vocationalization of Secondary Education)

जैसा कि पहले भी व्यक्त किया गया है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में माध्यमिक स्तर पर व्यावसायीकरण को अत्यधिक महता प्रदान की है तथा 1995 तक +2 स्तर के विद्यार्थियों का 10 प्रतिशत तथा 2000 तक 25 प्रतिशत को व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की ओर मोड़ना है। इसीलिए 1988 में केन्द्र सरकार द्वारा अनुमोदित माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण योजना प्रारम्भ की गई। उपयुक्त ढंग से लागू करने के लिए योजना के अन्तर्गत प्रत्येक राज्य में विभिन्न स्तरों पर एक पृथक प्रबन्धन सरपंच की स्थापना की गई। राज्यों तथा संघीय क्षेत्रों को केन्द्र सरकार द्वारा अधिकतम वितीय सहायता प्रदान की गई और कार्यशालाओं के निर्माण, कार्यशालाओं के लिए सामग्री, जिला स्तर पर व्यावसायिक सर्वेक्षण, पाठ्यक्रम अनुदेशन सामग्री/ पाठ्य पुस्तकों के विकास के लिए कार्यशालाओं के लिए 100 प्रतिशत सहायता व कच्चे माल, विद्यार्थियों के क्षेत्रीय भ्रमण तथा सभी स्तरों पर स्टाफ की तन्खवाहों के लिए 50 प्रतिशत सहायता देने का प्रावधान रखा गया।

लक्षद्वीप के अतिरिक्त सभी राज्यों/ संघीय क्षेत्रों में यह कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया तथा पूरे देश में 19599 व्यावसायिक विभाग को 6800 स्कूलों में अनुमति प्रदान की गई, जिसमें लगभग 9.79 लाख विद्यार्थियों को प्रवेश देने की क्षमता थी। वर्तमान समय में लगभग 150 कोर्सों को इस योजना के अंतर्गत चलाया जा रहा है। इन कोर्सों का चयन जिला स्तर पर व्यावसायिक सर्वेक्षण के द्वारा स्थानीय स्तर की मांग के आधार पर किया गया है।

पूर्व-व्यावसायिक शिक्षा की केन्द्रीय अनुमोदित योजना

(Centrally Sponsored Scheme of Pre-Vocational Education)

हम सब जानते है कि विद्यार्थी जनसंख्या का 80 प्रतिशत भाग कक्षा दसवीं से उपर की शिक्षा प्राप्त नहीं करता तथा एक अकुशल श्रम शक्ति को बढ़ावा देता है। इसी कारण 1993-94 में निम्न माध्यमिक स्तर पर पूर्व व्यावसायिक शिक्षा की केन्द्र अनुमोदित योजना प्रारम्भ की गई, जिसके निम्नलिखित उद्देश्य थे:-

- कक्षा नवम् तथा दसवीं में विद्यार्थियों एके सरल कौशल का प्रशिक्षण प्रदान करना, जिनकी बाजार में आवश्यकता है,
- व्यावसायिक रुचियों तथा अभिवृत्तियों का विकास करना तथा व्यावसायिक प्राथमिकता के लिए तैयार करना।
- अध्ययन सम्बन्धी शिक्षा के ऐच्छिक अंश के रुप में काम में योगदान के लिए विद्यार्थियों को तैयार करना और विद्यार्थियों को उच्च माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के चयन के लिए सुविधा प्रदान करना।

व्यावसायिक शिक्षा का केन्द्रीय संस्थान

(Central Institute of Vocational Education)

भारत में शिक्षा के व्यावसायीकरण के लिए बड़े स्तर पर प्रयास किए जा रहे है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान प्रशिक्षण परिषद के मौलिक अंश के रुप में भोपाल में, जुलाई 1993 में एक व्यावसायिक शिक्षा का केन्द्रीय संस्थान स्थापित किया गया, जिसका उद्देश्य कार्यक्रम को तकनीकी तथा शैक्षिक समर्थन प्रदान करना है।

आज के समय में विज्ञान की पढ़ाई से कतराते बच्चे - तो दूसरी तरफ आर्ट्स और कॉमर्स के रास्ते पढ़कर भी कुछ खास न कर पाने की निराशा बनी हुई है। इन स्थितियों के बीच बच्चों को उच्चतर माध्यमिक स्तर पर ही हुनरमंद बनाने के लिए सरकार पढ़ाई का एक अन्य रास्ता खोलने जा रही है। व्यावसायिक शिक्षा के इस नए सर्टिफिकेट कोर्स के जरिए बच्चों को रोजगार की तालीम तो मिलेगी ही, साथ ही आगे चलकर वे ग्रेजुएट से लेकर एम.फिल., पी0एच0डी0 तक भी कर सकेंगे।

सूत्रों के अनुसार प्रोद्योगिकी में तेजी से हो रहे बदलाव, ग्लोबल इकोनामी के साथ ही उत्पादों और बिजनेस के नए पहलुओं को ध्यान में रखकर ही मानव संसाधन विकास मंत्रालय के माध्यमिक शिक्षा दिमाग ने यह नई योजना बनाई है। सरकार की मंशा खासतौर पर पढ़ाई में लगे युवाओं को सीनियर सैकेंडरी स्तर पर ही रोजगार की तरफ मोडने की है। व्यावसायिक शिक्षा की इस नई विधा के लिए राष्ट्रीय स्तर पर अलग से सैन्ट्रल बोर्ड ऑफ वोकेशनल

एजूकेशन बनेगा। शुरुआती तैयारी के रुप में सरकार देशभर में 100 मॉडल वोकेशनल स्कूल खोलेगी। पांच हजार नए वोकेशनल स्कूल खोले जाएंगे। सभी स्कूल दो पाली में चलेंगे, जबकि हर स्कूल में व्यावसायिक शिक्षा के दो-दो पाठ्यक्रम होंगे। संगठित और असंगठित क्षेत्र की विशेष जरुरतों के मद्देनजर माड्यूलर व रेगुलर कोर्स के रुप में इसकी तैयारी की गई है। पंडित सुन्दरलाल शर्मा सैन्ट्रल इंस्टीटयूट ऑफ वोकेशनल एजूकेशन, भोपाल की ओर से तैयारी की गई है। सरकार का मानना है कि इससे उच्च शिक्षा के दबाव में कमी आएगी।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. व्यावसायिक शिक्षा के केन्द्रीय संस्थान की स्थापना क्यों की गई?
   Why central institute of vocational education was set up?
2. ऐसी दो संस्थाओं का नाम बताइए जो स्कूल व्यवस्था से बाहर व्यावसायिक शिक्षा प्रदान कर रहे हैं।
   Mention the name of two institutions that are imparting vocational education outside the school system.
3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के द्वारा व्यावसायिक शिक्षा से सम्बन्धित क्या लक्ष्य रखे गए थे?
   What were the targets of vocational education as envisaged in NPE,1986?
4. स्कूल स्तर पर व्यावसायीकरण की वर्तमान स्थिति का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
   Explain briefly the present position of vocationalization at school level.

9.9 माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण को त्वरामित करने के लिए सुझाव (Suggestions for accelerating vocationalization of Secondary Education)

माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के व्यावसायीकरण की अत्यन्त आवश्यकता है क्योंकि इसी के द्वारा ही देश की बेरोजगारी की समस्या का समाधान किया जा सकता है तथा दूसरी और विश्वविद्यालयों की भीड़ को कम किया जा सकता है। इतने आयोगों व समितियों की सिफारिशों के बावजूद भी हम निश्चित लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल नहीं हो पाए। यदि हम इस प्रक्रिया को तेज करना चाहते हैं तो निम्नलिखित सुझावों को अपनाना आवश्यक है:-

1. व्यावसायिक संस्थानों को केवल विद्यार्थियों के लिए न माना जाए जो या तो शैक्षिक रुप से पिछड़े हुए है या स्कूल छोड चुके हैं। क्योंकि साधारणतया लोगों को यहीं प्रवृति है कि पोलिटेक्निक्स औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं में वहीं विद्यार्थी जाता है जो पढ़ाई में कमजोर है। यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि ऐसे स्कूलों के

प्रति हमारी प्रवृति में क्रांतिकारी परिवर्तन आए। जो विद्यार्थी इन संस्थाओं में जाते है उनके प्रति हमें अपनी प्रवृत्ति को बदलना होगा।

2. प्रत्येक कोर्स के पश्चात् यह आवश्यक है कि विद्यार्थी किसी न किसी कार्य के लिए तैयार हो जाए। प्रदान किया ज्ञान सैद्धांतिक के साथ-साथ व्यावहारिक भी होना चाहिए। कोर्सों के द्वारा निम्न स्तर और माध्यमिक स्तर की नौकरियों के अनुरुप अर्द्धकुशल तथा कुशल कारीगर तैयार किए जाने चाहिए।

3. हमारे देश में यह अनुमान लगाया जाता है कि यदि पहली कक्षा में 100 विद्यार्थी प्रवेश लेते है तो आठवीं कक्षा तक केबल 50 विद्यार्थी तथा बारहवीं कक्षा तक केवल 16 विद्यार्थी ही पहुंचते है। इसलिए यह सुझाव दिया जाता है कि इन स्कूल छोड़ने वाले विद्यार्थियों के लिए पार्ट-टाईम पाठ्यक्रमों का प्रबन्ध किया जाना चाहिए। लड़कियों की आवश्यकता के अनुरुप पृथक पाठ्यक्रम होने चाहिए।

4. नवयुवकों तथा लड़कियों को व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की और आकर्षित करने के लिए कुछ वजीफो का प्रबन्ध करना आवश्यक है। विद्यमान एपरेन्टिसशिप योजना को अधिक सुदृढ किया जाना चाहिए।

5. सभी स्तरों पर (स्कूल स्तर) सभी प्रकार के व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के लिए फीस बहुत कम होनी चाहिए या विद्यार्थियों को बिना किसी फीस के प्रदान किए जाने चाहिए।

6. सरकार इस प्रकार के कार्यक्रमों के लिए अग्रणी होनी चाहिए परन्तु राज्य सरकारों को तथा अन्य गैर सरकारी संस्थानों को भी इसमे अपना पूर्ण सहयोग देना चाहिए।

7. भारत जैसे देश के लिए आवश्यक है कि व्यावसायिक तथा तकनीकी शिक्षा का विस्तार बहुत सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए और यह उद्योगों व समाज की आवश्यकताओं के अनुरुप होना चाहिए।

8. राज्य स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा के प्रशासन एवं निरीक्षण के लिए एक पृथक विभाग होना चाहिए।

9. व्यावसायिक पाठ्यक्रम के उद्भव ने अध्यापकों के प्रशिक्षण लेने की अनगिनत समस्याओं को बढ़ावा दिया है। वास्तव में केवल प्रशिक्षित व मान्यता प्राप्त व्यावसायिक दक्ष ही प्रभावी ढंग से व्यावसायिक शिक्षा प्रदान कर सकता है। ऐसी विधियां, ढंग व साधन ढूढनें होगे जिससे प्रशिक्षित व्यावसायिक दक्ष शैक्षिक संस्थानों में काम करने के लिए आगे आए। व्यावसायिक विषयों को पढ़ाने वाले अध्यापकों के लिए उचित शैक्षिक योग्यता निश्चित करनी होगी।

10. सामान्य रुप से यह देखा जाता है कि राज्यों के शैक्षिक प्रशासकों तथा वित्तीय विभाग के अधिकारियों के बीच उचित समन्वय नहीं होता, जिसके परिणामस्वरुप आवश्यक स्टाफ, सामग्री आदि के लिए उचित ढंग सोचने होंगे कि शैक्षिक सुधारों के लिए स्कूलों को वित्त सम्बन्धी समस्याओं का सामना न करना पड़े।

11. विद्यालयों में व्यावसायिक पाठ्यक्रम सक्षमता आधारित और ऋण अंतरण प्रणाली और मल्टी-प्वांइट निकास के लिए प्रावधानों सहित प्रमाणीय रुप में होना चाहिए।
12. पाठ्यक्रम तैयार करने, पाठ्यचर्या का विकास करने, संकाय / विद्यार्थियों का प्रशिक्षण और पाठ्यक्रमों के प्रमाणीकरण में समझौता ज्ञापनों के जरिए उद्योगों को शामिल करके व्यावसायिक शिक्षा योजना को सुदृढ़ बनाया जाना चाहिए।
13. केन्द्रीय विद्यालय और नवोदय स्कूल प्रणाली के पास व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को चलाने सम्बन्धी सुविधाएं अनिवार्य रुप से होनी चाहिए।
14. व्यावसायिक पाठ्यक्रम तैयार करते समय अपंग व्यक्तियों के लिए विशेष व्यवस्था की जानी चाहिए और पाठ्यक्रमों में उनकी आवश्यकताओं तथा एकीकरण पर समुचित ध्यान दिया जाना चाहिए।
15. विद्यालय प्रणाली को तकनीकी समर्थन देने और अन्य तकनीकी संस्थानों के साथ संलग्नता स्थापित करने के लिए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (All India Council for Teaching Education AICTE) के व्यावसायिक शिक्षा बोर्ड को पुन: सक्रिय किया जाना चाहिए।
16. व्यावसायिक संस्थाओं को प्रौद्योगिकी विकास के साथ-साथ अद्यतन बनाए रखने के लिए इन्हें केन्द्रीय खाद्य और प्रोद्योगिकी अनुसंधान संस्थान, मैसूर; केन्द्रीय चमड़ा अनुसन्धान संस्थान, चेन्नई आदि प्रोफैशनल संस्थानों के नेटवर्क के साथ भी जोड़ा जाना चाहिए।
17. व्यावसायिक शिक्षा के शिक्षकों, मुख्य शिल्पकारों तथा प्रशिक्षुओं के बीच विचारों / कौशलों का नियमित आदान प्रदान होना चाहिए।
18. व्यावसायिक शिक्षा के कार्यक्रमों के क्रियान्वयन तथा कौशलों का प्रशिक्षण प्रदान करने में भारतीय वाणिज्य और उद्योग महासंघ, भारतीय वाणिज्य और उद्योग महामंडल और भारतीय उद्योग परिसंघ जैसे शीर्ष औद्योगिक संगठनों को अधिक से अधिक शामिल किया जाना चाहिए।
19. आठवीं कक्षा उतीर्ण करने वालों, जिनकी संख्या प्राथमिक शिक्षा सार्वजनीकरण और सर्वशिक्षा अभियान सम्बन्धी योजनाओं की सफलता के कारण बढेगी, के लिए अभी से प्रबंध किया जाना चाहिए।
20. सर्वशिक्षा अभियान, वयस्क शिक्षा और विद्यालयों, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों, पॉलिटेक्निकों, सामुदायिक महाविद्यालयों आदि मे व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रमों जैसी योजनाओं के एकीकरण पर बल दिया जाना चाहिए।

9.10 माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण एवं दसवीं पंचवर्षीय योजना (Vocationalization of Secondary Education and Tenth five year plan)

माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा सामान्य शिक्षा प्रणाली के दो महत्वपूर्ण पढ़ता है, क्योंकि इन्हीं बिन्दुओं पर युवा वर्ग निर्णय लेते है कि क्या उच्चतर शिक्षा जारी रखी जाए या तकनीकी प्रशिक्षण का विकास चुना जाए या कार्यबल में सम्मिलित हुआ जाए। शिक्षाविदों और विशेषज्ञों ने निरन्तर यह सिफारिश की है कि इन चरणों में शिक्षा को रोजगार की दुनिया से जोडा जाए तथा इसे व्यावसायिक रुप प्रदान किया जाए। बेरोजगारी की बढ़ती समस्या को ध्यान में रखते हुए योजना आयोग ने दसवीं योजना के लिए वर्ष 2001 में व्यावसायिक शिक्षा पर एक पृथक कार्यबल गठित किया था। इस कार्यबल की सिफारिशों के आधार पर दसवी योजना में केन्द्रीय प्रायोजित योजना को निम्नलिखित विशेषताओं के साथ पुन: प्रारंभ किया जाना चाहिए:-

- व्यावसायिक पाठ्यक्रम सक्षमता आधारित होना चाहिए।
- +2 स्तर पर व्यावसायिक पाठ्यक्रमों और विश्वविद्यालयों स्तर पर पाठ्यक्रमों के बीच संलग्नता स्थापित की जानी चाहिए।
- मौजूदा योजना को सुदृढ बनाया जाए।
- स्व-वित्तपोषण कोर्स प्रारम्म किए जाए।
- प्रशिधुता प्रशिक्षण सुविधा का पूर्ण रुप से उपयोग किया जाए।
- स्थानीय व्यापार व उद्योग को शामिल किया जाए।
- अपंगों के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाए।
- राज्यों के द्वारा वित्तीय सहायता प्रदान की जाए।

दसवी पंचवर्षीय योजना हेतु गठित माध्यमिक, उच्चतर और तकनीकी शिक्षा सम्बन्धी संचालन समिति ने अनुशंसा की माध्यमिक विद्यालय स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा, पॉलिटेविनक शिक्षा और औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों को बेहतर नेटवर्किंग, संलग्नता, केन्द्रित लक्ष्यीकरण और संसाधनों के अधिकतम उपयोग के लिए राज्य सरकार के एक दिमाग के अधीन रहना चाहिए। दसवीं पंचवर्षीय योजना की उपलब्धियां निम्नलिखित हैं:-

- वर्ष 1953 में 54 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान थे, अब यह संख्या 4274,(1654 सरकारी क्षेत्र में और शेष 2620 निजी क्षेत्र मे) हो गई है। सीटों की क्षमता 10000 से प्रगामी रुप से बढ़कर वर्तमान में 6,28,000 तक पहुंच गई है।
- शिल्पकार प्रशिक्षण कार्यक्रम 43 इंजीनियरिंग और 24 गैर इंजीनियरिंग ट्रेडों में दिया जा रहा है जिससे शिक्षित युवाओं को औद्योगिक रोजगार हेतु उपयुक्त कौशलो से युक्त कर उनके बीच बेरोजगार को कम किया जा सके।
- 10 महिला क्षेत्रीय व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थानों में केवल महिलाओं के लिए प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है। इन संस्थानों की वर्तमान प्रशिक्षण क्षमता 2,068 सीटें है। राज्य क्षेत्र में, महिलाओं हेतु 534 विशेष स्कंधों सहित, 46,750 सीटो वाले सामान्य औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों तथा केबल महिलाओं के लिए 231 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों का नेटवर्क है, जो विभिन्न इंजीनियरिंग और गैर-इंजीनियरिंग ट्रैडों में शिल्पकारी प्रशिक्षण प्रदान कर रहे है।

स्व-मूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. माध्यमिक शिक्षा पर व्यावसायीकरण को बढ़ावा देने के लिए सरकारों को क्या योगदान देना चाहिए?

   What contribution should be given by the government to enhance this vocationalization of secondary education.

2. व्यावसायीकरण शिक्षा के लिए लोगों की प्रवृत्ति मे किरन प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता है?

   What type of change in attitude of the people is needed for vocational education

3. व्यावसायीकरण शिक्षा के लिए वितीय सहायता को कैसे बढ़ावा दिया जा सकता है?

   How the financial help can be enhanced for vocational education?

4. स्कूल स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा को त्वरामित करने के लिए सुझाव दीजिए।

   Give suggestion to accelerate vocational education at school level.

5. दसवीं पंचवर्षीय योजना में केन्द्रीय प्रायोजित योजना की प्रमुख विशेषता क्या थी?

   What were the important characteristics of centrally sponsored scheme in Tenth five year plan?

6. दसवीं पंचवर्षीय योजना की स्कूल स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा की कुछ उपलब्धियों का वर्णन कीजिए।

   Explain some achievements in the field of vocational education at school level of tenth five year plan.

9.11 सारांश

(Summary)

राष्ट्रीय व सामाजिक विकास के लिए माध्यमिक स्तर पर शिक्षा का बड़े पैमाने पर व्यावसायीकरण किया जाना अपरिहार्य है। निरन्तर ज्ञान, विज्ञान, तकनीकी व प्रौद्योगिकी विकास ने इसके महत्व को और बढ़ा दिया है। सैकेण्डरी शिक्षा का बडे पैमाने पर व्यावसायीकरण किया जाना चाहिए और विश्वविद्यालय स्तर पर कृषि एवं तकनीकी शिक्षा पर बल दिया जाना चाहिए। आज भारत को विभिन्न आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड रहा

है जैसे- बेरोजगारी, अकाल, गरीबी आदि। अत: शिक्षा का व्यावसायीकरण अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि इसी प्रकार की शिक्षा से देश की समस्याओं को सुलझाया जा सकता है।

विभिन्न समितियों व आयोगों ने समय-समय पर अपनी रिपोर्ट में दी गई सिफारिशों में माध्यमिक स्तर की शिक्षा के व्यावसायीकरण पर बल दिया है। हम देख रहे है कि शिक्षा की भावी प्रवृति सामान्य तथा व्यावसायिक शिक्षा के उपयोगी समन्वय में होगी। सामान्य शिक्षा में प्री-व्यावसायिक तथा तकनीकी शिक्षा के कुछ तत्व सम्मिलित होगें और व्यावसायिक शिक्षा में सामान्य शिक्षा के तब सम्मिलित होंगे। आगामी वर्षो में हम जिस समाज की कल्पना कर रहे है उसमें दोनों को अलग-अलग रखना असम्भव होगा। कुछ अभावों के कारण, जैसे-गंभीरता, प्रशिक्षण सुविधाएं, विशेषज्ञ निर्देशन, सम्पर्क, धन आदि माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण की प्रगति बहुत धीमी गति से हो रही है। युवाओं के बीच बढ़ती बेरोजगारी की समस्या के कारण सम्पूर्ण व्यावसायिक योजना को पुन: संरचित करने की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 एवं 1992 के द्वारा निर्धारित किए गए लक्ष्यों को अभी तक भी प्राप्त नहीं किया जा सका है। माध्यमिक स्तर पर व्यावसायीकरण को बढ़ावा देने के लिए शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के लडको एवं लड़कियों की आवश्यकता को पूरा करने के लिए निम्न माध्यमिक (Lower secondary) एवं उच्च माध्यमिक (Higher Secondary) स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा की अंशकालिक एवं पूर्णकालिक सुविधाएं प्रदान की जानी चाहिए। इन कोर्सों के गठन के लिए सभी शिक्षा विभागों में विशेष विभाग स्थापित किए जाने चाहिए। केन्द्र सरकार द्वारा राज्य सरकारों को माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण के लिए पर्याप्त अनुदान दिया जाना चाहिए।

9.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. Aggarwal J.C. and Gupta S. Secondary Education and Management, Shipra Publication, 2008
2. Walia J.S. Secondary Education and School Management, Ahim Paul Publishers, Jallander,2007.
3. Report of Secondary Education Commission, 1952-53, New Delhi, Ministry of Education.
4. Report of the Indian Education Commission, Education and National Development, 1964-66, New Delhi: Ministry of Education.
5. The National Policy of Education, Challenges in Education 1986, MHRD.
6. Report of National Advisory Committee, 'Learning without Burden' ,1993, MHRD.

इकाई-10

माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम
(Curriculum at Secondary Level)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

10.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

10.1 पाठ्यक्रम: अर्थ एवं प्रत्यय (Curriculum: Meaning and Concept)

10.2 पाठ्यक्रम निर्माण (Curriculum Construction)

10.3 पाठ्यक्रम के प्रकार (Types of Curriculum)

10.4 भारत में माध्यमिक शिक्षा पाठ्यक्रम का विकास (Development of Secondary Education Curriculum)

10.5 पाठ्यक्रम नवीनीकरण एवं अध्यापक शिक्षा (Curriculum Renewal and Teacher Education)

10.6 सारांश (Summary)

10.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

10.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप-

- पाठ्यक्रम का अर्थ बता सकेंगे।
- पाठ्यक्रम के प्रत्यय की नवीन एवं प्राचीन अवधारणा का वर्णन कर सकेंगे।
- पाठ्यक्रम की विभिन्न अवधारणाओं में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।
- पाठ्यक्रम निर्माण के उद्देश्यों की सूची बना सकेंगे।
- पाठ्यक्रम निर्माण के विभिन्न सिद्धांतों की व्याख्या कर सकेंगे।
- पाठ्यक्रम के विभिन्न प्रकारों की विवेचना कर सकेंगे।
- भारत में माध्यमिक पाठ्यक्रम के विकास के विभिन्न पक्षों का वर्णन कर सकेंगे।
- अध्यापक शिक्षा की पाठ्यक्रम निर्माण में भूमिका को पहचान सकेंगे।
- पाठ्यक्रम नवीनीकरण एवं शिक्षण में अध्यापक की भूमिका उचित रुप से निर्वाह कर सकेंगे।

शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है और सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा के उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं कि शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्तिr के लिए विविध विषयों का चयन करके पाठ्यक्रम निर्माण किया जाता है। पाठ्यक्रम के निर्धारण में देश की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थितियों को ध्यान में रखा जाता है। दूसरे शब्दों में, पाठ्यक्रम व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र की आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रतिबिम्ब होता है। यह आवश्यकता

समय, परिस्थिति, आदर्श के अनुकूल परिवर्तित होती रहती है। अत: आवश्यकता में बदलाव के साथ-साथ पाठ्यक्रम भी बदलता रहता है। हमारे देश की अपार जनसंख्या, सांस्कृतिक विविधताओं, क्षेत्रीय विषमताओं आर्थिक आवश्यकताओं तथा राष्ट्रीय उद्देश्यों के अनुरुप माध्यमिक पाठ्यक्रम का नियोजन आवश्यक है। इस इकाई में हम पाठ्यक्रम के अर्थ, प्रत्यय, प्रकार सिद्धान्तों और पाठ्यक्रम विकास का अध्ययन करेंगे।

10.1 पाठ्यक्रम - अर्थ एवं संप्रत्यय (Curriculum-Meaning and Concept)

पाठ्यक्रम शिक्षा का एक अभिन्न अंग है। इसके अभाव में शिक्षा अपना वास्तविक तथा लाभबद्ध अर्थ से वंचित हो, पथ प्रदर्शक के स्थान पर पद-लम्बित होकर रह जाती है। यह (पाठ्यक्रम) शिक्षा के समूर्ण क्षेत्र में अपना एक विशेष तथा महत्वपूर्ण स्थान रखता है तथा शिक्षा के उद्देश्यों तथा आदर्शो के निर्धारण में अति विशिष्ट भूमिका अदा करता है। यदि पाठ्यक्रम को शिक्षक का भी मार्गदर्शक कहा जाए तो यह एक अतिश्योक्ति नहीं होगी: क्योंकि यह पाठ्यक्रम ही है जो अध्यापक को सीधे-सीधे निश्चित करवाता है कि उसे किस स्तर पर किन-किन विषयों का कितने प्रतिशत तक अध्ययनक्रम कितने समय में पूरा करवाना है। विद्यार्थीयों के लिए इसकी उपयोगिता इस लिए भी बढ़ जाती है कि इसके माध्यम से वे जान पाते है कि उन्हें किन-किन पुस्तकों का अध्ययन करना है। शिक्षाक्रम के अभाव में शिक्षक तथा छात्र दोनों ही अपने-अपने ध्येयों में असफल रह जाते है। विद्यालय में होने वाली प्रत्येक क्रिया पाठ्यक्रम पर आधारित होती है। इसे शिक्षाक्रम रुपी शरीर का हृदय कहना समिचीन होगा। यदि शिक्षाविदों के कथन को देखा जाए तो हम पाएंगे कि कुछ शिक्षाविद तो इसे शिक्षा एक विद्यालय का दर्शनशास्त्र कहते है। इसके (पाठ्यक्रम) इस महत्व को देखते हुए गोड एवं शर्मा ने अपनी पुस्तक शिक्षादर्शन एवं आधुनिक प्रवित्तियां' में लिखा है, 'पाठ्यक्रम की रुपरेखा एवं उसका संगठन, शिक्षण की निपुणता, उसके उद्वेश्यों एवं समाज की संस्कृति और सामाजिक आवश्यकताओं के प्रति उसकी उपयुक्तता निर्धारित करता है।"

पाठ्यक्रम का अर्थ

(Meaning of Curriculum)

शब्द व्युत्पति के आधार पर यदि देखे तो पाठ्यक्रम शब्द अंग्रेजी भाषा के Curriculum का हिन्दी रुपांतरण है। वास्तव में इस शब्द की व्युत्पति लेटिन भाषा के Currere शब्द से हुई है जिसका अर्थ है Run (दौडना) अत: Curriculum का अर्थ हुआ - वह पथ जिस पर दौड़कर व्यक्ति किसी निश्चित लक्ष्य तक पहुँचता है। इस आधार पर शिक्षा एक ऐसी दौड़ के समान है जो पाठ्यक्रम के मार्ग पर दौडी जाती है और उस दौड़ का एक मात्र लक्ष्य है- विद्यार्थी का व्यक्तित्व विकास।

पाठ्यक्रम की प्राचीन धारणा

(Old Concept of Curriculum)

पाठ्यक्रम को समुचित ढंग से समझने के लिए यह अनिवार्य हो जाता है कि उन समस्त विद्वानों तथा शिक्षाविदों की परिभाषाओं को गहनतापूर्वक खगाला जाए जिन्होंने पाठ्यक्रम शब्द को अपने शब्दो में बांधने का सफल या असफल प्रयास किया है। इस क्रम में हम सर्वप्रथम प्राचीन धारणा को प्रेषित करने वाली कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाओं का अवलोकन तथा उन पर चिन्तन करेंगे।

1. कार्टर वी0 गुड के शब्दो में, "निर्देशन की विशिष्ट सामग्री अथवा पाठ्य-वस्तु की एक सम्पूर्ण तथा सामान्य योजना जिस विद्यालय के छात्रों की एक सम्पूर्ण तथा सामान्य योजना जिसे विद्यालय के छात्रों के सम्मुख इसलिए प्रस्तुत करना होता है कि वह व्यावसायिक क्षेत्र अथवा पेशे में प्रवेश करने के, स्नातक बनने अथवा प्रमाण पत्र प्राप्त करने के योग्य बन सके।"

''A general overall plan of the concept or specific materials of instruction that the school should offer the students by the way of qualifying them for graduation or certification for entrance into a professional or a vocational field. ''Cater V. Good.

2. डा0 आर0एन0 सफाया ने पाठ्यक्रम की परिभाषा कुछ इस प्रकार से दी है, "इस प्रकार पाठ्यक्रम को विद्यालयों में निर्देशन के कार्य के लिए एक निश्चित क्रम मे व्यवस्थित किए गए विषयों के समूह अथवा अध्ययन की विषय वस्तु के रुप में जाना जाए।"

"So the term curriculum came to signify a group of subjects or courses of study managed in a particular sequence for instructional purposes in school.'' (Dr.R.N.Safaya)

3. कनिग्धंम् पाठ्यक्रम के विषय में अपने विचार कुछ ऐसे प्रकट करते है, 'शिक्षाक्रम अपनी चित्रशाला (विद्यालय) में वस्तु को अपने आदर्शो, (उद्देश्य एवं लक्ष्यों) के अनुसार बदलने के लिए कलाकार शिक्षक के हाथों में एक साधन है।"

Curriculum is a tool in the hands of the artist (the teacher) to mould his material (the pupils) according to his ideals (aims and objectives) in his studio (the school)"- Cunningham].

इन परिभाषाओं को आधार बनाकर यह कहा जा सकता है कि प्राचीन मत के अनुसार पाठ्यक्रम केवल अध्यापक केन्द्रित था। पठन-पाठन क्रिया पूर्णरुप से अध्यापक तक सीमित थी। यह उस ज्ञान या कुशलता का संग्रह था जो केवल अध्यापक के अनुभवों पर आधारित होता था तथा जिसमें विद्यार्थी की क्षमता, दृष्टिकोण कोई अर्थ नहीं रखता था। विद्यार्थी को मात्र सूचनात्मक ज्ञान प्रदान कराना ही पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य होता था। इस बात को भी ध्यान में रखना होगा कि उस समय पाठ्यक्रम व पाठ्यविषय में कोई अंतर नहीं समझा जाता था।

पाठ्यक्रम की आधुनिक धारणा

(Modern Concept of Curriculum)

पाठ्यक्रम के विषय में प्राचीन विद्वानों तथा आधुनिक विद्वानों का विवेचन एक दूसरे से स्पष्टत: अलग दिखाई देता है। समयान्तराल में पाठ्यक्रम की परिभाषा में जो बदलाव आया है वह बहुत अधिक व्यापक है। अब विद्यार्थियों को केवल विषय पढ़ा देना ही पर्याप्त नहीं माना जाता। अपितु विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास ही आधुनिक समय में पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य समझा जाता है। आधुनिक विद्वानों तथा शिक्षाविदों ने पाठ्यक्रम की जो आधुनिक परिभाषा दी है उनमें से कुछ विशेष परिभाषाएं निम्न प्रकार से है:

फ्रोबेल ने पाठ्यक्रम की परिभाषा कुछ ऐसे दी है: " पाठ्यक्रम को मानवजाति के सम्पूर्ण ज्ञान और अनुभव का प्रतिबिम्ब समझा जाना चाहिए।"

("Curriculum should be conceived as an epitome of the round whole of the knowledge and experience of the human race." - **Froeble)**

टी0पी0 नन के शब्दों में " पाठ्यक्रम से अभिप्राय उन क्रियाओं से है जो कि मानव आत्मा की महान अभिव्यक्ति है तथा जो विशाल जगत के लिए महानतम एवं सबसे अधिक स्थायी महल की है।

"The Curriculum should be viewed as various forms of activity that are grand expressions of the human spirit and that are of the greatest and most permanent significance of the wide world." - **T.P.Nunn**

मुनरो के शब्दों में " पाठ्यक्रम उन समस्त अनुभवों का संकलन है जिनका प्रयोग विद्यालय द्वारा बालक को शिक्षा के उद्देश्य पहुंचाने में किया जाता है।"

("Curriculum embodies all the experience which are utilized by the school to attain the aim of education. "Munro)

क्रो एण्ड क्रो के अनुसार, " पाठ्यक्रम में बच्चे के वे सभी अनुभव सम्मिलित हैं जिन्हें वह स्कूल में या स्कूल के बाहर प्राप्त करता है। इन अनुभवों को एक कार्यक्रम में नियोजित किया जाता है जो बच्चे के मानसिक, शारीरिक, सामाजिक, भावात्मक आध्यात्मिक एवं नैतिक विकास के लिए बनाया जाता है।"

("Curriculum includes all the experience of learner , in or outside school, that are included in a programme which has been devised to help him develop mentally, physically, emotionally, socially, spiritually and morally- Crow and Crow).

आर0डी0 ओवन के शब्दों में, "नवीन पाठ्यक्रम परम्पराओं पर आधारित न होकर, विश्लेषण पर आधारित होगा।"

("The new curriculum will be based not on traditions, but on analysis." (R.D.Owen)

वर्तमान में पाठ्यक्रम का अर्थ बदल चुका है। अब यह मात्र दौड तक सीमित नहीं है। अब इसका अर्थ विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास से लिया जाता है। इस कथन की पुष्टि करते हुए

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने पाठ्यक्रम की परिभाषा देते हुए लिखा है, "यह स्पष्टरुप से समझ लिया जाना चाहिए। कि सर्वोतम शिक्षण विचारधारा के अनुसार पाठ्यक्रम से अभिप्राय रुढिवादी ढंग से स्कूलों में पढ़ाए जाने वाले बौद्धिक विषयों से नहीं वरन इसमें वे सभी अनुभव सम्मिलित है। जिन्हें विद्यार्थी उन क्रियाओं के माध्यम से प्राप्त करता है जिनमें वह स्कूल, कक्षा, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, खेल के मैदान तथा शिक्षक व शिक्षार्थी के बीच अनेक अनौपचारिक सम्पर्कों में होता है।"

इस विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पाठ्यक्रम की प्राचीन तथा नवीन अवधारणाओं में अत्यन्त महत्वपूर्ण बदलाव आ चुका है। प्राचीन विचारधारा के समर्थकों के अनुसार शिक्षा विशेषज्ञों के अनुसार ही विद्यार्थियों को देनी चाहिए, ऐसा करते हुए विद्यार्थियों की रुचि दृष्टिकोण या क्षमताओं को पूर्णरुप से अनदेखा कर दिया जाता था। उनके अनुसार विद्यार्थियों को भाग गणित, भाषा तथा इतिहास का ज्ञान करा देना ही सर्वस्व था। परन्तु समय के साथ-साथ पाठ्यक्रम की परिभाषा में भी बदलाव आया। वर्तमान में पाठ्यक्रम विद्यार्थी को केवल किताबी ज्ञान ही अर्जन नहीं करवाता अपितु उसके (विद्यार्थी) सर्वागीण विकास का भी पूर्णरुप से ध्यान रखा जाता था। अत: कहा जा सकता है कि वर्तमान में पाठ्यक्रम का उद्देश्य, विद्यार्थी के मानसिक, शारीरिक, धार्मिक, नैतिक, बौद्धिक, राष्ट्रीय तथा आध्यात्मिक विचारों का विकास करना है।

माध्यमिक शिक्षा ने इस कथन की पुष्टि करते हुए कहा है, 'विद्यालय का वह सर्च जीवन पाठ्यक्रम है जो छात्रों के सभी पक्षों को प्रभावित कर और उनके संतुलित व्यक्तित्व के विकास में सहायता दे सकता है।"

("The whole life of the school is the curriculum, which can be touch the life of the students at all points and help them in the evolution of balanced personality." - Secondary Education Commission.)

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. पाठ्यक्रम से आप क्या समझते हैं?
   What do you understand by curriculum questions?
2. पाठ्यक्रम का व्युत्पत्तिपरक अर्थ स्पष्ट कीजिए।
   Calirfy the derivative meaning of curriculum.
3. पाठ्यक्रम की प्राचीन व नवीन धारणाओं में अंतर बताओ।
   Differentiate between the old and new concept of curriculum.

10.2 पाठ्यक्रम-निर्माण
(Curriculum Construction)

पाठ्यक्रम तथा विद्यालय एक सिक्के के दो पहलू है। एक के बिना दूसरे के अस्तित्व के विषय में सोचना बेमानी है। ये दोनों सदा साथ-साथ रहते है। पाठ्यक्रम के अभाव में शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों ही मतिभ्रंमित होकर दिशाहीन हो जाते है। इसलिए यदि पाठ्यक्रम को शैक्षिक संगठन का केन्द्र मान लिया जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। सावधानीपूर्वक, सुंदर ढंग से विशेषज्ञों द्वारा यदि पाठ्यक्रम का नियोजन किया जाता है तो शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति लगभग निश्चित हो जाती है और यदि इसमें कुछ विसंगति या असावधानी रह जाती है तो 'सम्पूर्ण शैक्षिक क्रिया अर्थहीन तथा दिशाहीन हो जाती है। केवल विशिष्ट नियमों, सिद्धांतों अथवा मात्र विषयों की योजना व्यवस्था नहीं है, जिसके अनुसार शिक्षक शिक्षार्थी को एक निश्चित अवधि से निश्चित शिक्षा प्रदान करते है अपितु यह तो वह व्यवस्था है जिसके सहारे शिक्षक शिक्षार्थी का सर्वांगीण विकास करने में सफल होता है। ब्रिगस के शब्दों में, 'शिक्षा में मूल समस्या पाठ्यक्रम की है।'

पाठ्यक्रम निर्माण के उद्देश्य

(Aims of Curriculum)

एक अच्छा पाठ्यक्रम वह होता है जो भिन्न-भिन्न स्तरों पर भिन्न-भिन्न प्रकार का होता है। इसलिए इन विभिन्न स्तरों के लिए पृथक-पृथक पाठ्यक्रम विभिन्न उद्देश्यों को ध्यान में रखकर निर्धारित करना चाहिए। एक अच्छे पाठ्यक्रम के उद्देश्य निम्नलिखित हो सकते है:-

1. शिक्षार्थियों की रुचियों, क्षमताओं तथा योग्यताओं का विकास करना।
2. शिक्षार्थियों का सर्वांगीण विकास करना।
3. ऐसा शैक्षिक वातावरण तैयार करना जिसमें शिक्षार्थी अपनी जन्मजात शक्तियों का विकास कर सके।
4. विद्यालय में पढ़ाए जाने वाले विषयों तथा जीवन से संबन्धित क्रियाओं में सामंजस्य स्थापित करना।
5. ऐसे विद्यार्थी तैयार करना जो, शिक्षा अर्जन के बाद अपना जीवन मानवजाति के हित में समर्पित कर सके।
6. शिक्षार्थी अपनी विचार, तर्क, निरीक्षण तथा निर्णात्मक शक्तियों का विकास कर सके।
7. शिक्षार्थियों में लोकतांत्रिक मूल्यों को प्रतिपादित करना।
8. शिक्षार्थियों को सामाजिक तथा राष्ट्रीय मूल्यों का ज्ञान कराना।

पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त

(Principles of Curriculum)

पाठ्यक्रम क्या है? इस विषय पर विस्तार से विवेचन करने के पश्चात अब हम उन बुनियादी सिद्धातों पर प्रकाश डालेंगे जो पाठ्यक्रम रचना को एक सबल आधार प्रदान करेंगे।

जैसा कि कहा जा चुका है कि पाठ्यक्रम वह धुरी है जिसके चारों और उन शिक्षा प्रयासों का संगठन किया जाएगा जो शिक्षार्थी को सर्वांगीण विकास प्रदान करने में पूर्णरुप से सक्षम होंगे। इसके इस महल को समझते हुए यह कहना समीचिन होगा कि पाठ्यक्रम निर्माण सावधानी पूर्वक कुशल तथा अनुभवी शिक्षाविदों तथा विशेषज्ञों द्वारा ही होना चाहिए। इस संदर्भ में ब्रूबेकर का कहना है "शिक्षा प्रक्रिया के उद्देश्य अथवा लक्ष्य का निश्चित हो जाने पर अगला कदम स्पष्टरुप से साधनों तथा उपायो का है। उनमें से पाठ्यक्रम सबसे पहले ध्यान देने की मांग करता है।'

"With the aim of direction of the education of the educative process once determined , the next steps is obviously one of the ways and means among these, the curriculum demands first attention"- Brubacker.

एक प्रभावशाली पाठ्यक्रम रचना के लिए जिन सामान्य अनिवार्य सिद्धान्तों की सहायता ली जा सकती है वे अब निम्नलिखित है:-

1. **व्यावहारिक जीवन सम्बन्धी सिद्धान्त (Principle of Linking with Mundane life)-** पाठ्यक्रम संरचना के समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि इसमें उन्ही विषयों तथा क्रियाओं को महत्व दिया जाए जो एक शिक्षार्थी को केवल किताबी. ज्ञान तक ही सीमित न रखे अपितु उसे शिक्षा अर्जन के बाद समाज में अपने आपको सफलतापूर्वक स्थापित करने में सहायक हो।
2. **एकीकरण का सिद्धान्त (Principle of Integration)-** पाठ्यक्रम संरचना ऐसे की जानी चाहिए कि वह शिक्षार्थी को आंतरिक पूर्णता प्राप्त करवाने में सहायक हो और उसे (शिक्षार्थी) वातावरण के अनुसार ढ़ालने में भी सहायक हो। इसका अर्थ यह निकलता है कि पाठ्यक्रम शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर गठित करना चाहिए ताकि उसका समाज मे अनुकूलन स्थापित हो सके।
3. **समन्वय का सिद्धांत (Principle of Co-ordination)-** पाठ्यक्रम गठन करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इससे भिन्न-2 विषयों के ज्ञान में सामंजस्य स्थापित हो सके, क्योंकि ज्ञान एक सर्च इकाई है और इसे टुकडों-टुकडों में बांटने से उसका अर्थ अनर्थ में बदल जाता है। इसलिए अलग-अलग विषयों वाला अपूर्ण पाठ्यक्रम कभी भी गठित नहीं करना चाहिए।
4. **लचीलेपन का सिद्धांत (Principle of Flexibility)-** पाठ्यक्रम संरचना के समय, पाठ्यक्रम गठनकर्ताओं को कठोरता का नहीं वरन् लचीलेपन के सिद्धान्त पर काम करना चाहिए ताकि समय-समय पर विद्यार्थियों की बदलती हुई अवश्यकताओं के अनुरुप इसमें भी बदलाव संभव हो सके।
5. **रचनात्मक कार्य का सिद्धांत (Principle of Creative Activities)-** प्रकृति ने प्रत्येक प्राणी को कुछ विशेष उपहार दिए है। शिक्षार्थी उससे अछूता नहीं है। प्रत्येक शिक्षार्थी में रचना की एक शक्ति निहित होती है जिसे अध्यापक पाठ्यक्रम की सहायता से निखार सकता है। इसलिए पाठ्यक्रम की संरचना इस प्रकार से की

जानी चाहिए कि वह, शिक्षार्थियों की रचनात्मक शक्ति को अभिव्यक्त करने का मार्ग प्रशस्त कर सके।

6. **निरन्तरता का सिद्धान्त (Principle of Continuity)-** पाठ्यक्रम का गठन इस प्रकार से करना चाहिए कि शिक्षार्थी के ज्ञान अर्जन में निरन्तरता बनी रहे। उसमें स्थिरता न आए और ना ही उसमें शिथिलता पनपे।

7. **उपयोगिता का सिद्धांत (Principle of utility)-** उपयोगिता का सिद्धांत क्या है? इसका क्या महत्व है? इन सभी जिज्ञासाओं को शान्त करते हुए नन ने लिखा है 'साधारण मनुष्य सामान्यत: यह चाहते है कि उसके बच्चे केवल ज्ञान के प्रदर्शन के लिए कुछ व्यर्थ की बातें सीखें परन्तु समग्र रुप में बह यह चाहता है कि उन्हें वे ही बातें सिखाई जाए जो भावी जीवन में उनके लिए उपयोगी हो।"

   अत: पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जो शिक्षार्थियों को जीवनपयोगी शिक्षा प्रदान करने में सक्षम हो।

8. **अनुभवों की पूर्णता का सिद्धांत (Principle of totality of Experience)** वर्तमान मे शिक्षा मात्र कक्षा में होने वाली शिक्षक तथा शिक्षार्थियों की गतिविधियों तक ही सीमित नहीं है अपितु यह विद्यालय के अन्दर, खेल के मैदान तथा विद्यालय से बाहर की क्रियाओं का सम्मिलित स्वरुप है। अत: एक श्रेष्ठ पाठ्यक्रम वह है जो शिक्षार्थियों को उपयोगी क्रियाओं के माध्यम से बढ़िया तथा अच्छे अनुभव प्रदान करने में सक्षम हो।

9. **उच्च आदर्शो की प्राप्ति का सिद्धान्त (Principle of attaining High ideals)-** पाठ्यक्रम वह होना चाहिए जो शिक्षार्थियों को उन आदर्शो पर चलना सिखाए जो समाज देश तथा मानवजाति की उन्नति में सहायक हो।

10. **अवकाश के सद्दउपयोग का सिद्धान्त (Principle of utilization of leisure time)-** पाठ्यक्रम इस प्रकार से गठित करना चाहिए जो विद्यार्थियों को समय का पाबंन्ध बना सके तथा यह सिखा सके कि यदि विद्यालय समय में या उसके बाद अवकाश या खाली समय मिले तो उसका सद्दउपयोग कैसे करना है। कार्य तथा अवकाश दोनों के इस प्रशिक्षण से शिक्षार्थी अपने आप को आदर्श नागरिक के रुप में प्रस्तुत कर सकते है।

11. **क्रिया का सिद्धान्त (Principle of Activity)-** यह ब्रहमाण्ड क्रियाशील है। यहां प्रतिपल क्रिया होती रहती है। यहा तक कि निर्जीव वस्तुओं में भी उन पर भी या क्रियाएं होती रहती है। इसलिए यह अनिवार्य हो जाता है कि पाठ्यक्रम भी क्रिया प्रधान हो। करके कुछ सीखना सर्वश्रेष्ठ गति है। इसलिए पाठ्यक्रम में ऐसी क्रियाओं को सम्मिलित किया जाना चाहिए जो शिक्षार्थियों को हर पल सक्रिय रख सके। इस विषय में क्रो एण्ड क्रो का मन्तव्य है कि 'सीखने की प्रक्रिया का निर्देशन करने वाले लोगों का उद्देश्य यह होना चाहिए. कि वे ज्ञानात्मक क्रियाओं की ऐसी योजना बनाए जिसमें खेल के दृष्टिकोण को स्थान प्राप्त हो। '

12. **सामूहिक जीवन के साथ सशक्त तथा सुदृढ़ संबध (Vital and Strong relation with Community)-** पाठ्यक्रम का सामूहिक जीवन के साथ एक सशक्त तथा सुदृढ सम्बन्ध होना चाहिए। इसमें समाज से सम्बन्धित महत्वपूर्ण तत्वों की विस्तार से व्याख्या होनी चाहिए ताकि शिक्षार्थी अपने अध्ययनकाल के समय में ही यह सीख लें कि भविष्य में उन्हें समाज में संबंध कैसे स्थापित करना है।

13. **पाठ्यविषयों को पारस्परिक समय का सिद्धान्त (Principle of correlation of subjects)** पाठ्यविषयों के पारस्परिक संबध के विषय में आयोग का कहना है कि 'पाठ्यविषयों को एक दूसरे से संबंधित करके रखा जाए। उन्हें अलग-अलग पढ़ाना अमनोवैज्ञानिक होगा। ऐसा न हो कि इसके शैक्षिक मूल्य की प्राप्ति के लिए पाठ्य-विषयों को एक दूसरे से बिल्कुल अलग तथा असम्बन्धित कर दिया जाए। "
"It should not satisfy its educational values by being split up into a number of isolated uncoordinated water-tight subject.- S.E.C.

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. पाठ्यक्रम निर्माण के पांच उद्देश्य लिखिए।
   Write down any five aims of curriculum construction.
2. पाठ्यक्रम निर्माण के मुख्य सिद्धांतो के नाम बताइए।
   Name important principles of Curriculum Construction.
3. पाठ्यक्रम लचीला क्यों होना चाहिए?
   Why the curriculum should be flexible.

10.3 पाठ्यक्रम के प्रकार (Types of Curriculum)

पाठ्यक्रम के मुख्य पाँच प्रकार निम्नलिखित है:-

1. बाल केन्द्रित पाठ्यक्रम
2. विषय केन्द्रित पाठ्यक्रम
3. क्रिया केन्द्रित पाठ्यक्रम
4. कार्य केन्द्रित पाठ्यक्रम
5. कोर पाठ्यक्रम

बाल केन्द्रित पाठ्यक्रम

(Child Centred Curriculum)

आधुनिक शिक्षा प्रणाली में बालक को सम्पूर्ण शिक्षा का केन्द्र माना जाता है और उसकी क्षमताओं, अभिवृत्तियों, रुचियों तथा आवश्यकताओं के अनुरुप पाठ्यपुस्तक का नियोजन किया जाता है। बालक के विकास से सम्बन्धित क्रियाओं पर आधारित पाठ्यक्रम को बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रम कहा जाता है। इसमें बालक को मुख्य स्थान तथा अन्य आवश्यक शैक्षिक क्रियाओं को गौण स्थान दिया जाता है। यह पाठ्यक्रम इस विचारधारा पर आधारित है कि 'पाठ्यक्रम बालकों के लिए होता है न कि बालक पाठ्यक्रम के लिए।" डा0 सफाया के विचारानुसार, "बालकेन्द्रित पाठ्यक्रम भी जान प्रदान करता है किन्तु मात्र सैद्धान्तिक ज्ञान नहीं। यह ऐसे अवसर प्रदान करता है तथा ऐसी परिस्थितियों को उत्पन्न करता है जो बालक के संपूर्ण तथा स्वाभाविक विकास में योगदान दे।" इस प्रकार बाल केन्द्रित पाठ्यक्रम' वह पाठ्यक्रम है जिसमें अधिगम-सामग्री पाठ्यवस्तु क्रियाएं तथा अनुभव बालकों की रुचियों, प्रकृति और आवश्यकताओं के अनुरुप निर्धारित किए जाते हैं। इसमें बालक को शिक्षा का केन्द्र माना जाता है और उसकी क्षमता के अनुसार पाठ्यक्रम का विभाजन किया जाता है। बाल केन्द्रित पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार है:

1. यह पाठ्यक्रम बालकों की रुचियों, आवश्यकताओं, क्षमताओं और समस्याओं पर आधारित होने के कारण उन्हें सीखने के लिए प्रेरित करता है।
2. यह पाठ्यक्रम अधिगम क्रिया में समन्वय की सुविधा करता है। यह विद्यालय के बाहर तथा विद्यालय में दोनों प्रकार की क्रियाओं में समन्वय स्थापित करता है और बालक के मुख क्रियाएं प्रस्तुत करके अधिगम परिस्थितियों को बनाए रखता है।
3. यह पाठ्यक्रम पूरी तरह मनोवैज्ञानिक है। इसमें बालकों की क्रियाशील प्रकृति, रचनात्मक आदि को ध्यान में रखते हुए उन्हें विभिन्न क्रियाएं करने के अवसर प्रदान किए जाते है।
4. यह पाठ्यक्रम बालकों के व्यक्तित्व के सर्वागीण विकास में सहायक होता है। इससे बालक के व्यक्तिगत, सामाजिक, संवेगात्मक तथा सांस्कृतिक विकास में सहायता मिलती है।
5. इस पाठ्यक्रम द्वारा छात्रों का ज्ञान, सूझ-बूझ, मूल अभिरुचियों तथा कौशलों का विकास होता है जिससे वे समाज एवं राष्ट्र के विकास मे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हे।
6. यह पाठ्यक्रम पुस्तकीय एवं सैद्धान्तिक पक्ष की अपेक्षा व्यवहारिक पक्ष पर बल देता है।
7. इस पाठ्यक्रम की विशिष्टता इस सिद्धान्त से है कि " पाठ्यक्रम बालक के लिए होता है न कि बालक पाठ्यक्रम के लिए।"
8. यह पाठ्यक्रम बालकों को स्वयं करके सीखने और दिए गए उतरदायित्वों को पूरा करने योग्य बनाता है। जब बालक स्वयं करके सीखते है तो उनमें कार्य संबन्धित

कौशलों और स्वतन्त्र रुप से कार्य करने की क्षमता का विकास करता है। इस प्रकार यह बालकों को भावी जीवन जीने के लिए तैयार करता है।

' बलकेन्द्रित पाठ्यक्रम में निम्नलिखित सीमाएं होती है-

1. यह पाठ्यक्रम बालकों की प्रकृति, क्षमताओं आदि को मुख्य मानता है और अन्य सभी बिन्दुओं को इसमें गौण रुप में रखा जाता है। जिससे विद्यालय को समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी पूरी करने में कठिनाई- होती है।
2. यह पाठ्यक्रम ज्ञान के क्षेत्र, अनुसंधान विधियों तथा विषय वस्तु की गहनता को सीमित करता है।
3. इस पाठ्यक्रम का केन्द्र बिन्दु बालक की रुचियां, आवश्यकताएं तथा समस्याएं आदि का निर्धारण अत्यन्त कठिन है। मनुष्य का व्यवहार परिवर्तनशील है और बालकों में व्यक्तिगत विभिन्नतायें व विभिन्न आवश्यकताएं होती है जिन्हें ज्ञात करना अत्यन्त कठिन होता है।
4. यह पाठ्यक्रम विद्यालय में शिक्षा के कार्यक्रम में अव्यवस्था उत्पन्न करता है।
5. इस पाठ्यक्रम में क्रिया-आधारित विषय वस्तु को विशेष महत्व दिया जाता है जिससे अत्याधिक क्रियाशीलता जैसी परिस्थितियां उत्पन्न हो सकती है।

विषय-केन्द्रित पाठ्यक्रम

(Subject Centred Curriculum)

विषय-केन्द्रित पाठ्यक्रम पूर्णरुप से विषय-वस्तु पर आधारित होता है। इसमें बालक को महल न देकर विषयों को महत्व दिया जाता है चाहे वे बालक के लिए उपयोगी हो या अनुपयोगी। इस पाठ्यक्रम में बालकों की क्रियाओं को विषय केन्द्रित आधार पर निश्चित तथा संगठित किया जाता है। विषय से बाहर के अनुभवों को इसमें स्थान नहीं दिया जाता तथा बालक की रुचियों की अवहेलना की जाती है। इसमें बालकों को केवल ज्ञान प्रदान करने के लिए विषयों का अध्ययन कराया जाता है। डा0 सफाया ने विषय-केन्द्रित पाठ्यक्रम को परिभाषित करते हुए लिखा है, 'प्रत्येक विषय का अलग अस्तित्व, प्रकृति तथा क्षेत्र स्पष्ट रुप से निर्धारित होता है। समस्त बल व्यक्तिगत तथा सामाजिक विकास के लिए अध्ययन के मूल्यों की अपेक्षा बालक के बौद्धिक विकास पर ही दिया जाता है।" विषय केन्द्रित पाठ्यक्रम में यह पूर्व निर्धारित होता है कि बालक को क्या पढ़ाना है और अध्यापक को क्या पढ़ाना है? इसमें विषय के प्रत्येक प्रकरण की व्याख्या की जाती है। अध्यापक केवल उसी विषय तथा प्रकरण को पढ़ाता है जो पाठ्यक्रम में पूर्व निर्धारित हो। इसकी मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित है:-

1. यह पाठ्यक्रम बालकों के बौद्धिक विकास में अत्यधिक सहायक होता है। यह उन्हें ज्ञान के संगठन और विषय वस्तु के अध्ययन द्वारा जीवन परिस्थितियों में प्रभावपूर्ण ढंग में समायोजन करना सिखाता है।
2. इस पाठ्यक्रम में एक व्यवस्था होती है जिसके अनुसार बालक अनुभवों को सरलतापूर्वक ग्रहण करता है और उनका प्रयोग अपने भावी जीवन में करता है। वर्तमान अनुभव तब तक पूर्ण नहीं होते जब तक इन्हें भूतकाल के

3. अनुभवों से न जोडा जाए। विषय केन्द्रित पाठ्यक्रम बालक के पूर्व-अनुभवों पर वर्तमान अनुभवों का संगठन करता है और इस प्रकार समय एवं उर्जा के संरक्षण के साथ-साथ भावी अनुभवो को निर्देशित करता है।
4. यह पाठ्यक्रम विषयों का क्षेत्र निश्चित करने में सहायता करता है इसकी सहायता से अध्यापक यह निश्चित कर सकता है कि क्या पढ़ाया जाए और कितना पढ़ाया जाए।
5. यह पाठ्यक्रम विषयों के क्रमबद्ध अध्ययन पर आधारित है जिससे ज्ञानप्राप्ति तथा सूझबूझ में वृद्धि में सहायता मिलती है।
6. इस पाठ्यक्रम में विषय वस्तु के अधिकार पर विशेष बल दिया जाता है जिससे यह जानना सरल हो जाता है कि बालक ने विषय वस्तु में दक्षता प्राप्त कर ली है या नहीं। इस प्रकार यह पाठ्यक्रम मूल्यांकन में सहायता करता है।
7. इस पाठ्यक्रम में समयानुसार सरलता से परिवर्तन किए जा सकते हैं और नए विषय जोड़े जा सकते है।

इस पाठ्यक्रम में अनेक विशेषताओं के साथ-साथ निम्नलिखित सीमाएं भी होती है-

1. यह पाठ्यक्रम मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के विपरीत है। इसमें बालकों की रुचियों, क्षमताओं, आवश्यकताओं, व्यक्तिगत विभिन्नताओं आदि को ध्यान में रखने की अपेक्षा विषय- याद करने पर बल दिया जाता है चाहे वह अनेक लिए सार्थक हो या निरर्थक।
2. यह पाठ्यक्रम क्रियाशीलता की अपेक्षा तथ्यों पर आधारित होता है। इसमें पाठ्य-वस्तु को ही सर्वमान्य रुप दिया जाता है और ज्ञान के लिए ज्ञान दिया जाता है, जीवन के लिए नहीं।
3. इसमें प्रत्यक्ष अनुभवों की अपेक्षा अप्रत्यक्ष अनुभवों को महत्व दिया जाता है। अप्रत्यक्ष अनुभवों द्वारा बालक में सामाजिक भावना, निर्णय क्षमता, तर्क शक्ति आदि प्रजातान्त्रिक गुणों का विकास नहीं होता।
4. यह पाठ्यक्रम पूर्ण रुप से पुस्तकीय तथा सैद्धान्तिक होता है और इसमें व्यावहारिक पक्ष की अवहेलना की जाती है। बालक सक्रिय रुप से शिक्षण कार्य में भाग नहीं ले सकता और अधिगम प्रक्रिया सीमित हो जाती है।
5. इस पाठ्यक्रम में बालक पर परीक्षाओं का अत्यधिक दबाव रहता है। बालक विषय वस्तु को रटकर उतर पुस्तिका में लिखने के लिए बाध्य रहता है जिससे उसका विकास प्रभावित रहता है।
6. यह पाठ्यक्रम अनौपचारिक शिक्षा साधनों और उनसे प्राप्त अनुभवों / ज्ञान को महत्व नहीं देता।
7. इस पाठ्यक्रम का निर्माण प्राय: उन लोगों द्वारा किया जाता है जिन्होंने उस कक्षा को कभी नहीं पढ़ाया। केवल विषय-विशेषज्ञ होने के नाते पर बनाया गया पाठ्यक्रम बालकों की आवश्यकताओं के अनुकूल नहीं होता।

विषय केन्द्रित पाठ्यक्रम की सीमाओं के विषय में माध्यमिक शिक्षा आयोग ने लिखा है, "इसकी जीवन के साथ संगति नहीं और बालको को जीवन के लिए तैयार करने में असफल है। '

क्रिया-केन्द्रित पाठ्यक्रम

(Activity Centred Curriculum)

क्रिया-केन्द्रित पाठ्यक्रम करके सीखने के सिद्धांत पर आधारित है। क्रियाशीलता बालक की प्रकृति का भाग है। क्रियाओं के माध्यम से केन्द्रित पाठ्यक्रम में विषय-वस्तु को क्रियाओं के रुप में बदल दिया जाता है और उन क्रियाओं के उत्पाद के रुप में ज्ञान की प्राप्ति होती है। यह बालकों की ऐसी क्रियाओं का आयोजन है जो उनकी रुचियों के अनुकूल हो और उन्हें निरन्तर करवा कर उनके माध्यम से ज्ञान प्रदान किया जा सके। क्रिया प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान करती है जो वास्तविक अधिगम के लिए अत्यावश्यक है। इस प्रकार यह पाठ्यक्रम बालकों को प्रत्यक्ष अनुभवों द्वारा सीखने के लिए प्रेरित करता है। बालक स्वयं अधिगम करता है जिससे उसमें आत्मविश्वास विकसित होता है।

क्रिया-केन्द्रित पाठ्यक्रम में उन सभी क्रियाओं का समावेश किया जाता है जो बालक के सर्वागीण विकास में सहायक होती है। ये क्रियाएं शैक्षिक, मनोरंजक, ज्ञान-वर्धक उत्पादक, संगठनात्मक, सामाजिक तथा प्रयोगात्मक होती है। बाबिट ने मुख्य क्रियाओं का वर्गीकरण इस प्रकार किया है

1.	भाषा क्रियाएं	6.	मनोरंजक क्रियाएं
2.	स्वास्थ्य क्रियाएं	7.	मानसिक क्रियाएं
3.	नागरिक क्रियाएं	8.	धार्मिक क्रियाएं
4.	सामाजिक क्रियाएं	9.	पारिवारिक क्रियाएं
5.	अव्यवसायिक प्रयोगात्मक क्रियाएं	10.	श्रम सम्बन्धी क्रियाएं

बालक इन क्रियाओं के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करते हैं तथा इस ज्ञान का उपयोग जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में करते हैं। क्रिया केन्द्रित पाठ्यक्रम बालकों की रुचियों के अनुरुप तथा पूर्ण रुप से मनोवैज्ञानिक होने के कारण अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसकी मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित है-

1. यह पाठ्यक्रम बालकों की मनोवैज्ञानिक प्रकृति के अनुकूल होता है।
2. यह पूर्णत: मनोवैज्ञानिक है। इसमें नीरस, अनुपयोगी तथ्यों की अपेक्षा क्रियाओं से प्राप्त अनुभवों पर बल दिया जाता है।
3. यह पाठ्यक्रम बालकों को क्रियाएं करके सीखने, खोज व शोध करने के लिए प्रेरित करता है।
4. यह पाठ्यक्रम जीवन से संबन्धित है। यह छात्रों को करके सीखने और भविष्य की चुनौतियों के लिए तैयार करता है।
5. इसके द्वारा बालकों का सामाजिक विकास होता है।

क्रिया-केन्द्रित पाठ्यक्रम में अनेक गुणों के साथ कुछ सीमाएं भी है-

1. इस पाठ्यक्रम में प्रत्यक्ष अनुभवों को आवश्यकता से अधिक महत्व दिया जाता है और पूर्व अनुभवों को कोई स्थान नहीं दिया जाता जिससे इसका स्वरुप संकुचित हो जाता है क्योंकि हम सब कुछ खुद करके नहीं सीख सकते।
2. इस पाठ्यक्रम में ज्ञान के प्रत्येक अंग को जानने के लिए क्रियाओं पर निर्भर रहना पड़ता है। बालकों को सब कुछ क्रियाओं द्वारा कराया जाता है जिससे अतिक्रियाशीलता का भय उत्पन्न हो जाता है।
3. इसमें सीखने की सभी स्थितियों का अभाव है जिससे बालकों का सर्वांगीण विकास नहीं होता।
4. यह अमूर्त प्रत्ययों को सीखने के लिए अनुपयुक्त है।

यह पाठ्यक्रम करके सीखने और क्रियाओं द्वारा सीखने जैसे- मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है। कुछ सीमाएं भी है किन्तु यदि क्रियाओं का चयन सावधानीपूर्वक किया जाए तो यह एक आदर्श पाठ्यक्रम सिद्ध हो सकता है।

कार्य-केन्द्रित पाठ्यक्रम

(Work Centred Curriculum)

वह पाठ्यक्रम जिसमे शिक्षा के कार्यो पर आधारित करके कार्य तथा विषयों की शिक्षा साथ-साथ दी जाती है कार्य केन्द्रित पाठ्यक्रम कहलाता है। इसमें सैद्धान्तिकता की अपेक्षा प्रयोग और क्रियाशीलता पर बल दिया जाता है तथा किसी एक कार्य में निपुणता के माध्यम से बालक सामाजिक तथा व्यवहारिक पक्ष का विकास. किया जाता है। कार्य केन्द्रित पाठ्यक्रम में बालक कार्य करते हुए सीखते हैं। कार्यो के माध्यम से उन्हें विषय विशेष का व्यावहारिक ज्ञान प्रदान किया जाता है। विज्ञान व तकनीकी का छात्र किसी उद्योग, फैक्टरी में तथा कृषि का छात्र कृषि फार्म में कार्य करके अपने पढ़े हुए ज्ञान का प्रयोग करता है। इससे एक तो वह अपने विषय में पारंगत होता है और दूसरा भावी जीवन के लिए व्यवसाय का चयन करता है। कार्य पर आधारित पाठ्यक्रम एवं क्रिया-केन्द्रित पाठ्यक्रम में विषय-वस्तु को क्रियाओं के रुप में सिखाया जाता है जबकि कार्य-केन्द्रित पाठ्यक्रम में उन्हें उनकी रुचि के कार्य पर लगाया जाता है और सैद्धान्तिक ज्ञान के प्रयोग में लाने का अवसर दिया जाता है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की बुनियादी शिक्षा तथा डा0 कोठारी द्वारा प्रस्तावित कार्य-अनुभव इसी पाठ्यक्रम के रुप है। कार्य केन्द्रित पाठ्यक्रम की निम्नलिखित विशेषताओं के कारण इसे आजकल महत्व दिया जा रहा है-

1. यह पूर्णत: मनोवैज्ञानिक है क्योंकि यह छात्रों को उनकी रुचियों के अनुसार कार्य करने के लिए प्रेरित करता है।
2. इसमें सैद्धान्तिकता की अपेक्षा प्रयोग को महत्व दिया जाता है।
3. यह छात्रों में आत्मनिर्भरता तथा व्यावसायिक गुणों का विकास करके सफल नागरिकों का निर्माण करता है।
4. इस पाठ्यक्रम द्वारा छात्रों में अनेक सामाजिक गुणों जैसे - सहयोग, सहिष्णुता, नेतृत्व, सहानुभूति आदि का विकास होता है।
5. यह छात्रों को परीक्षण और अनुसंधान के लिए प्रोत्साहन प्रदान करता है।

6. इसमें प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों अनुभवों को महत्व दिया जाता है।

सीमाएं:-

1. इसमें अतिक्रियाशीलता का भय रहता है।
2. यह छोटे बालकों के लिए तर्कसंगत नहीं है।
3. इसके लिए आवश्यक साधनों-व्यावसायिक संस्थानों का अभाव है।
4. इसमें आर्थिक पक्ष पर अधिक बल दिया जाता है।

कोर पाठ्यक्रम

(Core Curriculum)

यह पाठ्यक्रम इसी विचारधारा पर आधारित है कि माध्यमिक स्तर पर सभी छात्र अपनी व्यक्तिगत रुचियों, क्षमताओं, योग्यताओं तथा आवश्यकताओं में एक दूसरे से अलग होते है। अत: उनके लिए एक ही प्रकार का पाठ्यक्रम निर्धारित करना उचित नहीं होता। कोर को उस सम्पूर्ण पाठ्यक्रम का अंग माना जा सकता है जो सभी छात्रों के लिए बुनियादी है तथा जिसमें अधिगम की उन क्रियाओं को सम्मिलित किया जाए जो परम्परागत विषयों से स्वतन्त्र रख कर संगठित की जा सके। कोर पाठ्यक्रम को परिभाषित करते हुए डा0 एस0एस0 माथुर ने लिखा है- "ऐसा पाठ्यक्रम जिसमें कुछ विषय अनिवार्य हों और कुछ विषय ऐसे हों जिनमें से कुछ को छात्र अपनी रुचियों के अनुसार चुन सकें।"

कोर पाठ्यक्रम के विषय जो प्रत्येक बालक के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं सब बालकों को अनिवार्य रुप से पढ़ाए जाते है और साथ ही उन्हें कुछ अन्य ऐसे विषय पढने की सुविधाएं प्रदान की जाती है जो उनकी रुचि तथा योग्यता के अनुरुप हो।

कोर पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित है-

1. यह बालक को स्वतन्त्रता प्रदान करता है।
2. यह बाल-केन्द्रित है।
3. इसके द्वारा अनेक विषयों में समन्वय स्थापित किया जाता है।
4. यह क्रिया केन्द्रित है।
5. यह छात्रों का व्यक्तिगत, सामाजिक तथा व्यावसायिक विकास करके उन्हें योग्य नागरिक बनाने में सहायक है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. पाठ्यक्रम के विभिन्न प्रकारों के नाम बताइए।
   Name different types of curriculum.
2. बाल केन्द्रित एवं विषय पाठ्यक्रम में अंतर स्पष्ट कीजिए।
   Clarify the difference between child centred and subject curriculum.
3. कोर पाठ्यक्रम क्या है? इसके गुणों एवं सीमाओं की विवेचना कीजिए।

What is core curriculum? Describe its merits and limitations.

4. क्रिया केन्द्रित पाठ्यक्रम पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
Write a short note on activity centrede curriculum?

10.4 भारत मे माध्यमिक पाठ्यक्रम का विकास (Development of Secondary Education Curriculum in India)

पाठ्यक्रम गतिशील समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। स्वतन्त्र भारत में माध्यमिक शिक्षा स्तर पाठ्यक्रम को सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरुप बनाने के लिए माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) का गठन किया गया। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने भाषाएं, सामाजिक शिक्षा, साधारण विज्ञान, गणित, शारीरिक शिक्षा एवं हस्तशिल्प को पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने पर बल दिया। भारतीय शिक्षा आयोग (1964-66) ने पाठ्यक्रम संगठन एवं सुधार के लिए निम्न सुझाव दिए:-

1. माध्यमिक स्तर पर तीन भाषाओं का शिक्षण अनिवार्य हो (मातृभाषा, अंग्रेजी तथा एक अन्य भारतीय भाषा)
2. विज्ञान, गणित तथा सामाजिक अध्ययन अनिवार्य विषय हों।
3. विद्यालयों को पाठ्यक्रम के निर्माण तथा प्रयोग की स्वतन्त्रता दी जाए।
4. शिक्षा संस्थाओं, विद्यालय शिक्षा बोर्डो, प्रशिक्षण महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों के शिक्षा विभाग द्वारा पाठ्यक्रम सम्बन्धी अनुसंधान कार्य किया जाना चाहिए।
5. इस अनुसन्धान से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर पाठ्यक्रम में परिवर्तन तथा पाठ्यपुस्तकों का निर्माण किया जाए।
6. अध्यापकों को नवीन पाठ्यक्रम सम्बन्धी प्रशिक्षण दिया जाए।
7. कार्य अनुभव तथा शारीरिक शिक्षा को भी पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाए।

शिक्षा की राष्ट्रीय नीति (1986) में अनुशंसा की गई कि पूरे देश के विद्यालय पाठ्यक्रम के मूल एक सर्वमान्य (कॉमन कोर) तत्व हो। इस नीति ने राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद को राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की समय-समय पर समीक्षा करने का उतरदायित्व सौंपा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति की अनुशंसा के अनुरुप पूरे देश में गुणवत्ता के स्तर पर विद्यालयी शिक्षा को लगभग एक समान बनाने के लिए 1988 में राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा तैयार की गई।

इन सुझावों की अनुपालना के लिए क्रमश: 1968 तथा 1979 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति का निर्माण किया गया किन्तु इन दोनों नीतियों के अपूर्ण तथा अनियमित पालन और बदलती सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) का विकास किया गया।

इस राष्ट्रीय पाठ्यक्रम के अंतर्गत कोर पाठ्यक्रम में भारतीय स्वतन्त्रता आंदोलन का इतिहास, संवैधानिक जिम्मेदारियां, राष्ट्रीय अस्मिता तथा सांस्कृतिक विरासत आदि तब सम्मिलित किए गए तथा अन्य तत्वों में लचीलापन रखा गया जिससे छात्र अपनी रुचियों, क्षमताओं और आवश्यकताओं के अनुरूप विषयों का चयन कर सकें। तकनीकी तथा प्रबन्धकीय शिक्षा के पुननिर्माण के लिए कम्पयूटर साक्षरता सम्बन्धी कार्यक्रमों की व्यवस्था, नवीन शिक्षण सामग्री का विकास, मूल्यांकन व परीक्षा सुधार तथा शिक्षा के प्रबन्ध आदि पर बल दिया गया। सेवारत शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों की व्यवस्था के लिए जिला एवं राज्य स्तरीय प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना की गई।

बीसवी शताब्दी के अंत में हुई वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिक प्रगति के फलस्वरुप सूचना एवं ज्ञान के क्षेत्र में विस्फोट हुआ। इसी के अनुरुप एन.सी.ई.आर.टी. ने राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा (2000) प्रस्तुत की जिसमें संशोधन के पश्चात् राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा (2005) का विकास किया गया है। इस पाठ्यक्रम रुपरेखा के पात्र निर्देशक सिद्धांत निम्नलिखित है:-

1. ज्ञान को विद्यालय के बाहरी जीवन से जोड़ना
2. पढ़ाई 7 शिक्षा रटन्त प्रणाली से मुक्त हो यह सुनिश्चित करना
3. शिक्षार्थी के सर्वागीण विकास के अवसर उपलब्ध करवाने के लिए पाठ्यक्रम का संवर्धन,
4. परीक्षा को अपेक्षाकृत अधिक लचीला बनाना और कक्षा गतिविधियों से जोड़ना, और
5. एक ऐसी अधिभावी पहचान का विकास जिसमें प्रजातांत्रिक राज्य-व्यवस्था के अंतर्गत राष्ट्रीय चिंताए समाहित हो।

राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा (2005) में पाठ्यक्रम के क्षेत्रों की पुन: संकल्पना, विद्यार्थी व्यवस्था में व्यापक व्यवस्थागत सुधारों और विद्यालय लोकाचार की गुणवत्ता सुधारने पर बल दिया गया है। इसके कुछ मुख्य सुझाव निम्नलिखित है:-

- शिक्षा को आज की और भविष्य की जरुरतों के लिए ज्यादा प्रासंगिक बनाया जाए।
- समकालित शिक्षा का प्रसार किया जाए।
- पाठ्यपुस्तक और अन्य सामग्री की बहुलता सुनिश्चित की जाए।

10.5 पाठ्यक्रम नवीकरण एवं अध्यापक-शिक्षा (Curriculum Renewal and Teacher Education)

औपचारिक अध्यापक शिक्षा की आवश्यकता को विभिन्न आयोगों ने समझा है और इस बात पर बल दिया है कि अध्यापकों की शिक्षा को शैक्षणिक जीवन की मुख्यधारा से संबद्ध किया जाए किंतु अभी तक अध्यापक शिक्षा संस्थाएं संकीर्णता से बाहर नहीं निकल पाई हैं। वर्तमान अध्यापक-प्रशिक्षण कार्यक्रम अध्यापकों को शिक्षा का अभिप्राय केवल सूचनाओं का प्रसार समझा जाता है। इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों में न तो नए विचारों को संदर्भ में लिया जाता है न ही विद्यालय और समाज से जुडे मुद्दो की इसमें चर्चा हो पाती है। इसमें नए प्रकार के शैक्षणिक अनुभवों के लिए कोई जगह नहीं होती। अध्यापक प्रशिक्षण के अनुभवों से यह स्पष्ट होता है

कि उसमें ज्ञान को प्रदत की तरह पाठ्यक्रम में बांध दिया जाता है। पाठ्यक्रम, अध्ययन क्रम और पाठ्य पुस्तकों का न तो छात्र-अध्यापकों द्वारा परीक्षण किया जाता है न ही अध्यापकों द्वारा। इसके अतिरिक्त छात्र-अध्यापकों को अपने अनुभवों की अभिव्यक्ति के अवसर नहीं दिए जाते और न ही अध्यापकों को पाठ्यक्रम निर्माण में सक्रिय सहभागिता के अवसर प्रदान किए जाते है।

अध्यापक शिक्षा को विद्यालयी व्यवस्था की उभरती मांगों के प्रति अधिक संवेदनशील होना चाहिए। उसे अध्यापकों को तैयार करना चाहिए। उसे अध्यापकों को तैयार करना चाहिए कि वे निम्नलिखित रुप में अपनी भूमिका निभाएं:-

1. अध्यापकों की ऐसी तैयारी आवश्यक है कि वे बालकों की रुचि, क्षमताओं आदि का ख्याल कर सकें और उनके साथ रहना पसंद करें।
2. वे सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक संदर्भो में बालकों को समझ सकें।
3. अध्यापक ग्रहणशील और निरंतर सीखने के लिए उत्सुक हों।
4. वे शिक्षा को अपने व्यक्तिगत अनुभवों की सार्थकता की खोज के रुप में देखें तथा ज्ञान निर्माण को मननशील अधिगम की उभरती प्रक्रिया के रुप में स्वीकार करें।
5. वे ज्ञान को पाठ्यपुस्तकों के बाह्य ज्ञान के रुप में न देखकर सांझा संदर्भों में उसके निर्माण को देखें और बालकों के घर व सामुदायिक परिवेश से जीवंत संबंध बनाने वाले परिवेश को विद्यालय में सुनिश्चित किया जा सके।

पाठ्यक्रम नवीकरण के लिए सुझाव

(Suggestions for curriculum Renewal)

- त्रिभाषा फार्मूले को पुन: लाग किया जाए। शिक्षा का माध्यम आदिवासी भाषाओं सहित बालकों की मातृभाषा को बनाया जाए।
- गणित की शिक्षा बालकों को चिंतन और तर्क में, अमूर्त प्रत्ययों की संकल्पना करने, समस्याओं को सूत्रबद्ध करने और सुलझाने योग्य बनाए।
- प्रत्येक विद्यालय को कम्पयूटर हार्डवेयर, सॉफ्टवेयर और कनैक्टिविटी उप करवायी जाए।
- विज्ञान शिक्षण परियोजना आधारित हो और साथ ही बालकों? को अपने परिवेश को समझने और सुधारने में सक्षम बनाए।
- सामाजिक विज्ञान के सभी पक्षों में लिंग समानता व न्याय, अनूसुचित जाति व जनजाति संबंधी जागरुकता तथा अल्पसंख्यक संवेदनशीलता के प्रति सजगता हो।
- कला को शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर विषय के रुप में स्थान दिया जाए।
- मध्याह्न भोजन कार्यक्रम को सुदृढ़ बनाया जाए जिससे बालकों को उचित पोषण मिल सके।
- शांति के लिए शिक्षा' को प्रत्येक स्तर पर और अध्यापक शिक्षा में स्थान दिया जाना चाहिए।

शैक्षिक कार्यों में नवीनीकरण

(Renewal in Educational functions)

- विद्यालय शिक्षा की गुणवत्ता बढाने के लिए उचित परिवेश, लचीले विद्यालय कैलेण्डर और समय सारणी, भ्रमण आदि गतिविधियों, स्थानीय भाषाओं में पुस्तकें तथा संदर्भ सामग्रियों की उपलब्धता सुनिश्चित की जाए।
- स्थानीय स्तर पर पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबन्ध के लिए स्कूल-आधारित परियोजनाएं अपनायी जाएं।
- सेवापूर्व अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम अधिक लंबी अवधि तथा अधिक समग्रता लिए हो जिससे शिक्षार्थियों का ध्यानपूर्वक अवलोकन करने के पर्याप्त अवसर मिलें। विद्यालयों में इंटर्नशिप द्वारा शिक्षाशास्त्री सिद्धातों को व्यवहार से जोड़ने के पूरे अवसर उपलब्ध हों।
- मूल्यांकन और परीक्षा-व्यवस्थाओ में सुधार की नई रणनीतियां अपनायी जाएं। प्रश्न पत्रों में तर्कशक्ति तथा रचनात्मक शक्ति आधारित प्रश्नों का समावेश हो तथा आंतरिक आकलन को बढ़ावा दिया जाए।
- अध्यापक समाज के प्रति अपने दायित्व समझें और बेहतर विश्व के लिए कार्य करें।
- अध्यापक उत्पादक कार्य के महत्व को समझें तथा कक्षा कार्य को शिक्षण का माध्यम बनाएं।
- पाठ्यक्रम की रुपरेखा, उसके नीतिगत-निहितार्थ एवं पाठों का विश्लेषण करें।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रूपरेखा 2005 के निर्देशक सिद्धांतों को सूचीबद्ध कीजिये।
   Enlist the guiding principles of National Curriculum Frame Work, 2005.
2. अध्यापक शिक्षा की पाठ्यक्रम नवीकरण की भूमिका का वर्णन 200 शब्दों में कीजिए?
   Describe the role of teacher education in Curriculum renewal in 200 words.
3. भारतीय शिक्षा आयोग के द्वारा पाठ्यक्रम संगठन के लिए सुझाव दिए गए।
   What are the suggestions given by Kothari Commission for Curriculum organization?

10.7 सारांश

(Summary)

पाठ्यक्रम शिक्षा के क्षेत्र में उतना ही महत्वपूर्ण तथा अनिवार्य है जितना की एक कार में स्टियरिंग। जैसे बिना स्टियरिंग के कार गन्तव्य तक नहीं पहुंच सकती है ठीक उसी प्रकार पाठ्यक्रम के अभाव में शिक्षा भी दिशाहीन तथा निरर्थक हो जाती है। जो न तो अध्यापकों का ही पथ-प्रदर्शन कर सकती है और ना ही शिक्षार्थियों को अपना लक्ष्य प्राप्त करने में सहायक।

पाठ्यक्रम में, जैसा उपर भी विस्तार से व्यासत्यापित किया जा चुका है, समय-समय पर बदलाव आते रहे है और इन बदलावों के कारण ही पाठ्यक्रम को वर्तमान स्वरुप प्राप्त हुआ है। भूतकाल में जहां पाठ्यक्रम केवल अध्यापक तथा उसके ज्ञान तक केन्द्रित था: और जहां केवल शिक्षार्थी को अपना ज्ञान अर्जन करना होता था ऐसे में शिक्षा तथा उसका स्वरुप एक तरफा हो कर रह गया था। शिक्षार्थी मात्र किताबी ज्ञान तक संकुचित हो कर रह गया था। उसकी स्वतन्त्रता तथा सर्वांगीण विकास पर हर पल एक प्रश्न चिन्ह रहता था। वहीं पाठ्यक्रम का वर्तमान स्वरुप शिक्षार्थी को सर्वांगीण विकास करने में सक्षम है तथा उन नागरिकों को तैयार करने में समर्थ है जो केवल अपना ही विकास नहीं करते वरन् समाज तथा देश के उत्थान में महत्वपूर्ण व विवेकशील योगदान भी प्रदान करते हैं।

वर्तमान में पाठ्यक्रम के मुख्यत: पांच प्रकार है जो शिक्षार्थी, शिक्षक तथा पठन-पाठन क्रिया को दुरुस्त व सम्पूर्णता प्रदान करते है। ये है- बालकेन्द्रित, विषय केन्द्रित, क्रिया केन्द्रित, कार्य केन्द्रित एवं कोर पाठ्यक्रम। जैसे सामाजिक आवश्यकताएँ तथा स्वरुप बदलता रहता है, उन आवश्यकताओ की पूर्ति समय-समय पर पाठ्यक्रम को समकालीन स्वरुप देने का प्रयास किया। इस संदर्भ में 1947 में आजादी प्राप्ति के बाद जितने भी आयोग या कमेटियों का राष्ट्रीय स्तर पर गठन हुआ है उन्होंने उस समय की आवश्यकताओं के अनुरुप ही पाठ्यक्रम में बदलाव करने के सुझाव पारित किए है।

बीसीवी शताब्दी के अन्त में जिस प्रकार विज्ञान के क्षेत्र में व्यापक संशोधन तथा उन्नति हुई उसके परिणाम स्वरुप सूचना एवं ज्ञान के क्षेत्र में भी एक विस्फोट हुआ। जिसके परिणाम स्वरुप एन0सी0ई0आर0टी ने राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा प्रस्तुत की। जिसका संशोधित स्वरुप राष्ट्रीय- पाठ्यक्रम रुपरेखा के रुप में विकसित हुआ। उस पाठ्यक्रम रेखा के पांच निर्देशन सिद्धान्त है तथा जो अध्यापक शिक्षा पर पूर्ण रुप से बल देता है।

10.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Reference List)

1. Bhatt, B.D. and Sharma, S.R. : Principle of curriculum Construction Kanishka Publishing House, New Delhi, 1992
2. Bloom, B.S. : Try out of Revision of Educational Materials and Methods, in Lewy,A.(ed). Handbook of Curriculum Evaluation, UNESCO, Paris
3. Doll, R.C : Curriculum Improvement, Allyn and Bacon, Boston, 1986.
4. Malhora, M.M : Curriculum Evaluation and Renewal , CPSC Publication, Manila, 1985

5. Stephen, W. and Dougals,P. : Curriculum Evaluation, NFER Publishing Co. Ltd. Bristol, 1972
6. एन.सी.ई.आर.टी, : राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रूपरेखा, एन.सी.ई.आर.टी, नई दिल्ली, (2005)
7. चौबे, एस0पी0 : शिक्षा के दार्शनिक, एतिहासिक और समाजशास्त्रीय आधार, लायक बुक डिपो, मेरठ, (1993)

इकाई-11

माध्यमिक स्तर पर मूल्यांकन
(Evaluation at Secondary Level)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

11.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

11.1 मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Evaluation)

11.2 मूल्यांकन के उद्देश्य (Purpose of Evaluation)

11.3 मूल्यांकन की आवश्यकता और महत्व (Need & Importance of Evaluation)

11.4 मूल्यांकन के प्रकार (Need & Importance of Evaluation)

11.5 माध्यमिक स्तर पर वर्तमान परीक्षा प्रणाली (Present Examination System at Secondary Level)

11.6 माध्यमिक स्तर पर ग्रेडित प्रणाली (Grading System at Secondary Level)

11.7 माध्यमिक स्तर पर प्रश्नपत्र का प्रारुप (Design of the Question paper at secondary level)

11.8 संचयी आलेख पत्र (Cumulative Record Card)

11.9 सारांश (Summary)

11.10 सन्दर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

11.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप:

1. मूल्यांकन के अर्थ को समझ सकेंगे।
2. माध्यमिक स्तर पर मूल्यांकन के विभिन्न उद्देश्यों को जान सकेंगे।
3. माध्यमिक स्तर पर मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्व को बता सकेंगे।
4. मूल्यांकन के विभिन्न प्रकारों में भेद करने योग्य हो जाएंगे।
5. माध्यमिक स्तर पर वर्तमान परीक्षा प्रणाली में व्याप्त विभिन्न दोषों से अवगत हो सकेंगे।
6. माध्यमिक स्तर पर आयोगों द्वारा दिए गए परीक्षा प्रणाली में सुधार के सुझावों को समझ कर, परीक्षा प्रणाली में सुधार के लिए अपने सुझाव देने योग्य हो जाएंगे।
7. विभिन्न राज्यों में माध्यमिक स्तर पर शुरु की गई ग्रेडिंग प्रणाली का विश्लेषण कर सकेंगे।
8. प्रश्नपत्र के प्रारुप को तैयार कर सकेंगे।

9. संचयी-आलेख पत्र के अर्थ, उद्देश्य एवं प्रकार की व्याख्या करने योग्य हो जाएंगे।
10. संचयी आलेख-पत्र की विषय वस्तु को समझकर विद्यार्थियों का संचयी आलेख पत्र तैयार कर सकेंगे।

मूल्यांकन एक निरन्तर चलने वाल प्रक्रिया है। शिक्षा एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा विद्यार्थी में परिवर्तन लाए जाते हैं, मूल्यांकन तकनीकों के उपयुक्त प्रयोग के द्वारा अध्यापक यह निश्चित कर सकता है कि विद्यार्थियों में कितनी सूचनाएँ प्राप्त की है? उनकी अभिवृति में कितना परिवर्तन आया है? उनकी कार्यप्रणाली में कितना सुधार आया है? एक नई इकाई कितनी महत्वपूर्ण सिद्ध होगी और नवीन शिक्षण विधि कितनी प्रभावी थी।

11.1 मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Evaluation)

शिक्षा का सम्बन्ध बालक के सर्वांगीण विकास से है। शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करके बालक का सर्वांगीण विकास भलीभांति किया जा सकता है। इस प्रकार मूल्यांकन शैक्षिक उद्देश्यों पर आधारित रहता है। मापन द्वारा विभिन्न योग्यताओं, गुणों अथवा विशेषताओं के परिणाम के बारे में जानकारी प्राप्त होती है कि अमुक छात्र या छात्रा ने 50 में से 36 या 40 अंक प्राप्त किए, परन्तु 50 में से 36 या 40 अंक प्राप्त करना ही पर्याप्त नहीं होता है। अध्यापक को यह भी जानना होता है कि छात्र के प्राप्त अंक कितने अच्छे है? अत: मूल्यांकन के अन्तर्गत किसी गुण, योग्यता अथवा विशेषता का मूल्य निर्धारित किया जाता है अर्थात् मूल्यांकन द्वारा परिमाणात्मक अथवा गुणात्मक दोनों ही प्रकार की सूचनाएँ प्राप्त होती है जिनके आधार पर बालक की योग्यता एवं उपलब्धियों का आंकलन किया जाता है। मूल्यांकन के शाब्दिक अर्थ को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण संस्थान दिल्ली की पुस्तक 'Concept of Evaluation' के अनुसार मूल्यांकन प्रक्रिया में मुख्यत: तीन बातों के सम्बन्ध में निर्णय किया जाता है।

1. शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हुई?
2. उद्देश्य प्राप्त करने की विधि/ प्रविधि कितनी प्रभावी रही?
3. अधिगम अनुभव कितने प्रभावी उत्पादक रहे?

उपरोक्त तीनों बिन्दु मिलकर मूल्यांकन प्रक्रिया को पूरा करते है। इन तीनों के सम्बन्ध को त्रिभुजाकार आकृति से निम्न प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है।

मूल्यांकन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा अधिगम परिस्थितियों तथा सीखने के अनुभवों के लिए प्रयुक्त की जाने वाली सभी विधियों एवं प्रविधियों की उपादेयता की जांच की जाती है।

मूल्यांकन की परिभाषाएँ (Definition of Evaluation)

क्विलेन एवं हन्ना (Quillen and Hanna) के अनुसार

"विद्यालय द्वारा विद्यार्थियों के व्यवहार में लाए गए परिवर्तन के सम्बन्ध में सूचनाओं का संकलन तथा उनकी व्याख्या करने की प्रक्रिया को मूल्यांकन कहते है।"

“Evaluation is the process of gathering and interpreting evidences on changes in the behaviour of pupils as they progress through school”.

डान्डेकर (Dandekar) के शब्दों में,

मूल्यांकन एक ऐसी क्रमबद्ध प्रक्रिया है जो हमें यह बताती है कि बालक ने किस सीमा तक किन-किन उद्देश्यों को प्राप्त किया है।"

“Evaluation may be defined as a systematic process of determining the extent to which educational objective are achieved by the pupils”

कोठारी कमीशन (Kothari Commission) के द्वारा कहा गया है, "अब यह माना जाने लगा है कि मूल्यांकन एक अनवरत प्रक्रिया है, यह सम्पूर्ण प्रणाली का एक अभिन्न अंग है और यह उद्देश्यों से घनिष्ट रुप से संबन्धित है।

It is now agreed that evaluation is a continuous process forms an integral part of the total system of education and is closely related to educational objectives.”

मोफात (Moffat) के शब्दों में-

"मूल्यांकन एक सतत् प्रक्रिया है और यह विद्यार्थियों की औपचारिक शैक्षिक उपलब्धि से अधिक से अधिक संबन्धित होती है। यह व्यक्ति के उस विकास में रुचि रखता है जिसका सम्बन्ध व्यक्ति की भावनाओं, विचारों एवं कार्यो के संदर्भ में उसके व्यवहार में लाए जाने वाले परिवर्तन से है।"

“Evaluation is a continuous process and is concerned with more than formal academic achievement of pupils. It is interested in the development of the individual in terms of desirable behaviour changes in relation to his feeling, thinking and actions.”

मूल्यांकन की विशेषताएँ

(Characteristics of Evaluation)

- मूल्यांकन एक सतत् प्रक्रिया है।
- मूल्यांकन शिक्षण -प्रक्रिया का अभिन्न अंग हैं।
- इसका सीधा सम्बन्ध शिक्षा के उद्देश्यों से होता है।
- यह बालकों के परिणामों की गुणवत्ता, मूल्य और प्रभाविकता के आधार पर उनके भावी कार्यक्रमों का निर्धारण करता है
- इसके द्वारा विद्यार्थियों के वांछित व्यवहारगत परिवतनों के सम्बन्ध में साध्यों का संकलन किया जाता है।
- -यह एक सुव्यवस्थित प्रक्रिया है।
- यह पूर्णतया उद्देश्य केन्द्रित प्रक्रिया होती है।
- यह विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियों का मापन ही नहीं करता अपितु उनकी उन्नति में सहायक होता है।
- अनुदेशनात्मक उद्देश्य, शिक्षण प्रक्रिया एवं मूल्यांकन में आपसी सम्बन्ध होता है।

11.2 मूल्यांकन के उद्देश्य (Purpose of Evaluation)

मूल्यांकन के उद्देश्य निम्नलिखित है।

- पाठ्यक्रम में आवश्यक संशोधन करना।
- परीक्षा प्रणाली में सुधार करना।
- अध्यापकों की कार्यकुशलता एवं सफलता का मापन करना।
- विद्यार्थियों के लिए निर्देशन एवं परामर्श हेतु उचित अवसर प्रदान करना।
- बालकों का विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकरण करना।
- प्रचलित शिक्षण विधियों एवं प्रविधियों की खोज करने का उद्देश्य।
- निदानात्मक व उपचारात्मक शिक्षण पर बल देना।
- अभिप्रेरणा को सुदृढ़ करने का उद्देश्य।
- विद्यार्थियों की ज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक योग्यताओं की जांच करना।
- यह जानना कि विद्यार्थी किस सीमा तक अधिगम अनुभवों के लिए तैयार है।

11.3 मूल्यांकन की आवश्यकता और महत्व (Need & Importance of Evaluation)

मूल्यांकन की आवश्यकताओं व महत्व को निम्नलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट किया जा सकता है:-

1. **शिक्षा के उद्देश्यों के स्पष्टीकरण में सहायक (Helpful in Clarifying Objectives of Education)-** मूल्यांकन शिक्षा के उद्देश्यों के स्पष्टीकरण में सहायक होता है। मूल्यांकन उद्देश्यों पर आधारित होता है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया इन्हीं उद्देश्यों की प्राप्ति पर निर्भर करती है। अध्यापक शिक्षा में उनकी उपयोगिता

को ध्यान में रखते हुए विषय के प्रत्येक प्रकरण के उद्देश्यों को समझने का प्रयास करता है।

2. **छात्रों की प्रगति का ज्ञान प्रदान करता है (Provides Knowledge about the Progress of the students)-** मूल्यांकन के द्वारा हमें विद्यार्थियों की उपलब्धि का ज्ञान प्राप्त होता है। इसके द्वारा अध्यापक अपने विद्यार्थियों की शक्तियों एवं कमजोरियों के बारे में जान जाता है, और अपने विद्यार्थियों के लिए भविष्य की योजना बनाता है।

3. **विद्यार्थियों के वर्गीकरण में सहायक (Helpful in Classification of Students)-** कक्षा शिक्षण के अंतर्गत अध्यापक मूल्यांकन की सहायता से अपने विद्यार्थियों का वर्गीकरण कर सकता है। यह इसी के अनुसार उसे अपनी शैक्षिक प्रक्रिया के चयन में सहायक होगा। इससे विद्यार्थियों की उन्नति होगी और शैक्षिक अपव्यय भी रुकेगा।

4. **प्रवेश का आधार (Basis of Admission)-** विद्यार्थियों की क्षमताओं, योग्यताओं तथा उपलब्धि 'को विभिन्न परीक्षाओं के द्वारा जानने में मूल्यांकन सहायता करता है। विद्यार्थियों की उपलब्धि के आधार पर उन्हें अगली कक्षा में दाखिला दिलाने में मूल्यांकन सहायता करता है।

5. **परामर्श का आधार (Basis of Admission)-** अध्यापक मूल्यांकन की सहायता से व्यक्तिगत विभिन्नताओं जैसे योग्यताओं, अभिवृतियों, रुचियों, उपलब्धियों को जानने में सक्षम होता है। इन्हीं के आधार पर विद्यार्थियों को समय-समय पर शैक्षिक एवं व्यावसायिक परामर्श प्रदान किया जा सकता है, ताकि उपचारात्मक अनुदेशन के द्वारा मार्गदर्शन के लिए आधार प्रदान किया जा सके।

6. **वजीफा देने में सहायक (Helpful in Awarding Scholarship)-** मूल्यांकन की सहायता से विद्यार्थियों की उपलब्धि की, जांच करके प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को केन्द्र सरकार, राज्य सरकारें और अनेक स्वयंसेवी संगठन वजीफे प्रदान करने के लिए विद्यार्थियों का चयन करती है।

7. **अध्यापक की कुशलता के परीक्षण में सहायक (Helpful in Testing the Efficiency of the teacher)-** अध्यापक अपनी कार्य कुशलता के परिणामों की जानकारी मूल्यांकन की सहायता प्राप्त करता है। अध्यापक द्वारा पढ़ाने के लिए अपनाई गई शिक्षण विधियो, प्रविधियों, सहायक सामग्री आदि की प्रभावशीलता का पता भी मूल्यांकन द्वारा लगाया जा सकता है। इस प्रकार अध्यापक मूल्यांकन के द्वारा अपने शिक्षण की सफलता व असफलता के बारे में जान सकता है।

8. **शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया में सुधार लाना (Improvement in the Teaching Learning Process)-** मूल्यांकन एक उद्देश्य केन्द्रित प्रक्रिया है। यह उद्देश्य केन्द्रित अनुदेशन व सतत मूल्यांकन पर बल देती है। मूल्यांकन के द्वारा अध्यापक शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में वांछनीय सुधार कर सकता है।

9. **शिक्षा के योजना निर्माण का आधार (Basis of Planning of Education)-** हमने विषय के उद्देश्यों को किस सीमा तक प्राप्त कर लिया है, इस बात की जानकारी हमें मूल्यांकन की सहायता से प्राप्त होती है, कि कहां पर सुधार की आवश्यकता है और इसी के आधार पर हम शिक्षा की योजना का निर्माण करते है।

10. **स्कूल कार्यक्रम में सुधार लाने में सहायक (Helpful in Bringing Improvement in the school Programme)-** मूल्यांकन की सहायता से हमें स्कूल कार्यक्रमों की शक्तियों एवं कमियों की जानकारी प्राप्त होती है। इसी के आधार पर हम विभिन्न विद्यालयों के कार्यक्रमों का तुलनात्मक अध्ययन भी कर सकते हैं। यही तुलना स्कूल की कार्यप्रणाली में सुधार करने में सहायक होती है।

11. **अच्छे अधिगम को बढ़ावा (Promotion of Better Learning)-** मूल्यांकन में विभिन्न तकनीकों' की सहायता से विस्तृत तथा निरन्तर प्रक्रिया से विद्यार्थियों की प्रगति की जांच की जाती है। इससे केवल औपचारिक ज्ञान को ही नहीं अपितु उचित अभिवृत्तियों, कौशलों, आदतों, अवबोध आदि भी मूल्यांकन किया जा सकता है। इससे अधिगम को बढ़ावा मिलेगा और यह विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के विकास में सहायक होगा।

12. **पाठ्यक्रम और पाठ्य-पुस्तकों में परिवर्तन लाने में सहायक (Helpful in Bringing Change in the Curriculum and Text- books)-** मूल्यांकन उद्देश्यों पर आधारित होता है और पाठ्यक्रम और पाठ्य-पुस्तकों में परिवर्तन लाने में सहायक होता है जिसके परिणामस्वरुप उसे तीव्रता से परिवर्तित तथा जटिल समाज की आवश्यकताओं के अनुरुप बनाया जा सके।

13. **प्रोत्साहन प्रदान करने में सहायक (Helpful in Providing Incentives)-** मूल्यांकन विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करता है क्योंकि परीक्षा विद्यार्थियों के समक्ष एक लक्ष्य निर्धारित करती है। वे उपलब्धि के उच्चतम स्तर तक पहुंचने का प्रयत्न करते है। जब वे यह उपलब्धि प्राप्त कर लेते है, तो उन्हें अधिक मेहनत करने के लिए प्रेरणा मिलती है।

14. **अनुसंधान के लिए प्रदत (Data for Research)-** मूल्यांकन अनुसंधान उद्देश्य के लिए प्रदत प्रदान करता है। अनुसंधान के माध्यम से परीक्षा प्रणाली में अनेक सुधार किए जा सकते है। अत: मूल्यांकन अनुसंधान के लिए आंकडे प्रदान करता है।

15. **विद्यार्थियों की रिपोर्ट लिखने में सहायक (Helpful In Student Report Writing)-** मूल्यांकन हमें विद्यार्थियों की प्रगति रिपोर्ट तैयार करने व अभिभावकों को भेजने में सहायता प्रदान करता है। इससे विद्यार्थियों को अपनी उपलब्धि के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। अभिभावक भी अपने बच्चों की प्रगति के बारे में जानकारी हासिल करते है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. मूल्यांकन का अर्थ, परिभाषा एवं विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
   Explain the meaning , definition & characteristics of evaluation.
2. माध्यमिक स्तर पर मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्व का वर्णन कीजिए।
   Explain the need and importance of evaluation at secondary level.
3. माध्यमिक स्तर पर मूल्यांकन के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
   Explain the objectives of evaluation at secondary level

11.4 मूल्यांकन के प्रकार मूल्यांकन (Types of Evaluation)

मूल्यांकन एक सतत् एवं निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। मूल्यांकन की तकनीकों एवं उद्देश्यों के आधार पर मूल्यांकन के विभिन्न प्रकार हो सकते हैं जैसे:-

चित्र 11.1 मूल्यांकन के प्रकार

1. **व्यापक मूल्यांकन (Comprehensive Evaluation)-** विद्यार्थियों की विद्वता और गैर-विद्वता क्षेत्रों से संबन्धित उद्देश्यों को हमने प्राप्त कर लिया है या नही इस बात को जानने के लिए प्रयोग की जाने वाली प्रक्रिया को व्यापक या विस्तृत मूल्यांकन कहा जाता है। प्राय: यह देखा जाता है कि विद्वता संबन्धित तत्व जैसे विषय के ज्ञानात्मक, पक्ष, बोधात्मक पक्ष और ज्ञान के प्रयोग से सम्बन्धित पक्ष का ही मूल्यांकन किया जाता है, जबकि गैर विद्वता सम्बन्धित तत्वों जैसे रुचियाँ अमिरुचियां, दृष्टिकोण, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं सामुदायिक सेवा क्रियाएँ आदि को मूल्यांकन प्रक्रिया से बाहर रखा जाता है या उन पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में तथा उसके संशोधित रुप 1992 में भी यह इंगित किया गया है कि मूल्यांकन प्रक्रिया में विद्वता व गैर-विद्वता के सभी अधिगम अनुभवों को शामिल किया जाना चाहिए।

2. **सतत मूल्यांकन (Continuous Evaluation)-** शिक्षण कार्य तभी सफल माना जाता है जब अध्यापक द्वारा निर्धारित अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को किस सीमा तक प्राप्त कर लिया गया है इस कार्य के लिए हमें क्षेत्रों की प्रगति को समय-समय पर जांचा जाना चाहिए नही तो हमें यह ज्ञात नहीं होगा कि हम कहां जा रहे हैं? परम्परागत परीक्षाएं केवल एक निश्चित समय पर विद्यार्थियों के व्यक्तित्व से सम्बन्धित सभी पहलुओं की जांच करती हैं। जबकि छात्रों की उपलब्धियों एवं व्यवहार परिवर्तनों का मूल्यांकन किसी निश्चित समय पर नहीं अपितु निरन्तर होना चाहिए। अत: विद्यार्थियों के व्यक्तित्व से सम्बन्धित सभी पहलुओं की समय-समय पर की जाने वाली जांच को सतत् या निरन्तर मूल्यांकन कहा जाता है।

3. **निर्माणात्मक मूल्यांकन -(Formative Evaluation)-** कक्षा शिक्षण में अध्यापक द्वारा एक इकाई अथवा किसी पाठ के सम्पूर्ण होने से पहले अधिगम कठिनाईयों को पहचानने के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया को निर्माणात्मक मूल्यांकन कहा जाता है। इस मूल्यांकन के द्वारा अध्यापक पहले छात्रों की विषय से सम्बन्धित कठिनाइयों को पहचानता है और इसके बाद उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था करता है। निर्माणात्मक परीक्षणों का प्रयोग शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाने के लिए जाता है। यह विद्यार्थियों के अधिगम को बढ़ावा देने में, अध्यापक को प्रतिपुष्टि प्रदान करने मे, लक्ष्यों को स्थापित करने में, सीखने के क्रम के निर्माण में, अधिगम को पुनर्बलन देने मे और अधिगम कठिनाइयों को पहचानने में सहायता करता है।

4. **योगदेय / संकलनात्तक मूल्यांकन- (Summative Evaluation)-** निर्माणात्मक मूल्यांकन करने के पश्चात् हमें योगदेय मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। इस प्रकार यह भी कहा जा सकता है कि योगदेय मूल्यांकन एक निश्चित अवधि या पाठ्यक्रम की समाप्ति के पश्चात् बालक की शैक्षिक उपलब्धियों के मापन के प्रयोग की जाने वाली प्रक्रिया है। योगदेय मूल्यांकन के आवश्यक अंग-वार्षिक परीक्षण तथा बाह्य परीक्षण है, जिन्हें किसी बोर्ड, विद्यालय अथवा विश्वविद्यालय द्वारा सम्पन्न किया जाता है। संकलनात्मक मूल्यांकन अनुदेशन के अंत में सम्पूर्ण पाठ्यक्रम में उपलब्धि का मूल्यांकन करता है अथवा हम इसे साधारण शब्दों में कह सकते हैं कि यह शैक्षिक वर्ष के अन्त में किया जाने वाला मूल्यांकन है। योगदेय मूल्यांकन पाठ्यक्रम की समय सीमा या सैमेस्टर के पश्चात् जाता है।

5. **निष्पत्ति मूल्यांकन (Performance Evaluation)-** लिखित परीक्षण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से कई कौशलों का मापन नहीं कर सकते। ऐसे कौशल हैं- प्रयोगशाला कार्य, ड्रामा खेलना, सामाजिक कौशल आदि। उन कौशलों का मूल्यांकन विद्यार्थियों की निष्पत्ति के प्रत्यक्ष निरीक्षण के द्वारा किया जा सकता है। ऐसे निरीक्षण को ही निष्पत्ति मूल्यांकन के नाम से जाना जाता है। इसमें अध्यापक संभव व्यवहारों की सूची तैयार करता है और सूचीगत व्यवहारों पर विद्यार्थी के द्वारा किए गए प्रदर्शन को रिकॉर्ड करता है। निष्पत्ति मूल्यांकन में जांच लिस्ट, निर्धारण मापनी आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख आदि मूल्यांकन तकनीकों का प्रयोग किया जाता है।

6. **मौखिक मूल्यांकन (Oral Evaluation)-** मौखिक मूल्यांकन में एक अध्यापक कक्षा में अपने विद्यार्थियों से मौखिक रुप से कुछ प्रश्न पूछता है जिनका उत्तर विद्यार्थी भी मौखिक

रूप से देते है। मौखिक मूल्यांकन का उद्देश्य विद्यार्थियों की मौखिक अभिव्यक्ति, किसी महत्वपूर्ण विषय पर विचारों की अभिव्यक्ति, नेतृत्व गुण, शीघ्र चिन्तन शैक्षिक दृढ़ता आदि तत्वों की जांच करना होता है।

7. **लिखित मूल्यांकन (Written Evaluation)-** जब अध्यापक अपने विद्यार्थियों की उपलब्धि की जांच लिखित परीक्षण द्वारा करता हैं उसे लिखित मूल्यांकन कहते है। लिखित परीक्षण मूल्यांकन में प्रयोग लाई जाने वाली प्रचलित विधि है। अध्यापक विभिन्न प्रकार के लिखित परीक्षणों का निर्माण कर सकता है तथा साथ ही ऐसे परीक्षणें का निर्माण भी कर सकता है जिससे विद्याथियों के सम्मुख आने वाली विभिन्न समस्याओं की पहचान की जा सके।

8. **मानदण्ड संदर्भित मूल्यांकन (Criterion Referenced Evaluation)-** ग्लेजर ने सबसे पहले इसका प्रयोग सन् 1963 में व्यक्तियों में तुलना करने हेतु बनाए गए परीक्षणों तथा किसी विशिष्ट ज्ञान-क्षेत्र में वैयक्तिक उपलब्धियों के मापन के लिए बनाए गए परीक्षणों में भेद बताने के लिए किया। इस मूल्यांकनका उद्देश्य इस बात का परीक्षण करना होता है कि विद्यार्थी ने वांछित व्यवहार लक्ष्यों को प्राप्त किया है या नहीं। यह एक ऐसी मूल्यांकन प्रक्रिया है जिसमें विद्यार्थियों की निष्पत्ति का मूल्यांकन करने हेतु किसी पूर्व निर्धारित मानदण्ड को आधार बनाया जाता है। मानदण्ड संबन्धित मूल्यांकन का एकमात्र उद्देश्य अनुदेशन की प्रभाव शीलता को मापना है। इसमें उस समूचे व्यवहार को सम्मिलित किया जाता है जिसे अन्तिम व्यवहार कहा जाता है।

9. **मानक संदर्भित मूल्यांकन (Norm- Referenced Evaluation)-** यह विद्यार्थी की उपलब्धि को एक समूह, एक कक्षा या एक राज्य की शब्दावली में मापन की प्रचलित विधि है जिसके आधार पर विद्यार्थी के अंकों की व्याख्या की जाती है और निर्णय लिया जाता है। इस प्रकार के मूल्यांकन मे प्राप्त प्राप्तांकों की व्याख्या दूसरे विद्यार्थियों के प्राप्तांकों से तुलना करके की जाती है। तुलना करने के लिए समूह के प्राप्ताकों का औसत मान लेकर एक औसत मान बना लिया जाता है व यह मानक विद्यार्थी की उपलब्धि को आकने का आधार बनता है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न,

(Self Evaluation Questions)

1. स्कूल में माध्यमिक स्तर पर सतत् एवं व्यापक। मूल्यांकन का क्या महत्व है?
   What is the importance of continuous and comprehensive evaluation at secondary level in school?
2. मानदंड के संदर्भित एवं मानक संदर्भित मूल्यांकन में क्या अंतर है।
   Differentiate between criterion Reference & Norm Referenced evaluation?
3. निर्माणात्मक मूल्यांकन एवं संकलनात्मक मूल्यांकन में अंतर बताइए।
   Differentiate between formative and summative evaluation

4. माध्यमिक स्तर पर मूल्यांकन एवं मौखिक मूल्यांकन के महत्व को स्पष्ट कीजिए।
'Clarify the importance of written evaluation & oral evaluation at secondary level.

11.5 माध्यमिक स्तर पर वर्तमान परीक्षा प्रणाली (Present Examination System at Secondary Level)

परीक्षा का शाब्दिक अर्थ है- "चारों ओर अच्छी प्रकार देखना।" किसी आन्तरिक अधिकारी अथवा बाह्य संस्था द्वारा छात्रों के ज्ञान, उनकी सामान्य क्षमता तथा किसी योग्यता को मापने और परखने के लिए किया गया सुव्यवस्थित प्रबन्ध परीक्षा है। वास्तव में यह शिक्षण एवं परीक्षण साथ-साथ चलने वाली प्रक्रियाएं है। विस्तृत अर्थ में जीवन ही एक परीक्षा है। परीक्षा के बिना यह मालूम नहीं हो सकता कि शिक्षण ठीक दिशा में चल रहा है या नहीं।

परन्तु वर्तमान परीक्षा प्रणाली की बहुत आलोचना होने लगी है। परीक्षा को-एक भूत माना जाता है। कुछ इसे बला कहते है। राधाकृष्णन कमीशन के शब्दों में:-

'गत आधी शताब्दी तक परीक्षा पद्धति को भारतीय शिक्षा का निकृष्ट रुप समझा जाता रहा है।" रायबर्न के अनुसार- 'यह बिना किसी संदर्भ के कहा जा सकता है कि परीक्षाएँ रचनात्मक कार्य के दुश्मन हैं, विशेषत: जिस रुप में वे ली जाती हैं।" प्राय: परीक्षा को लोग कहा पास करने का साधन समझते हैं। प्रत्येक अध्यापक एवं विद्यार्थी का यह दृष्टिकोण बनता है कि वह स्वीकृत पाठ्यक्रम को इस प्रकार कंठस्थ कर ले कि परीक्षा में उतीर्ण हो जाए। अत: ऐसा सोचने पर समाज की तरक्की रुक जाती है। अत: वर्तमान शिक्षा का लक्ष्य सभ्य होना, सदाचारी होना, स्वास्थ्य लाभ करना तथा आदर्श नागरिक बनकर देश का कल्याण करना नहीं रहा बल्कि परीक्षा उतीर्ण कर प्रमाणपत्र प्राप्त कर लेना मात्र ही रह गया है।

माध्यमिक स्तर पर वर्तमान परीक्षा प्रणाली के दोष

(Demerits of Present Evaluation System at Secondary Level)

वर्तमान परीक्षा प्रणाली दोषमुक्त नहीं है अपितु इसमें अनेक दोष उत्पन्न हो गए है। परीक्षा प्रणाली में कक्षा को उत्तीर्ण करना ही वास्तविक ध्येय समझा जाता है। वर्तमान परीक्षा प्रणाली में पाए जाने वाले दोष निम्नलिखित है:-

1. आजकल की परीक्षा ही दोषपूर्ण है क्योंकि छात्र केवल परीक्षा पास करना ही ध्येय समझता है। ज्ञान एवं स्तर की न तो अध्यापक ही परवाह करता है और न ही छात्र।
2. आजकल परीक्षा का आर्थिक महत्व इतना बढ़ गया है कि ज्ञान के हेतु' के स्थान पर यह धन के हेतु' ही है। परीक्षा पास करके करी प्राप्त करना ही उसका उद्देश्य समझा जाता है।
3. छात्र कुंजियों पर आश्रित रहता है और उसे रहने तथा निबन्धत्माक उतर देने में ही कुशलता दिखानी पड़ती है।

4. अध्यापक भी छात्रों में गुणों का विकास करने के स्थान पर परीक्षा उतीर्ण कराना ही अपना ध्येय समझता है।
5. अध्यापक भी कक्षा शिक्षण कें अंतर्गत कुंजी का प्रयोग करता है जोकि अध्यापक के विषय से सम्बन्धित ज्ञान पर प्रश्नचिन्ह लगाता है।
6. अध्यापक की सफलता इसमें समझी जाती है कि उसकी परीक्षा परिणाम क्या रहा?
7. अभिभावकों का भी यह दृष्टिकोण रहता है कि उनके बालक परीक्षा उत्तीर्ण करके उचित नौकरी प्राप्त नौकर लें।
8. आधुनिक परीक्षा प्रणाली वास्तविक ढंग से बालकों की जांच नहीं करती। परीक्षा एक अवसर बन चुकी है। यह व्यक्ति की योग्यता का पूर्ण मापदण्ड नहीं है।
9. छात्र विषय की तैयारी रटकर कर लेते हैं और सफल हो जाते है। यह बुद्धि का सच्चा माप नहीं है।
10. आजकल की शिक्षा परीक्षा प्रधान है। साधन, साध्य बन गया है। यह परीक्षा प्रणाली शिक्षा के उद्देश्य को समझने में अड़चन का काम करने लग गई है। केवल परीक्षा पास करने वाली शिक्षा का भविष्य अंधकारमय दिखाई देता है।
11. इस परीक्षा प्रणाली ने बालकों में नकल करने की प्रवृत्ति पैदा कर दी है। येन-केन परीक्षा पास करना ध्येय बन गया है।
12. वर्तमान परीक्षा एक कला है। जो इस कला में होशियार है वह थोडा पढ़कर ही कक्षा उतीर्ण कर लेते है।
13. परीक्षा वर्षभर बाद ली जाती है। इसका समय प्राय: निश्चित रहता है और बालक बीमार पड़ने की स्थिति में परीक्षा में सम्मिलित नहीं हो सकता चाहे उस बालक ने पूरे वर्ष मन लगाकर पढ़ाई की हो।
14. तीन घंटे की लिखित परीक्षा में सम्पूर्ण वर्ष के पाठ्यक्रम की परीक्षा नहीं ली जा सकती। अत: परीक्षा सैद्धान्तिक दृष्टि से अनुचित है।

वर्तमान परीक्षा पद्धति में सुधार

(Reforms in the present system of Examination)

परीक्षा एक अनिवार्यता है, बुरी होते हुए भी इसे त्यागा नहीं जा सकता। समय-समय पर शिक्षा आयोगों ने उसमें सुधार के सुझाव दिए है।

सैकेण्डरी एजुकेशन कमीशन ने कुछ सुझाव परीक्षा पद्धति में सुधार के लिए दिए है वे इस प्रकार है-

1. बाह्य परीक्षाओं की संख्या कम से कम होनी चाहिए।
2. प्रश्नों के ढंग बदलकर निबंधात्मक प्रश्न कम किए जाएं।
3. परीक्षाकाल के समय विद्यार्थियों के वर्ष भर के कार्य को ध्यान में रखा जाए।
4. परीक्षा पद्धति में सुधार को क्रियान्वित करने के लिए केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय के माध्यमिक शिक्षा विभाग एवं प्रसार दिमाग की गोष्ठियों में भाग लिया जाए।

5. प्रत्येक विषय का अध्ययन करने से पूर्व यह निश्चय करना जरुरी है कि बालकों में क्या ज्ञान वृद्धि करनी है तथा बालक के व्यवहार में क्या परिवर्तन करना है।
6. नवीन परीक्षा प्रणाली से भी परीक्षा ली जानी चाहिए। इसमें वस्तुनिष्ठ परीक्षा भी महत्वपूर्ण है।
7. छात्र को क्या और कितना आता है, परीक्षा लेते समय इस पर ध्यान देना चाहिए, न कि इस पर उसे क्या नहीं आता।
8. परीक्षा को उद्देश्य न मानकर साधन ही मानना चाहिए। परीक्षा को तो शिक्षा के मूल उद्देश्य की पूर्ति मात्र करना है।
9. मौखिक परीक्षा को परीक्षा प्रणाली में उचित स्थान दिया जाना चाहिए।
10. परीक्षा प्रणाली के अंतर्गत अध्यापक की राय का महत्व भी आवश्यक है।
11. वर्तमान परीक्षा प्रणाली में प्रश्न-पत्रों में सुधार की नितान्त आवश्यक है।
12. बालकों की जांच के लिए प्रश्न बनाए जायें जिनको बालक अपनी सूझ-बूझ से हल कर सके।
13. प्रत्येक प्रकार की जन-परीक्षाओं में भी कमी करना आवश्यक है। परीक्षाएँ बालक के स्वास्थ्य पर बुरा असर डालती है। वह कोमल अवस्था में प्रगति पथ पर होता है।
14. बालक की रुचियों तथा प्रवृत्तियों का लेखा-जोखा भी ध्यान में रखा जाए।

कोठारी कमीशन और परीक्षा पद्धति

(Kothari Commission and Examination System)

कोठारी कमीशन के अनुसार- 'यह सर्वमान्य है कि मूल्यांकन एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जो शिक्षा प्रणाली का अभिन्न अंग है। इससे छात्र की अध्ययन की आदतों पर, अध्यापकों की शिक्षण पद्धति पर बढ़ा प्रभाव पडता है। मूल्यांकन की प्रविधियाँ वांछित दिशाओं में छात्र के विकास विषयक प्रमाण संग्रहित करने का साधन है।"

कोठारी कमीशन ने परीक्षा पद्धति में सुधार करने के लिए इस प्रकार सुझाव दिए है:-

1. लिखित परीक्षाओं को सुधारा जाए।
2. जिन शक्तियों का मापन लिखित परीक्षाओं द्वारा नहीं हो सकता, उनकी मापन की विधियों का अविकार किया जाए।
3. बाह्य परीक्षाओं में प्रश्नों को वस्तुनिष्ठ बनाया जाए।
4. आन्तरिक जांच के लिए अध्यापक द्वारा निर्मित परीक्षाओं, मौखिक परीक्षाओं, प्रयोगात्मक परीक्षाओं मनोवृत्ति तथा रुचियों को जांचने आदि के लिए विभिन्न प्रमापीकृत परीक्षाओं का उपयोग किया जाए। इन परीक्षाओं के परिणाम को मिलाया न जाए।
5. बोर्ड की परीक्षाओं में प्रमाण पत्र में विषयों में प्राप्त अंकों का विवरण होना चाहिए। प्रमाण पत्र में पास-फेल की घोषणा न हो।
6. बालक को बोर्ड के प्रमाणपत्र के साथ शिक्षण संस्था से विद्यालय लेखा भी मिलना चाहिए।

7. आयोग का पूरा-पूरा प्रयत्न रहा है कि वह जन परीक्षा के दोषों को दूर करा सके। आयोग ने यह भी कहा है कि अनुत्तरदायी मूल्यांकन प्रस्तुत करने पर शिक्षा दिमाग को ऐसे विद्यालय का अनुदान बन्द करने का अधिकार हो।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 मूल्यांकन प्रक्रिया व परीक्षा सुधार

National Education Policy, 1986 Evaluation Process Examination Reforms)

1. शिक्षण अधिगम की किसी भी प्रक्रिया के आन्तरिक अंग के रुप में निष्पत्ति मूल्यांकन अनिवार्य अंग है। स्वस्थ शैक्षिक कौशल के रुप में परीक्षा को शिक्षा में गुणात्मक सुधार के कार्यक्रम के रुप मे प्रयुक्त करना होगा
2. उद्देश्य है परीक्षण प्रणाली की पुनर्व्यवस्था करना जिससे यह तय हो सके कि मूल्यांकन विधि विश्वसनीय एवं वैध है और वह छात्रों के विकास, शिक्षण अधिगम के सशक्त साधन का उपकरण है। कार्यात्मक संदर्भ में इसका अर्थ है:-
   1. संयोग एवं वैयक्तिकता के अवसरों को दूर करना।
   2. कंठस्थीकरण को हतोत्साहित करना।
   3. सतत् एवं सघन मूल्यांकन जिसमें बौद्धिक तथा अबौद्धिक पक्ष सम्मिलित हों और इनका प्रसार सम्पूर्ण शैक्षिक काल हो।
   4. शिक्षकों, छात्रों एवं अभिभावकों द्वारा मूल्यांकन प्रक्रिया का प्रभावकारी उपयोग।
   5. परीक्षा संचालन में सुधार।
   6. शैक्षिक सामग्री तथा शिक्षण विधियों में सहगामी पीरवर्तन प्रस्तुत करना।
   7. क्रमिक रुप से माध्यमिक स्तर से ही सैमेस्टर प्रणाली लागू करना।
   8. अंकों के स्थान पर ग्रेड का प्रयोग करना।
3. शिक्षा संस्थाओं में उपरोक्त लक्ष्य परीक्षा एवं मूल्यांकन हेतु सार्थक है। संस्थागत अवसर पर मूल्यांकन को प्रश्रय दिया जाएगा एवं बाहय परीक्षा के पूर्व प्रभाव को कम किया जाएगा।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. वर्तमान परीक्षा पद्धति का वर्णन कीजिये।
   Explain the present Examination System.
2. माध्यमिक स्तर पर परीक्षा के दोषों का वर्णन कीजिए।
   Explain the demerits of the present examination system at secondary level.
3. परीक्षा पद्धति मे सुधार के लिए सैकेण्डरी कमीशन व राष्ट्रीय शिक्षानीति,1986 के सुझावों का वर्णन कीजिए।

Explain the suggestion given by Secondary Education Commission and National Education Policy, 1986 regarding examination system.

11.6 माध्यमिक स्तर पर ग्रेडिंग प्रणाली (Grading System at Secondary Level)

विद्यार्थियों का मूल्यांकन जब हम प्राप्त अंक के आधार पर ग्रेड बिन्दु से ग्रेड प्रदान करके करते हैं, उसे ग्रेडिंग प्रणाली कहते है। विद्यार्थियों के निष्पादन को श्रेणीबद्ध करते समय एक महत्वपूर्ण बात जो हमें ध्यान में रखनी चाहिए बह यह है कि वह मापनी कितने बिन्दुओं की हो, जिस पर निष्पादन को ग्रेड प्रदान किया जा सके। इस उद्देश्य के लिए सात, नौ या ग्यारह बिन्दुओं वाली मापनी प्रयोग में लाई जा सकती है। विभिन्न शिक्षा बोर्डो द्वारा अपनाई जाने वाली ग्रेड प्रणालियों का वर्णन इस प्रकार है।

सी0बी0एस0ई0 में ग्रेड प्रणाली

(Grading system in CBSEl)

सी0बी0एस0ई ने अपने विद्यार्थियों को निम्नलिखित ग्रेड प्रदान किए है।

A-1 उतीर्ण हुए विद्यार्थियों का टाप 1/8 छात्र

A-2 उतीर्ण हुए विद्यार्थियों का अगले टाप 1/8 छात्र

B-। उतीर्ण हुए विद्यार्थियों का अगले टाप 1/8 छात्र

B-2 उतीर्ण हुए विद्यार्थियों का अगले टाप 1/8 छात्र

C-। उतीर्ण हुए विद्यार्थियों का अगले टाप 1/8 छात्र

C-2 उतीर्ण हुए विद्यार्थियों का अगले टाप 1/8 छात्र

D-। उतीर्ण हुए विद्यार्थियों का अगले टाप 1/8 छात्र

D-2 उतीर्ण हुए विद्यार्थियों का अगले टाप 1/8 छात्र

E अनुतीर्ण विद्यार्थी

(स्त्रोत सी0बी0एस0ई0)

11.8 माध्यमिक स्तर पर केरल में ग्रेडिंग प्रणाली (Grading System in Kerala at Secondary)

केरल सरकार ने कक्षा 10वं में विद्यार्थियों और अभिभावकों को अस्वच्छ प्रतियोगिता की भावना से छुटकारा दिलाने के लिए 2004-05 से पूर्णाक ग्रेडिंग प्रणाली गुरु की गई है। इसका वर्णन इस प्रकार से है:-

पूर्णाक ग्रेडिंग प्रणाली और मूल्य बिन्दु

(AGP Grades & Value Point)

ग्रेड	प्रतिशत	ग्रेड बिन्दु	व्याख्या
A+	90 प्रतिशत व इससे	9	उत्कृष्ट

	अधिक		Outstanding
A	80 से 89 प्रतिशत	8	सर्वोतम Excellent
B+	70 से 79 प्रतिशत	7	बहुतअच्छा Very Good
B	69 से 69 प्रतिशत	4	अच्छा Good
C+	50 से 59 प्रतिशत	5	सामान्य से अधिक (Above Average)
C	40 से 49 प्रतिशत	4	सामान्य (Average)
D+	30 से 39 प्रतिशत	3	सीमांत (Marginal)
D	20 से 29 प्रतिशत	2	सुधार की आवश्यकता (Need of Improvement)
E	20 प्रतिशत से कम	1	सुधार करना चाहिए (Should Improve)

सी0बी0एस0ई0, और केरल सरकार द्वारा शुरु की गई ग्रेडिंग प्रणाली के विषय में हमने उपरोक्त विवरण के माध्यम से जानकारी प्राप्त की। हम ग्यारह बिन्दुओं वाली मापनी को अपनाकर अंकों की गुणात्मक व्याख्या इस प्रकार से कर सकते है:-

श्रेणी	श्रेणी बिन्दु	गुणात्मक व्याख्या	समकक्ष प्रतिशतता
A+	10	उत्कृष्ट Outstanding	96-100
A	9	सर्वोतम Excellent	96-85
A-	8	बहुतअच्छा Very Good	76-85
B+	7	अच्छा Good	66-75
B	6	सामान्य से अधिक Above Average	56-65
B-	5	सामान्य Average	46-55
C+	4	संतोषजनक Satisfactory	36-46
C	3	असंतोषजनक Unsatisfactory	26-35
C-	2	घटिया Poor	16-25
D	1	बहुत घटिया	6-15

		Very Poor	
E	0	अत्यंत घटिया Extremently Poor	0-5

11.7 माध्यमिक स्तर पर प्रश्नपत्र का प्रारुप
(Designe of the Question Paper at Secondary Level)

प्रश्न-पत्र का प्रारुप तैयार करना अध्यापक के लिए एक महत्वपूर्ण कार्य है। डिजाइन में विभिन्न क्रियाओं को अंक भार प्रदान किया जाता है जैसे अनुदेशनात्मक उद्देश्य, प्रश्न के प्रकार, विषयवस्तु की इकाई तथा उपइकाईयां तथा कठिनाई स्तर आदि। प्रश्नपत्र के डिजाइन को इस प्रकार से तैयार किया जा सकता है:-

1. **उद्देश्यानुसार अंक भार प्रदान करना (To determine Weightage according to Objectives)-** अध्यापक को उद्देश्यानुसार अंक मार प्रदान करना चाहिए। उद्देश्य का अंक भार उद्देश्य के महत्व के अनुसार दिया जाना चाहिए अर्थात जिस उद्देश्य का अधिक महत्व है उसे अधिक अंक व जिस का उद्देश्य का कम महत्व है उसे कम अंक दिए जाने चाहिए।

सारणी- 11.1 उद्देश्यानुसार अंक भारत

क्रम	उद्देश्य	अंक	प्रतिशत
1	ज्ञान	30	30 प्रतिशत
2	अवबोधन	45	45 प्रतिशत
3	प्रयोग	15	15 प्रतिशत
4	कोशल	10	10 प्रतिशत
	योग	100	100

2. **विषयवस्तु के अनुसार अंक भार (Weightage according to subject matter/content)-** विषय-वस्तु के अनुसार अंक भार प्रदान करते समय शिक्षक को इकाई तथा उसकी उप-इकाईयों को ध्यान में रखना पड़ता है उसी के अनुसार अंक भार प्रदान किया जाता है।

सारणी 11.2 गणित विषय में विश्व-वस्तु के अनुसार अंक भार

क्रम	इकाई तथा उपइकाईया	अंक	प्रतिशत
1	प्रतिशत	15	15 प्रतिशत
2	लाभ और हानि	20	20 प्रतिशत
3	अनुपात समानुपात	20	20 प्रतिशत
4	सांझा	10	10 प्रतिशत
5	चक्रवृद्धि ब्याज	20	20 प्रतिशत
6	वृत का क्षेत्रफल	15	15 प्रतिशत

योग		100	100

3. प्रश्नों के प्रकार के अनुसार अंक भार (Weightage according तो टाइप ऑफ Question) प्रश्न-पत्र निर्माण करते समय अध्यापक को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि इसमें सभी प्रकार के प्रश्नों को सम्मिलित किया जाए जैसे निबंधात्मक प्रश्न, लघु उत्तरात्मक प्रश्न और अतिलघु उत्तरात्मक या वस्तुनिष्ठ प्रश्न आदि।

सारणी 11.3 प्रश्न-प्रकार के अंक भार

क्रम	प्रश्न-प्रकार	अंक	प्रश्न-संख्या	कुल अंक	प्रतिशत
1	निबन्धात्मक	5	6	30	30 प्रतिशत
2	लघु उत्तर	3	8	24	24 प्रतिशत
3	अति लघु उत्तर	2	10	20	20 प्रतिशत
4	वस्तुनिष्ठ	1	26	26	26 प्रतिशत
	योग	अंक	50	100	100 प्रतिशत

4. **कठिनाई स्तर के आधार पर अंकभार (Weightage according to Difficulty Level of Questions)** अध्यापक के प्रश्न-पत्र का प्रारुप तैयार करते समय प्रश्नों के कठिनाई स्तर को ध्यान में रखकर अंक भार प्रदान करना चाहिए।

सारणी 11.4 प्रश्नों के कठिनाई स्तारानुसार अंक भार

क्रम	अनुमानित कठिनाई	प्रतिशत
1	आसान	15 प्रतिशत
2	सामान्य	70 प्रतिशत
3	कठिन	15 प्रतिशत

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Question)

1. सी0बी0एस0ई0 में माध्यमिक स्तर पर ग्रेडिंग प्रणाली क्या है?
   What is Grading system in CBSE at Secondary Level?
2. केरल में सैकेण्डरी स्तर पर ग्रेडिंग प्रणाली का वर्णन करो।
   Explain the grading system in Kerala at Secondary Level.
3. सैकेण्डरी स्तर पर आप प्रश्नपत्र का प्रारुप कैसे तैयार करेंगे?
   How will you design the Question Paper at secondary Level?

11.8 संचयी आलेख पत्र
(Cumulative Record Cards)

संचयी आलेख पत्र शब्द का प्रयोग 1930 से प्रारम्म हुआ माना जाता है। इसमें विद्यार्थियों से सम्बन्धित विभिन्न जानकारी एक ही पत्र पर संकलित कर ली जाती है, ताकि सम्बन्धित छात्र के बारे में व्यापक सूचना मिल सके। ये आलेख पत्र गुप्त रखे जाते है तथा समय पड़ने पर इनकी विषय वस्तु छात्र सम्बन्धी समस्याओं के निदान एसे उपचार हेतु प्रयोग की जाती है। इन आलेख पत्रों का विवरण अत्यन्त संक्षिप्त एवं सारगर्भित होता है।

संचित अभिलेख पत्र एक ऐसा दस्तावेज है जिसमें किसी व्यक्ति के बारे में पूर्ण और विकसित होते हुए चित्र के प्रस्तुतिकरण के लिए सम्बन्धित सूचनाएँ संचित रुप में रिकार्ड की जाती है।

संचित अभिलेख पत्र की परिभाषाएँ

(Definition of cumulative Record)

ऐलन (Allen) के अनुसार-

"संचित अभिलेख सूचनाओं का वह अभिलेख है जिनका सम्बन्ध विद्यार्थी के मूल्यांकन से होता है और जिसे एक कार्ड पर लिखकर एक ही स्थान पर रखा जाता है।

"The cumulative record is a record of information concerned with appraisal of the individual pupil, usually, kept on a card and in one place".

मूरे थॉमस (Moore Thomas) के शब्दों में,

'संचयी आलेख पत्र किसी बालक के बारे में एक लम्बी अवधि में एकत्रित सूचना है।"

“A Cumulative Record card is a collection of information about a child over a period of time usually several years”.

जोन्स (Jones) के विचारों में,

"संचित अभिलेख विद्यार्थी का वह स्थाई अभिलेख होता है जिसे स्कूल द्वारा पूर्ण करके रखा जाता है। यह उसकी स्कूल उपलब्धियों, उपस्थिति, स्वास्थ्य परीक्षण अंक और इसी प्रकार की सम्बन्धित सूचनाओं के साथ उसका शैक्षिक इतिहास होता है।

“A cumulative record is a permanent record of a student which is kept up-to-date by the school. It is his educational history with information about his school achievements, attendance, health, test scores and similar pertinent data.”

संचयी आलेख पत्र की विशेषताएँ

(Characteristics of cumulative Record Cards)

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर संचयी आलेख पत्र की निम्नलिखित विशेषताएँ है:-

1. संचित अभिलेख में विद्यार्थी के जीवन से जुडी हुई सभी प्रकार की सूचनाएँ शामिल होती है जैसे शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, चारित्रिक और मनोवैज्ञानिक आदि।
2. संचित आलेख पत्र में प्राथमिक स्कूल में प्रवेश प्राप्त करते ही बच्चे का संचित अभिलेख लिखना शुरु हो जाता
3. संचित अभिलेख में विद्यार्थी से सम्बन्धित निश्चित जानकारी शामिल की जाती है।
4. संचित अभिलेख विद्यार्थियों के बारे में वस्तुनिष्ठ सूचनाएँ प्रदान करते है।
5. संचित अभिलेख में बच्चे की विशेषताओं और उसके विकास का अभिलेख होता है।
6. संचित अभिलेखों द्वारा बनें की पूर्ण तस्वीर, उसकी योग्यताओं, कमियों तथा उपलब्धियों का वर्णन किया जाता
7. संचित अभिलेख सरल होता है व इसका रखरखाव भी आसान होता है।
8. संचित अभिलेख में पूर्ण एंव सत्य सूचनाओं को शामिल किया जाता है।
9. संचित अभिलेख में लिखी गई सूचनाएँ गोपनीय होती है।
10. संचित अभिलेख सामूहिक मूल्यांकन पर आधारित होता है।

संचयी अभिलेख पत्र के उद्देश्य

(Purpose of the Cumulative Record Card)

1. संचयी आलेख पत्र प्रत्येक बालक को व्यक्तिगत रुप से समझने में अध्यापक की सहायता करता है।
2. छात्रों की आवश्यकताओं को समझने में सहायक होता हे।
3. इनसे हमें शैक्षणिक तथा व्यावसायिक निर्देशन देने में सहायता मिलती है।
4. संचयी आलेख पत्रों से हमें विद्यार्थियों के समस्यात्मक व्यवहारों एवं उनके कारणों का ज्ञान हो जाता है।
5. संचयी आलेख पत्र अभिभावक शिक्षक संपर्क के अवसर प्रदान करते है।
6. अवकाश के क्षणों का सदुपयोग सम्बन्धी कार्यक्रम बनाने में सहायता मिलती है।
7. इनके माध्यम से हमें प्रत्येक विद्यार्थी के विकास का क्रम मालूम हो जाता है।
8. आलेख पत्रों के माध्यम से वे सूचनाएँ प्राप्त हो जाती है, जो परीक्षा द्वारा ज्ञात नहीं हो पाती।

संचित अभिलेख पत्र के प्रकार

(Types of cumulative Record Card)

संचित अभिलेख पत्र तीन प्रकार के होते हैं। हम अपनी आवश्यकतानुसार निम्नलिखित तीन प्रकारों में से किसी एक का चयन सकते है:-

1. एक-पत्र कार्ड (Single Card)
2. पैकेट या परत कार्ड (Packet-Folder Type Card)
3. संचित परत कार्ड (Cumulative Folder Type)

1. **एक-पत्र कार्ड (Single Card)-** इस प्रकार के पत्र में एक ही पत्र होता है। इस पत्र या कार्ड के दोनों ओर सूचनाएँ लिखी जाती है। इस प्रकार के पत्र में अधिक सूचनाएँ नहीं लिखी जा सकती। यदि अधिक सूचनाएं लिखनी हो तो एक से अधिक पत्र की आवश्यकता पड़ती है। इसका आकार $9"9"\times 11\frac{1}{2}$ होता है।

2. **पैकेट या परत कार्ड (Packet or Folder Type)** पैकेट या परत कार्ड भी कई प्रकार के होते है। इनका आकार 4" x 6" से लेकर पूर्ण पत्र के आकार का हो सकता है। इसमें रंगीन पत्र भी प्रयुक्त किये जा सकते है। इससे पत्र छांटने में आसानी रहती है। इन परत कार्ड में अनेक पत्र विभिन्न सूचनाएँ लिखकर रखे जा सकते है।

3. **संचित परत कार्ड (Cumulative Folder Type Card)** यह संचित रिकार्ड फोल्डर होता है। इसके दोनों ओर तथ्य विशेष तौर पर बने हुए खानों में लिखे जाते हैं। इनमें अतिरिक्त सूचनाएँ लिखने का प्रबन्ध होता है। विशेष रुप से रिक्त स्थानों को परत के दोनों ओर विद्यार्थियों से सम्बन्धित तथ्यों से भरना होता है। इसमें बहुत से पृष्ठ होते है। इनमें सबसे अधिक जानकारी शामिल की जा सकती है। इस परत कार्ड का स्वरुप स्कूल के उद्देश्यों तथा आवश्यक जानकारी पर निर्भर करता है।

संचित, अभिलेख पत्रों की विषयवस्तु

(Contents of Cummulative Record Card)

संचित अभिलेखों की विषय-वस्तु क्या हो इस बारे में संचित अभिलेख तैयार करने से पहले ही निर्धारित कर लेना आवश्यक होता है। विषय-वस्तु स्कूलों के उद्देश्यों, संचित अभिलेख के उद्देश्य तथा निर्देशन कार्य की आवश्यकताओं पर निर्भर करता है। संचित अभिलेख में सम्मिलित की जाने थाली विषय-वस्तु इस प्रकार

1. विद्यार्थी से सम्बन्धित वैयक्तिक आंकडे **(Personal Data about the Student)**

विद्यार्थी का नाम..... जन्म तिथि.....

पिता का नाम..... व्यवसाय.....

संरक्षक का नाम..... व्यवसाय.....

विद्यार्थी से सम्बन्ध ..... पता.....

माता का नाम..... ..... कक्षा.....

दूरभाष.....:..... अनुभाग.....

2. पूर्व स्कूल रिकार्ड (Previous School Record)

क्रम सं0	स्कूल का नाम	दाखिले का वर्ष एंव माह	जिस कक्षा में प्रवेश लिया	स्कूल छोडने का महीना व वर्ष	किस कक्षा तक पढ़ा	स्कूल छोड़ने का कारण	

1							
2							

3. परिवार का इतिहास **(Family History)**

वर्ष	200	200	200
परिवार का प्रकार (संयुक्त / एकल)			
परिवार मे सदस्यों की संख्या			
परिवार का आर्थिक स्तर			
परिवार में बच्चे-की स्थिति (अकेला बच्चा, बडा या सबसे छोटा)			
कोई अन्य जानकारी			

4. शारीरिक आंकड़े **(Physical Data)**

वर्ष	कद	वजन	छाती का माप	सामान्य अवस्था

5. डाक्टरी रिपोर्ट **(Medical Report)**

200		कोई घातक बीमारी
200		
200		

6. उपस्थिति **(Attandance)**

कक्षा	वर्ष	अधिकतम	वास्तविक	अनुपस्थिति के कारण

7. मनोवैज्ञानिक रिपोर्ट **(Physchological Report)**

वर्ष	परीक्षण का नाम	अध्यापक टिप्पणी

8. विद्वता सम्बन्धी उपलब्धि (Scholastic Achivement)

विषय	कक्षा..... वर्ष.....		कक्षा..... वर्ष.....		कक्षा..... वर्ष.....	
	अर्धवार्षिक	वार्षिक	अर्धवार्षिक	वार्षिक	अर्धवार्षिक	वार्षिक
अंग्रजी						
हिन्दी						

संस्कृत						
गणित						
जीव विज्ञान						
रसायन विज्ञान						
भौतिकी						
इतिहास						
भूगोल						
कॉमर्स						
ड्राइंग						
कला						
शारीरिक विज्ञान						
कृषि						
प्रेक्टिकल						
योग						
कक्षा में स्थान						
कक्षा में कुल छात्र						

9. पाठ्य सहगामी क्रियाओं में निष्पादन (Performance in Co-curricular activities)

क्रियाएँ	निष्पति के आधार पर वर्षानुसार ग्रेड		
	2006	2007	2008
खेलकूद			
साहित्यिक			
सामाजिक			
सांस्कृतिक			
कोई अन्य			

10. व्यक्तित्व के गुण (Personality Traits)

गुण	वर्ष		
	2006	2007	2008
सच्चाई			
ईमानदारी			
आत्मविश्वास			
सहयोग			

संवेगात्मक			
नेतृत्व			
उत्तरदायित्व			
स्थिरता			

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Question)

1. संचित अभिलेख के संप्रत्यय को स्पष्ट कीजिए।
   Clarify the concept of cumulative Record Card.
2. संचित अभिलेख के उद्देश्य एवं प्रकारों का उल्लेख कीजिए।
   Describe the objectives and types of cumulative Record Card.
3. संचित अभिलेख की विषय-वस्तु का वर्णन कीजिए।
   Explain the contents of cumulative record cards.

11.9 सारांश (Summary)

मूल्यांकन एक सतत् एवं व्यापक प्रक्रिया है। मूल्यांकन शैक्षिक प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग है। मूल्यांकन शैक्षिक उद्देश्यों पर आधारित है। मूल्यांकन द्वारा परिमाणात्मक तथा गुणात्मक दोनों ही प्रकार की सूचनाएँ प्राप्त होती हैं जिनके आधार पर बालक की योग्यता एवं उपलब्धियों का आकलन किया जा सकता है। आज माध्यमिक स्तर पर मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महल विभिन्न शैक्षिक पहलुओं से आंका जा सकती है। मूल्यांकन के विभिन्न प्रकार है- जैसे सतत् मूल्यांकन, व्यापक मूल्यांकन, योगदेय संकलनात्मक आदि जिनके द्वारा विद्यार्थियों का सही प्रकार से मूल्यांकन किया जा सकता है। आज माध्यमिक स्तर पर परीक्षा प्रणाली में व्याप्त विभिन्न दोषों को ढूंढकर इनमें सुधार की आवश्यकता है ताकि विद्यार्थियों पर अतिरिक्त बोझ को समाप्त किया जा सके। इसी संदर्भ मे छात्रों में स्वस्थ प्रतियोगिता की भावना का विकास करने के लिए कई राज्यों में ग्रेडिंग प्रणाली शुरु की गई। मूल्यांकन की विभिन्न तकनीकों में से संचयी आलेख पत्र का विशेष महत्व है। इसमें विद्यार्थी के जीवन से सम्बन्धित सभी जानकारी निहित होती है। अत: मूल्यांकन के क्षेत्र में विश्वसनीयता बनाए रखने के लिए और अच्छे मूल्यांकन के लिए स्कूलों में संचित आलेख पत्र का प्रयोग किया जाना चाहिए।

11.10 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

Khan, Mohd. Arif : School Evaluation Ashish Publication House,

new Delhi, 1995

Rammers, H.H., Gage. : Educational Measurement and Evaluation, Harper & Brothers, New York, 1943

Remmers, H.H. et. Al : A practical Introduction to Measurement and Evaluation Universal Book Stall, Delhi, 1967

Singh, Pritam : Handbook of Pupil Evaluation Allied Publishers, New Delhi,1989

Srivastava, H.S. : Evaluation in Schools , NCERT, New, Delhi, 1989

The Report of Secondary Education Commission, Govt. Of India, Ministary of Education ,1952-53.

The Report of Education Commission, Govt. of India, Ministry of Education, 964-66, New Delhi.

The Report of National Education Policy, Govt, of India 1986 M.H.R.D., New Delhi.

इकाई-12

माध्यमिक स्तर पर अध्यापक शिक्षा

(Teacher Education at Secondary Stage)

इकाइ की संरचना (Structure of Unit)

12.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objective)

12.1 अध्यापक शिक्षा का अर्थ एवं इसकी आवश्यकता (Meaning of Teacher Education and its need)

12.2 माध्यमिक स्तर पर अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रकार (Types of Teacher Training Institution at Secondary Level)

12.3 सेवा पूर्व अध्यापक शिक्षा (Pre-service Teacher Education)

12.4 सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा- अर्थ, आवश्यकता एवं महत्व (Inservice Teacher Education - Meaning, Need and Importance)

12.5 अध्यापक शिक्षा की समस्याएँ (Problems of Teacher Education)

12.6 दसवीं पंचवर्षीय योजना और अध्यापक शिक्षा (Tenth Five Year Plan and Teacher Education))

12.7 सारांश (Summary)

12.8 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

12.0 लक्ष्य एंव उद्देश्य

(Aims and Objective)

इस इकाई की समाप्ति पर आप-

- अध्यापक शिक्षा के अर्थ को समझ सकेंगे।
- अध्यापक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व पर विचार-विमर्श, कर सकेंगे।
- माध्यमिक स्तर पर माध्यमिक शिक्षा प्रदान करने वाली विभिन्न अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं के बारे में जान जाएंगे।
- अध्यापक शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने के लिए विभिन्न आयोगों एंव समितियों द्वारा दी गई सिफारिशों पर विचार विमर्श कर सकेंगे।
- राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (2008) द्वारा दिए गए सुझावों को जान जाएंगे।
- सेवाकालीन शिक्षा के महत्व को समझ सकेंगे।
- सेवाकालीन शिक्षा के विभिन्न कार्यक्रमों का वर्णन कर सकेंगे।
- अध्यापक शिक्षा की विभिन्न समस्याओं से परिचित हो जाएंगे।
- अध्यापक शिक्षा की समस्याओं को दूर करने के लिए कोठारी आयोग द्वारा दिए गए सुझावों को समझ सकेंगे।

- अध्यापक शिक्षा की समस्याओं को समझकर उसे दूर करने में अपना सहयोग दे सकेंगे।
- दसवी पंचवर्षीय योजना में अध्यापक शिक्षा के लक्ष्यों एवं उपलब्धियों को जान जाएंगे।

युगों-युगों से अध्यापक सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं राजनैतिक परिवर्तन का मसीहा माना जाता है। किसी भी देश की शिक्षा अध्यापक की योग्यता, जीवन स्तर तथा दृष्टिकोण से पूर्ण--रुपेण प्रभावित होती है। किसी भी शिक्षा प्रणाली में अध्यापक का महत्वपूर्ण स्थान होता है। यद्यपि भवन, शिक्षा सामग्री, पुस्तकें, शिक्षण विधियां- ये सब शिक्षा की प्रगति के लिए आवश्यक है, परन्तु इतनी सशक्त नहीं जितना अध्यापक क्योंकि अच्छे अध्यापक के बिना ये सब निरर्थक एवं निर्जीव है।

12.1 अध्यापक शिक्षा का अर्थ एंव इसकी आवश्यकता (Meaning of Teacher Education and its Need)

अध्यापक शिक्षा का अर्थ

(Meaning of Teacher Education)

समाज में शिक्षा का स्तर अध्यापकों के गुणों पर निर्भर करता है और अध्यापक के गुण उसके प्रशिक्षण पर निर्भर करते है। अत: शिक्षा के स्तर को ऊँचा करने तथा उसमें निरन्तर खार लाने के लिए अध्यापक शिक्षण के गुणात्मक विकास पर अधिक बल देना चाहिए। अध्यापक ही सभ्यता की ज्योति को प्रज्जवलित करने में सहायता प्रदान करता है। एक अध्यापक को बदलती हुई नदी के समान होना चाहिए, खड़े हुए तालाब के समान नहीं। कहने का अर्थ यह है कि बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार अध्यापक निरन्तर अध्ययन करता रहे और अपने ज्ञान में वृद्धि करता रहे।

1. **गुड के अनुसार (Good) -** "अध्यापक शिक्षा में वे सभी औपचारिक एवं अनौपचारिक क्रियाएँ तथा अनुभव सम्मिलित है जो किसी भी व्यक्ति को शिक्षण व्यवसाय का दायित्व सम्भालने की योग्यता प्रदान करती है।"

("Teacher Education consist of all formal and informal activities and experiences that help to qualify a person to assume the responsibilities as a member of educational profession.")

मुखर्जी के शब्दों में (Mukherjee's View)

"अध्यापक शिक्षा ऐसी शिक्षा का नाम है जो किसी व्यक्ति को शिक्षण व्यवसाय को अपनाने के योग्य बनाती है।"

("Teacher Education is such education which help to qualify person to adopt teaching Profession.")

संक्षेप में कहा जा सकता है। कि अध्यापक शिक्षा एक संगठित एवं व्यवस्थित संस्थात्मक शिक्षण प्रक्रिया है जो अध्यापक को अध्यापन व्यवसाय अपनाने के योग्य बनाती है और अध्यापन में पहले लगे हुए अध्यापको को ओर अधिक शिक्षा प्रदान कर उनके ज्ञान में वृद्धि करती है। एक डाक्टर, वकील तथा इन्जिनियर से भी बढ़ कर जरुरी है, एक अध्यापक को

प्रशिक्षित करना क्योंकि अध्यापक राष्ट्र के दर्पण होते है। अध्यापन एक कला है यह कला एक विशिष्ट प्रशिक्षण द्वारा सीखी जाती है। माता-पिता तो केवल एक बच्चे को जन्म देते है किन्तु अध्यापक उसे जीवित रहने की कला सिखाते है।

1. **बच्चे की प्रकृति को समझना (Understand the Nature of child):-** अध्यापक शिक्षा अध्यापक की बच्चे की योग्यताओं, रुचियों, विकास स्तर, भावनाओं, आकांक्षाओं आदि को समझने में सहायता प्रदान करती है। इससे अध्यापक को विद्यार्थियों की समस्या हल करने में तथा उनके समायोजन में सहायता मिलती है।
2. **पाठ्य सहायक क्रियाओं का ज्ञान (Knowledge of co-Curricular Activities):-** विभिन्न पाठ्य-सहगामी क्रियाओं को गठित करना, निरीक्षित करने तथा उसमें भाग लेने में भी अध्यापक शिक्षा एक अध्यापक की मदद करती है।
3. **सीखने-सीखाने की प्रक्रिया का ज्ञान (Knowledge of Teaching & Learning Process:-** अध्यापक शिक्षा द्वारा अध्यापकों को सीखने-सीखाने की विभिन्न तौर-तरीको का पता लगता है। इससे उसे अपनी विषय वस्तु को नियोजित करने तथा क्रमबद्ध ढंग से व्यवस्थित करने में सहायता मिलती है।
4. **मूल्यांकन विधियों का ज्ञान (Knowledge of Evaluation Techniques)** समय-समय पर विद्यार्थियों की उपलब्धियों का मूल्यांकन करना एक अध्यापक के लिए जरूरी है। विद्यार्थियों की उपलब्धियों का मूल्यांकन करने की विभिन्न विधियों का ज्ञान अध्यापक शिक्षा द्वारा अध्यापक को कराया जाता है।
5. **प्रशिक्षण सुनियोजित शिक्षण के लिए आवश्यक (Teaching is Essential for Better Planned Education):-** शिक्षा के उद्देश्यपूर्ण एवं सार्थक बनाने के लिए शिक्षा को सुनियोजित करना आवश्यक है सुनियोजित शिक्षा के लिए अध्यापक शिक्षा पहली आवश्यकता है। परिणामस्वरुप अध्यापक शिक्षा प्रणाली समूची शिक्षा प्रणाली के रुप को निर्धारित करती है।

12.2 माध्यमिक स्तर पर अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रकार (Types of Teacher Training Institution at Secondary Level)

1. माध्यमिक स्तर के अध्यापको के लिए प्रशिक्षण महाविद्यालय

(Training Colleges of Secondary Level Teachers)

ये कॉलेज स्नातकों तथा स्नातकोतरों को मिडल, हाई तथा हाई सैकण्डरी स्कूलों के लिए अध्यापक प्रशिक्षण प्रदान करते है। लगभग सभी राज्यों में माध्यमिक स्तर पर अध्यापकों को तैयार करने का उतरदायित्व इन संस्थाओं का है। यह एक वर्षीय कोर्स है जिसे पूरा करने के बाद बी0एड0 की डिग्री प्रदान की जाती है।

2. क्षेत्रीय शिक्षण महाविद्यालय

(Regional Colleges of Education)

बहु उद्देशीय स्कूलों में तकनीकी शिक्षा, वाणिज्य, ललित कला, गृह विज्ञान आदि के अध्यापकों की कमी को दूर करने के लिए चार क्षेत्रीय महाविद्यालयों की स्थापना अजमेर, भुवनेश्वर, भोपाल तथा मैसूर में की गई। क्षेत्रीय शिक्षण महाविद्यालयों में चार वर्षीय संयुक्त माध्यमिक अध्यापक शिक्षा में दाखिले के लिए न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता हाई सैकेण्डरी (+2) है। हाल ही में दिल्ली विश्वविद्यालय के द्वारा प्राथमिक शिक्षा का चार वर्षीय कार्यक्रम आरम्भ किया है। इस कार्यक्रम के बाद प्राथमिक शिक्षा का स्नातक (Bachelor of Elementary Education) की डिग्री प्रदान की जाती है। भारत के उतरपूर्वीय राज्यों को विद्यार्थियों के लिए एक क्षेत्रीय संस्थान शिलॉग में स्थापित किया गया है। इन महाविद्यालयों में अध्यापकों को तैयार करने के अतिरिक्त सैकेण्डरी स्कूलों के अध्यापकों, निरीक्षकों तथा प्रशासकों के लिए सेवाकालीन प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है। माध्यमिक स्कूलों के लिए शिक्षण सामग्री तैयार करना, प्रदर्शनात्मक स्कूल का गठन एवं विकास करना, माध्यमिक स्कूलों से सम्बन्धित शिक्षण विधियों, मूल्यांकन विधियों में की अनुसन्धान व्यवस्था करना आदि इन के मुख्य उद्देश्य है।

3. विशेषज्ञ अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाएं

(Training Institute for Special Teachers)

इन संस्थाओं में अलग-अलग विषयों जैसे नृत्य, गृहविज्ञान, भाषा, शारीरिक शिक्षा, ललित कला, संगीत आदि के अध्यापकों को तैयार किया जाता है।

4. राजकीय शिक्षा संस्थाए

(State Institute of Education)

कुछ ऐसी संस्थाएँ हे जो राजकीय स्तर पर शिक्षा के क्षेत्र में अलग-अलग विषयों में अनुसंधान करने में लगी हुई है। लगभग प्रत्येक राज्य में राजकीय शिक्षा संस्था (State Institute of Education) राजकीय अंग्रेजी संस्थान, (State Institute of English) राजकीय विज्ञान शिक्षा संस्थान (State Institute of Science Education) आदि स्थापित की गई है। ये संस्थाएँ अध्यापकों को शिक्षण की नवीन धारणाओं एवं प्रवृतियों का ज्ञान देने के लिए सेवाकालीन कोसों का आयोजन करती है।

5. शिक्षा के संयुक्त कॉलेज

(Comprehensive College of Education)

संयुक्त कॉलेजों में विभिन्न शिक्षा स्तरों तथा कई विशिष्ट क्षेत्रों के अध्यापकों को प्रशिक्षित किया जाता है।

6. विस्तार सेवा दिमाग

(Extension Service Department)

क्षेत्रीय सेवा विभाग ने कुछ प्रशिक्षण कॉलेजों में विस्तार सेवा विभाग स्थापित किए है। जिनका उद्देश्य माध्यमिक स्कूल अध्यापकों को सेवाकालीन शिक्षा प्रदान करना है।

7. ग्रीष्मकालीन एंव पत्राचार कोर्स

(Summer Cum Correspondence Courses)

सभी क्षेत्रीय शिक्षण महाविद्यालयों में बी0एड0 कोर्स की व्यवस्था की गई है। इस कोर्स में 4 महीने के दो ग्रीष्मकालीन अवकाश में पूर्णकालिक प्रशिक्षण तथा दस महीने की अवधि में पत्राचार प्रशिक्षण सम्मिलित है। क्षेत्रीय शिक्षण महाविद्यालयों के अतिरिक्त और भी कई विश्वविद्यालयों में पत्राचार कोर्स द्वारा बी0एड0 तथा एम0एड0 पाठ्यक्रम की सुविधा है। सभी अध्यापक शिक्षण संस्थानों में भारत सरकार द्वारा अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों व अन्य पिछड़े वर्गो के लिए आरक्षण नीति का प्रावधान रखा गया है। वर्तमान समय में शिक्षा विभाग तथा अध्यापक शिक्षण संस्थानों में 15 प्रतिशत पद अनुसूचित जातियों के लिए, 75 प्रतिशत अनुसूचित जन जातियों के लिए तथा 27 प्रतिशत पद अन्य पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षित किए गए थे।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

Self Evaluation Question

1. अध्यापक शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।
   Clarify the meaning of Teacher Education?
2. अध्यापक शिक्षा की आवश्यकता एंव महत्व क्या है?
   What is the need and importance of Teacher Education?
3. हमारे देश में माध्यमिक स्तर पर अध्यापक शिक्षा प्रदान करने वाली प्रशिक्षण संस्थाएं कितने प्रकार की है?
   What are different types of teacher training institutions at Secondary Level in our country?
4. क्षेत्रीय शिक्षण महाविद्यालयों के कार्यो का वर्णन कीजिए।
   Explain the function of Regional Colleges of Education

12.3 सेवा पूर्व अध्यापक शिक्षा (Pre-service teacher Education)

आधुनिक युग की आवश्यकताओं और वैज्ञानिक तथा तकनीकी विकास ने सिद्ध कर दिया है कि अध्यापक जन्म से नहीं होते बल्कि बनाए जाते है। **(Teachers are not Born but mostly made)** अध्यापन कार्य आरम्भ करने से पहले अध्यापक को शिक्षण प्रक्रिया का ज्ञान होना अति आवश्यक है क्योंकि इसके बिना शिक्षा उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं हो सकती। अध्यापक के हाथों में युवा पीढी को संवारने का दायित्व होता है। उसकी एक गलती समूर्ण राष्ट्रीय जीवन में झलकती है। अत: हर कोई शिक्षण कार्य को सहीं ढंग से नहीं कर सकता इसके लिए विशेष प्रशिक्षण, अभिरुचि एवं कौशल की आवश्यकता होती है।

जो प्रशिक्षण शिक्षण व्यवसाय में प्रवेश करने से पहले प्राप्त किया जाता है उसे सेवापूर्ण अध्यापक शिक्षा (Pre-Service Teacher Education) कहते है।

उद्देश्य

(Objectives)

1. सीखने एंव सिखाने की प्रक्रिया का ज्ञान देना।
2. शिक्षा के उद्देश्यों को ठीक ढंग से जानकारी देना।
3. विषय को सरल एवं रुचिकर बनाने का ज्ञान देना।
4. शिक्षण एंव मूल्यांकन विधियों की जानकारी देना।
5. नए अध्यापकों में शिक्षण के प्रति उचित दृष्टिकोण का विकास करना।
6. बच्चों को समझने का मनौवैज्ञानिक ज्ञान।

वर्तमान सेवापूर्व अध्यापक शिक्षा के दोष

(Defects in existing Pre-service Teacher Education,)

भारत में विभिन्न स्तरों पर प्रदान की जाने वाली अध्यापक शिक्षा में बहुत दोष है। उन्हें दूर करने के लिए अनेक शिक्षा आयोगों एवं कमेटियों ने सुझाव दिए लेकिन उन सुझावों को पूर्ण रुप से लागू नहीं किया गया, जिसके कारण आज भी अध्यापक शिक्षा में बहुत दोष है। जैसे:-

- दोषपूर्ण प्रवेश प्रक्रिया
- परम्परागत पाठ्यक्रम
- अध्यापक शिक्षण संस्थाओं का स्कूलों के दैनिक जीवन से अलग होना।
- नीरस कार्यक्रमों का होना
- शिक्षण अभ्यास रुचिकर न होना
- व्यवहारिक ज्ञान पर कम बल
- व्यावहारिक विषयों का प्रशिक्षण न देना
- समाज की बदलती आवश्यकताओं पर आधारित न होना
- अप्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति
- कार्यक्रमों की वास्तविकता की कमी

सेवा-पूर्व अध्यापक शिक्षा हार सम्बन्धी सुझाव

(Suggestion for the improvement of pre-service Teacher Education)

अध्यापक शिक्षा में सुधार लाने के लिए विभिन्न आयोगों एवं कमेटियों ने अपने-अपने सुझाव दिए है।

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1984-49) की सिफारिशें

(Recommendation of University Education Commission(1948-49)

- पाठ्यक्रमों को पुनगठित किया जाए तथा अधिक समय शिक्षण अभ्यास को दिया जाए।
- प्रशिक्षण कालेजों में अनुभवी एवं प्रशिक्षित स्टाफ की नियुक्ति की जाए।
- उपायुक्त स्कूलों का शिक्षण अभ्यास के लिए प्रयोग किया जाए।
- अध्यापकों को कुछ वर्ष के अध्ययन अनुभव के पश्चात स्नातकोतर के लिए प्रोत्साहित किया जाए।

प्रशिक्षण महाविद्यालयों के कार्यक्रमों एवं कार्यप्रणाली पर विचार विमर्श करने के लिए 1950 में भारत के प्रशिक्षण महाविद्याद्यालयों का पहला सम्मेलन बडौदा में हुआ। इस समेलन में अध्यापक प्रशिक्षण का नाम बदल कर अध्यापक शिक्षा रखा गया। अध्यापक शिक्षा का पाठ्यक्रम बदला गया, नए विशिष्ट पेपर शामिल किए गए तथा व्यावहारिक कार्य पर ज्यादा बल दिया गया।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) के सुझाव

(Recommendation of Secondary Education Commission ,1952-53)

- छात्राध्यापकों को सहपाठी क्रियाओं में प्रशिक्षण लेना चाहिए।
- शिक्षण अभ्यास को अधिक महत्व देना चाहिए।
- प्रशिक्षण कालेजों को अभिनव कोर्स, कार्यशाला, सैमीनार का आयोजन करना चाहिए।
- प्रशिक्षण कॉलेजों में केवल प्रशिक्षण कार्य ही नहीं होना चाहिए बल्कि शिक्षण के सभी तलों पर अनुसंधान भी होना चाहिए।
- प्रान्तीय सरकार को छात्राध्यापकों को छात्रवृतियां देनी चाहिए।
- अध्यापकों की कमी को दूर करने के लिए विशिष्ट अंशकालिक प्रशिक्षण कोर्स की व्यवस्था होनी चाहिए।
- अध्यापक शिक्षण के लिए केवल दो प्रकार की संस्थाएं होनी चाहिए। मैट्रिक तथा उच्चतर माध्यमिक कक्षा में सफल विद्यार्थियों के लिए दो वर्ष का प्रशिक्षण तथा स्नातकों के लिए एक वर्ष का प्रशिक्षण

1964 में अध्यापक महाविद्यालयों के राष्ट्रीय संगठन

(All India association of Teacher Colleges)

अध्यापक महाविद्याद्यालयों के राष्ट्रीय संगठन के सातवें सम्मेलन में यह फैसला लिया गया कि शिक्षा के संयुक्त महाविद्यालय स्थापित किए जाए ताकि प्राथमिक और माध्यमिक अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं की दूरी को दूर किया जा सके। अध्यापक शिक्षा कार्यक्रमों की गुणवता को सुधारने के लिए अध्यापक शिक्षा की राजकीय परिषद्दों (State council of Teacher Education) की स्थापना करनी चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986)

(National Policy of Education, 1986)

- राज्य शैक्षिक अनुसन्धान व प्रशिक्षण परिषदों (State Council of Education Research and Training) के कार्य को पूरक बनाने के लिए चुने हुए माध्यमिक अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालयों को उन्नत किया जाएगा।
- अध्यापक शिक्षा संस्थानों तथा विश्वविद्यालयों के शैक्षिक विभागों के बीच नेटवर्क व्यवस्थाएं स्थापित की जाएगी।
- घटिया प्रशिक्षण संस्थाओं को बन्द किया जाएगा।
- अध्यापक शिक्षा एक निरन्तर प्रक्रिया है। इसके सेवापूर्व तथा सेवाकालीन अंशों को पृथक नहीं किया जा सकता। अध्यापक शिक्षा पद्धति की पुन: जांच की जाएगी।

- राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् को साम्थर्य तथा साधन दिए जाएंगे ताकि वह परिषद् अध्यापक शिक्षा संस्थाओं को मान्यता प्रदान कर सकें तथा उनके शिक्षाक्रम तथा पद्धतियों के बारे में पथ प्रदर्शन कर सके।

क्रियान्वित कार्यक्रम, 1986

(Program of Action, 1986)

- अध्यापक शिक्षा के विकास के लिए एक कार्यान्वन कार्यक्रम तैयार किया गया जिसमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति द्वारा दिए। गए सुझावों को क्रियान्वित किया गया।
- अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रम को संशोधित एंव विकसित किया जाएगा। नवीन पाठ्यक्रम में कार्य अनुमत शारीरिक शिक्षा एवं खेल योजना एवं प्रबन्ध, भारतीय संस्कृति का अध्ययन, शिक्षा एवं संस्कृति का एकीकरण आदि विषयों पर बल दिया जाएगा।
- अध्यापकों के वेतन तथा सवा शर्तो को उनके सामाजिक तथा व्यवसायिक दायित्वों के आधार पर सुधारा जाएगा ताकि प्रतिभाशाली लोगों को शिक्षण-व्यवसाय की ओर आकर्षित किया जा सके।
- अध्यापकों के लिए एक व्यवसायिक आचार संहिता (Code of Professional Ethics) तैयार करना और अध्यापकों द्वारा इसका पालन करना।
- अध्यापकों की नियुक्ति एवं स्थानान्तरण में वस्तुनिष्ठा लाने के लिए निर्देश तैयार करना।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति को कार्यान्वित करने के लिए बनाए नए - नए कार्यान्वित कार्यक्रम में मूल्य उन्मुख शिक्षा (Value Oriented Education) के विशेष अध्ययन की व्यवस्था की गई है। ताकि अध्यापकों में धार्मिक, आध्यात्मिक एंव नैतिक मूल्यों का विकास कर सके। इस विशेष अध्ययन में एन.सी.ई.आर.टी. तथा राज्य संस्थाओं का विशेष सहयोग प्राप्त किया जाएगा।

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद्, 1993-95

NCTE, 1993-95)

- अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न कार्यक्रमों तथा योजनाओं को तैयार करने में केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकार, विश्वविद्यालयों, विश्वविद्यालयों अनुदान आयोग आदि को सुझाव देना।
- मान्यता प्राप्त संस्थाओं को नया कोर्स आरम्भ करने के लिए स्टाफ की संख्या, योग्यता, विद्यार्थियों की चयन प्रक्रिया, भौतिक संसाधनों आदि के बारे में दिशा निर्देश देना।
- अध्यापक शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में अनुसन्धान कार्यो एवं नवीन कार्यो को बढ़ावा देना।
- समय-समय पर अध्यापक शिक्षण संस्थाओं का निरीक्षण करना।

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग 2008

(National knowedge commission,2008)

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने कहा है कि स्कूल अध्यापकों के लिए सेवापूर्व और सेवारत प्रशिक्षण संतोषजनक नहीं है। बहुत से राज्यों में अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं में सेवापूर्व प्रशिक्षण को सुधारने की आवश्यकता है। भारत में सेवापूर्व प्रशिक्षण कार्यक्रम में एक प्रांत से दूसरे प्रांत में विभिन्नता पाई जाती है। विभिन्नता के निम्न पक्ष है-

1. टयूशन फीस में अन्तर
2. दाखिला नीति
3. अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं के प्राचार्यो की शैक्षिक योग्यता
4. संकाय/विभाग के सदस्यों की शैक्षिक योग्यता
5. अध्यापक: छात्र अध्यापक अनुपात

एक ही राज्य के विभिन्न विश्वविद्यालयों में भी अन्तर है जैसे-

1. कोर्स के कुल नम्बर
2. सैद्धान्तिक और प्रायोगिक पेपरों की संख्या एवं नम्बरों का वितरण
3. पेपरों का शीर्षक और उसमें लिए गए प्रकरण
4. शिक्षण अभ्यास का कुल समय
5. पाठ योजना तैयार करने का तरीका
6. छात्राध्यापकों द्वारा प्रायोगिक परीक्षा के लिए तरह-तरह के रिकार्ड तैयार करना।
7. आन्तरिक मूल्यांकन का प्रतिशत
8. शिक्षण अभ्यास के दौरान शिक्षण के लिए दिया जाने वाला समय
9. पाठ निरीक्षण में स्कूल अध्यापकों का सहयोग लेना।

एक ही राज्य में कार्य करने वाली विभिन्न शिक्षण संस्थाओं में भी अन्तर पाया जाता है जैसे-

1. प्रातःकालीन सभा और दूसरी क्रियाओं का आयोजन करना।
2. शिक्षण संस्थाओं के सदस्यों के ठहरने की अवधि
3. शिक्षण सामग्री की एवं गुणवत्ता

अध्यापक प्रशिक्षण में गुणात्मक सुधार लाने के लिए कुछ विकसित देशों ने स्कूल अध्यापकों तथा हैड के लिए मानक निर्धारित किए है। भारत ने भी अध्यापक प्रशिक्षण में गुणात्मक सुधार लाने के लिए स्कूल अध्यापकों के लिए राष्ट्रीय एंव प्रान्तीय स्तर पर मानक निर्धारित करने जरुरी है। दक्ष एंव कुशल अध्यापकों को ही अच्छा वेतन देना चाहिए। इस व्यूहरचना द्वारा हम अध्यापकों को अपने अन्दर सुधार, व परिवर्तन के लिए अभिप्रेरित कर सकते है। अध्यापकों का चयन कठोरतापूर्वक एंव वैज्ञानिक ढंग से होना चाहिए जिसमें उनके द्वारा पढ़ाए गए पाठों का बारीकी से निरीक्षण होना चाहिए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evolution Questions)

1. वर्तमान अध्यापक शिक्षा प्रणाली में क्या-क्या कमियाँ हैं?
   What are the major defects in the present teacher education system?

2. अध्यापक शिक्षा के सनक में राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) तथा राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (1993-95) के क्या विचार है?

What are the views of National Policy of Education(1986) and National Council of Teacher Education(1993-95) regardingTeaching Education?

3. सेवापूर्व अध्यापक शिक्षा के उद्देश्य क्या है?

What are the objectives of pre-services teacher education?

4. अध्यापक शिक्षा में सुधार लाने के लिए राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने क्या सुझाव दिए।

What are the suggestions are given by National Knowledge Commission for improving teacher education

12.4 सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा - अर्थ, आवश्यकता एंव महल (In-service Education-Meaning, Need and Importance)

सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा का अर्थ

(Meaning of In-service Teacher Education

शिक्षा जीवनपर्यन्त, गतिशील एवं सदैव गतिशील प्रक्रिया है। सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा इस आदर्श पर आधारित है कि वास्तविक अध्यापक जीवन भर समर्पित विद्यार्थी रहता है। वही व्यक्ति प्रेरणादायक ढंग से पढा सकता है जो स्वयं जीवन भर सीखते रहने को तैयार हो। यह शिक्षा अध्यापकों की निरन्तर शिक्षा है। यह स्कूलों में सेवा करने बाले अध्यापकों की व्यवसायिक योग्यता में वृद्धि की शिक्षा है।

लारेंस के शब्दों में (View of Lawrence)

सेवा कालीन शिक्षा से अभिप्राय उस शिक्षा से है जो अध्यापक प्रशिक्षण कॉलेज में प्रशिक्षण प्राप्त करके शिक्षण व्यवसाय में प्रदेश करने के पश्चात् प्राप्त करता है। इसमें सभी शैक्षिक, सामाजिक तथा अन्य कार्यक्रम सम्मिलित है जिनमें अध्यापक भाग लेते है।"

("Inservice Education is the education that a teachers receives after he has had his education in teacher's college. It includes all educational, social and other programs in which a teacher takes a vital part,"))

एम.वी. बुच के विचार (Views of M.B Buch)

"सेवाकालीन शिक्षा उन क्रियाओं का कार्यक्रम है जिनका उद्देश्य सेवारत अध्यापकों के अन्दर नई अर्न्तदृष्टि, बुद्धि, समझ एंव ज्ञान का विकास करना है।" (Inservice education is thus a program of activities aiming at developing of new insight growth, understanding and knowledge in inservice teachers.")

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते है कि सेवाकालीन शिक्षा अध्यापक के शिक्षण व्यवसाय में प्रवेश करने के बाद की शिक्षा है ताकि वे नवीन ज्ञान को प्राप्त कर शिक्षण कार्य को कुशलतापूर्वक कर सकें।

सेवाकालीन शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व

(Need and Importance of in-service education)

सेवारत शिक्षा एक ऐसी महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जो शिक्षण व्यवसाय में सजीवता प्रदान करती है।

1. **प्रत्येक अध्यापक विद्यार्थी है (Every teacher is a student):-** शिक्षा जीवन भर चलने बाली प्रक्रिया है इसलिए प्रत्येक अध्यापक को जीवन भर सीखते रहना चाहिए। कोठारी आयोग के कथानुसार, 'शिक्षा के सभी क्षेत्रों में तेजी से हो रही उन्नति तथा शिक्षा सम्बन्धी सिद्धान्तों में हो रहे विकास के कारण सेवाकालीन शिक्षा अत्यन्त आवश्यक हो गई है। ' ओलीवर (Oliver) ने ठीक ही कहा है कि प्रशिक्षण छोडने के पश्चात् अध्यापक का विकास रुक नहीं जाता, अब वह विभिन्न प्रकार के अनुभवों से सीखना आरम्भ करता है।
2. **नए अध्यापकों को सहायता (To help new teacher):-** स्कूल में प्रवेश करने के बाद नए अध्यापकों के सामने कई समस्याएँ तथा प्रश्न होते है जिसका हल ढूँढने के लिए तथा उतर प्राप्त करने के लिए उन्हें सेवाकालीन शिक्षा की आवश्यकता होती है।
3. **निरन्तर प्रशिक्षण (Continuous Training):-** निरन्तर प्रशिक्षण के अभाव में शिक्षक का ज्ञान खड़े पानी के तलाब की तरह हो जाता है उसका ज्ञान तथा सोचने का दृष्टिकोण सीमित हो जाता है जिससे छात्रों को शिक्षण का कोई लाभ नहीं होता।
4. **कमियों को दूर करना (Removal of shortcomings):-** अध्यापकों की कमियों को दूर करने के लिए सेवारत शिक्षा आवश्यक है। इससे शिक्षा के गुणात्मक विकास में सहयोग मिलेगा।
5. **विचार विमर्श करना (Exchange of views):-** सेवाकालीन शिक्षा में अध्यापकों को दूसरे अध्यापकों तथा विशेषज्ञों से विचार-विमर्श करने का मौका मिलता है। इक्टठे कार्य करने से अध्यापकों में अपने व्यवसाय के प्रति अपनत्व की, सहयोग की तथा मैत्री भावना उत्पन्न होती है।
6. **आत्माभिव्यक्ति के लिए लाभदायक (Useful of self expression):-** अपने विचारों को छात्रों तक सही ढंग से पहुंचाने के लिए प्रत्येक अध्यापक को आत्मभिव्यक्ति की कला में निपुण होना चाहिए। सेवारत शिक्षा अध्यापकों को अपने विचार स्वतन्त्र रुप से दूसरों के सामने रखने के कई मौके प्रदान करती है।
7. **शिक्षण का पुनर्निमाण (Reconstructions of Education):-** सेवाकालीन शिक्षा से शिक्षा-पुनर्निमाण के काम में सुविधा होती है। शिक्षण लक्ष्यों का

नवीनीकरण पाठ्यक्रम संशोधन, नवीन शिक्षण विधियों को अपनाना, नवीन मूल्यांकन विधियों को अपनाना- इन सब के लिए सेवाकालीन शिक्षा बहुत जरुरी है। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने सेवाकालीन शिक्षा के महत्व पर बल देते हुए कहा है- अध्यापक प्रशिक्षण का कार्यक्रम कितना ही शानदार क्यों न हो, परन्तु केवल उसी से शानदार अध्यापक का निर्माण नहीं हो सकता। अनुभवों के आलोचनात्मक विश्लेषण तथा विकास के व्यक्तिगत एवं सामूहिक प्रयासों से ही निपुणता प्राप्त होती है।

सेवा-कालीन अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रम

(Programme of In-service Education)

निम्नलिखित चित्र से स्पष्ट होता है कि सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा कई कार्यक्रमों द्वारा दी जा सकती है

चित्र 12.1

1. **सैमीनार (Seminars):-** सेमिनार सेवाकालीन शिक्षा का प्रभावशाली साधन है। सेमीनार के द्वारा ज्ञान और अनुभव सामूहिक प्रयत्नों से इक्कठे किए जाते है। किसी भी विषय का चुनाव करके उसे उपविषयों में बांट दिया जाता है। उपविषयों विभिन्न समूहों में विचार विमर्श के लिए दिए जाते है। परस्पर विचार विमर्श के बाद प्रस्तुत समस्या के समाधान सम्बन्धी निर्णय पर पहुंचने का प्रयास करते है। सेमिनार के बहुत से लाभ है:-
   - सेमीनार से अध्यापकों को मैत्रीपूर्ण विचार-विमर्श करने का मौका मिलता है।
   - अध्यापकों में कार्य के प्रति उत्सुकता उत्पन्न की जा सकती है।
   - तुरन्त निर्णय लेने की योग्यता को प्रोत्साहन मिलता है।
   - सेमीनार अध्यापकों को अपने प्रयासों के मूल्यांकन में सहायता प्रदान करते है।
   - सेमीनार आयोजित करने का लाभ तभी है जब वहां पर लिए गए निर्णयों को कक्षाओं में व्यावहारिक रुप से प्रयोग किया जाए।
2. **कार्यशालाएँ (Workshops):-** कार्यशालाओं में व्यवहारिक कार्य पर अधिक बल दिया जाता है। इनमें भाग लेने वाले अध्यापकों को सक्रिय होकर कार्य करना पड़ता है।

कार्यशालाएं समस्याओं के रचनात्मक एंव व्यावहारिक समाधान के हल का अवसर प्रदान करती है। इनका आयोजन प्रशिक्षण कॉलेजों के शिक्षा विभाग द्वारा छुट्टियों में किया जाना चाहिए ताकि अध्यापक अपना पूरा समय कार्य में लगा सकें। इसकी कार्यअवधि 3 से 10 दिन तक होनी चाहिए।

कार्यशाला का महत्व (Values of Workshop):-

- कार्यशाला से मैत्रीपूर्ण विचार-विमर्श के लिए पर्याप्त अवसर मिलता है।
- इसमें अध्यापकों की छिपी हुई शक्तियों का विकास होता है।
- परस्पर सम्पर्क एवं सहयोग से शिक्षण व्यवसाय के प्रति आदर बढ़ता है।
- कार्यशाला सामूहिक चिन्तन, सहयोगात्मक कार्य तथा लोकतन्त्रात्मक प्रक्रिया को विकसित करती है।
- प्राप्त किए गए अनुभवों से अध्यापकों को विभिन्न समस्याओं का समाधान करने में सहायता मिलती है।

3. **अभिनव कोर्स (Refresher Courses):-** अभिनव कोर्स द्वारा अध्यापकों को शिक्षा सम्बन्धी कार्यो पर किए गए विचार विमर्श, व्यावहारिक कार्य, शिक्षा अनुसंधान, नवीन शिक्षण विधियों आदि से अध्यापकों को अवगत कराया जाता है। इनका आयोजन छुट्टियों में करना चाहिए। स्कूलों के अध्यापकों के लिए अध्यापक कालेजो को तथा महाविद्यालय के प्राध्यापकों के लिए इनका आयोजन विश्वविद्यालय द्वारा किया जाना चाहिए। अभिनव कोर्सों के कई लाभ है।
   - अभिनव कोर्सों के द्वारा अध्यापकों का व्यावसायिक विकास होता है।
   - अध्यापकों को नवीनतम ज्ञान से अवगत कराया जाता है।
   - नए ज्ञान के प्रचार एवं प्रसार का यह एक महत्वपूर्ण साधन है।
4. **सम्मेलन (Conferences):-** सम्मेलन भी अध्यापक सेवारत शिक्षा का एक महत्वपूर्ण अंग है। सम्मेलन वार्षिक या अर्द्धवार्षिक होने चाहिए। शिक्षा सम्बन्धी किसी भी विषय को लेकर जैसे पाठ्य-पुस्तकों का चुनाव, विकलांग बच्चों का निर्देशन, नवीन शिक्षण विधियों एवं मूल्यांकन विधियों का प्रयोग आदि पर सम्मेलन आयोजित किए जा सकते है। इसके भी कई लाभ है।
   - विचारों का आदान प्रदान
   - अध्यापकों को विचार व्यक्त करने का सुअवसर
   - शिक्षा सम्बन्धी विषयों पर विचार
   - आत्मविश्वास की भावना का विकसित होना
5. **विस्तार भाषण (Extension Lectures):-** कोई भी स्कूल या प्रशिक्षण कालेज शिक्षण के विभिन्न क्षेत्रों में विशेषज्ञों के भाषणों का प्रबन्ध कर सकता है। इस सम्बन्ध में निकटवर्ती प्रशिक्षण कालेज का विस्तार विभाग सहायता कर सकता है।
6. **अध्ययन मण्डल (Study Groups):-** एक समूह में किसी विषय पर विचार विमर्श करना अध्ययन ग्रुप या मण्डल कहलाता है। इस मण्डल के सभी सदस्य एक ही विषय तथा एक जैसी रुचि रखने वाले होते हैं। ये समय-समय पर एकत्रित होकर सम्बन्धित

समस्याओं पर विचार विमर्श कर महत्वपूर्ण निणर्य लेते है। अध्ययन ग्रुपों द्वारा प्रदर्शनियों वक्तव्यों, यात्राओं आदि की व्यवस्था की जानी चाहिए। विभिन्न स्तरों पर विषय अध्यापकों की सभाएँ भी आयोजित होनी चाहिए। इससे शिक्षण व्यवसाय का स्तर ऊँचा होगा।

7. **पत्राचार कोर्स (Correspondence Courses):-** अध्यापकों को सेवाकालीन शिक्षा प्रदान करने का यह अच्छा तरीका है। क्योंकि यह अप्रिशिक्षित शिक्षकों की संख्या को कम करता है। पत्राचार कोर्स द्वारा अध्यापक घर बैठे ही शिक्षा प्राप्त कर सकता है और इससे अध्यापकों मे स्व:अध्ययन की आदत बनती है। पैसे और समय की बचत होती है।
8. **व्यावसायिक रचनाएँ या लेखन (Professional Writings):-** नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए विस्तार सेवा विभागों तथा एन.सी.ई.आर.टी. के द्वारा प्रकाशित पत्रिका तथा पुस्तकें प्रत्येक स्कूल के पुस्तकालय में उपलब्ध होनी चाहिए ताकि अध्यापक उन्हें पढ़ कर नवीन जानकारी प्राप्त कर सके।

इसके अतिरिक्त फिल्म - शो, प्रदर्शनियों, शिक्षात्मक यात्राओं के आयोजन से भी सेवाकालीन शिक्षा प्रदान की जा सकती है। सेवाकालीन शिक्षा ग्रहण करने के लिए अध्यापकों को अभिप्रेरित करना चाहिए ताकि वे इसमें भाग लेकर लाभ उठा सकें। कुछ अभिप्रेरित' साधन इस प्रकार है-

- शिक्षात्मक भ्रमण के लिए अनुदान देना चाहिए।
- उच्चतम वेतन क्रम तथा उच्च प्रशासनिक स्तर की उन्नति का आधार सेवाकालीन शिक्षा हो।
- अध्यापकों को छुट्टियां मिलने की सुविधा होनी चाहिए।
- ऐसे अध्यापकों के वेतन में वार्षिक वृद्धि नहीं करनी चाहिए जो कई वर्षो तक सेवाकालीन शिक्षा प्राप्त नहीं करते।
- सेवारत शिक्षा के कार्यक्रम सुव्यवस्थित, सुनियोजित, प्रभावशाली तथा उद्देश्यपूर्ण होने चाहिए।

सेवारत अध्यापक शिक्षा को सुधारने के उपाय

(Vitalizing Inservice Programmes)

कोठारी आयोग (1964-66) में सेवारत शिक्षा कार्यक्रमों को सुधार लाने के लिए सुझाव दिए-

- सेमीनार और ग्रीष्मकालीन कोर्स के बाद अनुवर्ती कार्य की व्यवस्था देनी चाहिए। विचारों और अनुभवों के आदान प्रदान को बढ़ावा देने के लिए समाचार बुलेटिन छपना चाहिए ताकि दूसरे अध्यापक भी घर बैठे उसका लाभ उठा सके।
- स्कूल शिक्षा के लिए उत्तरदायी व्यक्तियों के बीच में उचित तालमेल होना चाहिए। बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार समय-समय पर पाठ्यक्रम तथा परीक्षा प्रणाली में परिवर्तन करना चाहिए।

- अध्यापकों में शिक्षण कौशलों का विकास करने के लिए, बदलती परिस्थितियों के अनुसार शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने के लिए तथा संशोधित पाठ्यक्रम से अवगत कराने के लिए सेमीनार तथा अभिनव कोर्सों का आयोजन करना चाहिए।
- शिक्षा आयोग ने इस बात पर भी बल दिया है कि आज का युग विज्ञान तथा तकनीकी का युग है। इसलिए शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने के लिए अध्यापकों के सोवरत शिक्षा कार्यक्रम को सशक्त करना जरुरी है।

अध्यापकों के राष्ट्रीय आयोग ने भी अध्यापकों की शिक्षा के संदर्भ में कुछ सुझाव दिए जिन्हें राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में शामिल किया गया है। 1987 में भारत सरकार द्वारा एक योजना 'अध्यापक शिक्षा का सशक्तीकरण एवं पुनर्गठन' चालु की गई, जिसमें मुख्य उद्देश्य है-

- 250 माध्यमिक अध्यापक शिक्षा संस्थाओं का सशक्तीकरण करना।
- प्रतिवर्ष लगभग 5 लाख स्कूल अध्यापकों में विभिन्न सेवारत शिक्षा कार्यक्रमों द्वारा व्यावसायिक कुशलता का विकास करना।

शिक्षा के स्तर में गुणात्मक सुधार लाने के लिए सेवारत अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रम पर ध्यान देने की बहुत आवश्यकता है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. अध्यापकों की सेवाकालीन शिक्षा की अवश्यकता और महत्व क्या है?
   What is need and importance of In-service Education of Teacher?
2. सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा से आप क्या समझते है? सेवारत और सेवापूर्ण अध्यापक शिक्षा में क्या अन्तर है?
   What do you mean by Inservice teacher Education? How it is different from pre-service Education?
3. अध्यापकों को सेवाकालीन शिक्षा के कार्यक्रमों का वर्णन कीजिए।
   Discuss the various programmes for inservice Education of Teachers.
4. सेमीनार और कार्यशाला में क्या अन्तर है? आपके विचार में अध्यापक शिक्षा के विकास के लिए कौन सा कार्यक्रम अधिक प्रभावशाली है।
   What is the difference between seminar and workshop? Acc.to your own views, which programmes is more effective for the development of teacher education?

12.5 अध्यापक शिक्षा की समस्याएँ (Problems of Teacher Education):-

अध्यापक शिक्षा की मुख्य समस्याओं को चार श्रेणियों में बांटा गया है।

चित्र संख्या 12.2

अध्यापक शिक्षा को प्रभावशाली बनाने के लिए उपरोक्त समस्याओं पर विचार विमर्श करके उन्हें दूर करने के प्रयत्न करने होंगे।

I. अध्यापक शिक्षा की पृथकता से सम्बन्धित समस्याएँ
(Problems regarding isolation of Teacher Education)

अध्यापक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम विश्वविद्यालय के सामान्य जीवन से अलग है। कोठारी आयोग ने यह पृथकता तीन प्रकार की बताई है:-

1. सैकेण्डरी अध्यापकों की व्यावसायिक शिक्षा को विश्वविद्यालयों से सम्बन्धित नहीं किया जाता।
2. अध्यापक शिक्षण की विभिन्न संस्थाएँ एक दूसरे से अलग है।
3. अध्यापक शिक्षा स्कूलों तथा स्कूल शिक्षा के आधुनिक विकास कार्यो से सम्बन्धित नहीं है।

(A) विश्वविद्यालय से पृथकता समाप्त करना (Breaking the isolation from the University):- विश्वविद्यालय के जीवन से अध्यापक शिक्षा की पृथकता को तोड़ने के लिए कोठारी आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिए है-

1. शिक्षा को तीन वर्ष की डिग्री कोर्स में एक अनिवार्य विषय के रुप में रखना।
2. कुछ चुने हुए विश्वविद्यालयों में शिक्षा स्कूलों, (Schools of Education) की स्थापना की जाए जिनका मुख्य कार्य सेवाकालीन प्रशिक्षण तथा शोध के विकास कार्यो की व्यवस्था करना हो।

(B) स्कूलों से पृथकता दूर करना (Breaking Isolation from Schools):-

1. कुछ चुने हुए स्कूलों के सहयोग से शिक्षण अभ्यास का आयोजन करना चाहिए। इन्हें शिक्षा विभाग द्वारा विशेष अनुदान मिलना चाहिए।
2. अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं तथा स्कूलों के स्टाफ में समय-समय पर अदली बदली होनी चाहिए।
3. सभी प्रशिक्षण संस्थाओं मे विस्तार सेवा विभागों (Extension Service Department) की स्थापना की जानी चाहिए।
4. कार्यक्रमों एवं पाठ्यक्रमों के आयोजन में पुराने विद्यार्थियों की मदद लेनी चाहिए।

(C) एक दूसरे से पृथकता समाप्त करना (Breaking Isolation from one another)

1. समस्त अध्यापक शिक्षा को विश्वविद्यालय के अधीन किया जाए।
2. राजकीय अध्यापक शिक्षा बोर्ड (State Board of Teacher Education) की हर प्रान्त में स्थापना की जानी चाहिए जो सभी स्तरों की अध्यापक शिक्षा के लिए उतरदायी हो।
3. प्रत्येक प्रांत में शिक्षा के व्यापक महाविद्यालय स्थापित होने चाहिए।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षक-शिक्षा के लिए प्रशिक्षण संस्थाओं की वर्तमान पृथकता को दूर करना आवश्यक है। इस सम्बन्ध में शिक्षा आयोग ने लिखा है- अध्यापकों की व्यावसायिक तैयारी को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए शिक्षक शिक्षा को एक ओर विश्वविद्यालयों के साहित्यिक जीवन तथा दूसरी ओर विद्यालय जीवन तथा शैक्षिक विकासों के निकट लाना आवश्यक है।

II. अध्यापक शिक्षा की गुणात्मक समस्याएँ

(Problems Concerning Quality of Teacher Education)

अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रम पुरानें तथा स्कूलों की वास्तविकताओं से सम्बन्धित नहीं है जिससे धन का पतन तो होता ही है साथ ही समूचे शिक्षा स्तर का भी पतन होता है।

डा0 एस0 के दता ने ठीक ही कहा है "अध्यापक शिक्षा में केवल नाम मात्र परिवर्तन की आवश्यकता नहीं अपितु अध्यापकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम, पाठ्यक्रम तथा अध्यापकों की व्यावसायिक तैयारी सम्बन्धी उद्देश्यों के क्षेत्र में पूर्ण रुप से क्रान्ति की आवश्यकता है। "

कोठारी आयोग ने अध्यापक शिक्षा में गुणात्मक सुधार करने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए है-

1. **व्यावसायिक विषयों की सजीवता (Vitalization of Professional Studies) :-** व्यावसायिक कोर्सो की विषय वस्तु का वास्तविक शिक्षण के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है इसलिए असम्बन्धित सामग्री को पाठ्यक्रम से निकाल देना चाहिए। पाठ्यक्रम छात्राध्यापकों की व्यावसायिक आवश्यकताओं के अनुसार होना चाहिए।

2. **शिक्षण अभ्यास में सुधार Improvement in Practice Teaching):-** छात्र-अध्यापकों को शिक्षण के विभिन्न कौशलों का अभ्यास अच्छी प्रकार कराना चाहिए। उन्हें अच्छे शिक्षण कार्य का निरीक्षण करने का मौका मिलना चाहिए। स्कूल की वास्तविक 'परिस्थितियों में कम से कम आठ सप्ताह तक शिक्षण अभ्यास करना चाहिए। शिक्षण अभ्यास के अतिरिक्त प्रशिक्षणार्थियों को स्कूल के विभिन्न कार्यक्रम जेसे प्रातःकालीन सभा का आयोजन, समय सारिणी का निर्माण, रजिस्टर कार्य पुस्तकालय, खेल के मैदानों में होने वाली क्रियाओं आदि का ज्ञान होना चाहिए।

3. **विषय ज्ञान का नवीनीकरण (Reorientation of Subject Knowledge) -** माध्यमिक शिक्षण महाविद्यालयों मे उन विषयों का अध्ययन कराना चाहिए जिसमें शिक्षण कार्य किया जाता है। विषय सामग्री में स्कूल से सम्बन्धित पाठ्यक्रम के आधारभूत सिद्धान्त तथा सहायक सामग्री सम्मिलित होनी चाहिए। विषय ज्ञान का नवीनीकरण विश्वविद्यालयों के शिक्षा विभागों के सहयोग से व्यवस्थित होना चाहिए।

4. **प्रशिक्षण कोर्स की अवधि (Duration of Training course):-** माध्यमिक अध्यापक प्रशिक्षण कोर्स की अवधि स्नातकों के लिए 1 वर्ष की होनी चाहिए। परन्तु काम के दिनों की संख्या 230 होनी चाहिए।

5. शिक्षण एवं मूल्यांकन विधियों में सुधार (Improvement is Method of teaching evolution):- प्रशिक्षण संस्थाओं में शिक्षण के लिए नई-नई शिक्षण विधि जैसे समस्या समाधान विधि, प्रोजैक्ट विधि, विचार विमर्श विधि आदि का प्रयोग करना चाहिए जिसमें अध्यापकों के साथ-साथ विद्यार्थियों का भी सक्रिय योगदान हो। सैमीनार, कार्यशाला का आयोजन करना चाहिए। मूल्यांकन में भी सुधार की आवश्यकता है। मूल्यांकन में शिक्षण अभ्यास, सत्र कार्य के आन्तरिक मूल्यांकन को शामिल करना चाहिए। हर विद्यार्थी का अभिसंचित रिकार्ड तैयार करना चाहिए ताकि छात्र-अध्यापकों के हर पहलु का मूल्यांकन किया जा सके।

6. **विशिष्ट पाठ्यक्रमों तथा कार्यक्रमों का विकास (Development of special courses and programmes):-** समाज की बदलती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए नए कोर्स का विकास करना चाहिए। यह काम एन.सी.ई.आर.टी. के अध्यापक शिक्षा विभाग तथा राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा संघ द्वारा मिल कर किया जाना चाहिए।

7. **पाठ्यक्रम की पुनरावृत्ति (Revision of Curriculum):-** उद्देश्यों को सामने रखकर समय-समय पर अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रम में आवश्यकतानुसार संशोधन होना चाहिए।

III. अध्यापकों के हित से सम्बन्धित समस्याएँ (Problems Concerning Welfare of Students)

आज अध्यापकों की सामाजिक स्थिति, वेतनमान तथा सेवा-स्थिति असन्तोषजनक है। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने कहा है कि 'यदि अध्यापक की वर्तमान असन्तुष्टि और निराशा को दूर करना है तो अध्यापक की स्थिति और सेवा शर्तो में सुधार किया जाए।

1. **वेतन (Salary):-** शिक्षण व्यवसाय में सुयोग्य व्यक्तियों को आकर्षित करने के लिए अच्छा वेतन देना चाहिए। वेतन में प्रत्येक पाँच वर्ष बाद संशोधन होना चाहिए तथा महंगाई भता भी देना चाहिए।

2. **सेवामुक्ति (Retirement benefits):-** अध्यापकों की सेवामुक्ति की सामान्य आयु 60 वर्ष होनी चाहिए। इसे 65 वर्ष तक बढाया भी जा सकता है। अध्यापकों के लिए त्रिगुणी लाभ प्रणाली (Triple benefit scheme) लागू करनी चाहिए।

3. कार्य एवं सेवा की शेर्ते (Conditions of work and service):-

- ग्रामीण इलाकों में अध्यापकों को रिहायश प्रदान करनी चाहिए।
- निजी टयूशन पर नियन्त्रण करना चाहिए।

- अध्यापकों को पाँच साल में एक बार घूमने के लिए रियायती दर रेल टिकट देने की योजना बनानी चाहिए।
- अध्यापकों को व्यावसायिक विकास के लिए सुविधा देनी चाहिए।

4. **अध्यापक संगठन (Teacher's Organization):-** व्यवसायिक तथा शिक्षात्मक सुधार के लिए अध्यापकों द्वारा बनाए गए संगठनों को केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकार द्वारा मान्यता मिलनी चाहिए। अध्यापकों के वेतनमान तथा कार्य शर्तो आदि विषयों पर उनसे परामर्श लेना चाहिए।
5. **राष्ट्रीय उपलब्धियाँ National Awards):-** शिक्षा मंत्रालय को राष्ट्रीय अवार्ड की संख्या बढानी चाहिए। चुनाव समितियों को दृढ बनाना चाहिए। अवार्ड प्राप्त अध्यापकों को प्रथम श्रेणी के अध्यापकों के समान यात्रा भता मिलना चाहिए।

IV. अध्यापक शिक्षा के विस्तार से सम्बन्धित समस्याएँ (Problems Concerning Expansion of Teacher Education)

कोठारी आयोग के विचारानुसार स्कूल स्तर पर दाखिले के विस्तार के अनुसार प्रशिक्षण सुविधाओं में भी विस्तार करना होगा। प्रत्येक प्रान्त को प्रशिक्षण सुविधाओं के विचार के लिए एक योजना तैयार करनी चाहिए। योजना तैयार करते समय निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए।

1. सुविधाओं में विस्तार (Expansion of Facilities):- प्रशिक्षण सुविधाओं में विस्तार इस प्रकार करना चाहिए कि एक वर्ष में प्रशिक्षित अध्यापकों की संख्या अगले वर्ष के लिए आवश्यक अध्यापकों के बराबर हो।
2. संस्था का आकार (Size of the institution):- प्रशिक्षण संस्थाओं का आकार बड़ा होना चाहिए। कोठारी आयोग के अनुसार प्रशिक्षण स्कूल में विद्यार्थियों की संध्या 240 तथा प्रशिक्षण कॉलेज में 200 होनी चाहिए।
3. संस्थाओं का स्थान (Location of institution):- कुछ प्रशिक्षण संस्थाएँ ग्रामीण क्षेत्रों में भी स्थापित करनी चाहिए।
4. अप्रशिक्षित अध्यापकों को प्रशिक्षित करना (To give training to untrained teachers)- अप्रशिक्षित अध्यापकों को प्रशिक्षित करने की योजना प्रान्तीय सरकार द्वारा बनाई जानी चाहिए। 40 वर्ष से अधिक या कम उम्र के अध्यापकों के लिए जो शिक्षण व्यवसाय से 5 साल से ज्यादा समय से जुडे हुए है लघु प्रशिक्षण कोर्स की व्यवस्था होनी चाहिए। उन अध्यापकों के लिए जिनकी शिक्षण सेवा पाँच साल से कम है, एक या दो वर्ष का पूर्ण प्रशिक्षण कोर्स अनिवार्य कर देना चाहिए।
5. पत्राचार शिक्षा (Correspondence Education):- प्रत्येक प्रान्त में पत्राचार शिक्षा के लिए कम से कम एक केन्द्र की स्थापना की जाए। यह केन्द्र राजकीय शिक्षा संस्थान में स्थापित करना चाहिए। सेवा पूर्व प्रशिक्षण तथा सेवाकालीन प्रशिक्षण का प्रबन्ध इन केन्द्रों द्वारा किया जाना चाहिए।

6. सांयकालीन या अंशकालीन पाठ्यक्रम (Evening or Teacher Education):- बड़े-बड़े शहरों में सांयकालीन और अंशकालीन कोर्स आरम्भ किए जाने चाहिए।

12.6 दसवीं पंचवर्षीय योजना और अध्यापक शिक्षा (Tenth five year Plan and Teacher Education)

दसवी पंचवर्षीय योजना (2002-2007) में इस बात पर जोर दिया गया है कि अध्यापक शिक्षकों तथा पाठ्यक्रम निर्माणकर्ताओं के लिए नए कोर्स तैयार किए जाए। नए कोर्स एवं योजना सेवापूर्व और सेवारत अध्यापक शिक्षा दोनों के लिए तैयार किए जाए। विशेष विद्यालयों में पढ़ाने वाले अध्यापकों के लिए विशेष कोर्स तैयार करने की आवश्यकता है। ग्रामीण प्रतिभाशाली बालको के लिए नवोदय विद्यालय स्थापित किए जाए। इन स्कूलों में पढाने वाले अध्यापकों को अच्छा वेतन देना चाहिए और इन्हें दो साल का विशेष बी0एड0 कोर्स का प्रशिक्षण देना चाहिए।

उच्च माध्यमिक स्कूल अध्यापक केवल एक ही विषय 'पढ़ाए जिसमें उन्होंने स्नातकोतर की उपाधि ले रखी है। इस स्तर पर पढ़ाने वाले अध्यापकों के लिए बी0एड0 डिग्री के अलावा 36 सप्ताह की अवधि का एक डिप्लोमा होना चाहिए जिसमें 18 सप्ताह का समय शिक्षण-अभ्यास के लिए हो।

अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सुधार लाने के लिए स्कूलों की क्रियात्मक सहभागिता जरुरी है। शिक्षण अभ्यास के दौरान स्कूल अध्यापकों द्वारा पाठों का निरीक्षण करके छात्राध्यापकों को निर्देशन एवं प्रतिपुष्टि दी जानी चाहिए इस कार्य के लिए उन्हें अतिरिक्त पैसा देना चाहिए। शिक्षण अभ्यास को प्रभावशाली बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा स्कूलों के प्राचार्या को प्रशिक्षण देना होगा। यह प्रशिक्षण दूरस्थ विधि द्वारा देना चाहिए।

अध्यापकों के लगातार व्यावसायिक विकास के लिए सेवापूर्व प्रशिक्षण कार्यक्रमों की अपेक्षा सेवारत कार्यक्रम ज्यादा महत्वपूर्ण है। इससे अध्यापक अपने ज्ञान तथा कौशलों का नवीनीकरण कर सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य करने वाले अध्यापकों को सेवाकालीन प्रशिक्षण की ज्यादा आवश्यकता है। इन कार्यक्रमों को दूरस्थ प्रणाली द्वारा प्रदान करके ज्यादा प्रभावशाली तथा कम खर्चीला बनाया जा सकता है। अध्यापकों के विकास के लिए सहपाठी प्रतिपुष्टि प्रणाली को शुरु किया जाए ताकि आपस में वे एक दूसरे की कमी को दूर कर सके।

भारत में राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद के पिछले दस वर्षा के कार्य ही अध्यापक शिक्षा की सफलता और असफलता की कहानी है। इसकी महत्वपूर्ण सफलता में शामिल है- बी0एड0 (दूरस्थ -शिक्षा) की अवधि को एक वर्ष से बढ़ाकर दो वर्ष करना। पिछले दस वर्षा मे राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् ने अध्यापक शिक्षा कोर्स के लिए निर्धारित किए गए मानको एवं नियमों में भी काफी परिवर्तन किया है। वर्तमान में परिषद द्वारा अध्यापकों की नियुक्ति योग्यता मे जो परिवर्तन किया गया है उसमें काफी भ्रांति है और यह संशोधन विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा बनाए गए नियमों के विरुद्ध है। परिषद की कार्य प्रणाली की गुणवत्ता में

सुधार लाने के लिए यह जरुरी है कि केन्द्रीय सरकार उन्हीं व्यक्तियों को परिषद का सदस्य बनाए जो अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में अनुभव एवं उचित व्यावसायिक योग्यता रखते है।

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद द्वारा निम्न शैक्षणिक कार्यो का आयोजन किया जाना चाहिए:-

1. विभिन्न स्तर की अध्यापक शिक्षा के अध्यापक प्रशिक्षकों के लिए मानक निर्धारित करना।
2. केन्द्रीय स्तर की विभिन्न संगठनों के स्कूल अध्यापकों तथा प्राचार्यो के लिए मानक निर्धारित करना।
3. विभिन्न स्तर की स्कूल शिक्षा के अध्यापकों तथा हैड के लिए प्रान्तीय स्तर पर मानक विकसित करने के लिए नियम तैयार करना।
4. राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर अध्यापक शिक्षा के लिए संसाधन केन्द्रों को स्थापित करना।
5. विभिन्न राज्यों एवं केन्द्रीयशासित राज्यों को संसाधन केन्द्रों की क्रियाओं के लिए दिशा निर्देश देना।
6. अध्यापक शिक्षा के उत्कृष्ट एवं नवाचार कार्यक्रमों को पहचानना।
7. विभिन्न क्षेत्रों में विशेषज्ञ अध्यापक शिक्षकों का रजिस्टर तैयार करना।
8. अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्यापक शिक्षा की गुणवता में सुधार लाने के लिए जरुरी है कि केन्द्रीय सरकार द्वारा एक समिति का गठन किया जाना चाहिए जो कानून द्वारा निर्धारित विभिन्न अध्यापक शिक्षण संस्थाओं में समन्वय स्थापित करे।

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने ग्याहरवीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) को भारतीय शिक्षा योजना का नाम दिया। इस पंचवर्षीय योजना में अध्यापक प्रशिक्षण एवं उनके व्यावसायिक विकास के कार्यक्रमों को मजबूत करने, अध्यापक शिक्षा की संयुक्त प्रणाली को बढ़ावा देने तथा उसे अनुसंधान तथा उच्च शिक्षण संस्थाओं के साथ जोड़ने पर बल दिया है। 11वी. पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत 1987 में भारत सरकार द्वारा संचालित एक योजना 'अध्यापक शिक्षा का सशक्तीकरण एवं पुनर्गठन (Strengthening and Reorganization of Teacher Education,SRTE) को मजबूत बनाने तथा उन्नत करने पर विचार विमर्श किया जाएगा।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Question)

1. आपके राज्य में अध्यापक शिक्षा कोन-कौन से मुख्य रोगों से पीडित है?
   What are the major ills from which teacher education is your state in suffering?
2. अध्यापक शिक्षा की गुणवता को सुधारने के लिए कोठारी आयोग ने क्या सुझाव दिए है?

What recommendations are given by Kothari commission for improving quality of teacher education?

3. अप्रशिक्षित अध्यापकों को वैसे प्रशिक्षित किया जा सकता है?
How training can be given to untrained teacher?

4. दसवी पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत अध्यापक शिक्षा में सुधार लाने के लिए क्या कदम उठाए गए।
What steps have been taken to improve teacher education during tenth five year plan?

12.7 सारांश
(Summary)

शिक्षा प्रगतिशील राष्ट्र की रीढ. है और अध्यापक शिक्षा पद्धति में विवर्तनी या अक्ष है। राष्ट्रीय एवं सामाजिक विकास के लिए यह जरुरी है कि अध्यापकों को सर्वोतम प्रशिक्षण प्रदान किया जाए, शिक्षा के पुननिर्ममाण में अध्यापक सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। अध्यापकों के लिए सेवापूर्व शिक्षा जितनी जरुरी है इतनी ही महत्वपूर्ण है सेवाकालीन शिक्षा क्योंकि एक अच्छा अध्यापक जीवन पर समर्पित विद्यार्थी रहता है। केवल यही व्यक्ति विद्यार्थियों को नवीन ज्ञान दे सकता है जो स्वयं जीवन भर सीखते रहने को तैयार हो। एन.सी.ई.आर.टी. एस.सी.ई.आर.टी., विस्तार सेवा विभाग, शिक्षण महाविद्यालयों द्वारा अध्यापक के लिए सैमीनार, कार्यशालाओं, सम्मेलनों आदि का आयोजन करना चाहिए।

आज भी अध्यापक शिक्षा प्रणाली काफी दोषपूर्ण है और उन कमियों को दूर करने के लिए विभिन्न शिक्षा आयोगों एवं समितियों ने अपने-अपने सुझाव दिए है। इनके द्वारा दिए गए सुझावों को अभी तक सही ढंग से लागु नहीं किया गया है। अध्यापक शिक्षा की हर कमी को दूर किया जाना अति आवश्यक है। शिक्षकों के उपर ही शिक्षा की उन्नति का भार है। वे इस मार को वहन करने में तब तक सफल नहीं हो सकते जब तक उनकी स्वयं की शिक्षा को प्रत्येक दोष से मुक्त करके आदर्श एवं समयानुकूल न बना दिया जाए। अध्यापक शिक्षा मूल्य उन्मुख होनी चाहिए ताकि हम भावी अध्यापकों में धार्मिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का विकास कर सके। प्रतिभाशाली व्यक्तियों को शिक्षण व्यवसाय की ओर आकर्षित करने के लिए उन्हें उचित वेतन देना चाहिए। माध्यमिक शिक्षा आयोग का यह कथन बिल्कुल सत्य है कि यदि शिक्षा को वास्तविक राष्ट्रीय निर्माण का कार्य बनाया जाना है, तो शिक्षकों की सेवा दशाओं में सुधार करना नितान्त आवश्यक है। केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्य सरकारों को अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं के लिए विशेष अनुदान देना चाहिए।

12.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Aggarwal J.C. and Gupta S. : Secondary Education and Management, Shipra Publication, 2008

Walia J.S. : Secondary Education and School Management, Ahim paul publishers, Jallandhar, 2007.

Yadav and Yadav : Indian Education System- Structure and problem. Tandon publication, Ludhiana, 1995.

Report of Secondary Education Commission, 1953 New Delhi, Ministry of Education.

Report of the Indian Education Commission, Educational and National Development, 1964-66, New Delhi, Ministry of Education.

Report of National Advisory Committee'Learning Without Burden,'1993, MHRD, New Delhi.

The National Policy of Education: Challenges in Education, 1986, MHRD.

इकाई-13

संवैधानिक दायित्व तथा माध्यमिक शिक्षा के लिए केन्द्र एवं राज्य का योगदान

(Constitution Obligations and Participation of Centre and State for Secondary Education)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

13.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

13.1 भारत में माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित संवैधानिक दायित्व (Constitutional Obligations related to Secondary Education in India)

13.2 भारतीय संविधान में माध्यमिक शिक्षा की धाराएँ (Provisions for Secondary Education in Indian Constitution)

13.3 केन्द्र तथा राज्य सरकार का माध्यमिक शिक्षा में योगदान (Participation of central and State Government in Secondary Education)

13.4 संवैधानिक रुप से 42वें संशोधन को लागू करना (Constitutional Implications of 42nd Amendment)

13.5 संवैधानिक प्रावधान तथा माध्यमिक शिक्षा में निर्दिष्ट परिवर्तन (Constitutional provisions and Designed changes in Secondary Education)

13.6 केन्द्र द्वारा प्रतिभूत योजनाएं (Centrally sponsored Schemes)

13.7 सारांश (Summary)

13.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

13.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर आप

1. भारत में माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित दायित्व को समझ सकेंगे।
2. शिक्षा एक संघीय विषय है या राज्य विषय इसकी व्याख्या कर सकेंगे।
3. भारतीय संविधान में माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित विभिन्न धाराओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
4. कमजोर श्रेणियों के लिए बनाई गई विशेष धाराओं का मूल्यांकन कर सकेंगे।
5. माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित केन्द्र तथा राज्य सरकारों के कार्यो का विश्लेषण कर सकेंगे।

6. माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकार की भूमिका के बारे में सुझाव दे सकेंगे।
7. माध्यमिक शिक्षा में केन्द्र तथा राज्य सरकारों के योगदान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझ सकेंगे।
8. माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए केन्द्र द्वारा प्रतिभूत योजनाओं पर विचार-विमर्श कर सकेंगे।

भारत प्रजातांत्रिक देश है। इसकी सरकार संसदीय रुप धारण किए हुए है। यह संसद सम्पूर्ण रुप से व्यस्क मताधिकार पर आधारित है। भारत का अपना एक संविधान हैं। यह एक ऐसा मसविदा है। जो प्रशासकीय संस्थाओं, देश के सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक विज्ञान का संचालन करता है। इसके अतिरिक्त यह संविधान शिक्षा सम्बन्धी विशेष रुप से माध्यमिक शिक्षा के विधान पर भी प्रभाव डालता है।

13.1 भारत में माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित संवैधानिक दायित्व (Constitutional Obligation related to Secondary Education in India)

भारतीय संविधान भारत की स्वतन्त्रता का र्चाटर- लोकतंत्र का एक अद्वितीय तथा दुर्लभ चार्टर है। क्योंकि यह भारत की पूर्ण अभिव्यक्ति का प्रतीक है और लोगों की आशाओं तथा संकल्पों को प्रकट करता है। इसलिए यह स्वाभाविक तथ्य है कि इस दस्तावेज में शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान मिले। शिक्षा से सम्बन्धित संवैधानिक प्रावधान प्रत्येक उस व्यक्ति के लिए है जो भारत के भावी नागरिकों की शिक्षा में रुचि रखता है। शिक्षा सम्बन्धी संवैधानिक उपबंध देश की शैक्षिक तथा सामाजिक समस्याओं को हल करने के लिए बनाए गए है। ये अत्यन्त महत्वपूर्ण व उपयोगी है।

संविधान की प्रस्तावना

(The Preamble of Our Constitution)

संविधान की प्रस्तावना की, शिक्षा नीतियों एवं कार्यक्रमों पर गहरी छाप है। इसमें लिखा है:- "हम भारतवासी दृढ संकल्प करते है कि भारत के प्रभुत्व संपन्न लोकतंत्रीय गणतंत्र बनाएंगे और इसके वासियों को-

न्याय (Justice)- सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक;

स्वतन्त्रता (Liberty)- विचार, अभिव्यक्ति, निश्चय, श्रद्धा तथा पूजा की;

समानता (Eqality)- अवसर तथा दर्ज की और सब में इसके संचार की;

मातृभाव (Fraternity)- व्यक्ति के दर्जे तथा राष्ट्र की एकता का भरोसा दिलाकर प्राप्त करने में सहायता करेंगे।

यहां यह बात उल्लेखनीय है कि मूल रुप से प्रस्तावना में प्रभुसत्ता सम्पन्न लोकतंत्रीय गणराज्य (Sovereign Democratic Republic) तथा राष्ट्र की एकता का ही उल्लेख किया गया था। परन्तु 42वें संशोधन द्वारा प्रभुसत्ता सम्पन्न लोकतंत्रीय गणराज्य में समाजवादी'

तथा धर्मनिरपेक्ष' शब्दों और राष्ट्र की एकता' के साथ 'अखण्डता' शब्द जोड़कर प्रस्तावना को अधिक व्यापक, स्पष्ट एवं सुपरिभाषित कर दिया गया है।

शिक्षा - संघीय एवं राज्य विषय

(Education- Both a] Union and a State Subject)

भारतीय संविधान के अनुसार शिक्षा केन्द्रीय विषय भी है और राज्य विषय भी। इसलिए माध्यमिक शिक्षा के विस्तार एवं विकास का दायित्व भी केन्द्र तथा राज्य दोनो पर है। 42वें संशोधन से पूर्व शिक्षा संविधान की 7वीं अनुसूची की सूची की प्रविष्टि 11 के अनुसार एक राज्य विषय था। प्रविष्टि 11 इस प्रकार है- शिक्षा' जिस में विश्वविद्यालय भी सम्मिलित हैं सूची I की 63,64,65 एवं 66 तथा सूची III की 25 प्रविष्टियों के प्रावधान के अंतर्गत। सन् 1921 से 1976 तक हमारे देश में शिक्षा एक राज्य विषय रही और इस पर राज्य शिक्षा मंत्री का सीधा नियंत्रण रहा। नए संवैधानिक संशोधन भी इसी ढांचे का ही अनुसरण करते है। अब केन्द्र सरकार सामान्य नीतियों का निर्माण करती है और निर्देशन एवं सहायता प्रदान करती है, परन्तु उन नीतियों का कार्यान्वयन राज्य सरकार करती है तथा राज्य में रहने वाले सभी लोगों के लिए शिक्षा की व्यवस्था करती है। अब 42वें संशोधन के पश्चात् शिक्षा को संयुक्त सूची में शामिल कर दिया गया है और केन्द्र तथा राज्य दोनों पर शिक्षा का दायित्व हो गया है।

13.2 भारतीय संविधान में माध्यमिक शिक्षा की धाराएं (Provisions for Secondary Education in Indian Constitution)

संविधान में माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित निम्नलिखित धाराएं महत्वपूर्ण है।

मौलिक अधिकार (Fundamental Rights)- भारतीय संविधान के भाग III में नागरिकों के लिए मौलिक अधिकारों की व्याख्या की गई है। शिक्षा से सम्बन्धित धारा का वर्णन इस प्रकार है।

1. **समानता का अधिकार (Rights to Equality)-** भाग 14 से 18 समानता के अधिकार से सम्बन्धित है। इसके अनुसार भारत में किसी भी राज्य में किसी भी व्यक्ति को समानता के अधिकार से वंचित नहीं किया जाएगा। सरकारी या सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों में दाखिले के मामले में किसी भी विद्यार्थी के साथ धर्म, रंग, जाति या भाषा के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाएगा।
2. **सभ्याचारिक और शैक्षणिक अधिकार (Cultural and Educational Rights)-** भाग 29 और 30 सभ्यता व संस्कृति और शिक्षा के अधिकारों से सम्बन्धित है। संविधान ने सभी अल्पसंख्यकों को चाहे भाषा या धर्म के आधार पर या अपनी इच्छा के अनुसार शिक्षा संस्थाए खोलने या शासन का अधिकार दिये है। राज्य किसी भी संस्था को सहायता देते समय यह भी नहीं देखता कि संस्था किसी अल्पसंख्यक प्रबन्धन में है या किसी भाषा या धर्म पर आधारित है।

निर्देशात्मक सिद्धांत

(Directive Principles)

माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित निर्देशात्मक सिद्धांत निम्नलिखित है:-

संविधान की धारा 46 के अनुसार संघीय सरकार अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के आर्थिक एवं शैक्षिक विकास के लिए उतरदायी है। धारा 46 का कथन है राज्य कमजोर वर्गो विशेषकर अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित वर्गो में शैक्षिक एवं आर्थिक हितों के विकास का विशेष ध्यान रखेगा और उन्हें सामाजिक अन्याय तथा सभी प्रकार के शोषण से संरक्षण प्रदान करेगा। धारा 46 के अंतर्गत कमजोर वर्ग में महिलाएं भी सम्मिलित है। इस प्रकार लड़कियों और महिलाओं का शैक्षिक विकास भारत सरकार का विशेष दायित्व बन जाता है।

धारा 15(3) के अनुसार महिलाओं तथा बच्चों की शिक्षा व्यवस्था करना भी राज्य का कर्तव्य है। धारा 15(1) के अनुसार राज्य केवल लिंग के आधार पर किसी भी नागरिक के विरुद्ध भेदभाव नहीं करेगा। विकलांग बच्चे समाज का कमजोर वर्ग है। अत: संविधान की धारा 46 के अंतर्गत इनका शैक्षिक एवं आर्थिक विकास संघीय सरकार का दायित्व बन जाता है। धारा 29 (ख) के अनुसार प्रत्येक नागरिक को राज्य द्वारा चलाई गई शिक्षा संस्था आदि में भेदभाव के बिना प्रवेश लेने का अधिकार है।

शिक्षा को समवर्ती सूची में शामिल करने के पश्चात् केन्द्र किसी भी राज्य मे अपनी नीति को सीधा कार्यान्वित कर सकता है। यदि केन्द्र ने समूचे देश में 10+2+3 की शिक्षा पद्धति स्थापित करने का निर्णय लिया है तो सभी राज्यों को इस का अनुसरण करना होगा। अब तक लगभग सभी राज्यों नें यह पद्धति स्वीकार कर ली हे।

मौलिक कर्तव्यों की धारा

(Provisions for Fundamental Duties)

संविधान में मौलिक कर्तव्य भी दिए गए है। धारा 51-ए में निम्नलिखित मौलिक कर्तव्य शिक्षा संस्थानों में दी जाने वाली शिक्षा से सम्बन्धित है:-

1. सामाजिक सेवाएं प्रदान करना जब इन सेवाओं के लिए कहा जाए।
2. अपनी सभ्यता की सुदृढ़ विरासत कों संभालना तथा सम्मान करना।
3. वैज्ञानिकता, मनुष्यता और बुराइयां दूर करने की भावना का विकास करना।
4. प्राकृतिक वातावरण जैसे जंगल, नदियां, झीले और जंगली जीवन की सुरक्षा व सुधार करना।
5. सभी भारतीयों में एकता व भाईचारे की भावना पैदा करना तथा धार्मिक क्षेत्रीय जातीय भेदभाव को दूर करना और महिलाओं के प्रति बुरी रीतियों को दूर करना।
6. यह शिक्षा संस्थाओं के हाथ में है कि वे इन कर्तव्यों का तथा मौलिक कर्तव्यों की महता को विद्यार्थियों के मस्तिष्क में बिठाए ताकि वे संविधान में लिखे कर्तव्यों का जीवन भर पालन कर सके।

कमजोर श्रेणियों के लिए विशेष धाराए

(Special Provision for the Weaker Sections)

धारा 29 के खंड 2 में राष्ट्र को सामाजिक या शैक्षिक रुप से पिछडी श्रेणियों या अनुसूचित जाति या कबीले के उत्थान के लिए कोई भी नई धारा बनाने पर रोक नहीं है। यह धारा राष्ट्र को कमजोर श्रेणियों के दाखिले के लिए आरक्षण के लिए समर्थन देती है। कुछ राज्यों में राजनैतिक समर्थन के लिए आरक्षण का सहारा लेना आरंभ कर दिया परन्तु सर्वोच्च न्यायालय में एक केस में फैसला किया कि आरक्षण 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। मंडल कमीशन ने भी इसकी अधिकतम सीमा 50 प्रतिशत कर दी है।

सुप्रीम कोर्ट ने कई मामलों में संविधान के अंतर्गत आरक्षण के लिए उसकी सीमा तथा स्वभाव के बारे में भी निर्णय लिया है। ये मामले शिक्षा मे आरक्षण से सम्बन्धित है। इनमें से एक महत्वपूर्ण के केरल राज्य का है। सुप्रीम कोर्ट ने फैसला किया कि कमजोर श्रेणियों के लिए आरक्षित सीटें केवल उन्हीं विद्यार्थियों को दी जानी चाहिए जो इन जातियों से संबंध रखते है और यह पक्का कर लेना चाहिए कि यह सुविधा वास्तव में कमजोर श्रेणियों से सम्बन्धित विद्यार्थियों द्वारा ही प्राप्त की गई है। सुप्रीम कोर्ट ने 1985 में इस आरक्षण की समय सीमा 15 वर्ष निर्धारित की थी परन्तु यह अभी तक लाग है।

यह भी बताया जाता है कि संयुक्त राष्ट्र अमेरिका ने शिक्षा संस्थाओं में कमजोर श्रेणियां के लिए आरक्षण की कोई विशेष धारा नहीं बनाई है। जबकि कैलिफोर्निया की यूनिवर्सिटी ने एक निगम बनाया है जिसके अंतर्गत कुछ सीटें मैडिकल में काले लोगों के लिए आरक्षित थी। इस धारा में वॉक नामक एक गोरे विद्यार्थी ने चुनौती दी थी और अमेरिकन अदालत ने मैडिकल स्कूल की दाखिला नीति को बदल दिया और वॉक के अधिकार को सिबिल राईट एक्ट' के तहत सुरक्षित किया गया। अमेरिका में यह केस Affirmative Action के नाम से जाना जाता है।

भारतीय संविधान ने कमजोर श्रेणियों के लिए विशेष शिक्षा योजनाएं बनाई है। संविधान बनाने वालों ने पहले भारत में सामाजिक ढांचे का अध्ययन किया और फिर उस पर अपने सुझाव दिए। इन धाराओं को लाग होने से कमजोर श्रेणियों को बहुत मदद मिली।

धार्मिक शिक्षा

(Religious Education)

संविधान के भाग 28 में यह कहा गया है कि राज्य द्वारा चलाई जा रही किसी भी शिक्षण संस्था में धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाएगी, परन्तु जहां किसी ट्रस्ट ने संस्था का निर्माण किया है और वह धार्मिक शिक्षा प्रदान करना चाहती है तो वह कर सकती है। किसी भी सरकारी सहायता से चल रही शिक्षा संस्था में धार्मिक शिक्षा की मनाही है। धारा 28(3) के अनुसार, "किसी शिक्षा संस्था में, जिसे राज्य द्वारा स्वीकृति प्राप्त है या जिसे राज्य कोष से सहायता अनुदान मिलता है, पढ़ने वाले किसी व्यक्ति के लिए उस शिक्षा संस्था में दी जाने वाली धार्मिक शिक्षा में भाग लेना आवश्यक नहीं है। उस व्यवस्था में पूजा में शामिल होना जरुरी नहीं या उसके साथ लगे स्थान में जहां पूजा होती है जाना जरुरी नहीं है। यह धारा प्राईवेट संस्थाओं के बारे में कोई निर्देश नहीं देती। यह तो केवल कहती है-

1. वे संस्थाएं जिन्हें राज्य कोष द्वारा चलाया जाता है।

2. वे संस्थाएं जिन्हें राज्य द्वारा स्वीकृति प्राप्त है।
3. वे संस्थाएं जिन्हें राज्य कोष से सहायता मिलती है।
4. वे संस्थाएं जिन्हें चलाता तो राज्य है, परन्तु जिनकी स्थापना किसी ट्रस्ट द्वारा की गई है, धार्मिक शिक्षा देना चाहे तो दे सकती है।

संख्या (I) की अवस्था में किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा नहीं दी जा सकती। संख्या (2) और (3) की अवस्था में धार्मिक शिक्षा में उपस्थित होना ऐच्छिक है और संख्या (4)की अवस्था में कोई प्रतिबन्ध नहीं है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने कहा भी है, "धर्म निरपेक्ष राज्य के संविधान को सामने रखते हुए स्कूलों में किसी की इच्छा के बिना धार्मिक शिक्षा नहीं दी जा सकती। यदि विद्यार्थी किसी अन्य धर्म में श्रद्धा रखते हो तो प्रबन्धकों या अभिभावकों की स्वीकृति के बिना धार्मिक शिक्षा नहीं दी जा सकती। यह सिफारिश करते हुए हम इस बात पर बल देना चाहते है कि इस प्रकार के बुरे रुझान लाचारी, धार्मिक घृणा और कट्टरपन पैदा करते है। इसलिए स्कूलों में इन्हें उत्साहित न किया जाए।

संघीय क्षेत्रों में शिक्षा

(Education in the Union Territories)

संविधान की धारा 239 में लिखा है, 'यदि लोक सभा या कानून द्वारा कोई और प्रबंध न किया गया हो तो प्रत्येक संघीय क्षेत्र पर राष्ट्रपति का शासन, उस सीमा तक जहां तक वह उचित समझें, एक शासक द्वारा जिसे बह नियुक्त करेगा, चलाया जाएगा'। वास्तव में संघीय क्षेत्रों में शिक्षा केन्द्र के अधिकार क्षेत्र में आती है। अत: भारत सरकार संघीय क्षेत्रों में शिक्षा के लिए उतरदायी है।

आर्थिक तथा सामाजिक समायोजन

(Economic and Social Planning])

सूची (III) की एंट्री-20 (Entry 20 of list III i.e. concurrent list) का संबंध आर्थिक तथा समायोजन के साथ है जो कि केन्द्र तथा राज्य सरकारों की सांझी जिम्मेदारी है। आर्थिक व सामाजिक विकास का शिक्षा के साथ गहरा संबंध है। इसलिए भारत सरकार और राज्य सरकार को मिलकर शिक्षा के लिए राष्ट्रीय योजना बनानी चाहिए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. भारतीय संविधान के अनुसार शिक्षा संघीय सरकार का विषय है या राज्य सरकार का। कैसे?

   Education is union subject or state subject according to India Constitution.How?
2. भारतीय संविधान में कमजोर श्रेणियों के लिए विशेष धाराएं कौन-कौन सी है?

What are the special provisions for weaker section in Indian Constitution?

3. संविधान की धारा 28(3) में धार्मिक शिक्षा का क्या प्रावधान है?
What is the provision of religious education in the art 28 (3) of the contribution?

13.3 केन्द्र तथा राज्य सरकार का माध्यमिक शिक्षा में योगदान (Participation of central and State Government in Secondary Education)

भारतीय संविधान में लिखा है कि शिक्षा राज्यों का विषय है और केन्द्रीय सरकार का काम परामर्श देना है। अब यह एक वाद-विवाद का विषय बन गया है कि क्या शिक्षा के प्रति पूर्ण दायित्व राज्य सरकार का हो या इसकी जिम्मेदारी राज्य सरकार तथा केन्द्रीय सरकार दोनों की (साझी सूची में शामिल) हो। अभी-अभी शिक्षा को समवर्ती सूची में शामिल कर दिया गया है। आइए इस समस्या की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करे।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

(Historical Background)

1. **पहला काल (First period, 1773-1833)-** भारत सरकार ' स्थापना 1773 एक्ट के रेगुलेटिंग के अंतर्गत हुई, परन्तु शिक्षा के क्षेत्र में 1813 तक कुछ भी नहीं किया गया। सन् 1813 के चार्टर एक्ट के अनुसार यह स्वीकार किया गया कि शिक्षा का उतरदायित्व राज्य सरकार का है। उस समय शिक्षा एक प्रांतीय मामला कही जा सकती है जिसका दूर से इंग्लैंड के कोर्ट ऑफ डायरैक्टर्ज के साथ सह - सम्बन्ध था।
2. **दूसरा काल (Second period,1833-1870)-** 1833 के चार्टर ने एकात्मिक सरकार की स्थापना की और इसी वर्ष शिक्षा केन्द्र का विषय बन गई। शिक्षा का सम्पूर्ण उतरदायित्व भारत सरकार का हो गया। यह केन्द्रीकृत प्रणाली 1870 तक प्रचलित रही! जब प्रशासनिक कठिनाइयाँ बढ़ गई तो कुछ छोटी-छोटी शक्तियां समय-समय पर प्रान्तीय सरकार को सौंप दी गई, परन्तु शिक्षा केन्द्र का विषय ही रहा।
3. **तीसरा काल (Third Period, 1870-1921)** लार्ड मेयो के 1870 के सुधारों के अनुसार 9 विभागों का बजट बनाना तथा खर्च पर नियन्त्रण, शिक्षा सहित केन्द्रीय नियंत्रण से प्रांतीय नियंत्रण को सौंप दिया गया। दैनिक प्रशासन के उद्देश्य से शिक्षा एक प्रान्तीय विषय बन गई, परंतु अभी तक केन्द्रीय सरकार के पास शिक्षा के नियोजन तथा प्रशासन की बहुत सी शक्तियाँ रह गई। अब भी केन्द्र सरकार सम्पूर्ण देश के लिए शिक्षा नियम बनाता है और सामान्य प्रशासन का पथ प्रदर्शन

करता था। केन्द्रीय तथा प्रांतीय विधान सभाओं को शिक्षा से सम्बन्धित मामलों पर कानून बनाने का अधिकार था। भारत सरकार 1904 में भारतीय विश्वविद्यालय एक्ट पास कर सकती थी और नये विश्वविद्यालयों की स्थापना के लिए कानून बना सकती थी। इस काल में चाहे शिक्षा का दैनिक प्रशासन प्रांतीय सरकारों को सौंप दिया गया था, परन्तु भारत सरकार, नीति-निर्माण, अनुसंधान तथा प्रशासन, समन्वय, वित्तीय सहायता तथा जानकारी प्रदान करने का कार्य करती रही।

4. **चौथा काल (Fourth Period, 1921-1947)-** मांटेग्यू चेम्सफोर्ड (1918) के सिद्धांतों के अनुसार ब्रिटिश संसद द्वारा 1919 मे भारत सरकार एक्ट (Govermemnt of India Act) पास किया गया। इस एक्ट के लागू होने से केन्द्रीय सत्ता की परिस्थिति बदल गई। यह निर्णय किया गया कि सरंक्षण के अतिरिक्त शिक्षा को प्रांतीय विषय बना दिया जाए और इसका नियंत्रण भारतीय मंत्रियों के हवाले कर दिया जाए नए विश्वविद्यालयों की स्थापना, संविधान तथा कार्य, अपने प्रात के बाहर किसी विश्वविद्यालय का अधिकार क्षेत्र, कलकता विश्वविद्यालय से संबधित हालात तथा बंगाल में माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन (केवल सुधारों के लागू होने से 5 वर्ष तक) पर कानून बनाने की शक्ति केन्द्रीय विधान सभा के लिए आरक्षित की गई। इस निर्णय के फलस्वरुप यह फैसला किया गया कि प्रांतों में भारत सरकार का शिक्षा पर कोई नियंत्रण न हो। इसका परिणाम यह हुआ कि 1921 के बाद केन्द्र की शिक्षा में रुचि समाज हो गई शिक्षा का केन्द्रीय ब्यूरो बंद कर दिया गया तथा प्रांतों की शिक्षा विकास के लिए दी जाने वाली सहायता समाप्त हो गई।

हार्टोग कमेटी ने यह अनुभव किया कि भारत सरकार का शिक्षा से संबंध तोडना दुर्भाग्यपूर्ण रहा। प्रांतीय सरकारों ने किया कि ऐसा करना एक भूल है और केन्द्र का शिक्षा के क्षेत्र में भाग लेना आवश्यक है। इस भावना के केन्द्रीय सरकार ने अपने पहले निर्णय पर पुन: विचार किया और निम्नलिखित परिवर्तन किए:-

- भारत सरकार ने केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड (Gentral Advisory Board of Education) को 1935 में पुन: स्थापित किया जिससे वह शिक्षा पर अच्छी प्रकार से नियंत्रण रख सके व प्रांतीय सरकार को शिक्षा के क्षेत्र में परामर्श दे सके।
- 1937 में केन्द्रीय शिक्षा ब्यूरो (The Central Bureau of Education) की सिफारिश पर केन्द्रीय शिक्षा बोर्ड को पुन: स्थापित किया गया।

पुराने शिक्षा विभाग को भी 1946 में पुन: चालू किया गया।

इस प्रकार 1923 से 1935 के बीच शिक्षा के जो कार्य खटाई में पड़ गए थे, वे फिर शुरु हो गए। 1935 से 1947 के मध्य भारत सरकार का योगदान पुन विस्तृत हो गया। शिक्षा में एक बार फिर भारत सरकार का कार्य बढ़ गया। समन्वय कार्य, प्रकाशन कार्य तथा जानकारी देने का काम आरंभ हो गया।

संघीय सरकार के कार्य (Functions of the Union Government)- श्री जे0पी0 नायक ने संघीय सरकार के शिक्षा संबंधी मुख्य तथा समवर्ती कार्यो को निम्नलिखित प्रकार से प्रस्तुत किए है।

1. मुख्य कार्य (Exclusive Functions)
   - अन्य देशों के साथ शैक्षिक तथा सांस्कृतिक संबंध जोड़ना।
   - राज्य सरकार तथा केन्द्र की शैक्षिक गतिविधियाँ एकीकरण कर उनमें एकरुपता लाना।
   - सूचनाओं एवं विचारधाराओं को इक्कठा कर उनका प्रसारण करना।
   - केन्द्र द्वारा संघीय राज्यों में शिक्षा का प्रबंध करना।
2. समवर्ती कार्य (Concurrent Functions)
   - वैज्ञानिक अनुसंधान
   - तकनीकी शिक्षा
   - हिन्दी भाषा का प्रचार, प्रसार और उसकी समृद्धि
   - राष्ट्रीय संस्कृति का संरक्षण तथा विकास
   - विकलांगों का शिक्षण
   - शैक्षिक अनुसंधान का विकास
   - जन-साधारण की सांस्कृतिक रुचियों के प्रति उतरदायित्व
   - प्रगतिशील व्यापारिक एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण
   - शिक्षा के लिए केन्द्रीय संस्थानों की स्थापना
   - उचित कार्यक्रमों के माध्यम से राष्ट्रीय एकता को शक्तिशाली बनाना।

क्या शिक्षा को समवर्ती सूची में रखा जाए?

(Should Education be in the Concurrent List?')

इस बात पर अत्यधिक विचार-विमर्श चल रहा है कि शिक्षा को राज्य का विषय रहने दिया जाए या केन्द्रीय सरकार शिक्षा ढांचे के आयोजन तथा संगठन की जिम्मेदारी लें।

शिक्षा को समवर्ती सूची में शामिल करने के पक्ष में तर्क

(Arguments in favour of including education in the Concurrent List)

1964 में श्री एम0सी0 छागला का यह मानना था कि शिक्षा को समवर्ती सूची में रखा जाए। इसका अर्थ यह है कि शिक्षा केन्द्र तथा राज्य दोनों को सांझी जिम्मेदारी हो। श्री पी0एन0 कृपाल और डा0 वी0एस0 झा का मत है कि संपूर्ण शिक्षा को समवर्ती सूची में शामिल किया जाए। इसके निम्नलिखित कारण प्रदान किए गए:-

1. स्वतन्त्रता के बाद के वर्षो के अनुभव से यह ज्ञात होता है कि केन्द्र में उचित शक्ति के अभाव के कारण राष्ट्रीय नीतियां संतोषजनक रुप से लागू नहीं हो पाई है।
2. महत्वपूर्ण आयोगों की सिफारिशों को असली रुप नहीं दिया गया। वे केवल फाइलों तक ही सीमित रह गई।

3. शिक्षा मंत्रियो, सचिवों तथा सार्वजनिक शिक्षा डायरेक्टरों के सम्मेलन में सर्वसम्मति से पास किए गए प्रस्तावों को क्रियात्मक रुप नहीं दिया गया।

4. केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड तथा दूसरी कमेटियों के सुझावों तथा फैसलों को भी क्रियात्मक रुप नहीं दिया गया। इनका कारण केन्द्रीय सरकार के पास वैधानिक शक्ति का ना होना था।

इसलिए इनका विचार है कि संघीय सरकार को शिक्षा क्षेत्र में कानूनी शक्ति दी जाए जो विषयों की समवर्ती सूची में प्रकट हो।

श्री जे0पी0 नायक ने शिक्षा को सांझी सूची में शामिल करने के लिए निम्न तर्क दिए हैं:-

1. यह तर्क दिया जाता है कि जब तक केन्द्र को शिक्षा की योजना बनाने का अधिकार न दिया जाए उस समय तक आर्थिक तथा सामाजिक समायोजन, जिसका दायित्व सरकार पर है, सफलतापूर्वक नहीं चलाया जा सकता।
2. यह दावा किया जाता है कि शिक्षा नीति राज या स्थानीय के स्थान पर राष्ट्रीय विषय है और चाहे इसका प्रशासन राज्यों के सुपुर्द हो, परन्तु राज्य की नीति के महत्वपूर्ण निर्णय केन्द्र को लेने चाहिए।
3. यह संकेत दिया गया है कि यह केन्द्र की मूलभूत जिम्मेदारी है कि वह देश के सभी भागों में सामाजिक सेवा। का समान स्तर रखे क्योंकि शिक्षा सभी सामाजिक सेवाओं में श्रेष्ठ है, इसलिए केन्द्र को देश के सभी बच्चों को शिक्षा के समान अवसर देने चाहिए। यह तभी संभव है जब शिक्षा केन्द्रीय आयोजन तथा नियंत्रण के अधीन हो।

- राज्यों में नेतृत्व सामान्य से कम प्रभावशाली है। इसलिए केन्द्र को इस पर प्रभावी नेतृत्व का प्रबंध करना चाहिए।
- केन्द्र लोकसभा के समक्ष उस वित्त के लिए जो राज्य सरकारों को विकास के लिए दिया जाता है, जवाबदेय है और केन्द्र इसके लिए तब तक उत्तरदायी नहीं हो सकता, जब तक बह इसे लागू न करे।

इस प्रकार जे0पी0 नायक ने संविधान में संशोधन करके शिक्षा को समवर्ती सूची में रखने की सिफारिश की। इस दृष्टिकोण को लोकसभा के प्रत्येक अधिवेशन में समर्थन मिला तथा अब शिक्षा को समवर्ती सूची में शामिल कर दिया गया है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. क्या शिक्षा को समवर्ती सूची में रखा जाए? वर्णन कीजिए।
   Should education be in the concurrent list? Discuss
2. मध्यमिक शिक्षा के विकास में केन्द्र तथा राज्य सरकारों की भूमिका के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

Explain in brief the historical background of the participation of central and state government in the development of secondary education।

3. संघीय सरकार के मुख्य कार्य कौन-2 से है?

What are the exclusive functions of the Union Government?

शिक्षा राज्य का विषय

(Education-A State Subject)

शिक्षा को राज्य का विषय बनाने के लिए तर्क

(Arguments in favour of Education as a State Subject)

ऊपर दिए गए दृष्टिकोण के विरोध में विचारकों का एक समूह है जो इसके दूसरे पक्ष में जाना पंसद करता है और वह भी विरोध में। उनका सुझाव है कि शिक्षा राज्य का विषय होना चाहिए। उनका तर्क है-

1. सामान्य तौर पर प्रजातांत्रिक आधार पर विकेन्द्रीकरण होना चाहिए।
2. यह केन्द्रीकरण तुरंत लाभ प्रदान करता है, परन्तु बाद में हानिकारक होता है क्योंकि यह राज्य सरकारों के आत्म-विश्वास, साधन, उतरदायित्व तथा उनकी कुशलता को भी नष्ट कर देता है।
3. शिक्षा का विकेन्द्रीकरण प्रत्येक भाषायी अल्पमत वर्ग को अपनी संस्कृति की संभाल करने तथा अपने ढंग से उन्नति करने के अवसर प्रदान करता है।
4. शिक्षा का केन्द्रीकरण हर दफ्तरी को लाल फीताशाही बना देगा और इस प्रकार यह जनता के स्वास्थ्य संपर्क से वंचित हो जाएगा!

कोठारी आयोग शिक्षा के टुकडे करने के पक्ष में नहीं है। वह नहीं चाहता कि एक टुकडे को समवर्ती सूची में रखा जाए और दूसरे को राज्य सूची में। चाहें परिस्थितियां कुछ भी हो इसे एक पूर्ण इकाई समझा जाना चाहिए। आयोग के अनुसार शिक्षा राज्य का विषय रहना चाहिए। उन्होंने इसके लिए निम्नलिखित तर्क दिए:-

1. हमारे देश में शिक्षा को जो दर्जा प्रदान किया गया है वह शायद सर्वोतम हैं क्योंकि यह उतेजक परन्तु बाध्यक प्रकार का केन्द्रीय नेतृत्व प्रदान करता है।
2. समवर्ती सूची में शिक्षा को शामिल करने से प्रयोग में लाचक और स्वतन्त्रता के स्थान पर अवांछित केन्द्रीयकरण और कठोरता आ सकती है।
3. आयोग को यह निश्चय हो गया है कि वर्तमान संवैधानिक प्रबंध में शिक्षा में उपायुक्त रुप से कार्य करने बाली केन्द्र राज्य साझेदारी की काफी गुजांइश है और अभी तक इसकी पूर्ण रुप से व्याख्या नहीं की गई है।

कोठारी आयोग ने इन सभी बातों पर विचार करने के पश्चात सिफारिश की है कि शिक्षा का विकास करने और एक राष्ट्रीय नीति बनाने के लिए संविधान द्वारा किए गए नये प्रबंध का पूर्ण रुप से उपयोग करना होगा।

शिक्षा - संघीय सरकार का विषय (Education-Federal Government Subject)

शिक्षा का उतरदायित्व संघीय सरकार का होने के पक्ष में तर्क

(Arguments in favour or Education as a responsibility of Federal Goverments)

विचारकों का एक तीसरा दल यह सिफारिश करता है कि संघीय सरकार को एक शक्तिशाली और कुशल मार्गदर्शन का प्रबंध करना चाहिए जो कि उतेजक परंतु बाधक न हो। शिक्षा में यह मार्गदर्शन तीन ढंगों से संभव हो सकता है:-

- विचारों द्वारा
- कर्मचारियों द्वारा, तथा
- कार्यक्रमों द्वारा

1. **विचारों द्वारा केन्द्रीय नेतृत्व (Central Leadership through ideas)-** केन्द्रीय नेतृत्व का प्रबंध दो विधियों से किया जा सकता है।
   - अनुसंधान के विकास द्वारा तथा
   - जानकारी के आदान प्रदान के द्वारा

2. **कर्मचारियों द्वारा मार्गदर्शन (Central Leadrship in personnel)-** इसका प्रबंध तीन विधियों से किया जा सकता है।
   - केन्द्र का यह उतरदायित्व है कि वह सलाहकार सेवा का प्रबंध करे जो सरकार को सभी मामलों में सलाह तथा सहायता दे सके।
   - केन्द्र का यह भी कर्तव्य है कि वह शिक्षा प्रशासन में विस्तृत व्यावसायिक प्रशिक्षण का प्रबंध करे। इसके लिए सैमिनार वर्कशाप, विशेष प्रशिक्षण या रिफ्रैशर कोर्स और आवश्यक साहित्य के प्रकाशन का प्रबंध करे।
   - संघीय सरकार का यह भी उतरदायित्व है कि वह अच्छे अध्यापकों का प्रबंध करे जो राज्य सरकार को अध्यापकों के वेतन, सेवा की परिस्थितियों, आध्यात्मिक शिक्षा में प्रयोग करने योग्य आदि करने को धारण करने में सलाह और सहायता दे।

3. **कार्यक्रमों द्वारा शिक्षा में मार्गदर्शन- (Central Leadership in Education programme)-** कार्यक्रमों द्वारा शिक्षा में केन्द्रीय मार्गदर्शन का प्रबंध प्रयोगात्मक प्रोजेक्टों द्वारा किया जा सकता है।

इस प्रकार यदि केन्द्रीय सरकार विचारों, कर्मचारियों तथा कार्यक्रमों द्वारा कुशल व्यवसायिक मार्गदर्शन का प्रबंध कर ले तो राज्य सरकारें वहीं करेगी जो संघीय सरकार की इच्छा होगी और राज्यों के लिए यही प्रेरणा संवैघानिक शक्ति के अधीन बाधा से अच्छी होगी।

13.4 संवैधानिक रुप से 42वें संशोधन को लागु करना (Constitutional Implicational of 42nd Amendment)

1. **राज्य सरकार तथा केन्द्रीय सरकार की सांझेदारी (Partnership of Centre and Govt.)-** भारतीय संविधान का भाग 246(2) यह संकेत देता है कि भारतीय खंड (3)

में विधानसभा और खण्ड (1) के विषय में किसी भी राज्य सरकार के पास 7वीं श्रेणी में सूची 3 के अनुसार किसी भी मामलें में कानून बनाने का अधिकार है। इसका अर्थ यह हुआ कि विधान सभा और राज्य सरकार दोनों शिक्षा नीतियां बनाने में बराबर के साझेदार है।

2. **राज्यों के उपर केन्द्र की सर्वोच्चता (Supremacy of Union over States)-** धारा 254 केन्द्र को शिक्षा के साथ-साथ अन्य क्षेत्रों में कानून बनाने के संबध में राज्यों पर सर्वोच्चता प्रदान करती है।

3. **केन्द्र की निर्देशात्मक शक्तियाँ (Directing powers of the Union)-** शिक्षा को जब से समवर्ती सूची में शामिल किया गया है तब से केन्द्र को यह अधिकार मिल गया कि वह किसी भी राज्य में अपनी नीति को सीधे ही कार्यान्वित कर सकता है। यदि केन्द्र यह चाहे कि सम्पूर्ण भारतवर्ष में 10+2 की प्रणाली को स्कूल स्तर पर लागू किया जाना चाहिए तो सभी राज्यों को इसका अनुसरण करना होगा। आज तक लगभग सभी राज्यों ने इसी शिक्षा पद्धति का क्रियान्वन किया हुआ है।

4. **केन्द्र की कार्यकारी शक्तियाँ (Exclusive Powers of the Union)-** धारा 257 के अंतर्गत केन्द्र को राज्यों के निर्देश देने की कार्यकारी शक्तियां प्रदान की गई है। राज्यों के पास केन्द्र की कार्यकारी शक्तियों में बाधा बनने का अधिकार नहीं है।

5. **राष्ट्रीय संस्थाओं की शक्ति (Power of National Institutions)-** विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद जैसी राष्ट्रीय संस्थाओं और केन्द्रीय शिक्षा परामर्श बोर्ड जैसे राष्ट्रीय निकायों को सभी राज्यों में शिक्षा के स्वरुप के निर्माण की उच्च शक्तियां प्राप्त है।

इस प्रकार दिसम्बर, 1976 तक शिक्षा राज्य विषय रही परन्तु संविधान के 42वें संशोधन, जो 11 नवम्बर 1976 को संसद द्वारा पारित कर दिया गया और 18 दिसम्बर 1976 को जिस पर राष्ट्रपति ने हस्ताक्षर कर दिए, ने स्थिति ही बदल दी। इस संशोधन के परिणामस्वरुप शिक्षा समवर्ती सूची' में आ गई और केन्द्र तथा राज्य दोनों को शिक्षा का दायित्व सौंप दिया गया। किसी नीति या कार्यवाही पर असहमति होने की स्थिति में केन्द्रीय सरकार के अधिकारी को अधिक महत्व दिया जाएगा। धारा 246 के अनुसार केन्द्रीय सरकार और राज सरकार, दोनों को शैक्षिक नीतियां बनाने में बराबर का साझीदार बना दिया गया है। धारा 254 के अनुसार शिक्षा के किसी भी क्षेत्र से सम्बंधिन्त कानून बनाने में राज्यों के उपर संध को उच्चता प्रदान की गई है। धारा 257 के द्वारा राज्यों को निर्देशन देने के लिए संघ को कार्यकारी अधिकार प्रदान किए गए है। राज्यों के अधिकार उस हद तक सीमित है जिस तक संघ के कार्यकारी अधिकारों के प्रयोग में उनके कारण बाधा या हानि न हो।

अत: अनुच्छेद 257 का अर्थ यह है कि संघ राज्य-सरकार की शैक्षिक नीतियों की संरचना और निर्देशन करता रहेगा। सर्वप्रथम शैक्षिक नीतियों, शिक्षा-माध्यम भाषा की विधि, विविध पाठ्यक्रमों की अवधि, अध्यापक वर्ग, प्रयोगशालाओं, पुस्तकालयों, पद्धतियों के मूल्यांकन एवं इसी प्रकार की बातों का राष्ट्रीय स्तर पर विचार-विमर्श और निर्णय होता है, तत्पश्चात्

राज्य के विविध शिक्षा संबंधी अधिकारियों को उन्हें क्रियान्वित करने के लिए निर्देश दिए जाते है। शिक्षा के स्तर को निर्धारित किया जाता है और फिर उन सभी नियमों का अनुसरण कराया जाता है जो सबके लिए अपनाए जाने वाले है।

संघीय सरकार को कुछ संवैधानिक शक्तियां प्राप्त है और वह प्रत्येक राज्य के लिए कई पहलुओं से पथ प्रदर्शन करती है। प्राय: शिक्षा सम्बन्धी निर्णय जैसे हिन्दी को राज-भाषा माना गया है, राज्य के प्रतिनिधियों द्वारा लिया गया निर्णय सभी राज्य सरकारों के लिए मान्य होता है। फिर भी संवैधानिक एंव आर्थिक आधार पर शिक्षा मंत्रालय द्वारा लिए गए निर्णय के मानने के लिए राज्य सरकार बाध्य होती है। केन्द्र द्वारा परिचालित कई योजनाओं का संबंध राज्य-सरकारों के साथ आर्थिक आधार पर होता है और इसी आर्थिक सुत्रबद्धता के कारण सरकार को केन्द्र की प्रत्येक बात मानने को बाध्य होना पडता है। योजना के क्षेत्र में, योजना आयोग संबंधी कुछ अति दीर्घ और कुछ अनातिदीर्घ योजनाएं बनाता है। वर्तमान कार्य-विधि में सुधार के लिए मंत्रालय समय-समय पर आयोगों की नियुक्ति करता है ताकि विशेष निर्देशन मिले। इस आधार पर माध्यमिक शिक्षा आयोग, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, राज-भाषा आयोग, भारतीय शिक्षा आयोग आदि के नाम लिए जा सकते है। यह उपसमितियों की नियुक्ति करके शिक्षा संबंधी कार्यो के संबध में पथ-प्रदर्शन करता है।

13.5 संवैधानिक प्रावधान तथा माध्यमिक शिक्षा में निर्दिष्ट परिवर्तन (Constitutional Provisions and Designed Changes in Secondary Education)

संवैधानिक प्रावधान के अनुसार माध्यमिक शिक्षा को भी समवर्ती सूची में शामिल किया गया है। अन्य शब्दों में, इस क्षेत्र में संघीय सरकार तथा राज्य सरकार को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। जैसा कि इस इकाई के भाग 134 में यह वर्णन किया गया है कि किस प्रकार संविधान के 42वे संशोधन ने शिक्षा के क्षेत्र में राज्य सरकार तथा केन्द्र सरकार के संबधों को महत्वपूर्ण व अर्थपूर्ण बना दिया है। माध्यमिक शिक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका राज्य सरकार की है क्योंकि इसमें गुणात्मक व संख्यात्मक सुधारों के लिए सरकार ही उतरदायी है और संघीय सरकार की भूमिका सीमित है। माध्यमिक शिक्षा में केन्द्र सरकार अपनी भूमिका माध्यमिक एक उच्च शिक्षा विभाग तथा मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार द्वारा पूरी करती है।

1. मंत्रालय माध्यमिक शिक्षा पर समितियां व आयोगों की स्थापना करता है जैसे माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) शिक्षा आयोग (1964-66) की स्थापना माध्यमिक शिक्षा के सभी पहलुओं का अध्ययन करने के लिए की गई।
2. शिक्षा का केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड सबसे उच्च विभाग है जिसके द्वारा समय-समय पर मंत्रालय को परामर्श दिया जाता है। यह माध्यमिक शिक्षा के विभिन्न पक्षों के विकास के लिए विभिन्न समितियों को नियुक्त करता है। उदाहरण के लिए सी०ए0
3. बी0ई0 समिति (2004-05) की नियुक्ति माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण पक्ष पर कार्य करने के लिए की गई।

4. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान प्रशिक्षण परिषद (NCERT) मानव संसाधन विकास मंत्रालय का शैक्षणिक अंग है।

5. राष्ट्रीय शैक्षिक योजना तथा प्रशासन संस्थान (NIEPA) के द्वारा शैक्षिक प्रशासकों, योजना निर्माताओं तथा पर्यवेक्षकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का संगठन करता है। इसे अगस्त 2006 में स्वायत विश्वविद्यालय घोषित किया गया है और अब इसे शैक्षिक नियोजन प्रशासन के राष्ट्रीय विश्वविद्यालय (NUEPA) के नाम से जाना जाता है।

6. माध्यमिक शिक्षा का केन्द्रीय बोर्ड माध्यमिक शिक्षा के हर पहलू के विकास के लिए कार्य करता हे।

7. नवोदय विद्यालय समिति के द्वारा नवोदय विद्यालयों से सम्बन्धित निर्णय किए जाते है।

8. केन्द्रीय विद्यालय संगठन के द्वारा केन्द्रीय विद्यालयों पर नियंत्रण रखा जाता है।

13.6 केन्द्र द्वारा प्रतिभूत योजनाएँ (Centrally Sponsored Schemes)-

केन्द्र समय समय पर माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए विभिन्न योजनाएं बनाता है जिससे सभी राज्यों में माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों का विकास हो सकें उनमें से कुछ निम्नलिखित है:-

1. विज्ञान प्रयोगशालाओं का सुधार
2. स्कूली शिक्षा में पर्यावरण अध्ययन को शामिल करना।
3. योग शिक्षा को बढ़ावा
4. जनसंख्या शिक्षा योजना
5. स्कूलों में कम्पयूटर शिक्षा एवं साक्षरता
6. शैक्षिक तकनीक
7. कम्पयूटर शिक्षा योजना

इस प्रकार केन्द्र तथा राज्य सरकारों के आपसी संबंधों से ही माध्यमिक शिक्षा का विकास संभव है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. संविधान में 42वें संशोधन के अनुसार केन्द्र की निर्देशात्मक शक्तियां क्या है?
   What are the directing powers of the Union according to 42nd amendment in the Constitution?
2. शिक्षा को राज्य का विषय क्यों बनाया जाना चाहिए?
   Why education should be a state subject?
3. शिक्षा संघीय सरकार का विषय होना चाहिए। क्यों?
   Education should be a federal government subject.Why?

4. संवैधानिक प्रावधानों से माध्यमिक शिक्षा में क्या निर्दिष्ट परिवर्तन आए?
What were the designed changes in secondary Education according to constitutional provisions?

13.7 सारांश
(Summary)

संविधान की भूमिका मे न्याय, स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व का वर्णन है, परंतु इनका तब तक कोई महत्व नहीं जनता को शिक्षित न किया जाए। संविधान में वर्णित मौलिक अधिकारों में से एक अधिकार है- शिक्षा का अधिकार,, जिसके बिना आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक विकास संभव नहीं है।

भारत के संविधान में अनुसार शिक्षा केन्द्र तथा राज्य दोनों का एक विशेष विषय है। इसके प्रचार एवं प्रसार के लिए केन्द्र और राज्य दोनों उत्तरदायी है। केन्द्र एवं राज्य का यह कर्तव्य है कि वह इस बात का ध्यान रखे कि प्रत्येक नागरिक को अपना कर्तव्य निभाने के लिए कहां तक ज्ञान, कौशल और अभिरुचि प्रदान किए जा रहे है। इसके अतिरिक्त हमारे संविधान में कई ऐसी धाराएं, अनुच्छेद और उपधाराएँ हैं जो प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रुप से यह बतलाती है कि शिक्षा का उत्तरदायित्व केन्द्र तथा राज्य दोनों पर है। प्रत्येक नागरिक को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है और राज्य सरकार के लिए यह अनिवार्य है कि वह इसके लिए उपयुक्त साधन जोड़े।

भारत के संविधान की अनुसूचि III की प्रविष्टि 25 (समवर्ती सूची का समवर्ती खण्ड) में कहा गया है कि व्यावसायिक एवं उद्योग संबंधी एवं तकनीकी प्रशिक्षण केन्द्र तथा राज्य सरकार दोनों की मिली जुली जिम्मेदारी है। शैक्षिक कार्यक्रमों को गतिविधि देने के लिए प्रत्येक राज्य के अपने अपने प्रशासकीय अधिकारी है। सरकार ने अनुसूचित जातियों को प्रत्येक स्तर पर शिक्षा देने का कार्यभार अपने उपर लिया है। उन्हें वजीफे दिये जाते है, उनके लिए छात्रावास बनाए जा रहे है तथा उन्हें प्रत्येक प्रकार की आर्थिक सहायता दी जाती है। यह भी सरकार का कर्तव्य है कि वह शिक्षा संस्थाओं के लिए अनुदान का प्रबंध करे। अनुच्छेद 282 में कहा गया है कि संघ या राज्य किसी भी सर्वमान्य हित के लिए अनुदान दे सकता है।

अत: माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकारें मिलजुल कर विभिन्न प्रकार की योजनाएं बनाती है। परन्तु अधिक भार राज्य सरकारों का है तथा केन्द्रीय सरकारों का नियोजन सीमित है।

13.8 संदर्भ सूची
(Bibliography)

1- Govt, of India, Ministry of Education, Report of the Education Commission, Education and National Devlopment; 1964-66

2- Subhash C, Kashyap (ed.): perspectives on the Constitution, Shipra, Delhi 1993.

3- Subhash C, Kashyap (ed.): Basic Counstitutional Values, Ajanta Delhi,1994

4- Subhash C, Kasyap: The Constitution of India Taxmann New Delhi,2000.

5- Subhash, C, Kashyap, D.D.Khanna and W. Kneek(ed.): Renewing the Constitution, Shipra Publication, Delhi 2000.

इकाई-14

माध्यमिक शिक्षा में निजीकरण

(Privatization in Secondary Education)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

14.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

14.1 निजीकरण का अर्थ (Meaning of privatization)

14.2 निजी शिक्षण संस्थाएं (Private Educational Institutions)

14.3 पब्लिक स्कूल (Public School)

14.4 माध्यमिक स्कूलों का निजीकरण-विवेचनात्मक दृष्टिकोण (Privatization of Secondary Schools- Critical Approach)

14.5 माध्यमिक स्तर पर निजी स्कूलों का भविष्य (Future of private Schools at Secondary Level)

14.6 सारांश (Summary)

14.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

14.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर आप

- निजीकरण के अर्थ व महत्व से अवगत होंगे।
- माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के निजीकरण के प्रभाव को समझ सकेंगे।
- निजी विद्यालयों की विशेषताओं की जानेगें और इनके गुणों / विशेषताओं के आधार पर अन्य विद्यालयों की स्थिति सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगे।
- भारत में निजी विद्यालयों के शैक्षिक योगदान से अवगत होंगे।
- शिक्षा के निजीकरण के विभिन्न पहलुओं के विषय में जानेंगे और उनका विवेचनात्मक मूल्यांकन कर सकेंगे।
- निजी विद्यालयों तथा सरकारी विद्यालयों की उपलब्धियों की तुलना कर सकेंगे।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद (Article) 45 के अन्तर्गत 14 वर्ष की आयु तक बालक-बालिकाओं को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करना भारत सरकार का उतरदायित्व है। अत: निजीकरण की बात प्राथमिक शिक्षा पर लागू नहीं होती। परन्तु माध्यमिक और उच्च स्तर पर शिक्षा का निजीकरण किया जा सकता है।

14.1 निजीकरण का अर्थ
(Meaning of privatization)

निजीकरण का अर्थ है 'सरकार के नियंत्रण से बाहर रहकर कार्य करने की विधि"। यह व्यक्तिगत स्तर पर हो सकता है या संगठनात्मक, संस्थानात्मक या सामूहिक स्तर पर। निजीकरण शिक्षा में, व्यवसायों और कम्पनी के मामलों में हो सकता है।

सामान्यतः: निजीकरण' शब्द उस प्रक्रिया से संबंध रखता है, जा किसी देश में आर्थिक प्रक्रियाओं में सार्वजनिक क्षेत्र के निवेश को कम करती है।

टी0 थोमस (T.Thomas):- "हमें अपने निजी क्षेत्र में अधिक विश्वास रखना चाहिए और इसे पूरे विश्व में निजी जगत के साथ स्वतन्त्रता से सहयोग की अनुमति देनी चाहिए। हमें विश्व के लिए दरवाजे बंद नहीं करने चाहिए, ऐसा न हो कि हमारे लिए दरवाजे बंद कर दे। हमारे देश में व्यवसायिक, तकनीकी तथा प्रबंधन योग्यताएं अत्याधिक मात्रा में है, कि हम स्वतन्त्रता से विश्वासपूर्वक निजी क्षेत्र के सहयोग को बढा सकते है।"

अग्रवाल के विचारानुसार (Aggarwal's View):- 'साधारण शब्दों में निजीकरण का अर्थ है उद्यमों का स्वामित्व सरकारों अथवा सार्वजनिक क्षेत्र से निजी क्षेत्र या व्यक्ति या निजी कम्पनियों में बदल जाना इस स्वामित्व का हस्तांतरण पूर्ण सार्वजनिक इकाइयों अथवा उसके एक भाग के लिए हो सकता है।"

("privatization involves a change in the ownership of enterprise from the public or government to the private sector or individual / private companies. The transfer of ownership can be for the entire PSU, or a part of it".)

निजीकरण की विशेषताएं

(Characteristics of privatization)

- निजीकरण का अर्थ है किसी भी निजी क्षेत्र में उत्पादन क्रिया के क्षेत्र में निजी उद्यम है।
- निजीकरण निजी हाथों में सत्ता है।
- निजीकरण में व्यक्ति अथवा प्राईवेट कम्पनी को सत्ता होती है।
- निजीकरण निजी हाथों में सत्ता प्रबंधन है।
- निजीकरण सरकार के नियंत्रण से बाहर रह कर कार्य करने की विधि है।
- निजीकरण व्यक्तिगत स्तर पर हो सकता ह या संगठनात्मक, संस्थानात्मक या सामूहिक स्तर।
- निजीकरण शिक्षा व्यवसायों और कम्पनी के मामलों में हो सकता है।

आधुनिक युग में सरकार का झुकाव निजीकरण की तरफ है। शिक्षा के क्षेत्र में उच्च शिक्षा प्रदान करने में निजीकरण अच्छा विकल्प हो सकता है।

निजीकरण की आवश्यकता एवं महत्व

Need & Importance of Privatization)

देश की शिक्षा व्यवस्था के विकास में आज ही नहीं, स्वतन्त्रता से पहले भी निजीकरण की एक महत्वपूर्ण भूमिका रही है। ऐतिहासिक घटनाओं का विश्लेषण करने पर ज्ञात होगा कि भारत में प्राईवेट संगठनों की शिक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। धार्मिक संगठनों व मिशनरी संगठनों ने भी शिक्षा के प्रसार हेतु विशिष्ट प्रकार की शिक्षा के रुप में योगदान दिया है। 1654 में वुडस डिस्पेच में प्रथम बार व्यवस्थित रुप से अनुशंसा की गई कि जो प्राईवेट संगठन निर्धारित शती को मानते हुए शिक्षा में योगदान दे, उन्हें सरकार से सहायता अनुदान दिया जाए फलत: स्वतन्त्रता आंदोलन से पूर्व तक शिक्षा के प्रसार एवं स्तर उनयन में प्राईवेट संगठनों ने उल्लेखनीय योगदान दिया। आज भी कुछ राज्यों जैसे पश्चिमी बंगाल, उतर प्रदेश आदि में सरकार द्वारा संचालित विद्यालयों की तुलना में प्राईवेट संगठनों द्वारा संचालित विद्यालयों की संख्या बहुत अधिक है।

बड़े पैमाने पर असुधारात्मक सार्वजनिक क्षेत्र की तुलना में एक दशक से भी ज्यादा सुधार के कारण भारत का निजी क्षेत्र अधिक समृद्ध है। सार्वजनिक क्षेत्र सापेक्ष तथा छोटा है। क्योंकि यह केवल 20 मिलियन लोगों को रोजगार प्रदान कर रहा है परन्तु आधारभूत सेवाएं शिक्षा, स्वास्थ्य, देखभाल आदि प्रदान करने में अयोग्यता तथा संरचनात्मक कार्यो में निवेश की कमी ने शेष अव्यवस्था में बाधा डाल दी है।

माध्यमिक स्तर पर निजीकरण की आवश्यकता के निम्नलिखित कारण है:-

1. **शिक्षा में सुधार Improvement in Education)-** जहां सरकार सुधार करने में असफल रहती है जैसे शिक्षा, वहां कभी-कभी निजी क्षेत्र उस खाली स्थान को भरने में सफल होता है। शिक्षा सुधार के कुछ सफल उदाहरण है जैसे मध्य प्रदेश राज्य सरकार के द्वारा अपने स्कूलों तथा अध्यापकों पर स्थानीय समुदायों को नियंत्रण देकर गरीबों की सेवा के लिए केन्द्रीयकृत संघ-आधारित सार्वजनिक क्षेत्र स्कूल प्रणाली की असफलता को निजी क्षेत्र की सफलता में परिवर्तित कर दिया है।
2. **सरकारी स्कूलों में उतरदायित्व की कमी (Lack of Responsibility in Government Schools)-** सरकारी स्कूलों में उतरदायित्व की कमी के कारण लोग अपने बच्चों को निजी स्कूलों में भेजना चाहते है। कुछ सर्वेक्षणों से यह ज्ञात होता है कि भारत की हृदय भूमि उतार प्रदेश, बिहार, राजस्थान तथा मध्य प्रदेश जहां अधिकतर बोलचाल में हिन्दी भाषा का प्रयोग होता है, के लगभग आधे स्कूल ही सुविधाओं की कमी के कारण वास्तव में कार्यरत है तथा अध्यापक या तो बहुत कम आते हैं या पढ़ाने मे तटस्थ है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि ग्रामीण स्तर पर भी निजी स्कूल बहुत अच्छे ढंग से कार्य कर रहे है, जो यह संकेत देते है कि बहुत से गरीब माता पिता भी उन अध्यापकों के लिए पैसे देने को तैयार है, जो औपचारिक रुप से कम शिक्षित है, परन्तु कम से कम कक्षा में आते तो हैं और सरकारी स्कूलों में, जहां मुफ्त पढ़ाया जाता है, से अधिक पढाते है।

3. **विशिष्ट क्षेत्रों में निजीकरण का प्रसार (Expansion of Privatization in Specific Areas)-** प्राथमिक, माध्यमिक तथा सेवा के साथ-साथ विशिष्ट क्षेत्र जैसे कम्पयूटर विज्ञान के सभी स्तरों में निजी लोगों द्वारा प्रदान की जाने वाली शिक्षा का प्रसार हो रहा है। यद्यपि इस क्षेत्र की उपलब्धि आदर्शात्मक उपलब्धि से कम है परन्तु यह प्रवृत्ति इस बात का संकेत है कि अधिक से अधिक लोग अपने बच्चों को अच्छे जीवन के अवसर प्रदान करने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र की कमियों को दूर करने के अपने तरीके ढूंढ रहे है।

4. **सरकारी संस्थानों में वित्त की समस्या (Problem of Government Institutions)-** सरकारी संस्थानों मे पैसा पर्याप्त मात्रा में न मिलने के कारण या उचित ढंग से प्रयोग न होने के कारण मूलभूत सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं होती जैसे श्यामपट्ट, कक्षाकक्ष, प्रयोगशाला, पुस्तकालय आदि। आज कम्पयूटर शिक्षा का प्रावधान प्रत्येक स्कूल में रखा गया है। कम्पयूटर तो सरकार ने उपलब्ध करा दिए परन्तु उनके बारे में पढ़ाने के लिए अध्यापक नहीं है तथा बिजली की सुविधा नहीं है तो कैसे बच्चों को नई तकनीकों का ज्ञान दिया जा सकता है। यह शिक्षा निजी स्कूलों में अधिक अच्छे ढंग से उपलब्ध कराई जाती है।

5. **विकसित देश तथा निजीकरण (Privatization and Developed Countries-** शिक्षा के क्षेत्र में विकास का उदाहरण विकसित देशों से भी प्राप्त होता है, जहां इस क्षेत्र में निजीकरण की प्रक्रिया को ही अपनाया गया है। अमेरिका, इंग्लैंड, फ्रांस आदि इसमें अग्रणी है। यहां किसी भी शिक्षा संस्थान को खोलने के लिए कोई सरकारी अनुमति की आवश्यकता नहीं होती। वहां अच्छी शिक्षा के लिए प्रतिस्पर्धा होती है। इससे शिक्षा की गुणवत्ता सुधरती है। भारत में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए विकसित देशों को ही कुछ नीतियों को अपनाना होगा।

6. **शैक्षिक समस्याएं तथा निजीकरण (Educational Problem and Privatization)-** आज शिक्षा के क्षेत्र में हर तरफ भ्रष्टाचार का बोलबाला है। चाहे उपकरणों की खरीद का मामला हो, या नियुक्ति का, कहीं पर इमानदारी नहीं है। सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत अध्यापकों को सहायक सामग्री के लिए सरकार ने पैसे देने का प्रावधान आरंभ किया है। परन्तु वास्तव में इन पैसों का प्रयोग सामग्री खरीदने के लिए नहीं होता अपितु अन्य कार्यो में होता है। यूनेस्को तथा विश्व बैंक जैसी संस्थाओं के द्वारा शिक्षा के लिए दिए गए धन का उचित ढंग से उपयोग नहीं होता। विद्यार्थियों को दिए जाने वाले भोजन में भी धोखाधडी का मामला सर्वविदित है। सरकार अपना पूरा ध्यान केवल प्रारंभिक शिक्षा पर लगा रही है तथा माध्यमिक शिक्षा की अवहेलना हो रही है।

7. **शिक्षा की गुणवत्ता तथा निजीकरण (Quality of Education and Privatization)-** हम हमेशा से शिक्षा के क्षेत्र में गुणात्मक सुधार की बात करते है परन्तु यह सार्वजनिक क्षेत्र में संभव नहीं हो सकता क्योंकि निजी स्कूल तथा स्व-वित्तीय उच्च शिक्षा संस्थाएं सरकारी स्कूलों तथा महाविद्यालयों की अपेक्षा अधिक अच्छे ढंग से कार्य कर रही है।

8. **शिक्षा में नवाचार, अनुसंधान तथा निजीकरण (Innovations, Research in Education and Privatization)-** भावी शिक्षा के प्रभावी विकास के लिए नवाचार, परीक्षण व अनुसंधान की आवश्यकता है। यह स्वतन्त्र व लचीले पर्यावरण के बिना संभव नहीं है। सरकारी विद्यालयों में औपचारिकता व नियमबद्धता में यह संभव नहीं है।

9. **शैक्षिक लागत, दायित्व तथा निजीकरण (Educational Cost, Responsibility and Privatization)-** निजी क्षेत्र के द्वारा दी जाने वाली शिक्षा से जहां राज्य के शैक्षिक दायित्वों का निर्वाह होता है, वहीं शिक्षा लागत में पर्याप्त बचत होती है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. निजीकरण शब्द से आप क्या समझते हो, शिक्षा के क्षेत्र में निजीकरण की क्या भूमिका है।
   What do you mean by the word privatization? What is the role of privatization in Education?
2. देश की शिक्षा व्यवस्था में निजीकरण की क्या आवश्यकता तथा महत्व है?
   What is the need and importance of privatization System of Country?
3. सरकारी संस्थानों की वित्त की समस्या को सुधारने में निजीकरण किस प्रकार सहायक हो सकता है?
   How the privatization can be helpful in solving the process of finance in government institutions?

14.2 निजी शिक्षण संस्थान (Private Educational Institutions)

स्वतन्त्रता से पहले ये संस्थाएँ मुख्य रुप से सांस्कृतिक हस्तांतरण, राष्ट्रीय चेतना के विकास और स्थानीय आवश्यकता के अनुरुप शिक्षा प्रदान करने की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी निभाती आ रही है। आज अधिकांश -सुविख्यात निजी संस्थाएं, स्वतन्त्रता के पूर्व स्थापित की गई है। उदाहरण- राजस्थान में वनस्थली विद्यालय, विद्या भवन, राजस्थान विद्यापीठ, राजस्थान महिला विद्यालय गुजरात में गुजरात विद्यापीठ बंगाल में शांति निकेतन उसी युग में स्थापित संस्थाएं है।

निजी क्षेत्र की संस्थाओं का प्रशासन

(Administrant of private Institutions)

राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1964-56) प्रतिवेदन के अनुसार आज भी समस्त देश में 332 प्रतिशत संस्थाएं निजी क्षेत्र में ही है। इनमें पूर्व प्राथमिक स्तर पर 70.9 प्रतिशत निम्न

प्राथमिक स्तर पर 222 प्रतिशत, उच्च प्राथमिक स्तर पर 27.11 प्रतिशत, विशिष्ट शिक्षा 79 प्रतिशत, माध्यमिक स्तर पर 69.2 प्रतिशत, तथा व्यावसायिक शिक्षा स्तर पर 57.4 प्रतिशत है। उच्च शिक्षा स्तर पर 78.8 प्रतिशत संस्थाएं है। इस प्रकार पूर्व प्राथमिक माध्यमिक, व्यावसायिक, उच्च शिक्षा, विशिष्ट शिक्षा के क्षेत्र में अगुवाई कर रही है। निजी प्रबंध वाले विद्यालयों में केवल 19 प्रतिशत विद्यार्थी ही शिक्षा ग्रहण करते है। इनका मुख्य कारण यह है कि प्राथमिक शिक्षा का दायित्व राज्य सरकारों का है। वह अपना यह दायित्व लगभग शत-प्रतिशत शिक्षा व्यय राशि प्रदान कर स्थानीय संस्थाओं द्वारा पूरा करती है।

शासन के आधार पर वर्गीकरण

(Classification on the basis of Administration)

निजी शिक्षण संस्थाओं को उनके प्रशासन की विशेषता के आधार पर अधोलिखित भागों में बांटा जा सकता है।

- धार्मिक संगठनों द्वारा संचालित निजी विद्यालय
- व्यक्ति विशेष द्वारा संचालित विद्यालय
- सार्वजनिक ट्रस्ट या कोरपोरेशन संगठन द्वारा 'संचालित विद्यालय

1. **धार्मिक संगठनों द्वारा संचालित निजी विद्यालय (Private Institutions run by Religious Organizations)-** भारत एक धर्म निरपेक्ष राज्य है, अत: किसी भी धर्म को अपने धर्म के अनुरुप शिक्षा देने की स्वतन्त्रता है। अत: देश में लगभग सभी धर्मा के संगठन धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था करते है। परन्तु सरकार धर्म निरपेक्ष विद्यालयों को ही अनुदान तथा मान्यता दे सकती है, अत: ऐसे विद्यालयों को सरकारी अनुदान नहीं मिल सकता। धार्मिक संगठनों द्वारा संचालित विद्यालयों में ईसाई मिशनरियों द्वारा संचालित कान्वेट विद्यालय सम्पन्न वर्ग में बहुत जनप्रिय है। इन विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम प्राय: अंग्रेजी होता है तथा इनके परीक्षा परिणाम उच्च रहते है। इनकी आय का प्रमुख स्त्रोत छात्रों द्वारा दी जाने वाली भारी शुल्क राशि 'माना जाता है।
2. **व्यक्ति विशेष द्वारा संचालित निजी विद्यालय (Private Institutions run by Specific Individual)-** ये विद्यालय किसी एक ही व्यक्ति या उसके विश्वस्त व्यक्तियों की प्रबंध समिति द्वारा संचालित होते है। इनका मुख्य उद्देश्य व्यावसायिक अधिक और शैक्षिक कम होता है।
3. **ट्रस्ट या कोऑपरेटिव समितियों द्वारा संचालित विद्यालय (Schools run by trust or cooperative samiti)-** वस्तुत: ये ऐसे विद्यालय है, जिनके संसाधन सार्वजनिक होते है और जो समाज या देश के विकास के लिए कार्य करते है। ये कोई न कोई सामाजिक लक्ष्य लेकर चलते है। अधिकांश देश के ऐसे विद्यालय, जिन्होंने देश की शिक्षा के विकास में महत्वपूर्ण योग दिया है, इसी श्रेणी में आते है। अत: इन विद्यालयों के स्वतन्त्र अस्तित्व को बनाए रखना देश की प्रगति के लिए आवश्यक है।

मान्यता व अनुदान के आधार पर वर्गीकरण

(Classification on the basis of Recognition and Aid)

इन विद्यालयों को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है:-

- अनुदान व मान्यता प्राप्त विद्यालय
- अनुदान रहित मान्यता प्राप्त विद्यालय
- मान्यता रहित विद्यालय

1. मान्यता ब अनुदान प्राप्त विद्यालय (Schools Having Recognition and aid)- इस प्रकार के प्राय: वे विद्यालय है, जो सरकार द्वारा दी गई शर्तो को पूरा करते है। सरकारी विद्यालयों की तरह ही इनकी कार्य प्रणाली है। केवल कुछ विशिष्ट कार्यो की वजह से ही ये अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाए रखना चाहते है। वस्तुत: ये विद्यालय राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के ही भाग है तथा अधिकांश वित्तीय आवश्यकता सरकारी अनुदान ब विद्यार्थियों की फीस से पूरी होती है। मान्यता प्राप्त शिक्षण संस्था का विद्यार्थी किसी भी सरकारी संस्था में समकक्ष स्तर पर प्रवेश पा सकता है तथा उसके प्रमाण पत्र की वही मान्यता होती है, जो सरकारी संस्था द्वारा दिए प्रमाण पत्र की।
2. अनुदान रहित मान्यता प्राप्त विद्यालय (School having recognition without aid)- दूसरे प्रकार के विद्यालय वे है, जो अनेक शर्तो को पूरा न करने के कारण अनुदान प्राप्त नहीं कर सकते, परन्तु शिक्षा बोर्ड की परीक्षा के लिए मान्यता प्राप्त है। पब्लिक स्कूलों की श्रृंखला इसी श्रेणी में आती है। ३ अपनी व्यवस्था स्वयं द्वारा निर्धारित उंची दरों के शिक्षण शुल्क, चंदा, दान आदि से करते है।
3. मान्यता रहित विद्यालय (Schools without recognition)- इस प्रकार के विद्यालय न तो मान्यता प्राप्त है और न ही अनुदान प्राप्त, क्योंकि वे न तो शैक्षिक आवश्यकता की पूर्ति करते हैं, न आवश्यक साधनों की। इस प्रकार के विद्यालयों को हतोत्साहित ही किया जाना चाहिए।
4. प्राइवेट संगठनों को पूर्व प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय स्तर को शिक्षा चलाने की छूट है। यही कारण है कि कतिपय स्तरीय प्राइवेट संगठनों द्वारा पूर्व प्राथमिक विद्यालयों से लेकर विश्वविद्यालय तक संचालित किए जाते है। राजस्थान में वनस्थली इसका उदाहरण है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. निजी शिक्षण. संस्थाएं क्या होती है? इनके प्रशासन पर प्रकाश डालिए।
   What are private educational institution? Throw light on their administration.
2. निजी शिक्षण संस्थाएं कितने प्रकार की होती है? संक्षिप्त विवेचना करे।

How many types of private Education Institutions are? Discuss in brief?

3. प्रशासन के आधार पर निजी शिक्षण संस्थाओं के वर्गीकरण की व्याख्या कीजिए।

Explain the classification of private educational institutions on the basis of administration.

14.3 पब्लिक स्कूल (Public Schools)

जैसा कि इस इकाई में माध्यमिक स्तर पर 4 मुख्य निजी संस्थाओं के विषय में जान चुके है। इन में से पब्लिक विद्यालय सबसे महत्वपूर्ण है। अत: अब हम पब्लिक विद्यालयों के निजी स्वरुप को विस्तृत रुप में पढ़ेंगे।

वर्तमान प्रजातन्त्रीय प्रणाली में पब्लिक स्कूल बन्धनयुक्त प्रणाली का प्रतिनिधित्व करते है। तथाकथित पब्लिक स्कूल वास्तव में सार्वजनिक स्कूल नहीं है। क्योंकि वे जनता के लिए नहीं है। इसमें प्रति बच्चा 500 से 1800 रुपये तक मासिक शुल्क होता है।

पब्लिक स्कूल का अर्थ

(Meaning of Public School)

पब्लिक स्कूल तकनीकी दृष्टि से तो वह स्कूल है जिसका प्रधानाध्यापक पब्लिक स्कूलों के प्रधानों की सभा का सदस्य होता है। आजकल देश में ऐसे स्कूलों की संख्या बढ़ती जा रही है।

प्रो0 हुमायूँ कबीर के शब्दों में- 'पब्लिक स्कूल साधारणतया किसी व्यक्ति अथवा संस्था द्वारा स्थापित आवासीय विद्यालय है, जिनके विद्यार्थी जनता के अधिक सौभाग्यशाली वर्गो से आते है। पर्याप्त साधनों एवं स्वतन्त्रता का उपभोग करते हुए वे नेतृत्व की शिक्षा पर अधिकाधिक बल देते है और अपने विद्यार्थियों के लिए सभी प्रकार की सुविधाएं जुटाने में समर्थ होते है।"

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

(Historical Background)

भारत में पब्लि स्कूल (Public Schools) इंग्लैंड के पब्लिक स्कूलों का अनुसरण करते हुए खोले गए है। पब्लिक स्कूलों की प्रणाली इंग्लैड की उपज है। Winchester (विनचैस्टर) में पहला पब्लिक स्कूल 1387 ई0 में खोला गया। यह स्कूल अमीरों में बहुत लोकप्रिय हुआ। तदउपरांत इस प्रकार के अनेक स्कूल खोले गए जो सारे विश्व में प्रसिद्ध हुए। सन् 1441 में इंग्लैंड के सम्राट हैंनरों। VI ने एक पब्लिक स्कूल की स्थापना की। उस समय उस स्कूल में प्रवेश केवल सम्राट के विद्यार्थियों तक ही सीमित था। इंग्लैंड के 10 प्रधानमंत्री एटन स्कूल की उपज थे। भारत के लगभग 6 ब्रिटिश गवर्नर जनरलों ने अपनी प्रारंभिक शिक्षा इस स्कूल में प्राप्त की थी। यह लोकोक्ति प्राय: दोहराई जाती है वाटरलू का युद्ध एटन के खेल के मैदानों में

जीता गया था।" वास्तव में यह लोकोक्ति एटन के पब्लिक स्कूल के शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य को दर्शाती है।

एटन स्कूल के पश्चात् निम्नलिखित सुप्रसिद्ध स्कूलों की स्थापना की गई।

1. पब्लिक स्कूल हैरो (Harrow) की स्थापना 1561 में की।
2. पब्लिक स्कूल रगबी (Rugby]) की स्थापना 1567 ई0 में की गई।
3. पब्लिक स्कूल चैटरहाउस की स्थापना 1611 ई0 में की गई।

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं0 जवाहर लाल नेहरु ने अपनी आंरभिक शिक्षा हैरो स्कूल में प्राप्त की थी। आज पब्लिक स्कूल सारे इंग्लैंड में फैले हुए है। यह धनवानों की आवश्यकताओं को सफलतापूर्वक पूरा कर रहे है। विश्व में सदा से ही इन स्कूलों का और इनमें शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों का आदर होता आया है। परन्तु प्रजातंत्रात्मक आधार पर आजकल ये स्कूल आलोचना का विषय बने हुए है।

भारत में पब्लिक स्कूलों के प्रकार

(Types of public School in India)

भारत में पब्लिक स्कूलों को निम्नलिखित वर्गो में बांटा जा सकता है।

1. यूरोपवासियों के लिए स्कूल
2. भारत के शाही परिवारों के लिए स्कूल
3. सैनिक स्कूल
4. केवल लड़कियों के लिए पब्लिक स्कूल
5. साधारण पब्लिक स्कूल
6. केन्द्रीय विद्यालय
7. नवोदय विद्यालय

इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

1. यूरोपवासियों के लिए स्कूल-

आरंभ में यह स्कूल जैसे - बिशप कॉटन स्कूल, शिमला; 2. लारेस स्कूल, लगन (नीलगिरी पर्वत) 3. लारेस स्कूल, सनावर (शिमला पर्वत) केवल यूरोप वासियों के लिए थे परन्तु इनका प्रवेश आजकल भारतवासियों के लिए भी खोल दिया गया है।

2. भारतीय राजकुमारों के लिए स्कूल-

इनमें भारत के शाही परिवारों के बालक ही शिक्षा ग्रहण करते थे। उदाहरण:- .1. मेयो कालेज, अजमेर 2. सिंधिया स्कूल, ग्वालियर 3. यादवेन्द्र पब्लिक स्कूल, पटियाला

3. सैनिक स्कूल-

इन स्कूलों में प्राय: सैनिकों के बच्चों को प्रमुखता दी जाती थी, परन्तु अन्य बच्चों की प्रवेश प्राप्त कर सकते थे जैसे- 1. सैनिक स्कूल कपूरथला (पंजाब) 2. सिंधिया स्कूल, ग्वालियर 3. यादवेन्द्र पब्लिक स्कूल, पटियाला

4. केवल लड़कियों के लिए पब्लिक स्कूल-

ये स्कूल केवल लड़कियों की शिक्षा के लिए खोले गए थे जैसे- वनस्थली विद्यापीठ, जयपुर, महारानी देवी स्कूल जयपुर

5. साधारण पब्लिक स्कूल-

ये स्कूल किसी भी निजी प्रबंधन के द्वारा खोले जा सकते है जैसे- 1 डी0पी0ए0 (दिल्ली पब्लिक स्कूल) 2. दून स्कूल, देहरादून 3. कलाची हंसराज माडल स्कूल, दिल्ली 4. मार्डन स्कूल, नई दिल्ली?

6. केन्द्रीय विद्यालय-

ये स्कूल विशेषकर केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों के बच्चों के लिए जो एक स्थान पर स्थाई रुप से नहीं रहते, चलाए गए है। आजकल ऐसे स्कूल भारत में 500 से अधिक हे।

7. डी0ए0 वी0 पब्लिक स्कूल-

डी0ए0 वी0 प्रबन्धकर्ता सभा, नई दिल्ली ने पिछले 5 वर्षो में सारे भारत वर्ष में लगभग 200 पब्लिक स्कूल खोले है। ये स्कूल स्वामी दयानन्द सरस्वती की पुण्य स्मृति में खोले गए। वह एक महान समाज सुधारक और आर्य समाज के संस्थापक थे। ये स्कूल उत्तम प्रकार की शिक्षा प्रदान करते है.। और इसके साथ-साथ धार्मिक तथा नैतिक मूल्यों पर भी बल देते है।

8. नवोदय विद्यालय-

राष्ट्रीय नीति, 1986 को क्रियात्मक रुप देने के लिए सातवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत भारत सरकार 1990 तक देश के प्रत्येक जिले में एक नवोदय विद्यालय स्थापित करेगी, ऐसा सुझाव दिया गया था। अब तक भारत में लगभग नवोदय विद्यालय खोले जा चुके है। इन विद्यालय में 75 प्रतिशत प्रवेश ग्रामीण क्षेत्र के बच्चों के लिए सुरक्षित है। नवोदय विद्यालय रिहायशी स्कूल है।

पब्लिक की विशेषताएँ

Salient Features of Public Schools)

1. **रिहायशी (Residential)-** पब्लिक स्कूल सामान रुप से रिहायशी होते है। विद्यार्थी तथा अध्यापक एक ही कैम्पस में एक परिवार के सदस्यों के समान रहते है तथा शीघ्र ही उत्तरदायी, आत्मनिर्भर तथा स्वावलम्बी बन जाते है, क्योंकि उनकी आवश्यकताएं उनके परिवार द्वारा पूरी नहीं की जाती।
2. **नियंत्रण (Control)-** पब्लिक स्कूलों पर सामान्य रुप से चुने हुए लोगों का नियंत्रण होता है। शिक्षा विभाग का उसके साथ कोई संबंध नहीं होता। ये अपने अध्ययन कोसों, समयसारणी शिक्षण विधियों तथा सहायक पाठ्य क्रियाओं की व्यवस्था में स्वतन्त्र होते है।
3. **आर्थिक रुप से सुदृढ़ (Financially strong)-** पब्लिक स्कूल की आर्थिक व्यवस्था सुदृढ होती है। ये सम्मेलन के अवैतनिक सचिव को हर वर्ष अपने हिसाब किताब की एक प्रति भेजते है।

4. **पर्याप्त भवन तथा समान (Adequate Buildings and Equipments)-** पब्लिक स्कूल के भवन खुले होते है। उनके सुंदर एवं सुविकसित लॉन होते है तथा अच्छे खेल के मैदान होते है। विद्यार्थियों के शारीरिक तथा मानसिक स्तर के अनुकूल इनमें सामान की व्यवस्था होती है। इनमें खेलों के अतिरिक्त भी कई बाहय स्कूल क्रियाओं क व्यवस्था होती है।
5. **विशिष्ट होने की भावना पर बल (Emphasis on being specific)-** पब्लिक स्कूल के बच्चों के मन में यह छाप डाली जाती है कि वे विशिष्ट है- बुद्धि में, आर्थिक स्तर में आदि और नेतृत्व के लिए उन्हे तैयार होना है। अतएव उनके रहन सहन का स्तर काफी खर्चीला तथा आडम्बरपूर्ण रखा जाता है। इसी दृष्टिकोण से उनके चरित्र निर्माण पर बल दिया जाता है कि वे नेतृत्व संभाल सके। उन्हें 'खेलकूद, भ्रमण, पर्वतारोहण तथा अन्य जोखिम के कार्य, वाकप्र तियोगिता नाटक, संगीत, तैराकी, घुडसवारी, ड्राईविंग नौकाचालन तथा प्रतिभाशाली व्यक्तित्व निखारने का अवसर दिया जाता है। व्यक्तिगत प्रतिस्पर्द्धा नेतृत्व का आधार बनती है।
6. **दाखिला (Admission)-** इनमे जाति या धर्म के भेदभाव के बिना सभी विद्यार्थियों को दाखिला दिया जाता है। परीक्षा तथा इंटरव्यू के आधार पर दाखिला किया जाता है। इन स्कूलों में दाखिला बहुत कठिन होता है।
7. **चिकित्सा निरीक्षण तथा उपचार (Medical Inspection and Remedial Treatment)-** इन स्कूलों में चिकित्सा निरीक्षण तथा उपचार की पूर्ण व्यवस्था होती है।
8. **शिक्षण का माध्यम (Medium of Instruction)-** सामान्यतया पब्लिक स्कूलों में अंग्रेजी को ही शिक्षा का माध्यम रखा जाता है। परन्तु राज भाषा होने के कारण हिन्दी की भी अवहेलना नहीं की जा सकती।
9. **हाउस तथा प्रीफैक्ट प्रणाली (House& Perfect System)-** पब्लिक स्कूल के विद्यार्थियों को कक्षापाठन के बाद की देखभाल के लिए छोटी-टुकडियों में बांटकर एक-एक अध्यापक के निरीक्षण में रख दिया जाता है। इस अध्यापक को हाउस मास्टर कहते है और विद्यार्थियों को एक होस्टल में रखा जाता है जिसे किसी विशिष्ट नाम से जाना जाता है। यथा नेहरु हाउस, गांधी हाउस आदि। हाउस मास्टर इन विद्यार्थियों की पाठान्तर क्रियाओं में गतिशीलता, भोजन, स्वास्थ्य, पढ़ाई आदि सभी बातों पर ध्यान देता है। विद्यार्थियों को अनुशासित रखना उसका विशिष्ट उद्देश्य होता है। हाउस तथा कक्षा 'एवं स्कूल में बहुत से पद होते है जो नेतृत्व के विकास के लिए है। इनमें कुछ को प्रिफैक्ट कहते है जो साधारणतया अनुशासन बनाए रखने में सहायक होते है। -

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. पब्लिक स्कूल से आप क्या समझते हो? इनकी मुख्य विशेषताओं पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो।

What do you mean by public School? Write down a brief note on its characteristics.

2. पब्लिक स्कूलों का क्या महत्व है?
What is the importance of public schools?

3. भारत में पब्लिक स्कूलों के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख कीजिए।
Describe various types of public Schools in India.

14.4 माध्यमिक स्कूलों का निजीकरण- विवेचनात्मक -दृष्टिकोण (Privatization of Secondary Schools- Critial Approach)

वर्तमान समय में माध्यमिक स्कूलों का निजीकरण बढ़ता जा रहा है। लेकिन इस पर प्रश्नचिन्ह भी लगाने वालों की भी कमी नहीं है। इस तथ्य पर विचार हम दो तरह से कर सकते है।

1. माध्यमिक स्कूलों के निजीकरण के पक्ष में तर्क
2. माध्यमिक स्कूलों के निजीकरण के विपक्ष में तर्क

माध्यमिक स्कूलों के निजीकरण के पक्ष में तर्क

(Argument in favour of privatization of Secondary Schools)

1. **क्रियाएँ (Activities)-** निजी स्कूलों में पढ़ाई के अतिरिक्त खेलों, तर्क वितर्क, नाटक, कैम्प लगाना, भ्रमण पर जाना तथा अन्य कई क्रियाओं पर भी बल दिया जाता है। अगर हम परम्परागत स्कूल की बात करें तो वहां पर बल दिया जाता है जिसमें लिखना, पढ़ना तथा गणित शामिल. है।
2. **स्टाफ (Staff)-** निजी स्कूलों के अध्यापक उच्च शिक्षा सम्पन्न एवं सुयोग्य होते है तथा उनको काफी अच्छा वेतन मिलता है। इस वजह से इन स्कूलों के अध्यापक अपना काम लग्नता से करते है तथा इन स्कूलों का शिक्षण स्तर भी ऊँचा होता है। जबकि परम्परागत स्कूलो अध्यापक ज्यादा योग्य नहीं होते, वे अपने काम में अधिक निपुण भी नहीं होते और न ही उनको अच्छा वेतन दिया जाता है।
3. **प्रयोगात्मक एवं अनुसंधान कार्य (Experimental and Research Work)-** क्योंकि निजी स्कूल आर्थिक दृष्टि से अच्छे होते है इस कारण इन स्कूलों में प्रयोगात्मक एवं अनुसंधानकर्ता कार्य किया जाता है तथा नवीन विचारों का प्रयोग किया जाता है जो कि परम्परागत -स्कूलों में संभव नहीं है।
4. **आत्मविश्वास तथा अनुशासन (Confidence & Discipline)** निजी स्कूलों के बच्चों में दूसरे स्कूलों के विद्यार्थियों की तुलना में आत्मविश्वास तथा दृढ़ता देखी गई है तथा ये बच्चे सु-अनुशासित होते है।

5. **भवन तथा समान (Buildings and Equipment)** अधिकांश स्कूलों में पर्याप्त भवन नहीं होते। उनमें स्थान की कमी होती है। लेकिन निजी स्कूलों के भवन अच्छे तथा खुले होते है। उनमें अच्छे खेल के मैदान तथा सुंदर उद्यान होते है। उनमें बच्चों की शारीरिक एवं मानसिक आवश्यकताओं के अनुसार पर्याप्त सामान होता है।

6. **वातावरण की निरन्तरता (Continuation of Environment)-** निजी स्कूलों का एक और विशेष तत्व वातावरण की निरन्तरता है। एक आवासीय पब्लिक स्कूल में छात्र सुबह से शाम तक प्रतिदिन और साल से साल निरन्तर वातावरण में रहता है। इनमें दैनिक कार्य का निरन्तर प्रवाह है जो उसे अध्ययन, श्रम कार्य, पूजा-पाठ, भोजन, खेल और अवकाश के समय की क्रियाओं के बीच में बाटना होता है।

7. **समाजीकरण (Socialization)** निजी विद्यालय सभी छात्रों के समाजीकरण का अद्वितीय कार्य भी करते है। भाषा, भोजन, आदतों, शिष्टाचार और रीति-रिवाजों के संबंध में उनकी पिछली घरेलू पृष्ठभूमि में विभिन्नता समाप्त कर दी गई है और सरलता का अभाव, जीवन के स्तर के प्रस्तुतीकरण से एकता की नई पद्धति के निर्माण से दूर कर दिया गया है और इस प्रकार विभिन्न समुदायों, जातियों और संस्कृतियों के छात्रों के सामाजिक जीवन को एक समान बना दिया गया है। सांझी वृद्धि, सांझे भाव निर्जीव में प्राण-संचार के साथ जागरुकता से और जानबूझकर नियोजित समाजीकरण सामाजिक विकास का स्वस्थ-चिन्ह है।

8. **अन्य (Others)-** इसके अतिरिक्त पब्लिक तथा निजी स्कूलों में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी रखा जाता है। जो आज के समय की आवश्यकता है क्योंकि सम्पूर्ण विश्व में यह अत्यधिक प्रयोग की जाती है तथा उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए पुस्तके भी अंग्रेजी माध्यम में ही उपलब्ध होती है जिस कारण इन स्कूलों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों में अधिक आत्म विश्वास होता है तथा वे प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी रहते हैं। इसके साथ-साथ निजी स्कूलों में चिकित्सा तथा उपचार की पर्याप्त व्यवस्था होती है जो कि अन्य स्कूलों में नहीं होती।

सैकेण्डरी शिक्षा आयोग का विचार

(View of Secondary Education)

चरित्र की कुछ आवश्यक विशेषताओं- जिनमें नेतृत्व के गुण शामिल है- के विकास में ये स्कूल अधिकांश सैकेण्डरी अवसर प्रदान करते है। क्योंकि इनमें विशिष्ट सुविधाओं की अधिकता होती है और इनमें अध्यापकों तथा विद्यार्थियों में निकटतम सम्पर्क पाए जाते हैं।

डॉ0 जाकिर हुसैन के विचार

(Views of Dr. Zakir Hussain)

1938 में, मार्डन स्कूल, नई दिल्ली में आयोजित भारतीय पब्लिक स्कूल की तेरहवीं सभा में भाषण देते हुए डॉ0 जाकिर हुसैन ने कहा था, मैं चाहता हूँ कि इस सम्मेलन के साथ सम्बन्धित संस्थाओं में 3 महत्वपूर्ण विशेषताएं होनी चाहिए।

- अखिल भारतीय चरित्र तथा राष्ट्रीय एकता में महत्वपूर्ण योगदान
- प्रगतिशील दृष्टिकोण तथा शिक्षा के प्रयोगों में नेतृत्व
- उच्च स्तरों की स्थापना

माध्यमिक स्कूलों के निजीकरण के विपक्ष में तर्क

(Arguments against privatization of Scondary Schools)

केन्द्रीय शिक्षा परामर्शदात्री समिति की सितम्बर 1992 की बैठक में भारतीय शिक्षामंत्री प्रो नूरूल हसन ने कहा है 'देश में अभी भी कुछ लोग जनशिक्षा-संगठन से बाहर बने रहने की विलासिता में फंसे है। ये शोषक एवं नेतृत्व वर्ग के हैं। इस परिस्थिति को बदलना ही चाहिए।" ' पब्लिक स्कूल" इसी शोषक नेतृत्व का अस्त्र है। यह आधुनिक भारतीय शिक्षा की मूल समस्या है। इनके सुविधासपंन्न वर्ग के लिए सीमित होने को लक्ष्य कर माध्यमिक शिक्षा आयोग रिपोर्ट में कहा गया था वर्तमान समय में आधुनिक जनतंत्र में पब्लिक स्कूल एक विकार है। '

कुछ लोग इन स्कूलो के कटु आलोचक है। उनकी आलोचना निम्नलिखित तथ्यों पर आधारित है-

1. अभारतीय चरित्र(Un-Indian in Character)- कहा जाता है कि पब्लिक स्कूलों का चरित्र अभारतीय है। वे इंग्लैड से भारतीय धरती पर लाए गए है। इनका पाठ्यक्रम गठन तथा इनमें अपनाई जाने वाली शिक्षण-विधियां इंग्लिश भाषाई स्कूलों के साथ संबधित है। परिणामस्वरुप हमारे बच्चों का दृष्टिकोण परिवर्तित हो जाता है। वे भारतीय संस्कृति की मुख्यधारा से अलग हो जाते है।
2. खर्चीली शिक्षा (Expensive Education)- निजी स्कूल बहुत खर्चीले होते है। खर्चीलेपन के कारण बहुत से प्रतिभाशाली बच्चे इन स्कूलों में दाखिल नहीं हो सकते, परिणामस्वरुप प्रतिभाशाली व्यक्तियों को राष्ट्रीय सेवा में शामिल नहीं किया जा सकता।
3. असामाजिक (Unsocialistic)- निजी स्कूल लोकतांत्रिक रुप से असामाजिक होते है। ये केवल विशिष्ट कई तथा अमीरों के लिए होते है जो बच्चों के लिए शिक्षा को खरीदते है। इनमें पढ्ने वाले बच्चों के माता पिता के पास अच्छा बैंक बैलेंस होना पहली शर्त है। अत: ये स्कूल उन अल्पसंख्यकों के लिए है जो खर्च कर सकते है। ये जनता के लिए नहीं है। इसलिए ये लोकतंत्रात्मक पद्धति के विपरीत है। ये समाजवाद वर्गहीन समाज, राष्ट्रीय एकता और सार्वजनिक प्रणाली के विरुद्ध है।
4. इंग्लिश पर अधिक बल (Undue Emphasis on English)- इन स्कूलों में अंग्रेजी भाषा के अध्ययन पर बहुत बल दिया जाता है। इंग्लिश शिक्षण का माध्यम भी है और परीक्षा का माध्यम भी। इनके विद्यार्थी इंग्लिश तथा इंग्लिश संस्कृति के साथ पार करते है और मातृभाषा तथा भारतीय भाषा का समान नहीं करते।
5. अस्वस्थ श्रेष्ठता (Unhealthy Superiority)- निजी स्कूलों के विद्यार्थियों में अस्वस्थ श्रेष्ठता की भावना का विकास होता है। उनमें मनवीय दया कम होने लगती है। उनमें चेतना का अभाव होता है। जब वे कॉलेजों में जाते है तो वे

सामान्य स्तर के विद्यार्थियों के साथ समायोजन नहीं कर पाते। उनमें श्रेष्ठ भावना विकसित होने लगती है उनका व्यवहार कृत्रिम होता है। थे वास्तव में वैसे नहीं होते जैसे वे दिखाई देने की कोशिश करते है। उनके अंदर और बाहर में अंतर होता है। उनका बौद्धिक विकास सीमित होता है, उनकी सहानुभूतियों संकीर्ण होती है। जब उन्हें समाज में विशिष्ट स्थान नहीं मिलता तो वे हताश हो जाते है तथा समाज में कु-आयोजित रहते है।

6. समन्वय का अभाव (Lock of Co- ordination)- पब्लिक स्कूलों तथा विश्वविद्यालयों का आपस में कोई तालमेल नहीं होता जबकि पब्लिक स्कूल के विद्यार्थियों को अन्ततः भारतीय विश्वविद्यालयों में ही जाना पड़ता है।

7. इन स्कूलों से निकले विद्यार्थी मिथ्याभिमानी देखे गए है। उनमें भारतीयता एवं मातृभाषा आदि के प्रति सही भावना की कमी होती है। अक्सर इन्हें देखकर लगता है कि मैकाले का स्वप्न साकार हो गया है।

कोठारी आयोग की आलोचना

(Kothari Commission's Criticism)

कोठारी आयोग के विचारानुसार तथाकथित पब्लिक स्कूलों पर समाज में कटु आलोचना हो रही है। अतः उन्हें लोकतन्त्रात्मक बनाने के लिए सरकारी परिवर्तन होना चाहिए। ब्रिटिश शासकों द्वारा इस प्रकार की पद्धति को भारत में लाया गया और हम इसके साथ चिपक गए क्योंकि यह समाज के परम्परागत वशानुगत ढांचे के अनुकूल थी। इसका पिछला इतिहास कुछ भी क्यों न हो परन्तु इसका उस नए लोकतंत्रात्मक एवं समाजवादी समाज में वो स्थान नहीं जिसका हम निर्माण करना चाहते है।

अशोक सैले कृत आलोचना

(Ashok Salie's Criticism)

16 अप्रैल 1972 को हिन्दुस्तान टाइम्स में प्रकाशित अपने लेख 'हैल विद पब्लिक स्कूल' में अशोक सैले ने तर्क दिया था कि " पब्लिक स्कूलों का समाजवादी भारत में कोई स्थान नहीं है। ये स्कूल लाभ की अपेक्षा नुकसान अधिक कर रहे हैं। ये विद्यार्थियों को रटने पर विवश करते हैं, उन्हें समुदाय से पृथक करते हैं, अशिष्ट मूल्यों पर बल देते हैं। '

14.5 माध्यमिक स्तर पर निजी स्कूलों का भविष्य Future of Private Schools at Secondary Level)

इतनी आलोचना होते हुए भी निजी स्कूलों का भारतीय शिक्षा के निर्माण में महत्वपूर्ण स्थान है। निम्नलिखित कारणों से उनकी स्थिति बनी रही:-

1. लोकतंत्रात्मक देशों में अस्तित्व का अधिकार:- लोकतंत्रात्मक देशों में स्कूलों को अस्तित्व का अधिकार है। इसके निम्नलिखित कारण है:-

A) माता-पिता का शिक्षा चुनने का अधिकार:- संविधान की धारा 26(3) के अनुसार माता-पिता का यह प्रथम अधिकार है कि वे किसी भी प्रकार की शिक्षा का चयन करें जो वे अपने

बच्चों को देना चाहते हैं। इस बात का निर्णय करना उनका अधिकार है कि उन्होंने अपने बच्चों को पब्लिक स्कूल, सरकारी स्कूल या अन्य प्रकार के स्कूल में शिक्षित करना है। यदि निजी स्कूल बंद कर दिए जाएं तो यह लोकतंत्रात्मक सिद्धांत की अवहेलना होगी।

B) समान अवसर का अधिकार:- लोकतन्त्रात्मक समाज अधिकारों की समानता तथा सबके लिए समान अवसर के सिद्धान्तों पर विश्वास करता है। इसका अर्थ है कि सब बच्चों के सर्वागीण विकास के लिए योग्यताओं, क्षमताओं तथा प्राकृतिक विशेषताओं के अनुसार शिक्षा मिलनी चाहिए। यहां इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि लोकतंत्र एक ही प्रकार के अवसर प्रदान करने मे विश्वास नहीं करता। एक ही प्रकार के अवसर प्रदान करने का अर्थ है सभी विद्यार्थियों को, उनकी योग्यताओं, क्षमताओं तथा विशेषताओं का ध्यान रखे बिना एक ही प्रकार की शिक्षा प्रदान करना। कोठारी आयोग का सामान्य स्कूल प्रणाली द्वारा सबको एक ही प्रकार की शिक्षा प्रदान करने का विचार भी अलोकतन्त्रात्मक है।

C) संस्थाओं के निर्माण का अधिकार:- भारतीय संविधान की धारा 30 के अनुसार सभी अल्पसंख्यकों को चाहे वह धर्म आधारित हो या भाषा पर, अपनी पसन्द की संस्थाएं स्थापित करने का अधिकार है। पब्लिक स्कूलों पर आलोचना की जाती है कि वे एंग्लो-इण्डियन है। परन्तु यह बात याद रखनी चाहिए कि एंग्लो-इंडियन समुदाय भी उतना ही देश प्रेमी है जितना कोई अन्य समुदाय। इसके अतिरिक्त पब्लिक स्कूल एक समुदाय द्वारा नहीं चलाए जाते बल्कि विभिन्न सामाजिक वर्गो तथा संस्थाओं द्वारा चलाए जाते है।

2. उच्च शुल्क का न्यायोचित होना:- पब्लिक स्कूलों के उच्च शुल्क इस तर्क पर न्यायोचित ठहराए जाते हैं कि वे सरकार की मदद नहीं लेते और न ही वे अनुदान लेना चाहते है क्योंकि ऐसा करने से उनकी स्वतन्त्रता समाप्त हो जाएगी और स्कूल की विभिन्न क्रियाओं के आयोजित करने की साम्रगी की व्यवस्था करने के लिए उन्हें लम्बी प्रक्रियाओं को अपनाना होगा।

3. विवाद शिक्षा के सिद्धान्तों पर आधारित नहीं:- पब्लिक स्कूलों पर चल रहा विवाद शिक्षा के सिद्धांतों पर आधारित नहीं परन्तु सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं पर आधारित पब्लिक स्कूलों पर आलोचना इस आधार को दी जाती है कि इन पर आर्थिक बलिदान की आवश्यकता होती है। वास्तव में सभी क्षेत्रों में उतम सुविधाऐ पाने के लिए आर्थिक बलिदान अत्यन्त आवश्यक है। यहां तक कि मैडिकल शिक्षा पर भी बहुत खर्च होता है और वे सभी लोगों की पहुंच में नहीं होती। सभी लोग कार नहीं खरीद सकते, रेलवे की प्रथम श्रेणी में यात्रा नहीं कर सकते, वातानुकूलित बस में यात्रा नहीं कर सकते, अच्छे होटल में खाना नहीं खा सकते, परन्तु इसका समाधान उत्तम सुविधाओं को समाप्त करने में नहीं, बल्कि जीवन स्तर को ऊँचा करने में है। समाजवादी समाज का अर्थ यह नहीं है कि गरीबों को भुलाया जाए बल्कि इसका अर्थ है कि गरीबी को खुशहाली में परिवर्तित किया जाए। हमे मांग करनी चाहिए कि पब्लिक स्कूल की शिक्षा ज्यादा से ज्यादा बालकों को प्राप्त हो।

4. पब्लिक स्कूल केवल धनी लोगों के लिए नही:- यह तर्क कि सभी पब्लिक स्कूलों में अमीरों के बच्चे पढ़ते है अज्ञानता पर आधारित है। भारत सरकार हर वर्ष छात्रवृत्ति चयन परीक्षाओं द्वारा उन लोगों के बच्चों को चुनकर पब्लिक स्कूलों में भेजती है जिनकी आमदनी

कम होती है और उनका खर्चा स्वयं देती है। इस प्रकार इन स्कूलों में अमीरो तथा गरीबों दोनों के बच्चे शिक्षा प्राप्त करते है।

5. उच्च स्तरीय संस्थाएं:- पब्लिक स्कूल उच्च स्तरीय संस्थाएं है। इन स्कूलों में सुयोग्य अध्यापक होते है। उचित प्रशिक्षण व्यवस्था होती है। अध्यापक एवं विद्यार्थियों में उचित अनुपात होता है लोकतंत्र उच्च स्तरीय वस्तुओं के निर्माण में बाधक सिद्ध हो सकता है। सामान्य स्कूल से इस गुणात्मक स्तर को आशा नहीं हो सकती। इस बात को नहीं मानते कि वर्तमान समाजवादी समाज में पब्लिक स्कूलों की आवश्यकता नहीं।

6. भारत सरकार की नीति- अब भारत सरकार की नीति पब्लिक स्कूलों को सुधारने की है। भारत सरकार ने इन स्कूलों में प्रवेश पाने वाले 25 प्रतिशत विद्यार्थियों को सरकारी छात्रवृत्तियाँ देने का निर्णय किया है।

माध्यमिक स्तर पर निजी स्कूलों के भविष्य के लिए सुझाव

(Suggesions for the Future of Public Schools)

भारत में माध्यमिक स्तर पर निजी स्कूलों के भविष्य के ' निम्नलिखित उपाय उपयोगी ' सकते

1. दाखिले का आधार- निजी स्कूलों में दाखिला निशुल्क तथा समानता के आधार पर होना चाहिए। भले ही यह अंकतालिका पत्र द्वारा किया जाए या प्रतिस्पर्द्धात्मक परीक्षाओं द्वारा।
2. केन्द्रीय सरकार का प्रतिनिधि- स्कूल की प्रबन्ध समिति में केन्द्रीय सरकार का एक प्रतिनिधि होना चाहिए।
3. स्कूल का संविधान- इन स्कूलों का संविधान शिक्षा के उद्देश्यों के अनुकूल होना चाहिए।
4. भारतीय दृष्टिकोण- पब्लिक स्कूलों का जीवन भारतीय संस्कृति, परम्पराओं तथा राष्ट्रीय दृष्टिकोण के अनुसार होना चाहिए।
5. सुयोग्य भारतीय स्टाफ- इन स्कूलों में सुयोग्य भारतीय स्टाफ नियुक्त किया जाना चाहिए। ऐसे अध्यापक नियुक्त किए जाने चाहिए जो शरीर, मन तथा आत्मा से भारतीय हो। उनका कार्य प्रयोगात्मक हो तथा उनमें उत्साह एवं साहस हो।
6. पाठ्यक्रम में क्रांतिकारी सुधार:- पब्लिक स्कूल के पाठ्यक्रम में क्रांतिकारी सुधार होने चाहिए। विज्ञान एवं प्रायोगिक विषयों पर अधिक बल देना चाहिए। शिक्षा माध्यम के संबंध में कठोर निर्णय नहीं लेना चाहिए। अंग्रेजी पर ज्यादा बल नहीं दिया जाना चाहिए। अन्य भाषाओं के अध्ययन को भी उचित स्थान देना चाहिए।
7. सैनिक स्कूलों में वृद्धि- सैनिक स्कूलों की संख्या में वृद्धि की जानी चाहिए। क्योंकि ये देश की अधिकतम आवश्यकताओं को पूरा करते है।
8. अस्वस्थ विभिन्नताओं को समाप्त करना- पब्लिक स्कूलों एवं सामान्य स्कूलों में अस्वस्थ विभन्नता नहीं होनी चाहिए। पब्लिक स्कूलों को इस रुप में सामान्य स्कूल समझना चाहिए कि वहां परिस्थितियों के भेदभाव के बिना सभी बच्चों को

शिक्षा मिलती है तथा साधारण स्कूलों के प्रतिभाशाली बच्चों को भी इन स्कूलों में दाखिल करने की व्यवस्था होनी चाहिए।

9. खर्चा कम करना- पब्लिक स्कूलों में शिक्षा पर अनावश्यक खर्चा को कम किया जाना चाहिए।

डॉ0 श्री माली ने सुझाव दिया है कि पब्लिक स्कूल राष्ट्रीय प्रणाली के अनुकुल हो और इसके लिए निम्न उपाय अपनाने चाहिए -

1. कम खर्चा
2. हिंदी शिक्षा का माध्यम
3. नेतृत्व के लिए शिक्षा (जिसका उद्देश्य समाज को विकास करना हो)
4. समूचे समाज की सेवा करना

माध्यमिक शिक्षा के लिए पब्लिक स्कूलों पर सावधानी से विचार करने के बाद माध्यमिक शिक्षा आयोग इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि पब्लिक स्कूलों का उचित संगठन किया जाए और उचित ढंग से प्रशिक्षण प्रदान किया जाए तो ये ठीक दृष्टिकोणों तथा व्यवहार के विकास में सहायक सिद्ध हो सकते है ये विद्यार्थियों को उपयोगी नागरिक बना सकते है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. भारत में पब्लिक स्कूलों के भविष्य पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो।
   Write short note on future of Public School.
2. माध्यमिक स्कूलों के निजीकरण के विरोध पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो।
   Write short note on opposition of Privatization.
3. भारत में माध्यमिक स्कूलों के निजीकरण का क्या भविष्य है? इसके भविष्य के सुधार के लिए सुझाव दीजिए।
   What is the future of Privatization of school at secondary level? Give recommendations for the improvement of their future.

14.6 सारांश
(Summary)

भारत में सम्पूर्ण शिक्षा का उतरदायित्व सरकार के हाथों में नहीं सौंपा जा सकता क्योंकि सरकार का अधिक से अधिक प्रयास प्राथमिक शिक्षा के विकास की ओर है। देश की शिक्षा व्यवस्था में आज से नही अपितु स्वतन्त्रता से पहले से निजीकरण की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। प्राचीन समय से धार्मिक संगठनों व मिशनरी संगठनों ने शिक्षा के प्रसार हेतु विशिष्ट प्रयास किए है।

यही कहा जा सकता है कि निजी स्कूल या माध्यमिक स्तर पर निजीकरण करना आज वर्तमान समय की आवश्यकता बन चुका है। यह हमारे समाज के लिए उपयोगी है। बशर्ते इसमें

शिक्षा के समान अवसर के सिद्धांत का अधिक हनन न हो। उन सभी अच्छे नियमों का अनुसरण पारपरिक स्कूलों को भी करना चाहिए जिनको पब्लिक स्कूल अपनाते है। अत: हमें उत्तम गुणों वाली शिक्षा पर रोक नहीं लगानी चाहिए बल्कि ऐसी शिक्षा का विस्तार करना चाहिए जिससे पब्लिक स्कूल वास्तव में जनता के लिए बने स्कूल हो सकें।

आज शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर निजीकरण हो रहा है। अधिक से अधिक लोग अपने बच्चों को अच्छे जीवन के अवसर प्रदान करने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र की कमियों को दूर करने के प्रयास कर रहे है। सरकार भी यही चाहती है कि शिक्षा का निजीकरण किया जाए क्योंकि सरकार के पास धन की कमी है और दूसरे यह शिक्षा पर कुल राष्ट्रीय आय का केवल 6 प्रतिशत ही खर्च करती है जो प्राथमिक शिक्षा के लिए भी पर्याप्त नहीं रहता है।

आज यदि समाज में दृष्टिपात किग्रा जाए तो यही प्रतीत होता है कि समाज में अधिकतर माता पिता अपने बच्चों को सरकारी स्कूलों की अपेक्षा निजी सकूलों में भेजना चाहते है, क्योंकि वहां पर बच्चों को अच्छी सुविधाएं प्रदान की जाती है।

14.7 संदर्भ सूची (Bibliography)

Bray, Mark — privatization of Secondary Education: Issues and policy Implications, paris, UNESCO, 1996.

Report of Secondary Education Commission, Ministry of Education, Govt. of India ,New Delhi, 1952-53

Report of Indian Education Commission Ministry of Education ,Govt. of India, New Delhi,1964-66

Safaya- Current trends, Dhanpat Rai & Sons, Delhi,1968

अग्रवाल, वी.के., — भारतीय शिक्षा पद्धति की संरचना एवं समस्याएँ, प्रकाश, ब्रदर्ज, लुधियाना, 1989

पांडे, के.पी. — भारतीय शिक्षा का विकास एवं समस्याएँ दोआबा हाऊस, नई दिल्ली, 1973

शर्मा ए.आर. — भारतीय शिक्षा और समस्याएँ, पंजाब किताब घर, जालंधर, 2002

वालिया, जे.एस. — भारतीय समाज शिक्षा, पॉल पब्लिशर्ज, जालंधर, 1989

इकाई-15

माध्यमिक शिक्षा की वित्त व्यवस्था

(Financing of Secondary Education)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

15.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives

15.1 भारत में शिक्षा की वित्तीय व्यवस्था (Financing of Education in India)

15.2 आजादी से पूर्व शिक्षा पर व्यय (Expenditure on Education before Independent)

15.3 स्वतन्त्र भारत मे शिक्षा पर व्यय (Expenditure on Education after Independent)

15.4 राष्ट्रीय वित्तीय मशीनरी एवं शिक्षा पर व्यय (National Financial Machinery ` and Education Expenditure)

15.5 शैक्षिक वित्तीय व्यवस्था को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors affecting financing of Education Expenditure)

15.6 शैक्षिक व्यय के प्रकार (Types of Education Expenditure)

15.7 शैक्षिक के विभिन्न स्त्रोत (Various Sources of Expenditure)

15.8 पंचवर्षीय योजनाएं तथा माध्यमिक शिक्षा (Five year plans and financing of Secondary Education)

15.9 सारांश (Summary)

15.10 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

15.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य

(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप:

1. भारत में शिक्षा की वित्तीय व्यवस्था के महत्व से अवगत हो सकेंगे।
2. शिक्षा पर होने वाले व्यय के बारे में ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।
3. वित्त के विभिन्न स्त्रोतों के बारे में समझ सकेंगे।
4. शैक्षिक व्यय के प्रकारों को समझ सकेंगे।
5. पंचवर्षीय योजनाओं में शिक्षा की प्रगति के महत्व से अवगत होंगे।
6. माध्यमिक शिक्षा पर किए जाने वाले व्यय की समीक्षा कर सकेंगें।
7. आने ताले समय में माध्यमिक शिक्षा की वित्त व्यवस्था का अनुमान लगा सकेंगे।
8. माध्यमिक शिक्षा पर व्यय तथा अच्छी प्रगति की तुलना कर .सकेंगे।

प्रत्येक देश के विकास में शिक्षा की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण रही है। आर्थिक वृद्धि, गरीबी तथा आय असमानता में कमी, स्वास्थ्य एवं पोषण में सुधार, जनसंख्या वृद्धि में कमी, जीवन की आशा में सुधार, हिंसा एवं अपराध में कमी, लोकतंत्र में गहनता तथा विकास के नागरिक, सामाजिक एवं राजनैतिक पक्षों में सुधार आदि के विकास में इसका योगदान देखा जा सकता है। विकास में शिक्षा की भूमिका का महत्वपूर्ण योगदान जानते हुए भारत सरकार ने स्वतन्त्रता के पश्चात् शिक्षा को अत्याधिक प्राथमिकता देना आवश्यक समझा और सार्वभौमिक प्रारंभिक शिक्षा प्रदान करना: मध्यमिक शिक्षा, विशेष रूप से व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा का विस्तार तथा उच्च शिक्षा में समता एवं पहुंच का विस्तार आदि लक्ष्य निर्धारित किए।

स्वतन्त्रता के पश्चात् विद्यार्थी की संख्या: स्कूल अध्यापकों और यहां तक कि सार्वजनिक व्यय में भी अत्यधिक वृद्धि हुई। शिक्षा के सभी क्षेत्रो- प्राथमिक, माध्यमिक तथा उन स्तर में विस्तार अत्याधिक मात्रा में हुआ। परन्तु सभी क्षेत्रों में वृद्धि समान नहीं थी। प्रारंभिक शिक्षा अभी तक सार्वभौमिकता से दूर है यद्यपि यह वर्तमान समय में तेजी से बढ़ रही है। माध्यमिक शिक्षा में विस्तार कोई अधिक नहीं हुआ, व्यावसायिक शिक्षा का तो प्रारंभिक स्तर भी पार नहीं कर पाए और उन शिक्षा में तो नामांकन अनुपात कठिनता से दो के अंकों में है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि वृद्धि तो कुछ सीमा तक हो पाई है परन्तु माध्यमिक स्तर पर वृद्धि एवं विकास संतोषजनक नही है।

शिक्षा के विस्तार के लिए यद्यपि सार्वजनिक वित्त एक महत्वपूर्ण यंत्र है और सरकार- केन्द्र एवं राज्य ने पिछले कुछ वर्षो में सार्वजनिक व्यय को 190-51 में 114 करोड़ रुपये से 2005-06 में 1,00,000 करोड़ रुपयें कर दिया है, परन्तु फिर भी वृद्धि न तो अधिक तीव्र है और न ही बराबर है।

15.1 भारत में शिक्षा की वित्तीय व्यवस्था (Financing of Education in India)

भारत में शिक्षा के लिए वित्तीय व्यवस्था के स्रोतों में प्रमुख है केन्द्र एवं राज्य सरकारों के बजट में शिक्षा के लिए निर्धारित राशि, स्थानीय निकायों की आय से प्राप्त राशि से शिक्षा हेतु प्रावधान, शिक्षण शुल्क, चन्दा, व्यक्तियों एवं संस्थाओं से प्राप्त सहयोग आदि। पूर्व में केन्द्र की कुल आय का लगभग 2 प्रतिशत भाग शिक्षा पर व्यय होता था किन्तु अब राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की क्रियान्विति के फलस्वरूप लगभग 6 प्रतिशत अंश शिक्षा पर व्यय किए जाने का संकल्प है। राज्यों द्वारा 1978-79 में अपनी आय का लगभग 4.86 प्रतिशत शिक्षा पर व्यय किया जाना था, आन्ध्र प्रदेश द्वारा 1.71 प्रतिशत, वहीं नागालैंड द्वारा 11.21 प्रतिशत तथा दिल्ली में 14.47 प्रतिशत यदि प्रति व्यक्ति शिक्षा पर होने वाले व्यय को देखे तो 1977-78 में देश में 36.50 रुपयें प्रति व्यक्ति शिक्षा पर व्यय था। राज्यों में. सर्वाधिक 110.10 रु नागालैंड में, जबकि न्यूनतम रुपयें 20/ - बिहार में व्यय हुआ था।

केन्द्रीय सरकार का योगदान

(Participation of Central Government)

केन्द्रीय सरकार शिक्षा के लिए प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से व्यय भार उठाती है। वह केन्द्र शासित प्रदेशों में सभी प्रकार की तथा सभी स्तरों की शिक्षा का वित्तीय भार स्वयं उठाती है। इसके साथ ही वह उसके द्वारा संचालित कतिपय विश्वविद्यालयों, संस्थानों, केन्द्रीय विद्यालयों, नवोदय विद्यालयों, सलाहकार परिषदों, शिक्षा से सम्बद्ध अभिकरणों आदि पर होने वाले व्यय का समूर्ण भार वहन करती है। केन्द्र द्वारा संचालित ऐसी संस्थाओं को 4 श्रेणियों में बांटा जा सकता है:-

1. विश्वविद्यालय
2. सम्बद्ध अधीनस्थ संस्थान
3. स्वायत्तशासी संस्थान या परिषदें
4. अन्य संस्थान

इन संस्थानों के अधीनस्थ संचालित शाखाओं व प्रवृतियों का संपूर्ण व्यय भार केन्द्र सरकार उठाती है। इस प्रकार इन मामलों में शिक्षा के वित्तीय प्रबंध में केन्द्र सरकार प्रत्यक्ष योगदान देती है।

शिक्षा के वित्तीय प्रबन्धन में केन्द्र सरकार राज्यों अथवा प्राइवेट संगठनों की अप्रत्यक्ष रूप से सहायता करती है। यह दो प्रकार से है- प्रयोजनाओं के अनुदान तथा शिक्षा के निर्धारित कार्यक्रमों के कतिपय आयामों के लिए आशिक, मैचिंग अनुदान अथवा उत्प्रेरण सहायता। जिन कार्यक्रमों अथवा लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए केन्द्र सरकार राज्यों को अनुदान देती है उनमें प्रमुख है- सार्वजनिक शिक्षा के लक्ष्य प्राप्ति हेतु शिक्षा में व्यावसायीकरण, विद्यालयों की भौतिक सुविधा सुधार अभियान हेतु शिक्षा में अपव्यय व क्षय की रोकथाम हेतु उत्प्रेरण कार्यक्रमों हेतु सामाजिक-आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के छात्रों को उत्प्रेरण व छात्रवृत्ति, प्रतिभाशाली छात्रों हेतु फेलोशिप व छात्रवृत्ति, राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियान्वयन हेतु आदि। इन कार्यो के लिए केन्द्र सरकार उपलब्धि के लक्ष्यों अथवा प्राप्ति के लक्ष्यों के आधार पर राज्यों की सहायता करती है।

केन्द्र सरकार शिक्षा के क्षेत्र में प्राइवेट संगठनों को भी कतिपय मानदण्डों के आधार पर सीधे सहायता देती है। जिन कतिपय योजनाओं के अधीन यह सहायता दी जाती है, उनमें प्रमुख नामांकित है:-

1. स्वयं सेवी व्यावसायिक संगठनों की, जो मानविकी व सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में ज्ञान के विकास के लिए संलग्न है, वित्तीय सहायता।
2. हिन्दी भाषा के उन्नयन व विकास के काम में लगे संगठनों या संस्थानों को 75 प्रतिशत तक अनुदान।
3. राष्ट्रीय स्तर की खेलकूद प्रतियोगताएँ आयोजित करने, अंतरराष्ट्रीय खेलकूदों में भाग लेने, उपकरण, सामग्री खरीदने आदि के लिए राष्ट्रीय खेलकूदों संघों व संगठनों की आय-व्यय क्षतिपूर्ति सीमा (Deficit basis) तक सहायता।
4. युवा प्रवृत्तियों एवं राष्ट्रीय भावात्मक एकता से जुडे स्वयंसेवी संगठनों को 80 प्रतिशत तक की सहायता।

5. स्वयंसेवी संस्कृत संगठनों, संस्थानों व पाठशालाओं को संस्कृत के विकास हेतु 75 प्रतिशत तक सहायता।

इस प्रकार शैक्षिक कार्यो हेतु केन्द्र द्वारा किए जाने वाले व्यय का अनुमान वर्ष के प्रारंभ में ही कर लिया जाता है तथा इसका प्रावधान बजट में किया जाता है। इस हेतु केन्द्रीय मंत्रिमंडल संसद से स्वीकृति प्राप्त करता है।

इसी प्रकार राज्य सरकारें क्षेत्राधीन व दायित्व क्षेत्र की शिक्षा के लिए बजट प्रावधान कर राज्य विधान मंडल से स्वीकृति प्राप्त करती है। राज्य का शिक्षा बजट दो प्रकार का होता है- योजना व्यय व गैर योजना व्यय। प्रत्येक क्षेत्र अथवा आयाम पर होने वाले व्यय के शीर्षक होते है तथा बजट प्रावधान आवर्तक एवं अनावर्तक मांगों में बंटा होता है। इसमें प्रमुख आयाम शिक्षा के स्तर व आयाम पर होने वाला व्यय प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, उच्च शिक्षा शोध व अकादमिक कार्यक्रम, निर्देशन व निरीक्षण व अन्य। राज्याधीन शिक्षा से जुडे अभिकरणों-माध्यमिक शिक्षा बोर्ड विद्यालय, विशिष्ट संस्थान आदि को तथा स्वयंसेवी संगठनों द्वारा संचालित शिक्षण संस्थानों को देय अनुदान का प्रावधान स्पष्ट होता है। राजकीय शिक्षण संस्थाओं से प्राप्त होने वाले शिक्षण शुल्क व अन्य आय की शिक्षा मद की आय में दिखाकर व्ययभार का आकलन किया जाता है। इसी प्रकार केन्द्र से प्राप्त सहायता का और भी बजट अनुमानों में होता है।

स्थानीय निकाय अपने अधीनस्थ शिक्षण संस्थाओं को वित्तीय व्यवस्था शिक्षा कर से प्राप्त राशि अथवा अपनी आय के स्त्रोतों से करती है किंतु वे सामान्यत: अपनी आय से आशिक प्रावधान ही कर पाते है। अधिकांश व्यय भार राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाता है। स्थानीय अभिकरण स्थानीय स्तर पर स्वयंसेवी व्यक्तियों व संगठनों से भी दान (नकद, भवन सामग्री, श्रम के रूप मे) प्राप्त करते है।

कई राज्यों में स्वयंसेवी, समाजसेवी एवं धार्मिक संगठनों द्वारा काफी संख्या में शिक्षण संस्थाएँ चलाई जाती है। ये 2 प्रकार की होती हैं- पहली वे जो व्यय भार का कुछ हिस्सा अपनी पूंजी में आय, चन्दा, दान आदि से प्राप्त राशि, शिक्षण शुल्क आदि वहन करती है, शेष के लिए वे राज्य सरकार पर निर्भर करती है, दूसरी वे जो राज्य सरकार से किसी प्रकार का अनुदान नहीं प्राप्त करती, पर शिक्षण शुल्क समुदाय से प्राप्त चंदा, दान आदि से वित्तीय व्यवस्था करती है।

इस प्रकार भारत में शिक्षा की वित्तीय व्यवस्था में केन्द्र, राज्य सरकार, स्थानीय निकाय व प्राइवेट संगठनों का विभिन्न रूपों में सम्भागित्व होता है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. भारत में शिक्षा की वित्तीय व्यवस्था से आप क्या समझते है?
   What do you understand by financing of Education in India?

2. भारत में शिक्षा की वित्तीय व्यवस्था में केन्द्र सरकार की भूमिका को स्पष्ट करो।

Clarify the role of central government in Financing of education in India.

3. केन्द्र सरकार किन कार्यक्रमों के लिए राज्य सरकार को अनुदान देती है?

What are the role of central government in financing of education in India.

भारतवर्ष में शैक्षिक व्यय के महत्व को आजादी के बाद ही समझा गया। अंग्रेजी राज्यकाल में कोई भी ठोस प्रयास शिक्षा के लिए पर्याप्त धन जुटाने के लिए नहीं किया गया। अंग्रेज शासक अपने राज्य के प्रारंभिक वर्षा में भारतीयों की शिक्षा की ओर उदासीन रहे। बाद में वह उदासीनता शिक्षा के लिए अधकचरी सहायता के रुप में परिवर्तित हो गई। इस देश में अंग्रेज शासकों ने शिक्षा को कभी इह महत्व नहीं दिया जो अपने देश में 19 वीं तथा 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में हो रहे थे। अतएव समूर्ण ब्रिटिश काल में शिक्षा पर बहुत ही कम धन व्यय किया गया। आजादी के बाद से ही शिक्षा के लिए पर्याप्त धन उपलब्ध करने की चेष्टाएं की गई, किंतु स्थिति 20वीं शताब्दी के अंत तक भी अधिक संतोषजनक नहीं रही।

15.2 आजादी से पूर्व शिक्षा पर व्यय (Expenditure ऑन Education before Independence)

प्राचीन तथा मध्यकालीन भारत में शिक्षा के लिए कोई उचित आर्थिक संगठन नहीं था। पाठशालाओं, मदरसों अथवा मकतबों को बहुधा मदिरों या मस्तजदों के अहातो से स्थापित किया जाता था। आमतौर से इन विद्यालयो को 3 स्त्रोतों से धन प्राप्त था:-

1. शासकों अथवा बड़े जमींदारों अथवा समुदाय के धनी सदस्यों द्वारा विद्यालय को अनुदान दिया जाता था। अनुदान साधारणत: धन के रुप में अथवा जमीन-जायदाद के रुप में होता था।
2. विद्यार्थियों द्वारा अपने शिक्षकों को गुरु दक्षिणा के रुप में उपहार दिए जाते थे।
3. स्थानीय समुदाय द्वारा धन अथक वस्तुओं के रुप में विद्यालय को अथवा शिक्षक को दान दिया जाता था। जैसा कि वर्णित स्त्रोतों की प्रकृति से स्पष्ट होता है कि शिक्षा के लिए धन का आयोजन न तो व्यवस्थित ही था और न ही स्थाई। वह सदैव बदलता रहता था और उन लोगों की प्रकृत्ति पर निर्भर करता था, जो अनुदान देते थे। एक शिक्षा प्रेमी शासक खुले हाथ से दान देता था। जबकि ऐसा शासक जिसे पढ़ाई-लिखाई में कोई रुचि नहीं होती थी अनुदान देने से अपना हाथ खींच लेता था।

पाठशाला अथवा अन्य प्रकार के विद्यालयों में कोई फीस नहीं ली जाती थी। शिक्षक साधारण जीवन जीते थे और थोडी सी आमदनी में ही संतुष्ट रहते थे।

भारतवर्ष में शैक्षिक आर्थिक व्यवस्था का इतिहास 1833 के चार्टर एक्ट से प्रारंभ हुआ समझा जा सकता है, जबकि ईस्ट इंडिया कम्पनी एक राजनैतिक सत्ता के रुप में स्थापित हो गई और भारतवर्ष में ब्रिटिश पार्लियामेंट की ओर से शासन करने लगी थी। शिक्षा के लिए सर्वप्रथम अनुदान इसी वर्ष ब्रिटिश पार्लियामेण्ट द्वारा स्वीकार किया गया था। शिक्षा पर जय 1833-34 में 4 लाख रुपयें से कुछ अधिक था। यह 1857 में 21.64 लाख रु हो गया और 1870-71 में बढ़ कर 65.71 लाख रु हो गया। उस वर्ष जो शिक्षा के लिए धन उपलब्ध किया गया था, संपूर्ण राजस्व का 13 प्रतिशत था। अगले दशक में और अधिक धनराशि उपलब्ध हो गई और 1881-82 में सरकार द्वारा शिक्षा पर व्यय 72.91 लाख रुपये हो गया। उस वर्ष शिक्षा पर कुल धन जब स्रोतों द्वारा जय किया गया, वह 1,86,07,415 रुपए था और अंग्रेजों द्वारा शासित देश की जनसंख्या 19.9 करोड़ थी। इस प्रकार प्रति व्यक्ति शिक्षा पर व्यय केवल 0.09 रुपयें उस वर्ष में था। 1901-02 वर्ष तक जो शिक्षा पर कुल व्यय हुआ उसके आंकडे निम्नलिखित तालिका में दिखाए गए है:-

सारणी 15.1 1881-82 से 1901-02 तक शिक्षा पर व्यय

वर्ष	शिक्षा पर कुल व्यय	प्रति व्यक्ति व्यय
1881-82	1,86,07(लाखों में)	0.09
1886-87	2,52,42 लाखों में)	-
1891-92	3,05,20 (लाखों में)	-
1901-02	4,01,21 (लाखों में)	0.17

15.3 स्वतन्त्र भारत में शिक्षा पर व्यय

(Expenditure on Education after independence)

सारणी 15.2 स्वतन्त्र भारत में माध्यमिक शिक्षा में व्यय (करोडों में)

वर्ष	माध्यमिक	शिक्षा कुल व्यय
1990-91	6310.30	146711.63
1991-92	7400.56	170370.38
1992-93	8574.97	190327.45
1993-94	9371.34	218535.15
1994-95	10835.33	251691.92
1995-96	12530.38	286194.55
1996-97	14164.00	329389.92
1997-98	15663.50	370838.48
1998-99	20100.97	439768.11
1999-2000	52447.89	512519.32
2000-01	26057.50	572160.14

2001-02	25163.47	619713.14
2002-03	28301.357	00389.87

इन आंकडों को यहां देने का हमारा उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि शिक्षा पर व्यय किस प्रकार प्रतिवर्ष बढ़ता जा रहा है, किंतु मंहगाई के बढ़ने और जनसंख्या की वृद्धि ने बहुत बढ़े हुए व्यय के वास्तविक लाभ में कमी कर दी है। अतएव अब यह आवश्यकता है कि शिक्षा के लिए अधिक से अधिक धन आंबटित किया जाए। दूसरी ओर सरकार राजस्व द्वारा एक समिति द्वारा एक सीमित मात्रा में ही धन उपार्जन कर सकती है। इस कारण शिक्षा के लिए पर्याप्त धन जुटाने के संबंध में सरकारी प्रयासों के अतिरिक्त अन्य स्त्रोतों तथा साधनों की खोज करनी पड़ेगी।

1997-98 में कुल घरेलू उत्पाद का केबल 5.7 प्रतिशत ही शिक्षा पर व्यय किया गया जबकि लक्ष 6 प्रतिशत खर्च करना था जिसका सुझाव कोठारी आयोग द्वारा दिया गया था। प्रथम पंचवर्षीय योजना में 153 करोड रु शिक्षा पर व्यय किए गए जो नौंवी योजना में बढकर 24,909 करोड़ रुपये हो गए। परन्तु योजना में शिक्षा पर किए जाने बाले खर्च का प्रतिशत 7.86 से कम होकर 290 प्रतिशत रह गया। माध्यमिक शिक्षा पर प्रथम योजना में 20 करोड रु खर्च करने का प्रावधान था जबकि नौंवी योजना में 2604 करोड़ रुपए रखा गया। इसी काल में माध्यमिक शिक्षा पर जय प्रतिशत 13 से कम होकर 10.5 रह गया। यद्यपि प्राथमिक शिक्षा पर किया जाने वाले कुल जय के प्रतिशत में वृद्धि हुई थी।

कुल राष्ट्रीय उत्पाद की तुलना में यदि माध्यमिक शिक्षा पर प्रतिशत खर्च पर दृष्टि डाली जाए तो यह स्पाट होता है कि 1974-75 से 1997-98 तक यह 1 प्रतिशत से भी कम रहा। जबकि इसी काल में शिक्षा पर किया जाने वाला कुछ खर्च 2.10 प्रतिशत से बढकर 2.92 प्रतिशत हो गया। 1989-90 में सरकार तथा स्थानीय निकायों ने मिलकर शिक्षा पर होने वाले कुल व्यय का 95 प्रतिशत से भी अधिक का योगदान दिया। 1950-51 से 1989-90 तक फीस तथा अन्य निजी स्त्रोतों से आय 1950-51 में 32 प्रतिशत से 1989-90 में 6.6 प्रतिशत ही रह गई। 1989-90 में उच्च माध्यमिक शिक्षा पर कुल खर्च का 79 प्रतिशत केवल अध्यापकों के वेतन पर व्यय किया गया। अन्य स्टाफ का वेतन मिलाकर यह 92 प्रतिशत था। राज्य तथा संघीय सरकारों के द्वारा भी शिक्षा पर होने वाले खर्च में कमी की गई।

सारणी 15.3 राष्ट्रीय न्यादर्श सर्वेक्षण 1995-96 प्रति विद्यार्थी औसत वार्षिक व्यय

स्तर	सरकार	स्थानीय निजी	निजी सहायता प्राप्त	निजी बिना सहायता के
माध्यमिक/ उच्च माध्यमिक	1236	1349	1861	3061

*सार्वजनिक व्यय से पृथक

स्त्रोत NSSO 1998

सारणी 15.4 राष्ट्रीय न्यादर्श सर्वेक्षण 1995-96 प्रति विद्यार्थी औसत वार्षिक व्यय प्रति मद

मदें	माध्यमिक/ उच्च माध्यमिक

ट्यूशन फीस	197
अन्य फीस	106
किताबें	272
स्टेशनरी	190
यूनिफार्म	248
ट्रांसपोर्ट	98
प्राईवेट कोचिंग	326
अन्य खर्चे	74
परीक्षा फीस	66
कुल	1577

राष्ट्रीय न्यादर्श सर्वेक्षण संगठन के द्वारा प्रदत आंकडे यह दर्शाते है कि 1995-96 में माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर पर प्रति विद्यार्थी औसत खर्च 1577 रु (सारणी 15.4) था। यह निजी सहायता से प्राप्त प्रबधंकों के द्वारा सबसे अधिक था। इस सारणी से यह भी प्रदर्शित होता है कि प्राइवेट कोचिंग पर सबसे अधिक खर्च 326 रु था। उपरोक्त सारणी का यदि विश्लेषण किया जाए तो ऐसा प्रतीत होता है कि माध्यमिक शिक्षा निवेश का प्रमुख क्षेत्र कभी नहीं रहा। नौंवी पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा का भाग केवल 10.5 प्रतिशत ही रहा। 1997-98 में यह कुल राष्ट्रीय उत्पाद का 1 प्रतिशत से भी कम था। जो कुछ भी माध्यमिक शिक्षा पर व्यय किया गया वह मुद्रा स्फीति के कारण बिल्कुल न के बराबर था और वास्तविक अर्थो में यह वृद्धि कुछ भी नहीं थी। अर्थात् भ्रमात्मक थी। 2010 में प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के परिणामस्वरुप माध्यमिक शिक्षा की मांग अत्यन्त तीव्र गति से बढ़ने लगी है।

15.4 राष्ट्रीय वित्तीय मशीनरी तथा शैक्षिक व्यय (National Financial Machinery and Educational Expenditure)

भारतीय संविधान के अनुसार शिक्षा केवल कुछ मदों को छोड़कर राज्य के उतरदायित्व के अंतर्गत आती है। आंरभ में शिक्षा को द्वितीय सूची में रखा गया है। जिसमें राज्य द्वारा शासित विषयों का विवरण था, किंतु यह स्थिति बहुत संतोषजनक नहीं रही और इस कारण संविधान के 42वें संशोधन द्वारा शिक्षा को तृतीय सूची अर्थात् समवर्ती सूची में शामिल कर दिया गया। इसका तात्पर्य यह है कि अब शिक्षा संबंधी केन्द्र तथा राज्य दोनों ही सरकारों का हो गया, इसके साथ ही यदि कोई संबंधी कानून राज्य तथा केन्द्र दोनों द्वारा बनाया जाता है, तो केन्द्र द्वारा बनाए गए कानून को ही मान्यता मिलेगी। संविधान की यह स्थिति अर्थतंत्र की व्यवस्था को स्पष्ट करती है।

केन्द्र में इस समय शिक्षा के आर्थिक प्रशासन जिम्मेदारी मानव संसाधन विकास मंत्रालय पर है। इस मंत्रालय का शिक्षा विभाग शिक्षा तथा वित मंत्रालय द्वारा बजट बनाने में सहयोग देता है। राष्ट्र के संपूर्ण बजट के साथ शिक्षा विभाग का बजट भी लोकसभा में बजट

अधिवेशन के समय पेश किया जाता है और मंत्री महोदय द्वारा विभाग की मांगों का ब्यौरा प्रस्तुत किया। जाता है जिस पर बहस होकर मांगों को स्वीकृति दी जाती है।

बजट पारित होने के बाद शिक्षा विभाग जय कर सकता है। व्यय का प्रशासन इसके विभिन्न विभागों द्वारा होता है। अंतिम उतरदायित्व मानव संसाधन विकास मंत्रालय का होता है। राज्य स्तर पर भी शिक्षा का आर्थिक प्रशासन राज्य के शिक्षा मंत्रालय द्वारा किया जाता है। राज्य सरकारें शिक्षण संस्थाओं को अनुदान देती है। वे स्थानीय निकायों को भी मुख्यत: प्राथमिक शिक्षा के लिए अनुदान देती है।

नगरपालिकाएं जिला परिषदें, ग्राम समितियां तथा ग्राम पंचायते भी विभिन्न राज्यों में शिक्षा के लिए वित्तीय प्रावधान करती है अथवा किसी अन्य प्रकार की मदद करती है, जैसे ग्राम पंचायत विद्यालय स्थापित करने के लिए स्थान उपलब्ध करा देती है।

15.5 शैक्षिक वित्तीय व्यवस्था को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors affecting Financing of Education)

प्रत्येक राष्ट्र अपने नागरिकों की शिक्षा के लिए प्रभावशाली व्यवस्था करता है, क्योंकि वह जानना है कि यदि ऐसा नहीं किया गया तो वह प्रगति की दौड़ में अन्य देशों से बहुत पीछे रह जायेगा,. किंतु प्रभावशाली शिक्षा प्रदान करने के लिए धन चाहिए और किसी भी राष्ट्र के पास इतना धन नहीं होता कि वह राष्ट्रीय शिक्षा के लिए आवश्यक सब मांगों को पूरा कर सके। यह स्थिति विकासशील देशों में बहुत कठिनाई उत्पन्न कर देती है। इन देशों में धन की उपलब्धता तो बहुत सीमित होती ही है, परन्तु साथ-साथ मांग न केवल शिक्षा संबंधी वरन् अन्य प्रगति की मदों के लिए भी बहुत बढी-चढ़ी होती है। इसी कारण ऐसे देश योजना बनाकर विभिन्न विषयों पर व्यय को नियमित करते है। धन तथा साधनों की कमी तो शैक्षिक व्यय पर ऐसे तत्व है जो शैक्षिक वित्तीय व्यवस्था को प्रभावित करते है। यहां पर हम उनका वर्णन भारत की शैक्षिक व्यवस्था को ध्यान में रखकर ही करेंगे:-

1. वित्तीय व्यवस्था पर राष्ट्र के आदर्श और मूल प्रभाव डालते है। भारत ने जनतंत्र को अपना लिया है, न केवल राजनैतिक सिद्धांत के रूप में वरन् एक जीवन के आदर्श के भाँति। अतएव शिक्षा कम से कम प्राथमिक स्तर तक सब नागरिकों को मिले यह अनिवार्य समझा गया है। शिक्षा के समान अवसर, प्रौढ़ साक्षरता, कमजोर वर्गो की आर्थिक क्षमता में वृद्धि इत्यादि यह सब शैक्षिक आदर्श देश के सम्मुख प्रस्तुत हो गए है। वित्तीय व्यवस्था में इन सबको ' प्राथमिकता प्रदान की जाने लगी है।
2. देश की प्रशासनिक व्यवस्था भी वित्तीय व्यवस्था पर प्रभाव डालती है। संविधान के अनुसार शिक्षा का उतरदायित्व मुख्यत: राज्य सरकारों पर है, यद्यपि अब शिक्षा समवर्ती सूची का विषय बन गई है। वित्तीय व्यवस्था में राज्य सरकार ही पहल करती है और केवल कुछ मदों को छोड़कर प्राथमिक शिक्षा से लेकर विश्व विश्वविद्यालय शिक्षा तक का वित्तीय उतरदायित्व राज्य सरकारें ही उठाती है।

3. समुदाय की परम्पराएँ भी वित्तीय व्यवस्था पर प्रभाव डालती है। शिक्षा के लिए दान देना, जिन समाजों में प्रचलित है, यहां धन की कमी नहीं होती है। भारतवर्ष में पहले ऐसा चलन था, किंतु अब शिक्षा के लिए आर्थिक बन्दोबस्त करना सरकार का ही उतरदायित्व समझा जाता है। इसके अतिरिक्त समाज में फैली हुई गरीबी और बेकारी भी शिक्षा के लिए समाज के योगदान में कमी ला देती है।

4. देश की सम्पदा भी शैक्षिक वित्तीय व्यवस्था में एक प्रभावशाली तत्व है। देश जितना सम्पन्न होगा, उतनी ही खुली वित्तीय व्यवस्था होगी। यदि देश की सम्पदा ही सीमित है तो वित्तीय व्यवस्था में धन के व्यय पर नियंत्रण रखने पर बल होगा। एक और बात यह भी है कि सम्पन्न देश तो शिक्षा पर अपव्यय कर सकते है और करते भी है, किंतु गरीब देश ऐसा नहीं कर सकते। उनकी व्यवस्था में अपव्यय का कोई स्थान नहीं हो सकता। उनकी व्यवस्था में प्राथमिकता के निर्धारण को सबसे अधिक महत्व दिया जाना आवश्यक है।

5. वस्तुओं के बढ़ते हुए मूल्य भी शैक्षिक आर्थिक व्यवस्था पर प्रभाव डालते है। जब वस्तुओं के मूल बढ़ जाते है तो उसी धन में कम वस्तुएं खरीदी जा सकती है। यह स्थिति शिक्षा के क्षेत्र में भी होती है। शिक्षा के लिए विद्यालय भवन, उसकी साज-सज्जा, प्रयोगशालाएं, पुस्तकालय, संग्रहालय इत्यादि सबकी आवश्यकताएं होती है। वस्तुओं के मूल बढ़ने से इन सबके लिए अधिक धन की आवश्यकता होती है, इसलिए किसी एक वर्ष की वास्तविक आर्थिक-आबंटन की तुलना पिछले उन वर्षा से नहीं की जा सकती जबकि महंगाई कम थी। अर्थशास्त्री आर्थिक आयोजन की तुलना का आधार एक निश्चित वर्ष मानकर करते है, जैसे 1971 को आधार वर्ष मान लिया जाएं तो वर्ष 1971 में जो मूल्य है उनको 100 की संख्या में प्रदर्शित करते है, जिसे सूचक संख्या कहते है। मूल्यों में वृद्धि या कमी इस सूचक संख्या के आधार पर ही संकेतिक होती है। यह संख्या हमें बताती है कि जो धन अब शिक्षा के लिए उपलब्ध है, उसका वास्तविक मूल्य क्या है, अब कितने मूल्य की वस्तुएं खरीदी जा सकती है। जैसे यदि अब मूल्य सूचक संख्या 200 है तो 1971 में जितनी मूल्य की वस्तुएं 100/ - रु में आती थी उतनी मूल की वस्तुएं अब 200/ - रु में आएगी। अतएव यदि अब दुगुना व्यय शिक्षा पर किया जाता है तो वास्तविक लाभ 1971 में व्यय किए हुए धन से कुछ अधिक नहीं होगा। यदि शिक्षा के विकास के लिए अधिक धन उपलब्ध कराना है, तो यह दुगुने से अधिक होना आवश्यक है।

15.6 शैक्षिक व्यय के प्रकार (Types of Educational Expenditure)

शैक्षिक आर्थिक व्यवस्था में 3 पक्ष बहुत महत्वपूर्ण है। वे है- शिक्षा के लिए कुल राशि का आबंटन, व्यय के विषय अथवा शिक्षा पर आवर्ती तथा अनावर्ती व्यय वित्तीय स्त्रोत। विषय

के अनुसार हम शिक्षा पर व्यय को दो भागों में बांटते है। आवर्ती एवं अनावर्ती। आवर्ती व्यय वह होता है, जो लगातार प्रतिवर्ष होता रहता है जैसे वेतन और भत्ते पर, भवनों के अनुरक्षण पर, वजीफे, छात्रावास इत्यादि पर व्यय अनावर्ती व्यय विशेष वर्ष के लिए निर्धारित होता है। यह उस वर्ष के शैक्षिक विकास के लिए अथवा अनुरक्षण या भवन निर्माण के लिए होता है। जो उस कार्यक्रम के सम्पन्न होते ही समाप्त हो जाता है। उस व्यय को उस वर्ष पूरा करना आवश्यक होता है जिस वर्ष के लिए यह बजट में निर्धारित होता है। अनावर्ती व्यय के उदाहरण हैं- नई पुस्तके खरीदने के लिए, फर्नीचर खरीदने के लिए व्यय इत्यादि

15.7 शैक्षिक व्यय के विभिन्न स्रोत (Various Sources of Educational Expenditure)

देश की वर्तमान शैक्षिक प्रणाली से पहले शिक्षा के लिए धन के स्त्रोत थे- अक्षय निधि, दान एवं उपहार। शिक्षा के लिए वित्तीय सहायता शिक्षकों की अपनी चितवहरी पर निर्भर थी। शिक्षा को आर्थिक सहायता देने का कोई ढंग नहीं था।

सबसे प्रथम पाश्चात्य शिक्षा इस देश में इसाई पादरियों द्वारा आरंभ की गई। इसके कुछ समय बाद ही ईस्ट इंडिया कम्पनी इस क्षेत्र में प्रवेश कर गई और अंत में भारतवासी स्वयं इसमें रुचि लेने लगे। 1854 तक शिक्षा के लिए मुख्य आय के स्रोत थे- इसाई पादरी अथवा उनके द्वारा प्राप्त विदेशी धन, सरकार अथवा सरकारी स्त्रोत, जो शिक्षा के लिए उपकर लगाते थे एवं भारतीय निजी प्रयास। इन तीनों स्त्रोत के साथ बाद में फीस का स्त्रोत भी जुड़ गया।

ब्रिटिश काल में अक्षयनिधि दान तथा उपहार को दूसरे स्त्रोतों के अंतर्गत रख दिया। निजी रुप से भारतीय शिक्षा पर जो धन व्यय करते थे तथा पादरियों या अन्य धार्मिक तथा समाज सेवी संस्थाओं द्वारा शिक्षा के लिए जो धन प्रदान किया जाता था, उसे भी दूसरे स्त्रोतों के अंतर्गत ही रखा गया था। इस प्रकार ब्रिटिश काल में जो शिक्षा के लिए आय ले जो स्त्रोत बने वे थे- सरकार- केन्द्रीय तथा राजकीय, स्थानीय निधि ग्रामीण क्षेत्रों के लिए एवं नगरपालिका निधि शहरी क्षेत्रों के लिए, फीस एवं दूसरे स्त्रोत। इस समय जो शिक्षा के लिए आय के मुख्य स्त्रोत है मे इन्हीं स्त्रोतों के समान हैं। अतएव शिक्षा के स्रोत जो शिक्षा के लिए निधि प्रदान करते है उनकी व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है:-

1.केन्द्रीय सरकार 2. राज्य सरकार 3. स्थानीय निकाय 4. निजी संस्थाएं- अक्षय निधि, दान अथवा उपहार के रुप में तथा 5. फीस। अब इन पांचों स्त्रोतों का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत करेगे।

समय के साथ शिक्षा पर सभी स्त्रोतों से व्यय बढ़ता ही गया है। शिक्षा आयोग ने अपनी रिपोर्ट में यह कहा कि ऐतिहासिक कारणों से शैक्षिक वित्तीय व्यवस्था इस देश में इस प्रकार विकसित हुई है कि शिक्षा के लिए धन एक स्त्रोत से मिलकर अनेक स्त्रोतों से प्राप्त होने लगा। इसके फलस्वरुप कुछ मिला कर धन की उपलब्धि में वृद्धि हुई, जो एक स्त्रोत होने से संभव नहीं होती और इससे यह भी लाभ हुआ है कि कठिनाई के समय एक प्रकार का स्थायित्व सामने आया है और यदि एक स्त्रोत में कमी आई है तो दूसरे स्त्रोतों ने इसे पूरा करने की चेष्टा की है। रिपोर्ट ने तालिकाओं द्वारा स्पष्ट किया है कि पहली तीनों योजनाओं में प्रत्येक स्त्रोत का योगदान बढा है।

रिपोर्ट के अनुसार सबसे अधिक वृद्धि सरकार द्वारा व्यय में हुई है। सन् 1965-66 में सरकार शिक्षा पर कुल व्यय ' का 71.2 प्रतिशत खर्च कर रही है। जबकि 1950-51 में सरकार द्वारा शिक्षा पर कुल व्यय का 57.1 खर्च किया जा रहा था। इसके फलस्वरुप अन्य सब स्त्रोतों से तुलनात्मक रुप से शिक्षा के लिए धन की प्राप्ति में कमी आई है, यद्यपि कुल धन जो प्रत्येक स्त्रोत द्वारा खर्च किया गया है, वह बढा ही है। आयोग के अनुसार सरकार के बाद फीस द्वरा ऐसा स्त्रोत है जिसके योगदान में 294 प्रतिशत वृद्धि हुई है। 1965-66 में कुल शैक्षिक व्यय का 15.3 प्रतिशत व्यय फीस द्वारा प्राप्त हो रहा था। इसके पश्चात् दूसरे स्त्रोत आते है जिनका योगदान 8.1 प्रतिशत प्रतिवर्ष बढ़ रहा है और जो 1965-66 में संपूर्ण व्यय का 7.2 प्रतिशत खर्च उठा रहे थे। स्थानीय निकाय, जिनके साधनों को बढाने की कोई गुजांइश नहीं है, कुल व्यय का केवल 6.3 प्रतिशत व्यय शिक्षा पर कर रहे है। उन्होनें शैक्षिक व्यय के लिए सबसे कम योगदान किया है।

आने वाले 20 वर्षो के लिए शिक्षा आयोग ने कहा कि सरकार के दोनों केन्द्रीय स्तर तथा राज्य स्तर पर लगभग 90 प्रतिशत शिक्षा पर व्यय उठाना पडेगा, क्योंकि भविष्य में फीस से आय बहुत कम हो जाएगी और न तो स्थानीय निकाय, न ही निजी संस्थाए कोई बहुत महत्वपूर्ण योगदान दे पाएगी। आयोग ने फिर भी आशा प्रकट की थी कि संपूर्ण वित्तीय उतरदायित्व सरकार पर नही डाला जाएगी क्योंकि ऐसा करने से विद्यालय तथा स्थानीय स्तर पर इस ओर के सब प्रयासों में रोक लग जाएगी। स्थानीय समुदाय को शैक्षिक व्यय में योगदान देने की आयोग ने सिफारिश की है, यद्यपि यह मान लिया गया कि इस स्रोत से कोई बहुत अधिक वितीय सहायता मिले, ऐसा संभव नहीं होगा। स्थानीय निकाय और निजी संस्थाओं के योगदान के संबंध में भी कहा गया कि उनके प्रयासों को भी प्रोत्साहित करना चाहिए।

राज्य सरकारों द्वारा शिक्षा पर किए जाने वाले व्यय में भी 1950-51 से अब तक बहुत वृद्धि हुई है किंतु सब राज्यों में कुल बजट का प्रतिशत जो शैक्षिक बजट के लिए निर्धारित होता है वह एक सा नहीं रहा है। 1981-82 में कुल बजट का शिक्षा पर बजट व्यय की प्रतिशतता सबसे कम 12.5 सिक्किम में थी तो सबसे अधिक 37.2 केरल में थी। राजस्थान में यह 25.3 थी तथा उतरप्रदेश में यह 21.8 थी। प्रति व्यक्ति बजट व्यय सबसे कम 35.4 रु उतर प्रदेश में था जबकि राजस्थान में यह 51.1 रु था।

शिक्षा पर सुरक्षा के पश्चात् सबसे अधिक बजट व्यय होता है। देश की संपूर्ण राष्ट्रीय संपदा का तीन प्रतिशत शिक्षा पर व्यय होता है। यह ध्यान में रखना चाहिए कि कुल शिक्षा व्यय योजना तथा गैर योजना व्यय को प्रदर्शित करता है। जबकि गैर योजना संबंधी व्यय साधारणत: चल रही नई स्कीमों / कार्यक्रमों को चालू रखने के लिए होता है। 1982-83 में 5185.9 करोड़ रु का कुल शिक्षा बजट व्यय का 1 5.7 योजना व्यय के लिए था, जबकि बाकी का गैर योजना व्यय था।

दूसरे देशों की तुलना में भारत शिक्षा पर कुल राष्ट्रीय सम्पदा के अनुपात में बहुत कम व्यय कर रहा है। विकसित देश 6 से 8 प्रतिशत तक अपनी संपूर्ण राष्ट्रीय सम्पदा का भाग शिक्षा पर खर्च कर रहे हे जबकि भारत में यह 3 प्रतिशत से कुछ अधिक हे। कुछ देश जैसे

बर्मा, पाकिस्तान तथा अफगानिस्तान ऐसे है जो भारत से कम अनुपातिक रुप से व्यय कर रहे है। शिक्षा आयोग ने सिफारिश की थी कि यह व्यय 6 प्रतिशत की सीमा तक बढाया जाना चाहिए। व्यय बढाने के लिए स्रोत को सक्रिय करना आवश्यक है। यह देखना है कि किस सीमा तक ऐसा किया जा सकता है। सर्वप्रथम तो यह आवश्यक है कि केन्द्र शिक्षा के लिए और अधिक धनराशि उपलब्ध करने का प्रयत्न करे। केन्द्र को और अधिक शैक्षिक कार्यक्रमों का उतरदायित्व लेना चाहिए और उन पर व्यय के लिए धन अपने ही साधनों से उपलब्ध करवाना चाहिए। 1986 की राष्ट्रीय नीति में शिक्षा प्रणाली की रुपरेखा प्रस्तुत की गई है। यह रुपरेखा कोई अर्थ नहीं रखती जब तक कि इसके लिए पर्याप्त वित्तीय सहायता प्राप्त नहीं हो जाती। इस और केन्द्र को ही पहल करने की आवश्यकता है।

शिक्षा का सीधा उतरदायित्व अब भी राज्य सरकारों का है, इसलिए उनकी ओर से भी शिक्षा के लिए पर्याप्त धन जुटाने का प्रयास होना चाहिए। अभी तक राज्य सरकारों के प्रयासों में बहुत कमी है। उदाहरण के लिए उतर प्रदेश में कुल बजट का केवल 21.8 प्रतिशत भाग 1981-82 में शिक्षा व्यय के लिए निर्धारित था, जबकि राजस्थान में यह भाग 25.3 प्रतिशत था। यह प्रतिशतता बढ़ कर कम से कम 30 करना आवश्यक है। केरल तो 37.2 प्रतिशत व्यय कर रहा है। पिछडे राज्य भी शिक्षण पर किए जाने व्यय को बढ़ा सकते है।

स्थानीय निकाय द्वारा भी शैक्षिक व्यय किया जाता है। बहुधा स्थानीय निकाय प्राथमिक शिक्षा पर ही व्यय करते है, क्योंकि स्थानीय निकायों की अधिकांश आय राज्य सरकारों द्वारा प्रदेश अनुदान से ही होती है। उनके द्वारा आय वृद्धि के कोई बहुत महत्वपूर्ण प्रयास संभव नहीं ई किंतु भवनों की साज-सज्जा और आय शिक्षा संस्थाओं की आवश्यकताओं को पूरा करने की ओर यथासंभव ये भी चेष्टा कर सकते है। शैक्षिक कर द्वारा भी धन प्राप्त करने का एक साधन स्थानीय निकाय अपना सकते है।

निजी संस्थाएं भी बहुत्कुछ शैक्षिक वित्तीय व्यवस्था में अपना सहयोग दे सकती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में यथासंभव साधनों में बढ़ोतरी करने पर बल दिया गया हे। इसके अंतर्गत निजी संस्थाओं का सहयोग, शैक्षिक दान को प्रोत्साहन, शिक्षा से लाभान्वित होने वाले समुदायों द्वारा विद्यालयी भवनों के रख-रखाव का दायित्व तथा कुछ उपभोग की वस्तुओं को जुटाने आदि प्रयासों की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है। उच्च स्तर पर शिक्षा के लिए फीस को बढा करके तथा व्यय मे कुछ बचत करके भी शिक्षा के लिए अधिक धन प्राप्त होने की आशा व्यक्त की गई है। इसके अतिरिक्त सुविधाओं का कुशलतापूर्वक उपयोग करके भी उपलब्ध धनराशि का श्रेष्ठतम उपयोग किया जा सकता है। अनुसंधान तथा तकनीकी और वैज्ञानिक जनशक्ति के विकास में लगी हुई संस्थाओं द्वारा भी शिक्षा के लिए धन प्राप्त हो सकता है। जो अभिकरण विज्ञान तथा तकनीकी अनुसंधानों के परिणामों का लाभ उठाते है तथा उनकी परामर्श सेवाओं का उपयोग करते है, वे भी शैक्षिक व्यय के लिए कुछ धनराशि जुटा सकते है। येये अभिकरण सरकारी विभाग तथा उद्योगपति हो सकते है। नीति में कहा गया है कि ये सब उपाय न केवल इसलिए किए जाएंगे कि सरकारी साधनों पर कम बोझ पड़े वरन् यह भी कि शैक्षिक व्यवस्था के अंतर्गत अधिक उतरदायित्व की भावना जागृत हो सके। किन्तु इस प्रकार के उपाय शिक्षा के कुल व्यय के अनुपात में बहुत कम धन जुटा पाँएगें। सरकार तथा आमतौर से

समुदाय को ऐसे कार्यक्रमों के लिए धन को खोजना ही पडेगा जैसे प्राथमिक शिक्षा कसे सर्वव्यापी बनाना, निरक्षरता का उन्मूलन करना, सारे देश में शैक्षिक अवसर की समानता सब वर्गो को प्राप्त कराना, शिक्षा की सामाजिक प्रासंगिकता को बढ़ाना, शैक्षिक कार्यक्रमों की गुणवत्ता तथा कार्यशीलता में प्रभावशीलता लाना, आत्मनिर्भर, आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण वैज्ञानिक क्षेत्रों में ज्ञान को प्रोत्साहित करना तथा तकनीकी विकास करना एवं मूल्यों के संबंध में आलोचनात्मक संचेतना का सृजन करना।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. स्वतन्त्रता से पूर्व भारत वर्ष में शिक्षा व्यय को स्पष्ट करे।
   Explain the expenditure on education in India before Independence.
2. स्वतत्र भारत में माध्यमिक शिक्षा पर व्यय का वर्णन कीजिए।
   Describe the different on Secondary Education in free India?
3. शैक्षिक वित्तीय व्यवस्था को प्रभावित करने वाले तत्व कौन-कौन से है?
   What are the different factors affecting educational financing?
4. शैक्षिक व्यय के प्रकारों की व्याख्या करो।
   Explain different types of educational expenditure ?
5. शैक्षिक व्यय के विभिन्न स्त्रोत कौन-कौन से है?
   What are the different source of education expenditure?

15.8 पंचवर्षीय योजनाएं एवं माध्यमिक शिक्षा की वित्त व्यवस्था (Five year Plan and Financing] of Secondary Education)

जब हम योजनाओं में शिक्षा पर व्यय की ओर दृष्टिपात करते है तो यह बात सामने आती है कि सभी स्तरों की शिक्षा पर व्यय बढ़ता ही गया है। शिक्षा पर बजट व्यय केवल सुरक्षा विभाग के बाद आता है। समस्त राष्ट्रीय उत्पादन का लगभग 3 प्रतिशत से भी अधिक भाग शिक्षा पर व्यय किया जा रहा है, जो विकसित देशों में किए जाने वाले प्रतिशत व्यय से बहुत कम है। माध्यमिक शिक्षा में असंतोषजनक स्थिति का प्रमुख कारण माध्यमिक शिक्षा पर अपर्याप्त व्यय ही लगाया जा सकता है।

सारणी 5.5 पंचवर्षीय योजनाओं में माध्यमिक शिक्षा पर व्यय

वर्ष	माध्यमिक योजनाओं में माध्यमिक शिक्षा पर प्रस्तावित खर्च (करोड़)	माध्यमिक शिक्षा पर वास्तविक खर्च (करोड़)
प्रथम योजना 1950-51	20 (13)	29.07

द्वितीय योजना 1955-56	51 (19)	45.72
तीसरी योजना 1960-61	103(18)	83.52
वार्षिक योजना 1965-66	53(16)	147.84
चौथी योजना 1968-69	140(18)	294.48
पांचवी योजना 1978-79	250(17)	156
छठी योजना 1984-85	398 (16)	530
सातवी योजना 1989-90	1000(16)	1832
आठवीं योजना 1996-97	-	3498
नौंवी योजना 2001-02	2603.49	2322.68
दसवीं योजना	4325(12)	-
ग्यारहवीं योजना	3794	-

जैसा कि उपरोक्त सारणी द्वारा दर्शाया जा रहा है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा पर शिक्षा के कुल व्यय का 13 प्रतिशत व्यय ही प्रस्तावित किया गया था। दूसरी योजना में सामान्य तथा तकनीकी शिक्षा के लिए 275 करोड़ रुपयें आबंटित हुए जिसमें से 273 करोड़ रुपयें खर्च हुए तथा माध्यमिक शिक्षा के अनुपात को बढ़ाकर 19 प्रतिशत कर दिया गया। उसके पश्चात् यह लगभग स्थिर ही रहा और छठी पंचवर्षीय योजना तक लगभग यही अनुपात चलता रहा। छठी योजना में पहली बार इसके वास्तविक खर्च को बढ़ाकर 25 प्रतिशत किया गया, परन्तु आगे इस स्तर को बनाए रखना फिर से कठिन हो गया। दसवीं पंचवर्षीय योजना में यह फिर से कम होकर 12 प्रतिशत ही रह गया। यह स्वतन्त्रता के पश्चात् का न्यूनतम अनुपात था।

माध्यमिक शिक्षा पर कुल खर्च 1970-71 में 260 करोड़ रु से बढकर 2005-06 में 27,70,00 करोड रुपयें हो गया अर्थात् इस काल में कीमतों की वृद्धि को ध्यान में रखा जाए तो यह वृद्धि केवल 7.4 गुणा थी। उच्च एंव तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था पर केन्द्रीय परामर्श समिति (2005) ने यह सुझाव दिया था कि इस पर व्यय के अनुपात को 15 प्रतिशत बढ़ाया जाए तथा शिक्षा आयोग (1964-66) की सिफारिश की तर्ज पर व्यय का अनुपात 6 प्रतिशत होना चाहिए। माध्यमिक शिक्षा पर सरकार द्वारा किए गए कुल व्यय का मुश्किल से 3 प्रतिशत ही खर्च किया जाता है और पूर्णतया शिक्षा पर किए जाने वाले कुल खर्च का केवल 28 प्रतिशत व्यय किया जाता है।

माध्यमिक शिक्षा पर सरकार द्वारा किए गए कुल व्यय में केन्द्रीय सरकार का भाग बहुत कम है। अनुपातिक रुप में, केन्द्र केवल 6 प्रतिशत तथा राज्य सरकारें 94 प्रतिशत भाग व्यय करती है जैसा कि 2005-06 के बजट का अनुमान है। इसके साथ-साथ यह भी ध्यान देने की बात है कि माध्यमिक शिक्षा पर जय का एक बड़ा भाग, जैसा कि अन्य स्तरों पर भी होता है बिना नियोजन का होता है। योजनात्मक व्यय मुश्किल से केवल 10 प्रतिशत ही होता है। योजना व्यय में केन्द्र सरकार का भाग लगभग 1/3 होता है, परन्तु अनियोजित व्यय में

इसका भाग-1 के बराबर ही होता है। पिछले कुछ वर्षो में यद्यपि इसमें कुछ ज्यादा अन्तर नहीं आया है, परन्तु केन्द्रीय सरकार की भूमिका साल दर साल कम होती नजर आ रही है जैसा कि निम्न सारणी से स्पष्ट होता है।

सारणी 5.6 भारत में माध्यमिक शिक्षा पर सरकार व्यय: केन्द्र राज्य अनुपात

	1994-95			2005-06		
हजार करोड़ रु	नियोजित	अनियोजित	कुल	नियोजित	अनियोजित	कुल
केन्द्र	0.33	0.29	0.62	0.79	0.80	1.59
राज्य/ संघीय क्षेत्र	0.69	7.76	8.45	1.87	24.24	26.11
कुल प्रतिशत भाग	1.02	8.05	9.70	2.66	25.04	27.70
केन्द्र	32.40	3.60	6.80	29.70	3.20	5.70
राज्य/ संघीय क्षेत्र	67.60	96.40	93.20	70.30	96.80	94.30
कुल	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00
नियोजित अनियोजित	11.20	88.00	100.00	9.60	90.40	100.00

स्त्रोत Analysis of Budgeted Expenditure on Education (Relevant Years) New Delhi: Ministry of HRD

माध्यमिक शिक्षा पर सरकारी व्यय में सरकारी स्कूलों पर, स्थानीय स्कूलों तथा सरकारी सहायता प्राप्त निजी स्कूलों पर व्यय शामिल होता है। कुल व्यय का 1/3 भाग सरकारी स्कूलों पर खर्च किया जाता है तथा 10 प्रतिशत से कम भाग अनुदान के रूप में स्थानीय स्कूलों को दिया जाता है। इन तीनों प्रकार के स्कूलों पर सरकारी व्यय के वितरण में विभिन्न दशकों में कोई अधिक परिवर्तन नहीं आया है जैसा कि निम्नलिखित सारणी में दर्शाया गया है:-

सारणी 15.7 हा भारत में सरकारी तथा निजी स्कूलों पर माध्यमिक शिक्षा पर सरकारी व्यय

वर्ष	सरकारी स्कूल	स्थानीय स्कूल	पब्लिक स्कूल	निजी	स्कूल कुल
1981-81	33.2	8.4	41.6	49.3	100
1990-91	332.9	7.5	40.4	51.7	100
2000-01	32.9	8.6	41.5	51.9	100
2005-06	34.7	8.8	43.5	46.6	100

लगभग सभी विद्यालय अनुदान की अपर्याप्तता की शिकायत करते हैं। यह भी ध्यान देने की बात है कि शिक्षा पर व्यय का अधिकतर भाग वेतन पर ही खर्च होता है। अतएव एक ओर तो शिक्षा के लिए धन की कमी है और दूसरी ओर जो धन आबंटित किया जाता है, वह सब वेतनों के भुगतान में लग जाता है। यह शिक्षा की प्रगति में एक बाधा बनकर रह जाता है। विस्तृत रूप से इस तथ्य को माना जा रहा है कि माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए उपलब्ध साधनों से अधिक की आवश्यकता है। उदाहरण के रुप में माध्यमिक शिक्षा पर केन्द्रीय परामर्श के द्वारा यह अनुमान लगाया जा रहा है कि 2014-15 तक माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिए अतिरिक्त 4,40,000 करोड़ रुपए की आवश्यकता होगी।

15.9 विभिन्न प्रकार के स्कूलों को अनुदान (Grants to Different Types of School)

सरकारी स्कूलों में केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों द्वारा चलाए गए तथा स्थानीय निकायों द्वारा स्कूलों को शामिल किया जाता है। निजी स्कूलों मे वे स्कूल शामिल होते है जिन्हें या तो सरकार से वित्तीय सहायता प्राप्त होती है या फिर जिन्हें वित्तीय सहायता प्राप्त नहीं होती है। यद्यपि सरकार द्वारा सहायता प्राप्त निजी स्कूल माध्यमिक शिक्षा प्रणाली का प्रमुख माने जाते है। परन्तु धीरे-2 इनका अनुपात कम होता जा रहा है जबसे निजी स्कूल जो सरकार से कोई वितीय सहायता नहीं लेते, की संख्या में निरंतर वृद्धि होती रही है। 2004-05 में इनकी संख्या लगभग 30 प्रतिशत है सरकारी स्कूलों की 33 प्रतिशत स्थानीय निकायों द्वारा स्थापित की 8 प्रतिशत तथा निजी सहायता प्राप्त की 29 प्रतिशत है।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि ऐसे कौन से सिद्धांत है जिनके आधार पर इन स्कूलों को वित्तीय सहायता मिलती है। सभी जानते है कि माध्यमिक शिक्षा राज्य का विषय है, इसलिए माध्यमिक स्कूलों को वितीय सहायता देने का कार्य भी राज्य नीतियों के द्वारा निर्धारित किया जाता है, जो एक राज्य से दूसरे राज्य में भिन्न होता है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

Self Evaluation Questions

1. पंचवर्षीय योजनाओं में शिक्षा पर कुल व्यय तथा माध्यमिक शिक्षा पर व्यय की तुलना कीजिए।

   Compare the Total Expenditure on education and expenditure on secondary education in five year plans.

2. पंचवर्षीय योजनाओं में माध्यमिक शिक्षा के विकास का वर्णन कीजिए।

   Describe The progress of secondary education in five years plans.

3. माध्यमिक स्कूलों के प्रकारों की व्याख्या कीजिए।

   Explain the different types of secondary schools.

15.9 सारांश
(Summary)

आधुनिक विश्व ने यह अनुभव किया है कि लोगों की शिक्षा पर धन खर्च करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कोई भी देश चाहे साम्यवादी हो, चाहे प्रजातांत्रिक या तानाशाही शिक्षा पर किया जाने वाला खर्च कुल खर्च का एक आवश्यक मद माना जाता है। अत: समय के साथ-2 लोगों में यह जागरुकता होती जा रही है कि शिक्षा पर किया जाने वाला खर्च एक प्रकार का निवेश है। जिसका प्रतिफल उच्च राष्ट्रीय आय तथा देश के विकास के रुप में प्राप्त होता है। यदि भारत की वित्तीय व्यवस्था पर दृष्टि डाली जाए तो पांचवी योजना तक शिक्षा पर किया जाने वाला खर्च बहुत कम था और राष्ट्रीय आयोग ने यह सुझाव भी किया था कि शिक्षा पर कम से कम कुल घरेलू उत्पाद का 6 प्रतिशत खर्च किया जाना चाहिए, परन्तु अभी तक हम वास्तव में इस पर केवल 3 प्रतिशत ही खर्च कर रहे है। इसमें से भी अधिकतर भाग केवल प्राथमिक शिक्षा के विकास पर खर्च किया जा रहा है।

स्वतन्त्रता से लेकर अब तक यदि माध्यमिक शिक्षा की वित्त व्यवस्था का अवलोकन किया जाए तो यह ज्ञात होता है कि माध्यमिक शिक्षा पर कुल प्रत्यक्ष व्यय में एक स्वाभाविक वृद्धि दिखाई दी। 1946-47 में हाई स्कूलों में प्रत्यक्ष व्यय 12.22 करोड़ था। प्रथम पंचवर्षीय योजना में माध्यमिक शिक्षा पर व्यय 20 करोड था और नौंवी योजना में 2322.7 करोड था तथा दसवीं योजना में यह 4325 करोड रुपए था। यदि सम्पूर्ण वित्त व्यवस्था पर दृष्टि डाली जाए तो यह ज्ञात होता है कि माध्यमिक शिक्षा का विकास कभी भी निदेश के लिए प्रमुख क्षेत्र नहीं रहा। यदि इस पर खर्च किया भी जाता है कि अधिकतर भाग केवल अध्यापकों के वेतन पर खर्च हो जाता है।

भारत सरकार प्राथमिक स्तर की शिक्षा का सार्वभौमिकरण करने के लिए दिन प्रतिदिन प्रयास कर रही है और इसी आधार पर 2010 में माध्यमिक शिक्षा के विस्तार की मांग अत्याधिक बढ़ जाएगी जिसके परिणामस्वरुप अधिक स्कूलों, अधिक अध्यापकों तथा अधिक वित्त की आवश्यकता होगी। ऐसी परिस्थिति में माध्यमिक शिक्षा पर किए जाने वाले खर्च को उससे अधिक बढ़ाना होगा जितना आज किया जा रहा है।

15.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

Azad, J.L. Government Support for Higher Education and Research, NIEPA, Concept, New Delhi,1984.

MHRD Selected Education Statistics: New Delhi, Govt. of India, 1999-2000

NCERT Fourth All India Education Survey (Vol, 1 and 11)

NCERT, New Delhi, 1992

NIEPA Financing of Secondary Education in India: Principle and practices of Grant- in aid System, Mimeo, NIPA, New Delhi, 2002.

NSSO Attending an Educational Institution in India: Its level; Nature and cost, 52nd Round: July 1995-june 1996.

Report of CABE Committee on Financing Higher and Technical Education, NIEPA/ MHRD, Govt. of India, New Delhi, 2005.

Tilak, B.G. Financing of Secondary Education in India, Shipra Publication, Delhi, 2008.

Tilak, B.G. (Ed.) Financing Education in India: Current Issues and Changing perspective, Ravi Books Delhi, 2003.

Shukla p.D. The New Educational policy in India, Sterling Publisher, New Delhi, 1998.

इकाई-16

माध्यामिक शिक्षा में नियोजन एवं प्रशासन
(Planning and Administration of Secondary Education)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

16.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

16.1 प्रशासन का अर्थ (Meaning of Administration)

16.2 शैक्षिक प्रशासन (Educational Administration)

16.3 केन्द्रीय शिक्षा प्रशासन (Central Educational Administration)

16.4 राज्य स्तर पर शिक्षा प्रशासन (Educational Administration at State Level)

16.5 स्थानीय शिक्षा प्रशासन (Educational Administration at Local Level')

16.6 शिक्षा प्रशासन की समस्याएँ (Problems of Educational Administration)

16.7 समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव (Recommendations for Solving Problems)

16.8 शिक्षा प्रशासन के नवीनीकरण के लिए सुझाव (Recommendations for Renovation of Educational Administration)

16.9 शैक्षिक नियोजन (Educational Planning)

16.10 शैक्षिक संस्था के प्रधान/ मुख्याध्यापक के कर्तव्य (Duties of principal / Headmaster of Educational Instiute)

16.11 सारांश (Summary)

16.12 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

16.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप:

1. शैक्षिक प्रशासन के अर्थ व महत्व से अवगत होंगे।
2. शैक्षिक प्रशासन के उद्देश्यों को समझ कर शैक्षिक गुणवत्ता बनाए रखने के लिए कार्य कर सकेंगे।
3. शैक्षिक प्रशासन में केन्द्र, राज्य तथा स्थानीय निकाय की भूमिका से अवगत होंगे।
4. शैक्षिक प्रशासन की समस्याओं के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे व उन समस्याओं का समाधान करने के लिए जागरुक होंगे।

5. शिक्षा नियोजन के महत्व को जानेंगे व भविष्य में अधिक सफलता के लिए योजनाबद्ध कार्य करने के हेतु प्रेरित होंगे।
6. केन्द्र, राज्य तथा स्थानीय स्तर पर शैक्षिक प्रशासन की तुलना कर सकेंगे।
7. अपने राज्य में स्थानीय स्तर पर व राज्य स्तर पर शैक्षिक प्रशासन की प्रभावशीलता की जांच कर सकेंगे।
8. केन्द्र स्तर पर माध्यमिक शिक्षा के प्रशासन से सम्बन्धित संस्थानों की कार्यप्रणाली को समझ सकेंगे व उनकी प्रभावशीलता का मूल्यांकन कर सकेंगे।
9. माध्यमिक स्तर पर स्थानीय शासन में योगदान देने योग्य बन सकेंगे।

शिक्षा प्रणाली को सुचारु रुप से चलाने के लिए अच्छी योजना एवं प्रशासन की आवश्यकता होती है। शिक्षा का प्रशासन राष्ट्रीय, राज्य एवं स्थानीय स्तर पर समन्वित रुप से चलाया जाता है। शिक्षा प्रशासन में प्रबंध, निर्देशन एवं सेवा विचार शामिल होता है। माध्यमिक शिक्षा स्तर को सुचारु ढंग से चलाने के लिए अच्छे व समन्वित प्रशासन की आवश्यकता होती है। शिक्षा के प्रशासनिक प्रारुप के अंतर्गत लोकतांत्रिक मूल्यों को उचित स्थान दिया जाना चाहिए। इस इकाई में हम माध्यमिक शिक्षा स्तर पर प्रशासन एवं नियोजन का अध्ययन करेंगे।

16.1 प्रशासन का अर्थ (Meaning of Administration)

प्रशासन (Administration) शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के मूल शब्द Minister से हुई है, इसका अर्थ है सेवा कार्य या ऐसा कार्य जिससे दूसरों का कल्याण हो। प्रशासन में प्रबंध, निर्देशन तथा सेवा करने के विचार को ग्रहण किया जाता है। प्रशासन का उद्देश्य व्यक्ति, संस्था, राष्ट्र या समाज के लिए ऐसा वातावरण तैयार करना है जिस में विकास हो सके।

कार्ल मार्क्स के अनुसार- *प्रशासन चैतन्य उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये एक निश्चयात्मक क्रिया है। यह उन वस्तुओं के लिये संगठित प्रयत्न का तथा साधनों का निश्चयात्मक प्रयोग है जिसको हम क्रियान्वित करने चाहते है"।*

नीग्रो के मतानुसार- *'किसी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए मनुष्यों तथा सामग्रियों का जो संगठन तथा उपयोग किया जाता है उसे प्रशासन कहते है।'*

लूथर गुलिक के विचार में - *प्रशासन का संबंध कार्यों के सम्पन्न करने से है जिसके साथ निर्धारित लक्ष्य भी पूरा हो सके।'*

अत: प्रशासन एक कला है जिसमें साधनों के जुटाने के साथ-साथ उनका उपयुक्त प्रयोग एक अच्छे प्रशासक द्वारा जाता है। प्रशासन के अन्तर्गत मुख्य रुप से व्यक्ति, सामग्री, उद्देश्य प्राप्ति तथा कार्य कुशलता को शामिल किया जाता है। अच्छे प्रशासन के लिए प्रशासक को कार्यकुशल, योग्य, कर्मठ तथा विलक्षण बुद्धि वाला होना आवश्यक है। वर्तमान शिक्षा क्षेत्र में प्रशासन का अत्याधिक महत्व है क्योंकि आधुनिक युग में शिक्षा का क्षेत्र बहुत विस्तृत और व्यापक हो गया है। इस इकाई में हम शैक्षिक प्रशासन के विभिन्न पहलुओं के विषय में पढेंगे।

16.2 शैक्षिक प्रशासन
(Educational Administration)

शैक्षिक प्रशासन का उद्देश्य शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करना है। शैक्षिक संस्थान के प्राध्यापक, अध्यापक, शिक्षार्थी, प्रबंधक तथा शिक्षा विभाग के सारे कर्मचारी मिलकर शैक्षिक स्तर को उन्नत बनाने का प्रयत्न करते है। अत: इन समस्त सम्बंधित कर्मचारियों के कर्तव्य व अधिकारों को ठीक प्रकार से समझने व उनको कार्यान्वित करने का उतरदायित्व ही शैक्षिक प्रशासन है। संस्था के सभी कर्मचारियों के लिए उनके कर्तव्यों का निर्धारण करना शैक्षिक प्रशासन का कार्य है।

शैक्षिक प्रशासन की परिभाषाएँ

(Definitions of Educational Administration)

शैक्षिक अनुसंधान के विश्वकोष के अनुसार शैक्षिक प्रशासन एक प्रकार की प्रक्रिया है जिसके द्वारा सम्बंधित व्यक्तियों के प्रयासों का एकीकरण तथा उचित सामग्री का उपयोग इस प्रकार किया जाता है जिस से मानवीय गुणों का समुचित विकास हो सके।

फाक्स, विश और रफनर के अनुसार-

'शैक्षिक प्रशासन एक प्रकार की ऐसी सेवा करने वाली गतिविधि है, जिसके माध्यम से शैक्षिक प्रक्रिया के लक्ष्य प्रभावकारी ढंग से प्राप्त किए जाते हैं।'

शैक्षिक प्रशासन का स्वरुप नमनीय तथा लचीला होने के कारण समस्त भौतिक तथा मानवीय साधनों का उचित उपयोग करने में सहायक होता है।

शैक्षिक प्रशासन की विशेषताएं

(Characteristics of Educational Administration)

1. शैक्षिक प्रशासन की प्रकृति परिवर्तनशील है क्योंकि इसके अंतर्गत विस्तृत क्षेत्र को अपनाने तथा आवश्यक परिवर्तन की प्रक्रिया को अपनाया जाता है।
2. छात्रों के शैक्षिक विकास के साथ-साथ उनमें उचित दृष्टिकोण का विकास करना।
3. सम्पूर्ण जीवन में सम्बद्धता शैक्षिक प्रशासन का विशेष गुण है इसी के तहत बालकों के सर्वागीण विकास पर अधिक बल दिया जाता है।
4. शैक्षिक प्रशासन का उद्देश्य छात्रों के व्यक्तित्व को शिक्षा के विकास की ओर अभिमुख करना है।
5. उतम शैक्षिक प्रशासन शिक्षकों को स्वतन्त्रता तथा उन्नति के अवसर प्रदान करता है।
6. शैक्षिक प्रशासन छात्रों को सही मार्गदर्शन प्रदान करता है।
7. शैक्षिक प्रशासन छात्रों व कर्मचारियों में सहयोग व सदभावना का विकास करता है।
8. शैक्षिक प्रशासन की प्रकृति स्वच्छ व निष्पक्ष होती है यही व्यक्ति, राष्ट्र व शिक्षा की उन्नति का आधार है।

9. शैक्षिक प्रशासन का विकास शोध कार्यो तथा प्रयोगों पर अवलम्बित होने के कारण उनमें सुनिश्चितता तथा उपयोगिता अधिक होती है।

शैक्षिक प्रशासन की उपयोगिता केवल छात्रों, शैक्षिक संस्थानों (विद्यालय, कॉलेज आदि) तक सीमित नहीं अपितु यह राष्ट्र के भविष्य निर्माण का आधार है।

माध्यमिक विद्यालय में शैक्षिक प्रशासन

(Educational Administration in Secondary School)

विद्यालयों में औपचारिक शिक्षा के माध्यम से छात्रों के विकास की प्रक्रिया विद्यालय के विभिन्न अंगों के समन्वित योगदान पर आधारित होती है। शैक्षिक प्रक्रिया में उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए शैक्षिक प्रशासन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विद्यालय के विभिन्न मानवीय अंगों जैसे अध्यापक एक शिक्षणोत्तर कर्मचारियों की नियुक्ति, कार्य विभाजन, उनकी समस्याओं का निवारण, निर्धारित कार्यो का निरीक्षण व पर्यवेक्षण शैक्षिक प्रशासन द्वारा किया जाता है। विदयालयों में छात्रों का चयन व उनकी शैक्षिक प्रक्रिया में आने वाली समस्याओं का समाधान शैक्षिक प्रशासन ही करता है। इसी प्रकार से विद्यालय के भौतिक अंगों जैसे भवन, पुस्तकालय, प्रयोगशालाएं, वाचनालय आदि की व्यवस्था करना तथा इसका रख-रखाव करना प्रशासन का कार्य है। मानवीय तथा अमानवीय अंगों के समन्वय और व्यवस्था के द्वारा ही विद्यालय के उद्देश्यों की प्राप्ति संभव होती है। इन अंगो में परस्पर सम्बन्धों तथा उनकी समस्याओं का समाधान का कार्य भी विद्यालय प्रशासन के हाथों में होता है।

विद्यालय में शैक्षिक प्रशासन की महता इस प्रकार है-

1. विद्यालय प्रशासन, विद्यालय के मानवीय एवं भौतिक अंगों का समन्वय करता है।
2. कार्य का समुचित निर्धारण करके, निर्धारित कार्य का पर्यवेक्षण करता है।
3. विद्यालय के विभिन्न अंगों के पारस्परिक सम्बन्धों को मजबूत बनाता है।
4. विद्यालय में किसी भी प्रकार की समस्या का समाधान करता है।
5. विद्यालय की अवस्था का उतरदायित्व निर्वाह करके उसका निरीक्षण करता है।
6. नीतियों एवं उद्देश्यों के अनुरुप शैक्षिक कार्यक्रम की व्यवस्था करके उसका मूल्यांकन करता है।
7. विद्यालय के संगठन को व्यावहारिक दृष्टि से कार्यान्वित करके शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहयोग प्रदान करता है।

इस प्रकार विद्यालय में शैक्षिक प्रशासन विद्यालय की हर क्रियाकलाप, गतिविधि के लिए नीति निर्धारण से विद्यालय के संगठन, व्यावस्था, संचालन, पर्यवेक्षण, मूल्यांकन, नियन्त्रण तक हर प्रक्रिया का उतरदायित्व संभालता है।

शैक्षिक प्रशासन के उद्देश्य

(Objectives of Educational Administration)

किसी भी कार्य के उद्देश्य उसके होने की प्रक्रिया को दिशा प्रदान करते हैं। विभिन्न शिक्षाशास्त्रियों ने शैक्षिक के विभिन्न उद्देश्य दिए है जैसे:

सीयर्स के अनुसार शैक्षिक प्रशासन के उद्देश्य:-

1. कार्यो के प्रति उचित दृष्टिकोण
2. उचित निर्णय लेना तथा कार्य करना
3. शैक्षिक उपलब्धियों हेतु शैक्षिक प्रशासन को माध्यम बनाना

पी0सी0 रेन द्वारा प्रदत शैक्षिक प्रशासन के उद्देश्य-

1. विद्यार्थियों में सौन्दर्यानुभूति क्षमताओं को विकसित करना।
2. विद्यार्थियों की अन्तर्निहित क्षमताओं को प्रशिक्षित करना।
3. छात्रों का बौद्धिक व मानसिक विकास करना।,
4. शिक्षार्थियों के चरित्र का विकास करना।
5. छात्रों के दृष्टिकोण को व्यापक बनाना तथा उनकी शारीरिक शक्ति को विकसित करना।
6. छात्रों में कर्तव्य परायणता की भावना को विकसित करना।
7. विद्यार्थियों को स्वास्थ्य व शान्ति प्रदान करना।
8. विभिन्न विद्वानों द्वारा निर्मित लक्ष्यों के प्रति छात्रों में आस्था उत्पन्न करना।

शैक्षिक प्रशासन के प्रजातांत्रिक उद्देश्य:-

1. शिक्षण संस्थान के कर्मचारियों मे कर्तव्य परायणता की भावना को विकसित करना।
2. कार्यरत कर्मचारियों में सहयोग की भावना को बढ़ाना।
3. विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना।
4. विद्यार्थियों में प्रजातांत्रिक गुणों को विकसित करना।
5. छात्रों को अनुशासित जीवन हेतु प्रशिक्षण देना।
6. छात्रों में श्रेष्ठ नागरिकता का विकास करना।
7. छात्रों में सामाजिक व व्यावसायिक कुशलता का विकास करना।
8. छात्रों में जन्मजात प्रवृतियों को विकसित करना।
9. छात्रों में समता सदभावना को विकसित करना।
10. छात्रों में धर्मनिरपेक्षता तथा समाज सेवा की भावना विकसित करना।
11. छात्रों में राष्ट्रीयता की भावना विकसित करना।
12. प्रजातांत्रिक नीतियों के अनुरूप शिक्षण विधियों पाठ्यपुस्तकों तथा अन्य शैक्षिक गतिविधियों की व्यवस्था करना।

शैक्षिक प्रशासन के सिद्धांत व प्रक्रिया

(Principles and Process of Educational Administration)

लूथर गुलिक ने प्रशासनिक प्रक्रिया के अंतर्गत 7 सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। ये सात सिद्धान्त' के नाम से जाने जाते है। ये सिद्धांत इस प्रकार है।

1. **योजना निर्माण करना (Planning)-** इसके अतंर्गत उद्देश्यों के अनुरुप उन्हें प्राप्त करने के लिए वरीयता क्रम में पद निश्चित किए जाते है।
2. **संगठन करना (Organizing) -** उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अनौपचारिक प्रशासनिक अधिकृतियों का स्तरीकरण करना चाहिए ताकि उचित समन्वय किया जा सके।

3. **स्टॉफ की नियुक्ति करना (Staffing) -** संगठन के लिए उचित योग्यता वाले व्यक्तियों का चयन किया जाना आवश्यक है।
4. **निर्देशन करना (Directing) -** कार्य को सुचारु रुप से चलाने के लिए निर्णय लेना तथा कार्य निष्पादन के लिए आदेश देना भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
5. **समन्वय करना (Coordinating)-** कार्य करने वाली विविध श्रेणियों में समन्वय स्थापित करना प्रशासक के लिए आवश्यक है।
6. **प्रतिवेदन तैयार करना (Reporting)-** उच्च अधिकृतियों को निरंतर यह सूचित करते रहना चाहिए कि कार्य की प्रगति कैसी चल रही है तथा नीचे के अधिकृतियों से उनके कार्य का विवरण मांगना चाहिए ताकि वस्तुस्थिति से प्रशासक अवगत हो।
7. **वित्त व्यवस्था करना (Budgeting)-** वित्तीय वर्ष के लिए योजना बनाना तथा हिसाब लगाना कि संगठन के विविध मदों पर क्या आय एवं व्यय होगा तथा क्या लाभ या हानि होगी?

प्रशासन प्रक्रिया- फेयोल तथा गुलिक के अनुसार प्रशासन प्रक्रिया में 5 कार्यो को सम्मिलित किया गया जो इस प्रकार है।

1. योजना **(Planning)**
2. संगठन **(Organizing)**
3. निर्देशन **(Direction)**
4. समन्वय **(Coordination)**
5. मूल्यांकन **(Evaluation)**

केम्बेल तथा ग्रेग द्वारा दी गई शिक्षा प्रशासन प्रक्रिया के अंग निम्नलिखित है।

1. नीति निर्धारण **(Decision Making)**
2. आयोजन **(Planning)**
3. व्यवस्था करना **(Organizing)**
4. सम्प्रेषण **(Communication)**
5. प्रभाव डालना **(Influencing)**
6. समन्वय करना **(Coordinating)**
7. मूल्यांकन करना **(Evaluating)**

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. शैक्षिक प्रशासन से आप क्या समझते है?
   What do you meant by 'Educational Administration'?
2. विद्यालय के संदर्भ में शैक्षिक प्रशासन का क्या महत्व है?
   What is the importance of Educational Administration concerned with School?

3. शैक्षिक प्रशासन के क्या उद्देश्य है?
What are the objectives of Educational Administration?
4. शैक्षिक प्रशासन की प्रक्रिया की व्याख्या करें।
Explain the Process of Educational Administration

शैक्षिक प्रशासन के मुख्य कार्य

(Main Functions of Educational Administration)

विभिन्न शिक्षा विद्वानों ने शैक्षिक प्रशासन के विभिन्न कार्यो का उल्लेख किया है। सीयर्स, लूयर, गुलिक जानरेम्समेयर तथा अन्य विद्वानों के द्वारा बताए गए कार्यो को सम्मिलित रुप से निम्न प्रकार में प्रस्तुत किया जा सकता है।

1. **नीतियों व विधियों का निर्धारण (Policies and Procedure Design)-** यह कार्य शिक्षा मंत्रालय, शिक्षा विभाग के सचिवों तथा निदेशकों का है, जिससे शैक्षिक व्यवस्था को गतिशीलता मिलती है।
2. **शैक्षिक व्यवस्था (Educational Organization)-** शैक्षिक प्रशासन का एक मुख्य कार्य शिक्षा की व्यवस्था करना भी है। शैक्षिक प्रशासन के द्वारा केन्द्रीय व प्रान्तीय शिक्षा मंत्रालय की नीतियों को क्रियान्वित किया जाता है।
3. **शिक्षा की योजना बनाना (Educational Planning) -** उत्तम शिक्षा व्यवस्था के लिए शैक्षिक योजना बनाना अत्यन्त आवश्यक होता है। शैक्षिक संगठनों का पारस्परिक सहयोग योजना बनाने की प्रक्रिया में बहुत महत्व रखता है। अच्छी शिक्षा व्यवस्था के लिए शैक्षिक प्रशासन को विस्तृत एवं प्रगतिशील योजनाओं को बनाना परमावश्यक है। प्रशासन का प्रमुख कार्य राष्ट्रीय व जिला स्तर पर शैक्षिक योजनाओं को क्रियान्वित करना होना चाहिए।
4. **शिक्षा के लिए आर्थिक व्यवस्था करना (Economic Organization for Education)-** शिक्षा योजना को वास्तविकता में लागू करने के लिए धन की व्यवस्था करना आवश्यक है अन्यथा शिक्षण संस्थाओं में योजना को क्रियान्वित करना असंभव हो जाता है और शैक्षिक कार्य रुक सकते हैं। शिक्षालयों में प्रधानाध्यापक वित्त व्यवस्था के लिए उतरदायी होता है। राज्य में शिक्षा निदेशकों के अतिरिक्त वित्तीय निदेशक नियुक्त किए जाते हैं।
5. **शिक्षण संस्थाओं एवं कर्मचारियों की व्यवस्था (Provision of Educational Institutions and Employees)-** शिक्षण संस्थाओं की व्यवस्था के साथ ही साथ इनमें कर्मचारियों की व्यवस्था करना भी शैक्षिक प्रशासन का उतरदायित्व है। कर्मचारियों का चयन व नियुक्ति, प्रशिक्षण, पदोन्नति, पेंशन आदि अनेक कार्य शैक्षिक प्रशासन द्वारा किए जाते है।
6. **पर्यवेक्षण व निरीक्षण (Supervision and Observation)-** शैक्षिक संस्थाओं में शिक्षा के उच्च स्तर का बनाए रखने के लिए पर्यवेक्षण तथा निरीक्षण आवश्यक है। एस0 एन0 मुखर्जी के अनुसार विद्यालयों के निरीक्षण का उद्भव भी जिज्ञासापूर्ण

है। जब केन्द्रीय या राज्य सरकार शिक्षा को वितीय सहायता प्रदान करती है तब उसका यह भी उतरदायित्व हो जाता है कि वह देखे शिक्षण संस्थाओं के लिए दी गई धनराशि का ठीक उपयोग हुआ है या नहीं।

7. **परीक्षाओं,प्रमाण-पत्रों व उपाधियों की व्यवस्था करना (Provisions of Examinations, Certificates and Degrees)-** प्राथमिक, माध्यमिक तथा विश्वविद्यालय स्तरों पर परीक्षाओं की व्यवस्था, प्रमाण-पत्रों तथा उपाधियों की व्यवस्था शैक्षिक प्रशासन का ही कार्य है।

8. **रिकार्डो की सुरक्षा की व्यवस्था करना (Provision of Security of Records)-** शैक्षिक संस्थाओं में शिक्षकों, शिक्षालयों तथा शैक्षिक प्रक्रियाओं से सम्बंधित तथ्यों को सुरक्षित रखने की व्यवस्था करने का उतरदायित्व भी शैक्षिक प्रशासन का है।

अत: यह स्पष्ट है कि शैक्षिक प्रशासन योजनाओं को बनाने, उनका व्यवहारिक उपयोग करने, पर्यवेक्षण तथा निरीक्षण व रिकार्ड रखने की व्ययस्था करना भी शैक्षिक प्रशासन का कार्य है।

शैक्षिक प्रशासन तथा संचालन में राष्ट्रीय सरकार, प्रादेशिक सरकार, स्थानीय निकाय तथा प्राइवेट संगठनों का प्रतिभागित्व तथा उनका स्वरुप

भारत में शिक्षा को समवर्ती सूची में रखा गया है इसका अर्थ यह है कि शैक्षिक विषय केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकार, दोनों के उतरदायित्व क्षेत्र में है। यद्यपि विवाद की स्थिति उत्पन्न होने पर राष्ट्रीय (केन्द्र) सरकार का अधिकार अन्तिम माना जाता है। जिसके परिणामस्वरुप शिक्षा क्षेत्र प्रगति के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकार दोनों ही उत्तरदायी है।

16.3 केन्द्रीय शिक्षा प्रशासन (Central Educational Administration)

शिक्षा क्षेत्र पर पूर्ण नियंत्रण के उद्देश्य से राष्ट्रीय स्तर पर एक व्यापक प्रशासनीय व्यवस्था है। पहले शिक्षा के मामलों का मंत्री शिक्षामंत्री कहलाता था, किंतु 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा के बाद अब मानव संसाधन विकास मंत्री शिक्षा के मामलें में केन्द्र सरकार का मंत्री, अब वह मंत्रिमण्डल के केबिनेट स्तर का मंत्री होता है। उसकी सहायता के लिए शिक्षा राज्यमंत्री, उपशिक्षामत्री आदि होते है। शिक्षा मंत्रालय का अधिशासी अधिकारी शिक्षा सचिव होता है। वह वरिष्ठ आई0ए0एस0 संवर्ग का होता है, जिसकी सहायतार्थ संयुक्त शिक्षा सचिव होते है।, निचले स्तर पर उप शिक्षा सचिव तथा उपशिक्षा सलाहकार के पद होते है, जो शिक्षा के निर्धारित पक्षों के मामलें में नीति व प्रदत अधिकारों की सीमा में नियंत्रण नियमन करते हैं तथा नीति में परिवर्तन व संशोधन हेतु प्रस्ताव तैयार करते है।

सीधे नियंत्रणाधीन संस्थाओं के प्रशासनिक नियंत्रण हेतु देश में तकनीकी शिक्षा सेवा के लिए 4 आंचलिक व 11 क्षेत्रीय केन्द्र है। केन्द्रीय विद्यालयों के प्रशासनिक नियंत्रण हेतु केन्द्रीय विद्यालय संगठन है। इसी प्रकार नवोदय विद्यालयों हेतु नवोदय विद्यालय संगठन है।

कार्य को सुचारु रुप से चलाने के लिए शिक्षा मंत्रालय को निम्नलिखित भागों में बांटा गया है:-

1. प्रशासनिक विभाग
2. छात्रवृत्ति विभाग
3. शोध तथा प्रकाशन विभाग
4. सामाजिक शिक्षा तथा समाज कल्याण विभाग
5. शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन विभाग
6. प्राथमिक तथा बुनियादी शिक्षा विभाग
7. माध्यमिक शिक्षा विभाग
8. हिन्दी विभाग
9. केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय से सम्बंधित तीन मुख्य कार्यालय है:-
10. केन्द्रीय हिन्दी निर्देशालय
11. माध्यमिक शिक्षा प्रसार निर्देशालय
12. समाज कल्याण व पुनर्वास निर्देशालय

केन्द्रीय (राष्ट्रीय) सरकार के शिक्षा सम्बन्धी कार्य

(Educational functions of Central Government)

केन्द्रीय सरकार के शिक्षा सम्बन्धी प्रमुख कार्य इस प्रकार है:-

1. केन्द्रीय शासित राज्यों में शिक्षा की व्यवस्था करना।
2. उच्च शिक्षा का स्तर निर्माण, शोध व्यवस्था एवं औद्योगिक एवं वैज्ञानिक शिक्षा में सह-सम्बन्ध स्थापित करना।
3. औद्योगिक तथा वैज्ञानिक शिक्षा संस्थाओं जिन्हें राष्ट्र की संसद ने राष्ट्रीय महत्व की संस्थाएं घोषित किया है, का संचालन करना।
4. प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क एवं अनिवार्य बनाने के लिए प्रान्तीय सरकारों तथा निजी संस्थाओं को सहयोग देना।
5. प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा में सम्बन्ध करना।
6. केन्द्रीय सरकार मुख्यत: प्रौढ़ शिक्षा व स्कूल छोड कर बैठने वाले बालकों के लिए अनौपचारिक शिक्षा का प्रबंध करने में राज्य सरकार को सहयोग प्रदान करती है।
7. केन्द्रीय सरकार शिक्षा में व्यावासायीकरण, राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियान्वयन सामाजिक-आर्थिक रुप से पिछड़े वर्ग, (महिलाएं, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचितत जन-जाति के छात्र, बाधित छात्र) के लिए शिक्षा का प्रबंध करने में राज्य सरकार को सहयोग करती है।
8. विद्यालयों की भौतिक दशा में सुधार कार्यक्रम आदि के मामलों में राज्य सरकारों को सहायता देती है।

राष्ट्रीय स्तर पर माध्यमिक शिक्षा के विकास की ऐजेन्सियाँ

(Agencies for the development of Secondary Education at National Level)

राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा के विकास के लिए शिक्षा मंत्रालय, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् कार्य करती है।

शिक्षा मंत्रालय मुख्य रुप से दो प्रकार के कार्य करता है:

- शिक्षा संबंधी सूचनाओं का आदान प्रदान शिक्षा मंत्रालय द्वारा किया जाता है। यह उसके अपने अधिकार के नाते ही नहीं अपितु योजना में महत्वपूर्ण सहायता देने की दृष्टि से भी आवश्यक है। यह राज्य सरकारों से महत्वपूर्ण शैक्षिक विषयों पर जानकारी प्राप्त करता है, उसका विश्लेषण करता है और सभी संबंधित व्यक्तियों और संस्थाओं की जानकारी के लिए उसे प्रकाशित करता है।
- शिक्षा मंत्रालय का -दूसरा बडा उतरदायित्व है एक सुयोजित सांख्यिकी सेवा की स्थापना करना जो शैक्षिक योजना नीति निर्धारण और मूल्यांकन की दृष्टि से सहायक होता है।

शिक्षा मंत्रालय के अनेक सलाहकार निकायों में से सबसे महत्वपूर्ण है केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड, जो 1935 से काम कर रहा है। भारत सरकार के शिक्षा मंत्री इसके अध्यक्ष और सभी राज्यों के शिक्षा मंत्री इसके सदस्य है।

माध्यमिक शिक्षा के प्रशासन को सुचारु रुप से चलाने के लिए दूसरी महत्वपूर्ण एजेंसी है।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद

(National Council of Educational Research and Training)

इसका मुख्य कार्य राज्यों के शिक्षा विभागों के साथ मिलकर स्कूली शिक्षा को विशेष रुप से ध्यान में रखते हुए विस्तार कार्य करना है। संघ के शिक्षा मंत्री इसके अध्यक्ष और सभी राज्यों के शिक्षा मंत्री इसके सदस्य होते है। यह माध्यमिक स्कूलों के प्राध्यापकों को प्रशिक्षण देने का कार्य भी करता है। केन्द्रीय शिक्षा संस्थान, दिल्ली का कार्यभार भी परिषद् के कंधों पर ही है।

16.4 राज्य स्तर पर शिक्षा प्रशासन (Educational Administration at State Level)

राज्य सरकार अपने शिक्षा सम्बन्धी कार्य करने में पूर्ण रुप से स्वतन्त्र होती है। राज्यों में शिक्षा प्रशासकीय प्रारुप निम्न है:-

कैबिनेट शिक्षा मन्त्री तथा अन्य सहायक

(Cabinet Education Minister and Other Associates)

शिक्षा विभाग का सर्वोच्च अधिकारी शिक्षा मंत्री होता है, जिसकी नियुक्ति राज्यपाल द्वारा की जाती है। कैबिनेट शिक्षा मन्त्री की सहायता के लिए राज्य शिक्षा मंत्री तथा दो उप शिक्षामंत्री होते है।

यह शिक्षा मंत्री जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि होता है तथा राज्य के विधानमण्डल के प्रति उतरदायी होता है। शिक्षामंत्री का प्रमुख कार्य शिक्षा नीति का निर्धारण करना तथा राज्य का शिक्षा पद्धति को नेतृत्व प्रदान करता है।

शिक्षा विभाग (Department of Education)- शिक्षा विभाग शिक्षामंत्री को कार्य संचालन में सहायता प्राप्त करता है। शिक्षा विभाग के प्रमुख कार्य निम्नलिखित है:-

1. नियमित कार्य के अंतर्गत नियम बनाना।
2. विद्यालय एवं महाविद्यालयों का संचालन करना।
3. शिक्षा के क्षेत्र में उचित नेतृत्व करना, शिक्षा की दीर्घ योजना बनाना, तथा समन्वय स्थापित करना।

शिक्षा विभाग के दो मुख्य अंग है।

1. **शिक्षा सचिवालय (Education Secretariet)-** इसका प्रत्यक्ष संबंध शिक्षामंत्री तथा उपशिक्षामंत्री से होता है। इस सचिवालय का प्रमुख अधिकारी शिक्षा सचिव कहलाता है। यह शिक्षा सचिव अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा का सदस्य होता हे।
2. **शिक्षा निदेशालय (Directorate of Education)-** यह एक कार्यकारी संस्था है। इस संस्था का मुख्य कार्य प्रशासन की सामान्य नीतियों को प्रकाश में लाना है। यह संस्था राज्य सरकार तथा शिक्षा संस्थाओं के बीच कड़ी का काम करती है। इस संस्था का सर्वोच्च अधिकारी शिक्षा निर्देशक एंव संचालक होता है। शिक्षा निर्देशक का कार्यभार अत्याधिक होने के कारण उसकी सहायता के लिए अन्य अधिकारी होते है। 1 प्रभागीय अधिकारी 2. जिला अधिकारी
3. **राजकीय शिक्षा परामर्शदाता, मण्डल (State Education Advisory Mandal)-** शिक्षा सम्बन्धी मामलों में परामर्श देने के लिए समस्त राज्यों में शिक्षा परामर्श दाता मण्डलों की स्थापना की गई है।
4. **राज्य शैक्षिक अनुसंधान व प्रशिक्षण परिषद (State Council of Educational Research and Training)-** राज्य स्तर पर स्कूली शिक्षा के विकास के लिए S.C.E.R.T. महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके प्रमुख कार्य निम्नलिखित है:-
   - शिक्षा में क्रियात्मक अनुसंधान पर बल
   - शिक्षा में अनुसंधान का समन्वय
   - पूर्व सेवा एवं सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों का संगठन
   - स्कूल-विस्तार सेवाओं में संलग्न एजेन्सियों को शैक्षिक अनुसंधान में परामर्श तथा प्रशिक्षण प्रदान करना।
   - स्कूलों तथा शिक्षा विभागों को शिक्षा में आधुनिक शिक्षण तकनीकों, शिक्षण विधियों तथा खोजों से परिचित कराना।
   - आवश्यक शिक्षण अधिगम सामग्री का निर्माण करना व प्रकाशित करना।

- राज्य सरकार द्वारा प्रदत शैक्षिक अनुसंधानों व प्रशिक्षण के कार्यक्रमों को चलाना।

माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार- 'राज्य की शिक्षा परामर्शदाता मण्डल, केन्द्रीय शिक्षा परामर्शदाता मण्डल की भांति ही कार्य करें और उसका संगठन, निर्माण, व्यवसाय, विश्वविद्यालय, हाईस्कूल एवं उच्चतर माध्यमिक स्कूलों की प्रबंध समितियों, शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्ध रखने बाले अध्यक्षों, उद्योगों, व्यापार एवं विधान मण्डल तथा प्रतिनिधियों के द्वारा होना चाहिए। शिक्षा मंत्री इस बोर्ड का चैयरमैन तथा शिक्षा संचालक अथवा शिक्षा सचिव इसका सदस्य होना चाहिए।"

उपरोक्त, राज्य स्तर पर शिक्षा प्रशासन का मूल रुप है। विभिन्न राज्यों में शैक्षिक प्रशासन में कुछ विविधताएं भी पाई जाती है।

16.5 स्थानीय शिक्षा प्रशासन (Educational Administration at Local Level)

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त के अन्तर्गत स्थानीय संस्थाओं को भी शैक्षिक प्रशासन से सम्बंधित उतरदायित्व सौंपे गए है। इसमें प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करना, प्रमुख है। स्थानीय स्तर पर नगर निगम अथवा नगर पालिका और जिला परिषद् अथवा जिला बोर्ड शैक्षिक प्रशासन में सम्मिलित है।

जिला स्तर पर ग्रामीण क्षेत्रों के शिक्षा प्रशासन के लिए जिला परिषदों या जिला बोर्डो का गठन किया गया। इसके अधीन ग्रामीण शिक्षा व्यवस्था ब्लॉक या पंचायत समितियों को सौंपी गई। शैक्षिक कार्यक्रमों के संचालन के लिए हर परिषद् या बोर्ड में एक शिक्षा समिति का गठन किया गया। इस समिति का गठन इस प्रकार होता है:-

1. जिलाधीश (पदेन)
2. जिला प्रमुख (पदेन निर्वाचित)
3. पंचायत समितियों से निर्वाचित एक प्रतिनिधि
4. शिक्षा विभाग का प्रतिनिधि-उपविद्यालय निरीक्षक

स्थानीय संस्थाओं के प्रशासन को निम्नलिखित रेखाचित्र से स्पष्ट रुप से समझा जाता है-

भारत में कुछ राज्यों में जैसे आध्रंप्रदेश और महाराष्ट्र प्राथमिक और माध्यमिक दोनों स्तरों की शिक्षा पंचायती राज संस्थाओं को सौंपी गई है। कुछ राज्यों में जिला स्तर को सौंपा गया है। जिले में सामान्य और व्यावसायिक दोनों प्रकार की शिक्षा जिला स्कूल बोर्ड के कार्यक्षेत्र में है। जिले के सभी सरकारी और स्थानीय स्वायत निकायों के स्कूल पर इस बोर्ड का प्रशासन है और राज्य सरकार द्वारा गैर-सरकारी संस्थाओं को सहायक अनुदान देने के संबंध में बनाए गए नियमों के अनुसार सभी को सहायक अनुदान देने का कार्य भी इसी बोर्ड के अधीन होता है।

जिला स्कूल बोर्ड जिले के स्कूली शिक्षा के विषय की योजनाओं का निर्माण करता है, स्कूली शिक्षा के विकास का माध्यम होता है। इस कार्य के लिए इसे राज्य सरकार और राज्य शिक्षा विभाग से आवश्यक आर्थिक सहायता व मार्गदर्शन प्राप्त होता है।

प्राईवेट संगठनों का प्रतिभागित्व

(Representation of Private Organizations)

प्राइवेट संगठनों द्वारा संचालित शिक्षण संस्थाएं दो प्रकार की होती है-

1. मान्यता प्राप्त
2. मान्यता व अनुदान प्राप्त

प्राइवेट संगठनों को पूर्व प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा चलाने की छूट है। इसीलिए कुछ प्राइवेट संगठनों द्वारा पूर्व प्राथमिक विद्यालयों से लेकर विश्वविद्यालय तक संचालित किए जाते है। कुछ प्राइवेट संगठन केवल मान्यता प्राप्त करते है लेकिन अनुदान प्राप्त नहीं करना चाहते। उदाहरण स्वरुप पब्लिक स्कूलों की श्रृंखला इसी श्रेणी में आती है। वे अपनी व्यवस्था स्वयं द्वारा निर्धारित ऊँची दरों के शिक्षण शुल्क, चन्दा, दान आदि से करते है।

16.6 शिक्षा प्रशासन की समस्यायें (Problems of Educational Administration)

भारत में शिक्षा-प्रशासन की मुख्य समस्यायें निम्नलिखित है:-

1. शिक्षा के प्रशासनिक प्रारुप के अंतर्गत लोकतांत्रिक मूल्यों की उपेक्षा की जाती है।
2. शिक्षा का प्रशासनिक ढांचा, शैक्षिक कार्य को तो सामान्य रुप से करना चाहता है, लेकिन शिक्षा की समस्याओं की ओर कोई ध्यान नहीं देता।
3. भिन्न-भिन्न मन्त्रालय शिक्षा के अनेक कार्यक्रमों का संचालन करते हैं। लेकिन ऐसा करने से इन मंत्रालयों को शिक्षा मंत्रालय के साथ शैक्षिक नीति एवं कार्यो का संचालन करने में कठिनाई अनुभूत होती है।
4. अलग-अलग मंत्रालयों द्वारा शिक्षा के विचित्र कार्यक्रमों का संचालन करने से, उनमें दोहरापन आ जाता है जो शिक्षा क्षेत्र में अपव्यय जैसी समस्याओं का कारण है।
5. शिक्षा संचालकों एवं शिक्षासचिवों के मध्य सामंजस्य का अभाव भी शैक्षिक प्रशासन की एक महत्वपूर्ण समस्या है।

16.7 समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव (Recommendations for Solving Problems)

I. सैकेण्डरी-शिक्षा आयोग के सुझाव (Recommendations of Secondary Education Commission)- आयोग ने ऐसे प्रशासन पर जोर दिया जो शिक्षा-प्रसार तथा शिक्षा-विकास के लिए उतरदायी हो। इस संदर्भ में आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिए-

1. **शिक्षा निदेशक (Director of Education)-** शिक्षा निदेशक ऐसा अधिकारी होना चाहिए जिस का मुख्य दायित्व शिक्षा-मन्त्री को शिक्षा सम्बन्धी परामर्श देना हो। इसके लिए आवश्यक है कि उसका दर्जा ज्वाइंट सैक्रेटरी के बराबर हो और मंत्री तक उसकी सीधी पहुंच हो।
2. **मंत्रियों की कमेटी (Committee of Ministers)-** केन्द्रीय तथा प्रांतीय स्तर पर मंत्रियों की कमेटी बनाई जाए जो इस बात पर विचार विमर्श करें कि विभाग के साधनों को किस प्रकार प्रयुक्त किया जा सके।
3. **विभागीय मुख्यों की तालमेल समिति (Coordinating Committee of Departmental Heads)-** शिक्षा के सभी क्षेत्रों में विकास की विधियों पर विचार विमर्श करने के लिए शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों के विभागों के मुख्यों की एक तालमेल कमेटी बनाई जाए।
4. **सैकेण्डरी शिक्षा बोर्ड (Central Advisory Board of Education)-** सैकेण्डरी-शिक्षा की सामान्य नीतियों को निर्धारित करने के लिए सेकेण्डरी-शिक्षा बोर्ड का निर्माण करना चाहिए।
5. **बोर्ड की उपसमिति (Sub-Committee of Board)** बोर्ड की उपसमिति परीक्षाओं की व्यवस्था करनी चाहिए।
6. **अध्यापक- प्रशिक्षण-बोर्ड (Teacher's Training Board) -** अध्यापक-प्रशिक्षण बोर्ड की स्थापना की जाए जो अण्डर-ग्रेजुएट के प्रशिक्षण की व्यवस्था करे। स्नातक अध्यापकों के प्रशिक्षण में सुधार करने के लिए यह बोर्ड विश्वविद्यालयों को आवश्यक सुझाव दे सकेगा।
7. **केन्द्रीय शिक्षा परामर्श बोर्ड- (Central Advisory Board of Education)-** केन्द्रीय शिक्षा परामर्श बोर्ड के द्वारा भारत की शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन किया जाए और, परिषद् द्वारा प्रस्तुत सुझावों को लागू किया जाए।
8. जिला विद्यालय निरीक्षक शैक्षिक समस्याओं के प्रति सदैव जागरुक रहें।

II. कोठारी आयोग के सुझाव (Recommendations of Kothari Commission)- कोठारी आयोग ने माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा प्रस्तुत सुझावों में कुछ सुधार किए और उनमें कुछ नई योजनाएं सम्मिलित की है। आयोग ने निम्नलिखित परामर्श एवं कार्यकारिणी संस्थाओं का सुझाव दिया है:-

1. **राष्ट्रीय स्कूल शिक्षा बोर्ड (National Board of School Education)-** केन्द्र सरकार को स्कूल शिक्षा सम्बंधी बातों पर परामर्श देने के लिए राष्ट्रीय स्कूल शिक्षा बोर्ड की स्थापना की जानी चाहिए। यह प्रान्तीय शिक्षा विभागों को भी पाठ्य-सुधार तथा शिक्षा-स्तर सुधार में सहायता प्रदान करेगा।
2. **केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (Central Board of Secondary Education)-** केन्द्रीय सैकेण्डरी-शिक्षा बोर्ड के दो स्तरों 10वीं और 12वी पर परीक्षाएं व्यवस्थित करनी चाहिए। इस कार्य में उसे राष्ट्रीय स्कूल शिक्षा बोर्ड से भी परामर्श लेना चाहिए।
3. **राष्ट्रीय शिक्षा प्रशासन स्काट कॉलेज (National Staff College of Educational Administration)-** शिक्षा प्रशासन एवं निरीक्षण का प्रशिक्षण देने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा स्टाफ - कॉलेज की स्थापना की जानी चाहिए।
4. **प्रान्तीय स्कूल शिक्षा बोर्ड (State Board of School Education)-** यह बोर्ड विभाग का अंतिम अंग होना चाहिए। प्रांतीय स्तर पर सैकेण्डरी शिक्षा के सभी पक्षों का इसके साथ सम्बंध होना चाहिए।
5. **राजकीय शिक्षा संस्थान (State Institutes of Education)-** विभाग के अधिकारियों के सेवा-कालीन प्रशिक्षण, अध्यापक-शिक्षण के सुधार, निर्देशन एवं मूल्यांकन के सुधार तथा अनुसंधान कार्यक्रमों के लिए राजकीय शिक्षा संस्थानों में एक शैक्षणिक विभाग स्थापित किया जाना चाहिए।
6. **राजकीय मूल्यांकन गठन (State Evaluation Organizations)-** शिक्षा स्तर को निश्चित करने तथा उसमें संशोधन करते रहने के लिए प्रत्येक प्रान्त में राजकीय मूल्यांकन गठन की स्थापना की जानी चाहिए।
7. **राजकीय व्यावसायिक शिक्षा बोर्ड (State Board of Vocational Education)-** प्रान्त में व्यावसायिक शिक्षा की देखभाल के लिए राजकीय व्यावसायिक शिक्षा बोर्ड की स्थापना की जानी चाहिए।
8. **राजकीय हायर-सैकेण्डरी कमेटी (State Higher Secondary Committee)** हायर-सैकेण्डरी शिक्षा की देखभाल के लिए राजकीय हायर सैकेण्डरी कमेटी की स्थापना की जानी चाहिए।
9. **जिला स्कूल बोर्ड (District School Board)-** जिले में प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था के लिए जिला-स्कूल-बोर्डो की स्थापना की जानी चाहिए।
10. **ब्लाक स्कूल कमेटी (Block School Committee)-** ब्लाक के सरकारी तथा स्थानीय संस्थाओं द्वारा स्थापित स्कूलों की देखभाल के लिए ब्लाक स्कूल कमेटी का गठन किया जाना चाहिए।

16.8 शिक्षा प्रशासन के नवीनीकरण के लिए सुझाव (Recommendations for renovation of Education Administrtion)

शिक्षा प्रशासन के नवीनीकरण के लिए कोठारी आयोग ने अग्रलिखित सुझाव दिए:-

I. योजना (Planning)

1. प्राथमिक प्रणाली (System of Priorities))- विभिन्न स्तरों राष्ट्रीय, राजकीय व स्थानीय पर प्राथमिक प्रणाली अपनानी चाहिए।
2. गुणात्मक पक्ष पर बल (Emphasis on Qualitative Aspect))- विकास के संख्यात्मक पक्ष की अपेक्षा गुणात्मक पक्ष पर बल दिया जाना चाहिए।
3. व्यापक प्रशिक्षण (Intensive Training)- कर्मचारियों को व्यापक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
4. मित्तव्ययी योजनाएं (Economic Plans) ऐसी योजनाओं को प्रोत्साहन मिलना चाहिए जिन में परिश्रम भले हो, परन्तु व्यय कम होता हो।

II. केन्द्रीय स्तर पर (At Central Level)

1. भारतीय शिक्षा सेवा (Indian Educational Service)- की व्यवस्था होनी चाहिए।
2. शिक्षा प्रशासन राष्ट्रीय स्टाफ (Educational Administration National Staff)- नियुक्त किया जाना चाहिए।
3. राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) 'को प्रमुख तकनीकी संस्था के रुप में विकसित करना चाहिए।
4. अधिनियम (Legislation) सभी शिक्षण संस्थाओं के अनिवार्य पंजीकरण के लिए अधिनियम बनाया जाना चाहिए।

III. प्रान्तीय स्तर पर (At the State Level)

1. वैधिक-शिक्षा परिषद् (Statutory Council of Education) की स्थापना की जानी चाहिए।
2. अधिकारी स्तर पर एक स्थाई कमेटी (Standing Committee) बनाई जानी चाहिए।
3. कोई शिक्षा शास्त्री ही शिक्षा सचिव (Education Secretary) होना चाहिए।
4. प्रथम एवं द्वितीय श्रेणी के पदों की संख्या पर्याप्त होनी चाहिए।
5. सेवाकलीन शिक्षा कार्यक्रम (In Service Educational Programme) की व्यवस्था होनी चाहिए।
6. अधिकारियों तथा अन्य कर्मचारियों को अच्छा वेतन दिया जाना चाहिए।

7. प्राप्त उच्च साधन का दो तिहाई स्कूल शिक्षा के लिए प्रयुक्त होना चाहिए और एक तिहाई उच्च शिक्षा के लिए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. शैक्षिक प्रशासन के मुख्य कार्य क्या है?
   What are the main functions of Educational Administration?
2. शैक्षिक प्रशासन में राष्ट्रीय सरकार की भागीदारी का वर्णन करें।
   Explain contribution of Central Govt. in Educational Administration?
3. शिक्षा प्रशासन के नवीनीकरण के लिए कोठारी आयोग द्वारा दिए गए सुझावों का वर्णन करो।
   Explain the recommendations given by 'kothari Commission for Renovation of Educational Administration?
4. केन्द्रीय स्तर पर शैक्षिक प्रशासन की क्या प्रक्रिया है?
   What is the process of Educational administration at Central Level
5. राज्य स्तर पर माध्यमिक शिक्षा के प्रशासन व्यवस्था का वर्णन कीजिए।
   Explain the administrative of organization of secondary education at state level.
6. शैक्षिक प्रशासन की समस्याओं का उल्लेख कीजिए।
   Describe the process of educational administration.

16.9 शैक्षिक नियोजन (Educational Planning)

वर्तमान युग में नियोजन के अभाव में देश किसी भी क्षेत्र में उन्नति नहीं कर सकता। शिक्षा के क्षेत्र में नियोजन महत्वपूर्ण स्थान रखता है। नियोजन की परिभाषाएं:-

1. **आक्सफोर्ड शब्द कोष (Oxford English Dictionary)-** "नियोजन का आशय, उन कार्यो की रुपरेखा से है, जिसको किया जाना है।"

(Planning is to design some action to be done before hand Oxford English Dictionary)

2. **फिलिप्स के अनुसार-** 'नियोजन का अर्थ साधन एवं साध्य के बीच अग्रिम क्रियान्वन के निधारण से है।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर नियोजन की निम्नलिखित विशेषताएं स्पष्ट होती हैं:-

1. नियोजन चिन्तन की प्रक्रिया है।
2. यह भावी जीवन हेतु उपलब्ध साधनों के माध्यम से उतम विकल्पों का चुनाव है।
3. नियोजन उद्देश्य, प्रगति के विभिन्न विकल्पों में से एक अथवा अनेक का चुनाव है।

शैक्षिक नियोजन की आवश्यकता

(Need of Educational Planning)

कोठारी आयोग के अनुसार "भारत में शैक्षिक नियोजन की समस्या यही है कि शैक्षिक क्षेत्र में एक राष्ट्रीय नीति का विकास करना है, जबकि संविधान में शिक्षा प्रमुखत: राज्य के अधीन विषय है तथा विभिन्न स्तरों के समस्त पक्षों पर निर्णय दिया जाता रहा है। यह कार्य सहज नहीं है तथा हमारे मार्गदर्शन हेतु वैसा कोई अनुभव नहीं है।

इसलिए अधिकांश विषयों में हमें अपनी विधियां सुधारनी होंगी। यह भी आवश्यक है कि उनमें आवश्यक सुधार करें-

शैक्षिक नियोजन की असफलता के कारण

(Causes of Failure of Educational Planning)

1. सहयोग का अभाव
2. राजनीतिक दबाव
3. सामाजिक उतरदायित्व का अभाव
4. मूल्यांकन का अभाव
5. साधनों एंव नेतृत्व का अभाव

शैक्षिक कार्यकारी दल के अनुसार शिक्षा के समस्त अंगों को ध्यान में रखकर विस्तृत शिक्षा योजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए, योजना निर्माण का कार्य अधिकारियों पर नहीं टाला जाना चाहिए। प्रत्येक विद्यालय के विकास के लिए नवीन योजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए। शैक्षिक नियोजन के समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए:-

1. लक्ष्य निर्धारण
2. वांछनीय परिवर्तन
3. नये प्रतिमानों का निर्माण करना
4. नवीन लक्ष्यों की क्रियान्विति
5. परस्पर सहयोग तथा स्वयं सेवा व आत्म उपलब्धी का अभ्यास
6. साधनों का अधिकाधिक उपयोग
7. रचनात्मकता की पहचान
8. आन्तरिक शक्तियों का विकास

16.10 शैक्षिक संस्था के प्रधान/ मुख्याध्यापक के कर्तव्य (Duties of Principal Headmaster of Education Institutes)

1. मुख्याध्यापक शैक्षिक स्तर की योजना बनाने में सक्षम होना चाहिए। योजना बनाते समय अध्यापकों, विद्यार्थियों, समुदाय तथा उच्चाधिकारियों की आवश्यकतों को ध्यान में रखना चाहिए।
2. स्कूल गठन तथा उसके उचित संचालन की व्यवस्था करना मुख्याध्यापक का कर्तव्य है।
3. मुख्याध्यापक में आवश्यकतानुसार अध्यापकों तथा विद्यार्थियों को पथ-प्रदर्शन करने की क्षमता होनी चाहिए।
4. स्कूल में होने वाले समस्त कार्यो का निरीक्षण करने हेतु प्रधानाध्यापक में पूर्ण क्षमता होनी चाहिए।
5. स्कूल की उन्नति तथा विकास हेतु विद्यालय मे कार्यरत अन्य अध्यापकों को प्रेरित करना चाहिए।
6. विद्यालय मे पाठ्य सहगामी क्रियाओं हेतु उचित व्यवस्था करनी चाहिए।
7. प्रधानाचार्य के निर्देश, भाषण व कक्षा भ्रमण प्रभावशाली होने चाहिए।
8. प्रधानाध्यापक को विद्यालय की उन्नति के लिए अध्यापकों व अभिभावकों के लिए नवीन विचारों का आदर और उन्हें क्रियान्वित करना चाहिए।
9. प्रधानाध्यापक को बजट तथा कार्यालय के रिकार्डो का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।
10. प्रधानाध्यापक में नेतृत्व करने की कला होनी चाहिए।
11. प्रधानाचार्य का व्यक्तित्व प्रभावशाली होना चाहिए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

Self Evaluation Questions

1. शिक्षा नियोजन का क्या अर्थ है?
   What is meant by Educational Planning?
2. किसी शिक्षा संस्थान के लिए शिक्षा नियोजन का क्या महत्व है?
   What is the importance of educational planning for an institution?
3. शिक्षा नियोजन के समय किन- किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?
   What points should be kept in mind during educational planning?

16.11 सारांश

Summary

शिक्षा प्रशासन में प्रंबंध, निर्देशन तथा सेवा विचार सम्मिलित होता है। माध्यमिक शिक्षा का प्रशासन केन्द्र तथा राज्य सरकार मिल कर करती है, स्थानीय शिक्षा प्रशासन की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अच्छे प्रशासन के द्वारा ही देश में माध्यमिक शिक्षा स्तर को ठीक ढंग से संचालित किया जा सकता है। समय-समय पर शिक्षा प्रशासन की समस्याओं को सुलझाने के लिए विभिन्न आयोग गठित किए गए व शिक्षा प्रशासन के नवीनीकरण पर ध्यान दिया जाता रहा है। शिक्षा प्रशासन व शिक्षा नियोजन राष्ट्र के भविष्य निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की भांति एक माध्यमिक शिक्षा आयोग की स्थापना भी की जानी चाहिए। क्योंकि माध्यमिक स्कूलों की अत्याधिक संख्या ऐसी प्रशासनिक समस्याएँ प्रस्तुत करती है, जिनको सुलझाना संभव नहीं है। स्कूल शिक्षा के क्षेत्र में स्तर बनाए रखने की जिम्मेदारी पूर्णत: राज्य सरकारों को ही सौंपी जानी चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियान्वयन के पश्चात् माध्यमिक एवं उन माध्यमिक स्कूलों पर राज्य सरकारों का पूर्ण रुप से नियंत्रण है। परन्तु इसके अंतर्गत वे स्कूल नहीं आते जो केन्द्रीय स्कूल संगठन तथा स्वायत शिक्षा विभाग के द्वारा चलाए जाते है। शैक्षिक योजना और इसकी कार्यान्वित की जटिल प्रक्रिया में राज्य सरकार का प्रमुख और महत्वपूर्ण स्थान है। उन्हें सम्पूर्ण स्कूली शिक्षा का दायित्व लेना होगा, तथापि स्थानीय निकायों के सहयोग से इस दायित्व को निभाना उसके लिए लाभकर है। स्कूलों के दिनों दिन प्रशासन को, जिसका स्थानीय जनता के साथ यथा संभव घनिष्टतम संपर्क होना चाहिए, जिला स्तर पर विधिवत् स्थापित स्थानीय निकायों के पर्याप्त साधनों के साथ सौंपना श्रेयकर होगा। इस प्रकार स्कूल शिक्षा प्रमुखत: राज्य सरकार और राज्य की सांझेदारी है। यही वह मूलभूत सिद्धांत है, जिसके आधार पर केन्द्रीकरण और विकेन्द्रीकरण के बीच यह सूक्ष्म सन्तुलन स्थापित हो सकता है।

16.12 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

Bibliography

Agrawal, J.C.	:	School Administration, Surya Publication, Meerut 1995
Audd, L.K	:	Educational Administration, 2005
Mohiyaddin, M.S.	:	School Organization & Management Govt. of Mysore, Banglore, 1994.
Shrivastva, J.P.	:	Modern School Education & its Problems , Loyal Book Depot, Meerut, 1993.

इकाई-17

माध्यमिक स्तर पर शिक्षण विधियाँ

(Methods of Teaching at Secondary Level)

इकाई की संरचना (Stucture of Unit)

17.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

17.1 शिक्षण विधि का अर्थ (Meaning of Teaching Method)

17.2 अच्छी शिक्षण विधि के उद्देश्य (Objectives of Good Teaching Method)

17.3 शिक्षण विधि का महत्व (Importance of teaching Method)

17.4 शिक्षण विधियों का संक्षिप्त वर्णन (Brief Description of Teaching Method)

17.5 आगमन निगमन विधि (Inductive-Deductive Method)

17.6 प्रश्नोतर विधि (Question-Answer Method)

17.7 योजना विधि (Project Method)

17.8 समस्या समाधान विधि (Problm Solving Method)

17.9 अनुसंधान विधि (Heuristic Method)

17.10 विश्लेषण-संश्लेषण विधि (Analytic- Synthetic Method)

17.11 व्याख्यान और प्रदर्शन विधि (Lecture cum Demonstration Method)

17.12 शिक्षण विधियों. को प्रभावशाली बनाने के लिए माध्यमिक शिक्षा आयोग तथा कोठारी आयोग के सुझाव (Recommendations of Secondary Education Commission and Kothari Commission to make Teaching Methods Effective)

17.13 सारांश (Summary)

17.14 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

17.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य

(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप:

1. शिक्षण विधि के अर्थ को जान जाएंगे।
2. अच्छे शिक्षण विधि की विशेषताओं को समझ सकेंगे।
3. शिक्षण विधि का शिक्षण में क्या महत्व है, इसका बोध हो जाएगा।
4. माध्यमिक स्तर पर प्रयोग में लाई जाने वाली विभिन्न शिक्षण विधियों को समझ सकेंगें।

5. पढ़ाई जाने वाली विषय-सामग्री के अनुसार उपयुक्त शिक्षण विधि का चयन करने योग्य हो जाएंगे।
6. माध्यमिक शिक्षा आयोग और कोठारी आयोग द्वारा दिए गए सुझावों को जान कर शिक्षण विधियों में आवश्यक परिवर्तन के योग्य हो जाएंगे।

सर्वोतम पाठ्यसामग्री भी उचित शिक्षण विधियों के बिना निर्जीव हो जाती है। कई बार अरुचिकर पाठ्यक्रम भी प्रगतिशील शिक्षण विधियों द्वारा रुचिकर तथा प्रेरणापद बन जाता है। हम देख रहे है कि माध्यमिक स्तर पर प्रयोग. की जाने वाली शिक्षण विधियों की वर्तमान, स्थिति उत्साहजनक नहीं हैं आज भी शिक्षण के लिए विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षण विधियों का प्रयोग न करके अध्यापक केन्द्रित विधियों का प्रयोग किया जा रहा है जिसमें अध्यापक सक्रिय होता है और विद्यार्थी मूक और निष्क्रिय श्रोता की भूमिका निभाते है।

17.1 शिक्षण विधि का अर्थ (Meaning of Teaching Method)

'अच्छे से अच्छा पाठ्यक्रम' मृतक के समान रह जाता है जब तक इसे उचित प्रकार की शिक्षण विधियों तथा उचित प्रकार के अध्यापकों के द्वारा जीवन में पदार्पित न किया जाए।"

-माध्यमिक शिक्षा आयोग

शिक्षण की क्रियाओं का मुख्य केन्द्र विद्यार्थी के व्यवहार में आवश्यक परिवर्तन लाना होता है। ये परिवर्तन शिक्षण विधियों के द्वारा ही संभव है। विधि बालकों की शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विषय-वस्तु को वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करने का तरीका है। विधि शब्द को विद्यार्थी द्वारा प्राप्त अधिगम के प्रभावी एवं उपयोगी ढंग को माना जा सकता है।

शिक्षा की आदर्श पद्धति में सही तथा उचित विधियां बहुत महत्वपूर्ण होती है। हमारे देश में आज भी छात्र-छात्राओं को पुराने ढंग से ही पढ़ाया जा रहा है। जिसके कारण विद्यार्थी कक्षा में पढ़ने और पढ़ाने के कार्य में रुचि नहीं लेते। उन्हें अध्ययन कार्य शुक और नीरस लगता है। इसीलिए हमें पढ़ाने के तरीकों और शिक्षण विधियों में परिवर्तन करना आवश्यक है। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने उचित ही कहा है कि "पुराने ढंग की शिक्षण विधियों से शिक्षण को रुचिकर नही बनाया जा सकता इसलिए इनमें परिवर्तन करना बहुत जरुरी है। हमें ऐसी शिक्षण विधियों को अपनाना चाहिए जिसमें बालकों की सक्रिय भूमिका हो, उन्हें स्वतन्त्र रुप से विचारों की अभिव्यक्ति के अवसर मिले और नेतृत्व की भावना का विकास हो।"

माध्यमिक शिक्षा स्तर पर जो शिक्षण विधियां अपनाई जा रही है, माध्यमिक शिक्षा आयोग ने उनकी कड़ी आलोचना की है। आयोग ने स्पष्ट रुप से कहा है कि एक अच्छी शिक्षण विधि ही अध्यापक और विद्यार्थी के बीच स्वाभाविक संबंध स्थापित करती है। अच्छी शिक्षण विधि द्वारा शिक्षार्थी का केश्ल मानसिक विकास ही नहीं होता बल्कि इससे उसका समूचा व्यक्तित्व होता है। शिक्षण विधियाँ व्यक्तिगत विभिन्नता और क्रिया द्वारा सीखने के सिद्धान्त पर आधारित होनी चाहिए। प्रभावित और उसका सर्वागीण विकास होता है।

स्टोन और मोरिस (Stone and Morris) के शब्दों में - "शिक्षण विधि पाठ की एक सामान्यीकृत योजना है जो विधि को क्रियान्वित करने के लिए व्यूह रचनाओं एवं अनुदेशन के उद्देश्यों की संरचना और वांछित अधिगम व्यवहारों के रुप में शामिल करती है।"

("Teaching method is a generalized plan for lesson which includes structure, desired learning behaviour in terms of goals of instructions and an outline of planned tactis necessary to implement the method.")

ब्राऊडी (Broudy) के अनुसार- विधि अनुदेंशन की क्रियाओं की क्रमबद्ध एवं औपचारिक संरचना है। यह उन चुनावों को शामिल करती है कि क्या पढ़ना है और उसे किस क्रम में विद्यार्थियों के सामने प्रस्तुत करना है।

(A method refers to the formal structure of the sequence of acts commonly denoted by instruction. It involves the choice of what is to be taught and in which order it is to be Presented.")

थट एवं गेरबेरिच (Thut and Gerberich) के शब्दों में 'विधि प्रक्रियाओं की वह सुपरिभाषित संरचना है जिसमें परिस्थितियों की मोंगों के अनुसार विभिन्न प्रविधियाँ एवं युक्तियां निहित है।

"A method of teaching is well defined pattern of procedure with in which a variety of techniques and devices may appear as circumstances may require"

विषय की विषय सामग्री विधि से अधिक से अधिक निकटता से सम्बन्धित बनती जा रही है। अच्छी विधियां जो मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक रुप से सुदृढ़ हो, विद्यार्थियों के जीवन के सकल गुणों को विकसित कर सकती है। माध्यमिक स्तर पर शिक्षण के लिए विभिन्न विधियों का विकास हुआ है। उतम शिक्षण विधि की खोज करने के लिए प्रयास किए जा रहे है।

17.2 अच्छी शिक्षण विधि के उद्देश्य एवं विशेषताएँ (Objectives and Characteristics of good method of Teaching)

1. शिक्षण विधियां हर बौद्धिक स्तर के बच्चों की आवश्यकता के अनुसार होनी चाहिए।
2. बच्चों में कार्य के प्रति पार (Love for work) की भावना को उत्पन्न करना।
3. बच्चों में अपनी योग्यता के अनुसार कुशलपूर्वक कार्य करने की इच्छा उत्पन्न करना।
4. विभिन्न योजनाओं एवं क्रियाओं में स्वतन्त्रतापूर्वक भाग लेने के अवसर प्रदान करना।
5. स्पष्ट चिन्तन एवं मनन की योग्यता विकसित करना।
6. शिक्षण विधियां बच्चों की रुचि का स्तर बढ़ाने में सहायक हो।
7. सैद्धान्तिक ज्ञान को व्यवहारिक रुप में प्रयोग करने के अवसर प्रदान करना।
8. अध्ययन और अधिगम की नई-नई तकनीकियों का प्रशिक्षण देना।

9. विद्यार्थियों को अध्ययन की कला में प्रशिक्षण देना। संदर्भ सामग्री जैसे शब्दकोष, विश्वकोष, एटलस, किताबों में विषय-सूची आदि के प्रयोग का प्रशिक्षण देना चाहिए।
10. शिक्षण विधियां ऐसी होनी चाहिए जिसके द्वारा बच्चों को व्यक्तिगत कार्य के साथ सामूहिक कार्य करने का भी मौका मिले।

17.3 शिक्षण विधि के महत्व (Importance of Teaching method)

अधिगम को प्रभावी तथा अर्थपूर्ण बनाने के लिए विषयवस्तु को कैसे पढ़ाना है, यह एक अध्यापक के लिए बहुत जरुरी है। जॉन बैल्टन (John Welton) ने अच्छी शिक्षण विधियों के महत्व पर बल देते हुए कहा है:-

"विषय वस्तु को पाठयोजना के रुप में कितने ही उतम ढंग से नियोजित किया गया हो लेकिन शिक्षण तब तक वास्तविक और सुव्यवस्थित नहीं होगा, जब तक विद्यार्थियों को अपने प्रयासों द्वारा अपनी योग्यता के अनुसार सही मार्ग चुनने का मौका नहीं दिया जाएगा।
("No matter how admirably a lesson is planned, there is no really, methodical teaching unless the pupils by their own efforts pass along the road suitable of them. True teaching is nothing but arousing and directing activity.")

शिक्षा शास्त्री भी इस बात से सहमत है कि विषय सामग्री की अपेक्षा उसके शिक्षण के लिए अपनाई गई विधि अधिक महत्वपूर्ण है। अनुदेशन विधियां इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि:-

1. **निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करना (To achieve pre-determined objectives)-** शिक्षण विधियाँ अध्यापक एवं विद्यार्थियों द्वारा निर्धारित उद्देश्यो की प्राप्ति में सहायता करती है।
2. **अधिगमकर्ता को लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक (Assist the learner to achieve the goal)** अध्यापक द्वारा अपनाई गई शिक्षण विधि अधिगम के प्रकार पर निर्भर करती है। सभी अधिगम लक्ष्यों को एक ही शिक्षण विधि से प्राप्त नहीं किया जा सकता और अनुदेशन प्रक्रिया अधिगमकर्ता को अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायता करता है।
3. **बौद्धिक कौशलों के विकास में सहायक (Helpful in development of intellectual skills)** शिक्षण विधियाँ विशेष बौद्धिक कौशलों के विकास में सहायक होती है। आज अनुदेशन के लिए अनुसंधान, खोज, आगमन, समस्या, समाधान विधि की और अधिक ध्यान दिया जा रहा है। कुछ विधियां अधिगमकर्ता को मजबूर करती है कि वे परावर्तित चिंतन (Reffective Thinking) समस्या समाधान आदि का प्रयोग करे।

4. **अच्छे शिक्षण के लिए आवश्यक (Helpful for good teaching)-** अध्यापक को विभिन्न शिक्षण विधियों में प्रशिक्षित होना चाहिए। वह विधियों के सभी पक्षों के विस्तृत सूझ-बूझ से युक्त होना चाहिए जो अच्छे शिक्षण के लिए अति आवश्यक है।

5. **शिक्षण रुचिकरण एवं प्रभावी बनता है (Teaching becomes effective and interesting)-** विभिन्न शिक्षण विधियों की सहायता से अध्यापक विषय सामग्री को रुचिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करके विद्यार्थियों की रुचि उनमें विकसित कर सकता है। इस प्रकार विभिन्न विधियों का प्रयोग शिक्षण को सरल, रुचिकर तथा प्रमादी बनाने में सहायक होता है।

अत: विभिन्न विधियों का ज्ञान होना आवश्यक है। माध्यमिक शिक्षा आयोग के शब्दों में, "अच्छे से अच्छा पाठ्यक्रम एवं आदर्श पाठ्यवस्तु मृतक के समान रह जाती है जब तक इसे उचित प्रकार की शिक्षण विधि और उचित प्रकार के अध्यापकों के द्वारा जीवन में पदार्पित न किया जाए।"

शिक्षण एक सरल कार्य नहीं है और प्रत्येक व्यक्ति अध्यापक बनने के योग्य भी नहीं होता। कुछ व्यक्तियों में शिक्षण के लिए जन्मजात प्रवृति होती है। ऐसे अध्यापकों में विद्यार्थियों के ध्यान को केन्द्रित करने तथा रुचि को जागृत करने की योग्यता होती है। एक अच्छे अध्यापक को विभिन्न अनुदेशन व्यूह रचनाओं, विधियों तथा प्राविधियों का जान होना अति आवश्यक है। शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए शिक्षक को उचित समय पर शिक्षण विधि का प्रयोग करना होगा। उतम विधि वहीं है जो-

- रुचि जागृत करती है।
- स्वतन्त्र चिंतन को अभिप्रेरित करती है।
- उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होती. है।
- सीखने को अभिप्रेरित करती है।
- व्यावहारिक तथा क्रियात्मक होती है।
- विद्यार्थियों के अनुभवों से सम्बन्धित होती है।
- व्यक्तिगत विभिन्नताओं पर आधारित होती है।
- कलात्मक होती है।
- स्वक्रिया एवं अभिप्रेरणा का विकास करती है।
- विद्यार्थियों में निर्णय शक्ति का विकास करती है।

वर्तमान समय में बहुत सी विधियों का विकास हुआ है। उतम विधि की खोज के प्रयास किए जा रहे है। उतम अध्यापकों को केवल विषय सामग्री का ही ज्ञान नहीं होना चाहिए अपितु अधिगमकर्ता की समस्याओं के बारे में भी जानकारी होनी चाहिए। उसे अधिगम प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाने के लिए विभिन्न विधियों के बारे में जागरुक होना आवश्यक है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. शिक्षण विधि से आप क्या समझते है?
   What do you mean by teaching method?
2. अच्छी शिक्षण विधि का क्या विशेषताएँ है?
   What are the characteristics of good teaching method?
3. शिक्षण विधि का शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में क्या महल है?
   What is importance of teaching method in teaching learning process?
4. उन विधियों का नाम बताओ जो करो और सीखें के सिद्धान्त पर आधारित है।
   Name the method which are based on the principle of 'Learning by doing"

17.4 माध्यमिक स्तर पर प्रयोग में लाई जाने वाली शिक्षण विधियों का संक्षिप्त वर्णन (Brief description of teaching methods used at secondary level)

1. कथन विधियाँ- व्याख्यान विधि, कथात्मक विधि, विचार-विमर्श, मौखिक प्रश्नोतरी आदि।
2. प्रदर्शन विधियाँ- इसमें प्रदर्शन, चार्ट, मित्र, मॉडल आदि का प्रयोग किया जाता है।
3. क्रिया विधियाँ- दत्त कार्य, परियोजना कार्य, लिखित आदि।
4. बड़े समुह में अनुदेशन- इसमें व्याख्यान विधि, वर्णात्क विधि आदि को शामिल किया गया है।
5. मध्यम समूह अनुदेशन- मध्यम समूह में व्याख्यान के लिए अनौपचारिक विधियों का प्रयोग किया जा सकता है। जैसे नाटकीयकरण भूमिका अदा करना, भ्रमण आदि।
6. लघु समुह अनुदेशन- लघु समूह के लिए सेमीनार और विचार विमर्श महत्वपूर्ण विधियाँ है।
7. स्वतन्त्र अध्ययन- दत कार्य, अभिक्रमित अधिगम, कम्पयूटर सह अनुदेशन, डाल्टन योजना, कार्य अनुभव आदि ऐसी विधियाँ है जो विद्यार्थी को स्वतन्त्र रुप से अपनी गति, रुचि एवं योग्यता के अनुसार सीखने का अवसर प्रदान करती है।
8. खोज विधि- समस्या समाधान, अन्वेषण विधि आदि। इन विधियों की सफलता अधिगमकर्ता की क्रियाशीलता, अनुभव एवं समझ पर निर्भर करती है।

शिक्षण विधियां चाहे क्रियात्मक केन्द्रित, विद्यार्थी केन्द्रित, अध्यापक केन्द्रित और विषय वस्तु केन्द्रित हो लेकिन इनका प्रयोग करते समय और शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली, सरल एवं रुचिकर बनाने के लिए अध्यापक के अन्दर लग्न उत्साह और रुचि दिखानी चाहिए।

17.5. आगमन-निगमन विधि
(Inductive-Deductive Method)

आगमन-निगमन विधि छात्रों को नवीन जान प्रदान करने की महत्वपूर्ण विधि है। दोनों विधियों की अपनी अलग-अलग उपयोगिता है और माध्यमिक स्तर पर शिक्षण के लिए दोनों का प्रयोग किया जाता है।

प्रो. सोमलर (Somler) के अनुसार, जैसे चलने के लिए दोनों पाँवों की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार वैज्ञानिक अध्ययन के लिए आगमन तथा निगमन दोनों विधियां आवश्यक है।

("As both the feet are essential to walk in the same way inductive and method are necessariy for scientific study.")

आगमन विधि

(Inductive method)

आगमन विधि मे विशेष से सामान्या की ओर चलते है। इस विधि की सहायता से हम नियम, निष्कर्ष तथा सामान्यीकरण बना सकते है।

लेंडन (Landon) के शब्दों में- "आगमन विधि वह विधि है जिसमें बच्चों के समक्ष बहुंत से तथ्य- उदाहरण प्रस्तुत किए जाते है और फिर उससे निष्कर्ष निकलवाने का प्रयास करते है।

("Inductive method is that method in which a no. of facts and examples are put before children and then they draw their own conclusions.")

केन्ज (Keynes) के शब्दों में- "आगमन विधि उदाहरणों के आधार पर नियम स्थापित करना है"। (Inductive method is to establish laws on the basis of examples")

आगमन विधि में शिक्षण के तीन सूत्रों का प्रयोग किया जाता है।

1. ज्ञात से अज्ञात की ओर (From Known to unknown)
2. विशिष्ट से सामान्य की ओर (From specific to General)
3. स्थूल से सूक्ष्म की ओर (From Concrete to Abstract)

आगमन विधि की प्रक्रिया

(Procedure of inductive method)

निम्न चित्र द्वारा स्पष्ट होता है कि आगमन विधि द्वारा शिक्षण करते समय चार पदों का अनुसरण करना आवश्यक है-

चित्र- 17.1

1. उदाहरण प्रस्तुत करना **(Presenting Examples)**

सबसे पहले अध्यापक छात्रों के समक्ष एक ही प्रकार के विभिन्न उदाहरण प्रस्तुत करता है।

2. विषय सामग्री का अवलोकन **(Observation of subject matter)**

विद्यार्थी उदाहरणों का अवलोकन कर विभिन्न परिस्थितियों में समानताओं तथा विभिन्नताओं का विश्लेषण करते है।

3. सामान्यीकरण **(Generalization)**

उदाहरणों के आधार पर विद्यार्थी नियम या विचार का सामान्यीकरण करेंगे।

4. परीक्षण **(Verification)**

इस सोपान में छात्रों द्वारा अन्य उदाहरणों की सहायता से नियम का परीक्षण किया जाएगा।

विज्ञान, अंकगणित, भूगोल तथा भाषा अध्ययन के लिए यह विधि बहुत लाभदायक है। उदाहरण के लिए भूगोल के पाठ में विभिन्न स्थानों की ऊँचाई और तापमान का पता लगाकर विद्यार्थी स्वयं निष्कर्ष निकाल सकते है कि ऊँचाई बढ़ने पर तापमान कम होता है।

निगमन विधि

(Deducative Method)

यह आगमन विधि का विपरीत है। निगमन विधि में पहले सामान्य नियम बता दिया जाता है ओर फिर प्रयोग, अवलोकन आदि की सहायता से उसे सत्य सिद्ध किया जाता है। उदाहरण के तौर पर- छात्रों को पहले ही यह नियम बना दिया जाता है कि वस्तुओं का भार वायु की अपेक्षा जल में कम होता है। उसके बाद विद्यार्थी विभिन्न वस्तुओं का भार वायु तथा जल में लेकर यह सिद्ध करेंगें कि यह नियम सत्य है।

इस विधि में शिक्षण के दो सूत्रों का प्रयोग किया जाता है।

1. सामान्य से विशिष्ट की ओर (From General to specific)
2. सूक्ष्म से स्थूल की ओर (From Abstract to Concrete)

निगमन विधि के पद

(Steps in Deducative method)

आगमन विधि की तरह निगमन विधि में भी चार पदों का प्रयोग किया जाता है।

1. **नियम तथा सामान्यीकरण का प्रस्तुतीकरण (Presentation of laws and generalization)-** इस सोपान में अध्यापक द्वारा सामान्य नियम तथा परिभाषा आदि को विद्यार्थियों के सामने प्रस्तुत किया जाता है।
2. **प्रयोग या उदाहरण (Experiment or Example)-** नियम या परिभाषा को सत्य सिद्ध करने के लिए प्रयोग करना या उदाहरण देना।
3. **निष्कर्ष (Conclusion)-** प्रयोग या उदाहरण द्वारा किसी निष्कर्ष पर पहुँचना।
4. **परीक्षण (Testing)** छात्रों द्वारा प्रयोग या उदाहरण की सहायता से निष्कर्ष का परीक्षण किया जाना।

यह विधि सीखने के मनोवैज्ञानिक नियमों पर आधारित है। इसके द्वारा सभी स्तर के विद्यार्थियों को विषय वस्तु के गहन प्रत्ययों का सरलता से बोध कराया जा सकता है।

आगमन तथा निगमन विधि में अन्तर

(Difference between Inductive and Deductive method)

आगमने विधि	निगमन विधि
1. इस विधि में विशेष से सामान्य, उदाहरण से नियम तथा स्थूल से सूक्ष्म की ओर शिक्षण सूत्रों का प्रयोग किया जाता है।	1. इस विधि में सामान्य से विशिष्ट, नियम से उदाहरण, सूक्ष्म से स्थूल शिक्षण सूत्रों का प्रयोग किया जाता है।
2. यह रटने की प्रवृति को जन्म नहीं देती	2. यह रटने की प्रवृति पर बल देती है।
3. यह मनोवैज्ञानिक विधि है जो अवबोध केन्द्रित है।	3. यह अपेक्षाकृत अमनोवैज्ञानिक है तथा स्मृति केन्द्रित है। "
4. इस विधि में विद्यार्थी अपनी मेहनत के आधार पर नियमों की खोज करते है।	4. इस विधि में नियम पहले बताए जाते है और फिर उनकी पुष्टि उदाहरणों द्वारा की जाती है।
5. इसमें अध्यापक तथा विद्यार्थी दोनों सक्रिय रहते है।	5. इस विधि में छात्रों की अपेक्षा अध्यापक ज्यादा सक्रिय रहते है।
6. यह विधि नवीन ज्ञान की खोज करने में सहायक है।	6. इस विधि में विद्यार्थी दूसरों के द्वारा दिए गए ज्ञान का प्रयोग करते है।
7. इसमें परिश्रम और समय अधिक लगता है।	7. इसमें मेहनत और समय कम लगता है।
8. इस विधि द्वारा बच्चों की विभिन्न मानसिक शक्तियों का विकास अच्छी तरह होता है।	8. इसमें बालकों को नियम तथा तथ्यों की सूचनाएँ मिलती है। मानसिक शक्तियों का विकास नहीं होता।
9. यह अनुसंधान का मार्ग है।	9. यह अनुकरण का मार्ग है।
10. यह वैज्ञानिक विधि है। इसके द्वारा विद्यार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है।	10. इस विधि द्वारा विद्यार्थियों में वैज्ञानिक ढंग से कार्य करने की आदत नहीं पड़ती।

यथार्थ रुप से आगमन तथा निगमन विधि एक दूसरे की पूरक है। शुरु में आगमन विधि द्वारा उदाहरणों की सहायता से नियमों का प्रतिपादन करना चाहिए उसके बाद निगमन विधि द्वारा उनका अभ्यास करना चाहिए। जिस प्रकार चलने के लिए पैरों की आवश्यकता होती है उसी प्रकार शिक्षण में दोनों विधियां आवश्यक है। आगमन विधि का प्रमुख आधार ज्ञान की उत्पति तथा विकास है, जबकि निगमन विधि में ज्ञान की प्रस्तुति की जाती है। अत: आगमन विधि अग्रगामी है तथा निगमन विधि उसकी सहगामी। दोनों विधियां एक दूसरे की कमी को दूर करती है।

17.6 प्रश्न उत्तर विधि
(Question-Answer method)

प्रश्नोत्तर विधि को सुकरात विधि भी कहा जाता है क्योंकि इसका प्रादुर्भाव सुकरात के द्वारा किया गया था। इस विधि में अध्यापक विद्यार्थियों से प्रश्न पूछता है, विद्यार्थी उतर देते है, जिनकी व्याख्या अध्यापक द्वारा की जाती है। इस प्रकार प्रश्न-उतर द्वारा विषय वस्तु का विकास किया जाता है। इस विधि में विद्यार्थी मानसिक रुप से सजग तथा क्रियाशील रहता है। अध्यापक अच्छा प्रश्न-निर्माता व अच्छी प्रकार से प्रश्न पूछने वाला होना चाहिए। इस विधि द्वारा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी, अर्थपूर्ण तथा क्रियात्मक बनाया जा सकता है।

कोलविन (Colvin) के अनुसार, "अनुदेशन की प्रभावशीलता को पूछे गए प्रश्नों की प्रकृति एवं उनके निर्माण में प्रयोग की गई सावधानी से मापा जा सकता है।"

("The efficiency of instruction can be measured in a large degree by the nature of question that are asked and the care with which they are formed.)

रायबर्न (Ryburn) का यह मानना है कि "शिक्षण में अध्यापक की सफलता उसकी प्रश्न पूछने की योग्यता पर निर्भर करती है।"

("The success of teacher in teaching depends upon his ability to question well.")

वास्तव में प्रभावी शिक्षण अधिगम के लिए उचित रुप से निर्मित प्रश्न, वैज्ञानिक रुप से पूछे गए प्रश्न तथा प्राप्त किए गए उतर अति आवश्यक है। इसलिए अध्यापक को प्रश्न पूछने तथा उतर प्राप्त करने में निपुण होना चाहिए।

इस विधि में अध्यापक तथा विद्यार्थी दोनों का सक्रिय योगदान होता है। प्रश्न पूछने पर विद्यार्थी को सोचने का अवसर प्रदान किया जाता है जिससे विद्यार्थी की चिंतन शक्ति, कल्पना शक्ति तथा तर्क शक्ति का विकास होता है। यह विधि माध्यमिक कक्षाओं के लिए अधिक उपयोगी है। प्रत्येक प्रकरण को पढ़ाने के लिए इस विधि का प्रयोग किया जा सकता है। इससे विध्यार्थियों में स्व-अभिव्यक्ति की आदत का विकास होता है।

इस विधि द्वारा विद्यार्थियों को समग्र विषय वस्तु का बोध नहीं हो पाता। कभी-कभी कमजोर विद्यार्थियों के लिए यह उपयुक्त नही होती क्योंकि वे प्रश्न का उतर देने के लिए तैयार नहीं होते। उच्च स्तर पर इसका प्रयोग ज्यादा नहीं कर सकते।

प्रश्नोतर विधि के कुछ लाभ है तो कुछ सीमाएं भी है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि इसका प्रयोग न किया जाए। अध्यापक इस विधि का प्रयोग करते समय यदि कुछ बातों को ध्यान में रखे तो वह इसे प्रभावशाली बना सकता है।

1. अध्यापक को प्रश्ननिर्माण की कला में दक्ष होना चाहिए।
2. सही उतर देने वाले विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने के लिए पुनर्बलन देना चाहिए।

3. विद्यार्थी द्वारा दिए उतर की अध्यापक द्वारा अच्छी तरह व्याख्या की जानी चाहिए ताकि विद्यार्थियों को समग्र पाठ्य सामग्री का बोध हो सके।
4. प्रश्नों का वितरण सभी विद्यार्थियों में समान रुप से होना चाहिए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Question)

1. आगमन और निगमन विधि में क्या अंतर है?
   What is the difference between Inductive and Deductive method?
2. निगमन विधि के विभिन्न पदों की व्याख्या कीजिए।
   Explain different steps of deductive method?
3. प्रश्नोत्तर विधि को किस प्रकार प्रभावशाली बनाया जा सकता है?
   How the question answer method can be made effective?
4. 'कोई भी निगमन आगमन के बिना पूर्ण नहीं है' इसकी व्याख्या कीजिए?
   'No inductive is complete without deduction'. Explain this statement?

17.7 योजना विधि (Project Method)

योजना विधि स्व-अधिगम विधि है। यह प्रयोजनवाद के सिद्धान्तों पर आधारित है। जॉन ड्यूवी (John Dewey) का यह मानना था कि शिक्षा जीवन के द्वारा एवं जीवन के लिए होनी चाहिए। उसने बच्चें को जीवन की वास्तविक परिस्थितियों में रखा।

योजना विधि का प्रयोग सबसे पहले व्यावसायिक क्षेत्र में किया गया। सामान्य शिक्षा में इसका प्रयोग प्रोफेसर जॉन ड्यूवी एवं किलपैट्रिक (John Dewey & Kilpatric) के द्वारा किया गया।

योजना का अर्थ

(Meaning of Project)

1. **किलपैट्रिक (Kilpatric)** के अनुसार 'सामाजिक वातावरण में पूर्ण संलग्नता के साथ किया जाने वाला उद्देश्यपूर्ण कार्य है।'' (A project is a whole hearted purposeful acivity proceeding in a social environment.”)
2. **पार्कर (Parker)** के शब्दों में ''योजना कार्य'' की एक इकाई है जिसमें छात्रों को कार्य की योजना और सम्पन्नता के लिए उतरदायी बनाया जाता है।'' (“A project is a unit of activity in which pupils are made responsible for planning and purposing.)

योजना विधि में विद्यार्थी स्वतन्त्र रुप से क्रियाएं करते है और अनुभव युक्त अधिगम प्राप्त करते है। विद्यार्थियों को अपनी गति, रुचि तथा समय के अनुसार अधिगम प्राप्त करने का अवसर प्रदान किया जाता है।

प्रो. वैलार्ड (Ballard) के अनुसार 'प्रोजेक्ट वास्तविक जीवन का एक छोटा सा अंश है जिसको विद्यालय में प्रतिपादित किया जाता है।" ("A project is a bit of real life that has been imparted into the school.")

स्टीवेन्सन (Stevenson) के अनुसार, " प्रोजैक्ट एक समस्यात्मक कार्य है जिसका समाधान प्रकृत वातावरण में ही किया जाता है।"

("A project is a problematic act carried to completion in its nature setting.")

योजना पद्धति इस मूलधारणा पर आधारित है कि सीखने वाले को स्वयं कार्य करना चाहिए अन्यथा वह अच्छी तरह नहीं सीख सकेगा।

योजना पद्धति के सिद्धान्त

(Principles of Project method)

शिक्षण में योजना पद्धति का प्रयोग करते समय निम्नांकित सिद्धान्तों को ध्यान में रखना ' -

1. **उद्देश्य का सिद्धान्त (Principle of Purpose)-** योजना पद्धति में बालक को करने के लिए जो कार्य दिया जाता है, उसके करने के उद्देश्य का ज्ञान कराया जाता है। उद्देश्य का ज्ञान होने पर बालक काम को रुचि, उत्साह, लग्न एवं मेहनत से करता है।
2. **क्रियाशीलता का सिद्धान्त (Principle of Activity)-** यह सिद्धांत 'करके सीखना' (Learning by doing) पर बल देता है। योजना पद्धति में बालक को अधिक से अधिक क्रियाओं को करने का अवसर प्रदान किया जाता है।
3. **वास्तविकता का सिद्धांत (Principle of Reality)-** योजना पद्धति में बालक जो कार्य करने के लिए दिया जाता है वह वास्तविक तथा जीवन से सम्बन्धित होता है।
4. **उपयोगिता का सिद्धान्त (Principle of unity)-** इस पद्धति में किया जाने वाला प्रत्येक कार्य उपयोगी होता है। उसका बच्चे के जीवन पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। वह उसकी आवश्यकताओं से सम्बन्धित होता है।।
5. **स्वतन्त्रता का सिद्धान्त (Principle of Freedom)-** योजना पद्धति में बालक को अपनी रुचि के अनुसार योजना चुनने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। उन्हें किसी कार्य को करने के लिए मजबूर नहीं किया जाता। उसके लिए समय और समय-सारिणी का कोई बंधन नहीं होता।

6. **मितव्ययिता का सिद्धांत (Principle of Economy)-** योजना में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बालक कम समय, कम खर्च तथा शक्ति का प्रयोग कर अधिक से अधिक ज्ञान अर्जित कर सके।
7. **सामाजिकता का सिद्धान्त (Principle of Sociability)-** सामाजिकता की भावना का विकास करने के लिए विभिन्न सामूहिक योजनाओं की अवस्था की जाती है। इससे बालक मे उतरदायित्व, सहयोग आदि सामाजिक गुणों का विकास होता है।
8. **अनुभव का सिद्धान्त (Principle of Experience)-** अनुभव सर्वोतम शिक्षक है। योजना पद्धति में विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के प्रत्यक्ष अनुमत कार्य करके प्राप्त करता है।
9. **समन्वय का सिद्धान्त (Principle of Correlation)-** इस पद्धति में विभिन्न विषयों का एक दूसरे से सहसम्बन्ध स्थापित किया जाता है।

योजना के सोपान या पद

(Steps or Stages in a project)

प्रोजैक्ट को पूरा करने के लिए निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण करना चाहिए -

1. **परिस्थितियां प्रदान करना (Providing a situation) -** योजना में बच्चों के उपर किसी कार्य का भार जबरदस्ती नहीं डाला जाता। अध्यापक बच्चों से विचार-विमर्श कर ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न कर देता है कि उनकी विशेष कार्य में रुचि उत्पन्न हो जाती है। बालक स्वयं ही समस्या का समाधान खोजने के लिए तैयार हो जाते है। उदाहरण के लिए अध्यापक विभिन्न त्यौहारों जैसे होली, दशहरा, दीवाली या महत्वपूर्ण दिवस जैसे गणतन्त्र दिवस, एडस दिवस आदि पर विचार विमर्श करके विद्यार्थियों को इनमें से कोई भी प्रकरण प्रोजैक्ट के रुप में अध्ययन के लिए दे सकता है।
2. **प्रोजेक्ट का चुनाव (Selection of project)-** प्रोजेक्ट के उचित चयन में अध्यापक को विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करना चाहिए और सुझाव देने चाहिए। कार्य का चुनाव करते समय विद्यार्थी को मन में निम्नलिखित प्रश्न उठाने चाहिए-
   1. क्या यह निश्चित समय मे पूरा किया जा सकता है।
   2. क्या इसका शैक्षिक मूल्य है।
   3. क्या यह प्रायोगिक है।
   4. क्या यह उद्देश्यपूर्ण क्रिया है।
3. **योजना का कार्यक्रम बनाना (Planning of Project)-** योजना का चुनाव हो जाने के बाद उसे पूरा करने के लिए छात्रों द्वारा अपने अपने कार्यक्रम प्रस्तुत किए जाते है। कार्यक्रम का निर्धारण अध्यापक एवं छात्र दोनों के सहयोग से किया जाता है। कार्यक्रम को कई भागों में विभक्त कर दिया जाता है। अध्यापक प्रत्येक छात्र को अपनी रुचि, योग्यता तथा कार्य करने की क्षमता के अनुसार किसी एक भाग को चुनने के लिए प्रोत्साहित करता है।

4. **योजना को पूरा करना (Executing the Project)-** कार्य निश्चित हो जाने के बाद बालक उसे पूरा करने में संलग्न हो जाते है। विद्यार्थियों द्वारा विभिन्न क्रियाएँ की जाती है जैसे अध्ययन करना और लिखना, विचार विमर्श करना, अन्यों से सूचनाएँ प्राप्त करना, सामग्री का निरीक्षण करना, आवश्यक सामग्री एकत्रित करना आदि। शिक्षक विद्यार्थियों को स्वयं अपने प्रयास से करके सीखने का पूर्ण अवसर देता है। अध्यापक उसकी हर गतिविधि पर नजर रखता है, उनका पर्थ प्रदर्शन करता है, उनकी गलतियों को सुधारता है, कठिनाई को दूर करता है और उन्हें कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

5. **मूल्यांकन करना (Evaluation)-** प्रोजेक्ट पूरा हो जाने के बाद शिक्षक और विद्यार्थी उसके सम्बन्ध में विचार विमर्श करते है। विद्यार्थी यह जानने का प्रयास करते है कि वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति कहां तक हुई। योजना की सफलता उन उद्देश्यों की उपलब्धि पर निर्भर करती है जो प्रोजेक्ट कार्य को क्रियान्वित करने से पहले विद्यार्थियों द्वारा बनाए गए थे।

6. **योजना को लिखना (Recording the Project)-** अन्त में विद्यार्थियों द्वारा प्रोजेक्ट की सम्पूर्ण प्रक्रिया का पूरा रिकार्ड लिख लेना चाहिए। इसमें उनकी योजना, विचार विमर्श, कार्य सौपंना, कार्य को पूरा करने में अध्ययन की नई विभिन्न पुस्तकों के नाम, सूचना के स्त्रोत, सीखे गए विषय को शामिल किया जाना चाहिए। इसमें कार्यान्वन की विभिन्न क्रियाएं तथा मूल्यांकन करते समय दृष्टिगत हुई गल्तियों का भी रिकार्ड रखना चाहिए। यह भविष्य में परामर्श के लिए सहायक होगा।

योजना विधि के कई लाभ है:-

- यह विधि विद्यार्थी केन्द्रित है। विद्यार्थी अपनी रुचि, अभिवृति, क्षमता एवं योग्यता के अनुरुप सीखते है।
- यह पद्धति बालक को तर्क, वाद-विवाद और विचार करने का अवसर देकर उनका मानसिक विकास करती है।
- विद्यार्थियों को कृत्रिम ज्ञान के बजाय वास्तविक ज्ञान देती है क्योंकि वह वास्तविक परिस्थितियों में कार्य करता है।
- तथ्यों को स्मरण करने के स्थान पर अभिप्रेरित अधिगम को बल देती है।
- यह पद्धति सीखने के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों जैसे तत्परता का नियम, क्रिया के नियम पर आधारित है।
- विद्यार्थियों में स्वतन्त्र चिंतन, स्वतन्त्र विचार अभिव्यक्ति, सहनशीलता आदि गुणों का विकास करती है।
- इस पद्धति के जहां इतने लाभ है वहां इसमें कुछ कमियां भी है:-
- इस पद्धति का प्रयोग सब विषयों के शिक्षण के लिए नहीं किया जा सकता।

- यह विधि अधिक खर्चीली है, क्योंकि इसके लिए अच्छे पुस्तकालय एवं प्रयोगशाला की आवश्यकता होती है।
- विद्यार्थियों को विषय का क्रमबद्ध ज्ञान नही देती क्योंकि वे विभिन्न विषयों का अध्ययन अपनी इच्छा के अनुसार करते है।
- इस पद्धति का सफलतापूर्वक प्रयोग करने के लिए कुशल और प्रशिक्षित अध्यापकों की जरुरत होती है जिसे अपने विषय के साथ दूसरे विषय का भी ज्ञान हो।
- स्कूल की समय सारिणी कठोर होती है जिसके कारण योजना विधि का प्रयोग करना कठिन हो जाता है।

इस विधि के बारे में कुछ भ्रान्तियां हैं, परन्तु उन्हे बुद्धिमानी से दूर किया जा सकता है। शिक्षण अधिगम के लिए योजना विधि काफी महत्वपूर्ण है। योजना विधि द्वारा जो ज्ञान प्राप्त किया जाता है, वह अन्य किसी भी विधि द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता। कुछ योजना के उदाहरण-

1. विज्ञान उपकरणों का निर्माण।
2. बैंक की कार्यप्रणाली का अध्ययन करना।
3. विद्यालय बजट का अध्ययन करना।
4. विज्ञान प्रदर्शनी का आयोजन करना।

17.8 समस्या समाधान विधि (Problem solving method)

समस्या विधि का शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में महत्वपूर्ण स्थान है। यह एक ऐसी क्रियात्मक विधि है जिसमें विद्यार्थियों के सामने एक समस्या प्रस्तुत की जाती है। और उन्हें उस समस्या के समाधान की खोज का प्रशिक्षण दिया जाता है। इस विधि द्वारा विद्यार्थियों में सृजनात्मकता, अभिव्यक्ति, चिन्तन, आलोचनात्मक विश्लेषण का विकास संभव होता है।

सी.वी. गुड (C.V.Good) के अनुसार "समस्या विधि निर्देश की वह विधि है जिसके द्वारा सीखने की प्रक्रिया को उन चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों के निर्माण द्वारा प्रोत्साहित किया जाता है जिनका समाधान करना आवश्यक है। "

("Problem method is a method of instruction by which learning is stimulated by the creation of challenging situation that demand solution.)

गेट्स (Gates) के अनुसार '"समस्या समाधान शिक्षण का एक रुप है। जिसमें उचित प्रत्युतर की खोज की जाती है।"

("Problem solving is a form of teaching in which the appropriate response must be discovered.")

रिस्क (Risk) के शब्दों में, समस्या समाधान किसी समस्या का हल प्राप्त करने के लिए उद्देश्य से किया गया नियोजित कार्य है।

("Problem solving is a planned and purposeful effort upon a problem for the purpose of finding a satisfactory")

इस विधि में विद्यार्थियों के सामने समस्या रखी जाती है जिसका हल ढूँढने के लिए उन्हें चिन्तन करना पड़ता है। अब प्रश्न यह है कि किस प्रकार की समस्याएँ प्रस्तुत की जाए।

1. समस्या व्यावहारिक तथा विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुकूल होनी चाहिए।
2. समस्या का समाधान निश्चित होना चाहिए।
3. समस्या की शैक्षणिक उपयोगिता होनी चाहिए।
4. समस्या ऐसी हो जो विद्यार्थियों को हल करने के लिए अभिप्रेरित करे।
5. समस्या विद्यार्थियों की समझ के अनुसार हो।
6. समस्या पाठ्यक्रम से सम्बन्धित हो।
7. समस्या बौद्धिक रुप से चुनौतीपूर्ण होनी चाहिए जिससे विद्यार्थियों में तर्क-शक्ति का विकास हों।

समस्या विधि के पद

(Steps of Problem method)

जेम्स एम0 ली (James.M.Lee) ने इसमें निम्नलिखित पद बताए है जैसा कि चित्र 17.3 द्वारा स्पष्ट होता है ।

चित्र 17.3

1. समस्या का चयन करना (Selection of Problem)-

सबसे पहले अध्यापक विद्यार्थियों के सामने समस्यात्मक परिस्थितियों का निर्माण करता है, जिसमें से विद्यार्थी अपनी रुचि, योग्यता एवं क्षमता के अनुसार एक समस्या का चयन करते है। समस्या चयन के बाद अध्यापक समस्या को कथन के रुप में सरल एवं स्पष्ट भाषा द्वारा परिभाषित करता है ताकि वह विद्यार्थियों की समझ में आ जाए।

2. परिकल्पनाओं का निर्माण (Formulation of hypothesis)

दूसरे चरण मे समस्या के समाधान के लिए सम्बन्धित परिकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है। परिकल्पना समस्या का संभावित हल होता है जो विभिन्न चरों में सम्बन्ध को प्रदर्शित करता है।

3. **परिकल्पनाओं का परीक्षण (Testing of hypothesis)-**

परिकल्पनाओं की जांच करने के लिए विद्यार्थियों के द्वारा आंकडों को इक्कठा किया जाता है। आकडे एकत्रित करते समय विद्यार्थियों को समय समय पर अध्यापक के मार्गदर्शन और सहायता की जरुरत होती है। एकत्रित करने के बाद आंकडों को क्रमबद्ध ढंग से व्यवस्थित किया जाता है और उसके आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किया जाता है।

4. **निष्कर्ष निकालना (Drawing Conclusion)-** प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष निकाला जाता है कि निष्कर्ष उपयोगी, विश्वसनीय तथा वैद् होना चाहिए।

5. **सामान्यीकरण (Generalization)-** प्राप्त किए गए परिणामों का परीक्षण करना चाहिए। सामान्यीकरण करने के लिए यह जरुरी है कि विद्यार्थी उस परिकल्पना को नई परिस्थिति में परीक्षण करे तथा आंकडो के आधार पर निष्कर्ष निकाले। यदि उनमें समानता पाई जाती है तो समस्या के समाधान का सामान्यीकरण संभव हो जाता है।

6. **रिकार्ड रखना (Recording)-** विद्यार्थी के द्वारा सम्पूर्ण प्रक्रिया का रिकार्ड रखा जाना चाहिए जिससे वह आगे के लिए पथ प्रदर्शक बन सके।

समस्या समाधान विधि शिक्षण के लिए एक उचित शिक्षण विधि है। इस विधि के निम्नलिखित लाभ है:-

- यह एक मनोवैज्ञानिक विधि है। इसमें विद्यार्थी स्वयं करके सीखते है जिससे उनके द्वारा प्राप्त ज्ञान ज्यादा स्थायी होता है।
- चिन्तन और मनन के लिए वैज्ञानिक ढंग से प्रशिक्षण प्रदान करती है।
- विद्यार्थियों की मानसिक शक्तियों के विकास के लिए अवसर प्रदान करती है।
- विद्यार्थियों में समस्या समाधान योग्यता का विकास होता है जिससे वे दैनिक जीवन में आने वाली हर समस्या का समाधान करने के योग्य हो जाते है।
- यह विधि व्यक्तिगत शिक्षण में उपयोगी है।

इस विधि में कुछ कमियां भी है।

- इसका प्रयोग सब विषयों को पढ़ाने के लिए नहीं किया जा सकता।
- यह काफी मंहगी और खर्चीली है।
- कुशल व प्रशिक्षित अध्यापकों की आवश्यकता होती है।
- इस विधि द्वारा शिक्षण करने के लिए अधिक समय की आवश्यकता होती है।
- सम्पूर्ण पाठ्यपुस्तक का अध्यापन असंभव प्रतीत होता है।

समस्या विधि में अनेक गुण और दोष पाए जाते है परन्तु इनसे इस विधि की उपयोगिता और सार्थकता पर संदेह नहीं किया जा सकता।

उदाहरण-

1. प्रदूषण के कारण
2. प्रदूषण को दूर करने के उपाय
3. जनसंख्या विस्फोट के कारण
4. स्त्री शिक्षा की धीमी प्रगति के कारण

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. योजना विधि के लाभ बताइये।
   Explain the merits of project method /
2. समस्या समाधान विधि से आप क्या समझते है?
   What do you understand by Problem solving method?
3. योजना विधि के विभिन्न सिद्धान्तों की व्याख्या कीजिए।
   Explain defferent principles of project method ?
4. समस्या विधि के विभिन्न सौंपान कौन से है?
   What are the different steps of problem method ?
5. योजना विधि से आपका क्या अभिप्राय है? इसकी विधि का वर्णन करो।
   What do you mean by project method? Explain its procedure in detail?

17.9 अनुसंधान या खोज विधि (Heuristic Method)

इस विधि की खोज **प्रो0 आर्मस्ट्राँग (Prof.Armstrong)** द्वारा की गई थी। इसे स्वयं ज्ञान विधि के नाम से भी जाना जाता है। Heuristic शब्द यूनानी शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ है खोज करना। इस विधि में किसी प्रकार का ज्ञान बच्चों के उपर लादा नहीं जाता है बल्कि उन्हें सत्य की खोज के लिए प्रेरित किया जाता है।

आर्मस्ट्राँग (Armstrong) के शब्दों में "अनुसंधान विधि शिक्षण की वह विधि है जिसमें विद्यार्थी अनुसंधानकर्ता के रुप में कार्य करते है।"

("Heuristic method is a method of teaching which involves the placing of the students as far as possible in the attitude of a discover.")

वैस्टावे (Wastaway) के अनुसार "अनुसंधान विधि अनिवार्य रुप से कार्य विधि में प्रशिक्षण प्रदान करती है। इसमें ज्ञान को दूसरे स्थान पर रखा जाता है।"

("The Heuristic method is a intended to provide a training in method. Knowledge is a secondary consideration altogether.")

अनुसंधान विधि में सभी विद्यार्थी किसी एक समस्या को स्वतन्त्र रुप से हल -करने का प्रयास करते है। समस्या से सम्बन्धित निर्देश उन्हें दिए जाते है और उन्हें व्यक्तिगत रूप से कार्य करने की छूट दे दी जाती है। छात्र समस्या को हल करने के लिए अन्वेषक के रूप में कार्य करते है। विद्यार्थी स्वयं के प्रयास द्वारा ज्ञान की खोज करते है। समय-समय पर वे अध्यापक से उचित सहायता, निर्देश तथा परामर्श प्राप्त कर सकते है।

इस विधि का प्रयोग सभी विषयों के शिक्षण के लिए संभव है जैसे हिन्दी में शैली, भाषा, कला और विषय सामग्री की दृष्टि से सूरदास और तुलसी की कविताओं की तुलना कीजिए।

भूगोल- भारत की जलवायु की तुलना आस्ट्रेलिया की जलवायु से कीजिए।

इतिहास- उन कारणों की खोज कीजिए जिसके कारण प्रथम भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम प्रांरभ हुआ।

अन्वेषण पद्धति के सिद्धांत

(Principles of Heuristic method)

इस पद्धति के निम्न सिद्धान्त है-

1. खोज का सिद्धांत
2. करके सीखने का सिद्धान्त
3. स्वतन्त्रता का सिद्धांत
4. तार्किक चिंतन का सिद्धांत
5. व्यक्तिगत कार्य का सिद्धांत
6. उद्देश्यपूर्णता का सिद्धांत

अन्वेषण विधि के शिक्षण में बहुत लाभ है।

1. विद्यार्थियों को नए विचारों तथा सिद्धांत. की खोज के लिए पूरी तरह से क्रियाशील रहना पडता है.।
2. ज्ञान स्पष्ट तथा स्थायी होता है।
3. बच्चों में निरीक्षण, परीक्षण, आत्मचिन्तन तथा निर्णयशक्ति का विकास होता है।
4. बच्चों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है।

इस विधि को उच्च माध्यमिक कक्षाओं में सफलतापूर्वक लागू किया जा सकता है। इस विधि को प्रभावशाली बनाने के लिए यह जरुरी है कि अध्यापक को सब कुछ बच्चों पर नहीं छोड देना चाहिए। अध्यापक द्वारा विद्यार्थियों को किसी भी प्रकरण से सम्बन्धित कम से कम ज्ञान दिया जाए तथा अधिक से अधिक उन्हें स्वयं अपने अनुभवों, प्रयोगों एवं स्वाध्याय द्वारा जानने को प्रेरित किया जाए अर्थात् उनका दृष्टिकोण वैज्ञानिक एवं अनुसंधानात्मक रखा जाए।

17.10 विश्लेषणात्मक एवं संश्लेषणात्मक विधि (Analytic and Synthetic Method)

विश्लेषण एवं संश्लेषण दो ऐसी मुख्य विधियाँ है जिनकी प्रक्रिया एक दूसरे के बिल्कुल विपरीत होते हुए भी उन्हें एक साथ काम में लाया जाता है। ये विधियाँ मुख्यत: गणित शिक्षण में प्रयोग मैं लाई जाती है।

विश्लेषण विधि

(Analytic Method)

विश्लेषणात्मक शब्द विश्लेषण से बना है अर्थात् विश्लेषणात्मक विधि वह विधि है जो विश्लेषण प्रक्रिया पर आधारित है। ("Analytic method is that method which is based on the process of analysis") विश्लेषण का अर्थ है इक्कठी हुई वस्तुओं अथवा भागों को अलग अलग करने की प्रक्रिया।

"विश्लेषणात्मक विधि वह विधि हैं जिसमें हम किसी भी समस्या की तह तक पहुंचने और सुविधापूर्वक हल करने के लिए छोटे-छोटे भागों में या निष्कर्षो से ज्ञात तथ्यों की ओर विभक्त करते जाते है और इस तरह अज्ञात से ज्ञात की तरफ पहुंचने का प्रत्यन करते है।" ("Analytical method is that method of teaching in which we divide the problem into small parts for finding its solution and for known or from conclusion to known facts.")

गणित समस्याओं के विश्लेषण में हम इस विधि का प्रयोग करते है। यह विधि रेखागणित में अधिक उपयोगी सिद्ध हुई है। इस विधि द्वारा किसी भी समस्या के कठिन भाग का विश्लेषण कर यह ज्ञात किया जाता है कि इस समस्या का हल किस प्रकार प्राप्त किया जाए। समस्या में जो कुछ ज्ञात करना होता है अथवा सिद्ध करना होता है.उससे शुरु करते है कि इसे ज्ञात करने के लिए या सिद्ध करने के लिए हमें पहले क्या ज्ञात करना चाहिए' इस प्रकार ज्ञात करते - करते जो दिया होता है उस तक पहुंच जाते है। जटिल समस्याओं को हल करने के लिए इस विधि का ही उपयोग करते है क्योंकि इसके द्वारा समस्या को छोटे छोटे भागों में बांट लेते है ताकि उसका हल प्राप्त करना सरल हो जाए।

उदाहरण- माना हमें वर्गाकार बगीचे का क्षेत्रफल दिया हुआ है और उसके चारों तरफ तार लगवाने का क्या खर्च होगा? ज्ञात करो।

प्रश्न	संभावित उतर
1. इस प्रश्न में क्या ज्ञात करना है।	1. चारों तरफ तार लगवाने का खर्च
2. इसके लिए हमें क्या पता होना चाहिए	2. बगीचे का परिमाप
3. बगीचे का परिमाप निकालने के लिए तुम्हें क्या ज्ञात-करना होगा।	3. बगीचे की एक भुजा
4. भुजा कैसे ज्ञात की जाती है	4. यदि उसका क्षे0 दे रखा (क्षेत्रफल दिया हुआ है)

इस प्रकार क्या ज्ञात करना 'है' से प्रांरभ करके जो दिया हुआ हैं तक हम पहुँचते है।

विश्लेषणात्मक विधि के कई लाभ है-

1. इस विधि द्वारा छात्रों में अन्वेषण करने की क्षमता और आत्मविश्वास में वृद्धि होती है।
2. छात्रों में तर्क शक्ति, विचार शक्ति तथा विश्लेषण करने की क्षमता का विकास होता है।
3. छात्रों द्वारा प्रदत ज्ञान अधिक स्थाई होता है।

4. यह विधि मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित है।
5. इस विधि में बालक स्वयं अपनी समस्याओं के समाधान के लिए हल ढूँढ सकता है।

इस विधि के बहुत लाभ है परंतु इसमें कुछ दोष भी है जो निम्नलिखित है-

1. इस विधि द्वारा शिक्षण करने से पाठ्यक्रम का निर्धारित समय में पूरा नहीं किया जा सकता।
2. समय अधिक लगता है।
3. प्रत्येक अध्यापक इस विधि का सफलतापूर्वक प्रयोग नही कर सकता।

संश्लेषणात्मक विधि

(Synthetic Method)

यह विधि विश्लेषण विधि से बिल्कुल विपरीत है। यह संश्लेषण प्रक्रिया पर आधारित है। संश्लेषण का अर्थ है अलग-अलग भागों को जोड़ना इस विधि में ज्ञात से अज्ञात की ओर चलते है।

'संश्लेषण विधि वह विधि है जिसमें हम किसी भी समस्या को हल करने के लिए समस्या से संबंधित सूचनाओं को एकत्र करते है।"

("Synthetic method is that method in which information and data related to problem are collected for solving the problem.")

संश्लेषण विधि में जो कुछ दिया हुआ है उससे प्रारंभ करके जो कुछ सिद्ध करना है या ज्ञात करना है उस तक पहुंचा जाता है। उदाहरण के रूप में जैसे हमें ज्ञात है कि 'A' सत्य है और यह सिद्ध करना है कि तथ्य 'C' सत्य है। तब हम दिए गए तथ्यों से प्रारंभ करेंगे। जब 'A' सत्य है तो तथ्य 'B' भी सत्य होगा। अत: 'B' सत्य है तो 'C' भी सत्य होगा।

शिक्षण में इन दोनों विधियों का साथ-साथ प्रयोग किया जाए तो ये अधिक प्रभावशाली सिद्ध हो सकती है। संश्लेषण विधि में बच्चों को मानसिक शक्तियों के उपयोग के अवसर नहीं मिलते। इसमें छात्र निष्क्रिय तथा अध्यापक क्रियाशील रहता है।

विश्लेषण और संश्लेषण विधियों की तुलना

(Comparative study of Analytic and Synthetic method)

विश्लेषण विधि	संश्लेषण विधि
1. इस विधि में छात्रों को अपनी मानसिक शक्तियों का उपयोग करने का पूरा मौका मिलता है।	1. यह विधि मानसिक शक्तियों के उपयोग का कोई अवसर नहीं देती
2. बच्चों की तर्कशक्ति , विचार शक्ति, कल्पना शक्ति और विवेक शकित का विकास होता है।	2. इस विधि द्वारा छात्रों में रटने की प्रवृति का विकास होता है।
3. विद्यार्थियों का सक्रिय योगदान होने के कारण वे पाठ में रुचि लेते है।	3. इसमें अध्यापक क्रियाशील रहता है और विद्यार्थी निष्क्रिय रहता है।

4. इस विधि में. अज्ञात से ज्ञात की तरफ जाते है।	4. इस विधि में ज्ञात से अज्ञात की ओर चलते है।
5. यह विधि अनुसंधनात्मक दृष्टिकोण पर आधारित है। इसमें आगमन विचार प्रक्रिया का प्रयोग होता है।	5. यह विधि निगमन विचार प्रक्रिया का प्रयोग करती है।
6. विद्यार्थियों को मौलिक विचार प्रस्तुत करने का मौका मिलता है।	6. विद्यार्थियों को मौलिक विचार प्रस्तुत करने का अवसर नहीं मिलता।
7. इसमें समस्या की तह तक पहुंचने तथा हल करने के लिए उसे छोटे-छोटे भागों मे बांटते है।	7. इस विधि में पहले से ज्ञात तथ्यों को एकत्रित करके परिणाम पर पहुंचा जा सकता है।
8. यह लंबी विधि है। इसमे अधिक समय की जरुरत होती	8. यह संक्षिप्त विधि है। इसमें ज्यादा समय की जरुरत नहीं होती।
9. इस विधि द्वारा छात्रो में आत्म-निर्भरता और आत्मविश्वास का विकास होता है ।	9. इस विधि में छात्र समस्या का हल स्वयं नहीं ढुढता जिसमे छात्रो में आत्मविश्वास की कमी रहती है ।
10. यह विधि ज्ञान के खोज करने के विधि है ।	10. यह खोजे हुए संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करने के विधि है ।

दोनो विधियों की कार्यप्रणाली को जानने के बाद यह कहा जा सकता है कि दोनों विधियाँ परस्पर विरोधी होते हुए भी अध्ययन तथा शिक्षण की दृष्टि से एक दूसरे की पूरक है। कोई, भी एक विधि दूसरी के बिना अधुरी है। किसी भी समस्या को हल करने में संश्लेषण तथा विश्लेषण दोनों ही विधियों का प्रयोग होना चाहिए। पहले विश्लेषण विधि द्वारा समस्या को छोटे-छोटे भागों मे बांट कर उसके रहस्य जानने चाहिए और हल करने के तरीके खोजने चाहिए। इसके बाद संश्लेषण विधि द्वारा खोज का प्रयोग करके 'समस्या को हल करने का प्रयत्न करना चाहिए।

स्वमूल्यांक प्रश्न

(Self Evaluation Question)

1. विश्लेषण और संश्लेषण विधियो की तुलनात्मक समीक्षा कीजिए।
   Give a comparative study of analytic and synthetic method.
2. विश्लेषण विधि की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
   Explan analytic method with suitable example.
3. अन्वेषण विधि के शिक्षण में क्या लाभ है?
   What are the merits of heuristic method?
4. योजना विधि से आपका क्या अभिप्राय है? इसकी विधि का वर्णन करो।
   What do you mean by project method? Explain its procedure in detail?

7.11 व्याख्यान और प्रदर्शन विधि (Lecture Cum Demonstration Method)

व्याख्यानयुक्त प्रदर्शन विधि व्यावहारिक एवं उपयोगी विधि है। व्यावहारिक विषयों को पढ़ाने के लिए इस विधि का प्रयोग किया जाता है। इस में अध्यापक विषय-वस्तु पढ़ाने के साथ-साथ उससे सम्बन्धित सभी आवश्यक प्रयोग करके दिखाता है। किसी वस्तु के बारे में पढ़ाने पर उस वस्तु को प्रदर्शित करके उस वस्तु की रचना एवं कार्यप्रणाली का वास्तविक रूप में ज्ञान कराता है। इस प्रकार विद्यार्थी विषय-वस्तु के. बारे में सुनते है और देखते भी है विद्यार्थियों को शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेने का मौका दिया जाता है जिससे उनकी सीखने में रुचि बढ़ती है। विद्यार्थी प्रदर्शन का निरीक्षण कर निष्कर्ष निकालने की कोशिश करते है, जिससे उनमें कल्पना शक्ति, निरीक्षण शक्ति और तर्क-वितर्क शक्ति का विकास होता है। इस विधि का प्रयोग विज्ञान-शिक्षण में अधिक किया जाता है।

उदाहरण- आक्सीजन गैस तैयार करना
हाइड्रोजन गैस तैयार करना
श्वसन तंत्र की संरचना एवं कार्यप्रणाली
पाचन तंत्र की संरचना एवं कार्यप्रणाली
बोट डालने की प्रक्रिया
सूर्य और ग्रहों की स्थिति आदि

हर विषय के अंदर कुछ ऐसे प्रकरण होते है जिनको हम मौखिक व्याख्या द्वारा स्पष्ट नहीं कर सकते। उन्हें स्पष्ट करने के लिए व्याख्या के साथ-साथ प्रदर्शन की जरुरत होती है।

व्याख्यानुयुक्त प्रदर्शन विधि में प्रत्यक्ष वस्तु एवं प्रयोग प्रदर्शन द्वारा विषय वस्तु को अधिक से अधिक स्पष्ट किया जा सकता है। इस तरह विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त ज्ञान स्पष्ट तथा स्थायी होता है। इस विधि के प्रयोग से उन्हें वैज्ञानिक ढंग से सोचने, कार्य करने और अपने दृष्टिकोण को वैज्ञानिक बनाने मे सहायता मिलती है। प्रयोग और वस्तुओं द्वारा प्रत्यक्ष अनुभव करा कर कुछ समय में आसानी से विषय सामग्री को समझाया जा सकता है जिससे समय की बचत होती है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए तो इस विधि में कुछ कमियां भी नजर आती है। करो और सीखो (Do and learn) शिक्षण का एक प्रमुख सिद्धांत है "परन्तु यह विधि देखो, सुनो और समझो (See hear] and understand) के सिद्धांत पर आधारित है। इससे विद्यार्थियों की अन्वेषणात्मक रचनात्मक आदि प्रवृतियों को ठीक प्रकार से विकसित होने का मौका नहीं मिलता।

इस विधि का ठीक ढंग से प्रयोग किया जाए तो यह माध्यमिक और उच्च माध्यमिक कक्षाओं के लिए सबसे अच्छी विधि सिद्ध हो सकती है। क्वोक्स ने ठीक ही कहा है "औसत और अच्छे विद्यार्थियों को स्थायी और स्पष्ट ज्ञान देने के लिए और नई समस्याओं को हल करने की तकनीकियाँ प्रदान करने के लिए व्याख्यानुक्त प्रदर्शन विधि को प्राथमिकता दी जाती है।

("For the purpose of providing Knowledge for both immediate and permanent retention and for the purpose of providing technique of handling new problems, The lecture cum demonstration method is much to be preferred in case of average and superior puplis.")

-Knox

अत: एक सफल, बुद्धिमान तथा अनुभवी अध्यापक को शिक्षण विधि का चुनाव करने से पहले विद्यार्थियों के मानसिक स्तर, रुचियों, आदतों एवं अभिवृतियों का ध्यान रखना चाहिए।

एक अच्छी विधि का चुनाव

(Selection of a good method)

अध्यापक का प्रमुख कार्य शिक्षण से सम्बन्धित है। कोई भी एक विधि ऐसी नहीं है जो सभी परिस्थितियों में उपयुक्त हो। जिस प्रकार दो बालक एक जैसे नहीं हो सकते, उसी प्रकार से सभी अध्यापक भिन्न होते है। अत: एक शिक्षण विधि मुख्य रुप से तीन कारकों से प्रभावित होती है जैसा चित्र 17.4 द्वारा स्पष्ट है।

1. अध्यापक (The Teacher)
2. विद्यार्थी (The Student)

चित्र 17.4

एक शिक्षण विधि एक परिस्थिति में उपयुक्त सिद्ध हो सकती है परन्तु दूसरी परिस्थिति के लिए यह पूर्णतया अनुपयुक्त हो सकती है। प्रत्येक विधि जो अध्यापक के द्वारा शिक्षण के लिए प्रयोग में लाई जाती है, वह ऐसी होनी चाहिए जो रुचि एवं उद्देश्य के साथ विद्यार्थियों के अधिगम को बढ़ावा देने में सहायक हो। विद्यार्थियों को सोचने तथा सामूहिक रुप से कार्य करने के लिए अभिप्रेरित करे। अध्यापक को शिक्षण विधि का चयन करते समय इन सब बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

कोठारी आयोग तथा माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा दिए गए सुझावों को ध्यान में रखकर ही एक अध्यापक को शिक्षण विधि का चयन करना चाहिए।

17.12 माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा दिए गए सुझाव (Recommendation of Secondary Education Commission)

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इस बात पर बल दिया है कि उतम पाठ्यसामग्री भी उचित शिक्षण विधियों तथा अच्छे अध्यापक के बिना निर्जीव हो सकती है। कई बार अमनोवैज्ञानिक पाठ्यक्रम भी प्रगतिशील शिक्षण विधियों द्वारा रोचक एवं प्रेरणादायक बन जाता है। अत: शिक्षा

का पुनर्निमाण प्रगतिशील शिक्षण विधियों द्वारा ही संभव हो सकता है। आज भी हम पुरानी, यान्त्रिक शिक्षण विधियों का प्रयोग कर रहे है। हमारे स्कूलों में सामान्य रुप से अपनाई जाने वाली शिक्षण विधियों में निम्नलिखित दोष है-

1. निर्जीव एवं अरुचिकर **(Dull and Uninteresting)**- शिक्षण विधियाँ निर्जीव एवं अरोचक है। ये उचित दृटिकोणों और मूल्यों का निर्माण नहीं करती और न ही काम के प्रति प्रेम उत्पन्न करती है।
2. रटना **(Cramming)**- स्कूलों में प्रयोग में लाई जाने वाली शिक्षण विधियां समझने की बजाय रटने की प्रवृति को प्रोत्साहित करती है।
3. स्वतन्त्र चिन्तन नहीं **(No independent thinking)**- विद्यार्थियों को स्वतन्त्र रुप से चिन्तन करने का मौका नहीं दिया जाता।
4. स्वाध्याय की आदत नहीं **(No habit of self study)**- इनसे स्व अध्ययन की आदत का विकास नहीं होता।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने के लिए विधियों में क्रांतिकारी परिवर्तन की आवश्यकता है।

शिक्षण विधियों संबंधी सुझाव (Suggestions on methods of Teaching)- माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षण विधियों को वैज्ञानिक तथा प्रभावशाली बनाने के लिए कुछ सुझाव दिए।

1. **काम के प्रति प्रेम (Love for work)-** शिक्षण विधियों द्वारा विद्यार्थियों में काम के प्रति प्रेम उन्नत होना चाहिए। उनमें कुशलतापूर्वक काम करने की इच्छा उत्पन्न करना चाहिए।
2. **व्यावहारिक ज्ञान (Practical Knowledge)-** सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ व्यावहारिक ज्ञान पर भी बल देना चाहिए ताकि विद्यार्थियों में समस्या समाधान योग्यता का विकास किया जा सके। इसके लिए विभिन्न कार्य अनुभव को स्कूल विषयों का अभिन्न अंग बनाना चाहिए।
3. **स्पष्ट चिन्तन के अवसर (Opportunities for clear thinking)-** शिक्षण विधियों द्वारा विद्यार्थियों को स्पष्ट, चिंतन तथा अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करने चाहिए।
4. **विद्यार्थी केन्द्रित (Child Centred)-** शिक्षण विधियां विद्यार्थी केन्द्रित होनी चाहिए ताकि हर विद्यार्थी अपनी योग्यता तथा गति के अनुसार शिक्षा प्राप्त कर सके। शिक्षण विधियों का प्रयोग विद्यार्थियों के बुद्धि स्तर के अनुसार करना चाहिए ताकि उनमें स्वतन्त्रतापूर्वक काम करने की आदत का विकास किया जा सके।
5. **करके सीखने पर बल (Emphasis on learning by doing)-** अध्यापन करते समय केवल रटने पर बल नहीं देना चाहिए। बालकों को वास्तविक परिस्थितियों में करके सीखने का मौका देना चाहिए। क्रिया विधि योजना विधि, समस्या समाधान विधि द्वारा बच्चों को अपने प्रयत्नों द्वारा ज्ञान प्राप्त करने का अवसर मिलता है।

6. **व्यक्तिगत एवं सामूहिक कार्य (Individual and group work)-** व्यक्तिगत एवं सामूहिक कार्यो में संतुलन स्थापित करके विद्यार्थियों को कार्य एवं जीवन द्वारा सीखने की प्रेरणा दी जा सकती है। सामूहिक कार्यो द्वारा विद्यार्थियों में सामूहिक गुणों तथा मिल जुल कर कार्य करने की प्रवृत्ति का विकास होगा।
7. **प्रयोगात्मक एवं दृष्टान्तात्मक स्कूल (Experimental & demonstration Schools)-** नई-नई एवं प्रगतिशील शिक्षण विधियों का प्रयोग करने के लिए प्रयोगात्मक एवं प्रदर्शनात्मक स्कूलों की स्थापना करनी चाहिए।
8. **दृश्य-श्रव्य सामग्री (Audio-Visual aids)-** शिक्षण विधियाँ ऐसी होनी चाहिए जिसमें तरह-तरह की दृश्य-श्रव्य साँमग्री का प्रयोग किया जाए ताकि अध्यापक के साथ विद्यार्थियों का भी क्रियात्मक योगदान हो।
9. **वांछित मूल्यों का निर्माण करना (Inculcating desirable values)-** शिक्षण विधियों का उद्देश्य केवल सूचना प्रदान करना नहीं होना चाहिए बल्कि इसके द्वारा विद्यार्थियों में उचित दृष्टिकोण एवं मूल्यों का भी निर्माण होना चाहिए।

माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा दिए गए सुझाव काफी उपयोगी है। इन सुझावों को कार्यान्वित करके हम सैकेण्डरी शिक्षा प्रणाली में महत्वपूर्ण सुधार कर सकते है।

शिक्षण विधियाँ और कोठारी आयोग के सुझाव

(Methods of Teaching and Recommendation of Kothari Commission))

शिक्षण यिधियो को सुधारने के लिए कोठारी आयोग (1964-66) ने निम्नलिखित सुझाव दिए है:-

1. **कक्षा का आकार (Size of Class)-** कक्षा का आकार ज्यादा बड़ा नहीं होना चाहिए। निम्न माध्यमिक कक्षा में 45 तथा उच्च माध्यमिक कक्षा में 40 विद्यार्थियों से अधिक संख्या न हो।
2. **शिक्षण विधियों में सुधार Improvement in teaching methods-** पाठ्यक्रम में सुधार के साथ-साथ शिक्षण विधियों में भी सुधार की आवश्यकता है। इसके लिए शिक्षण विधियों से सम्बन्धित क्षेत्र में शोध कार्य पर बल देना चाहिए। अध्यापकों को नई शिक्षण विधियों की जानकारी देनी चाहिए। पढ़ाने के क्षेत्र में अध्यापकों के रुढिवादी दृष्टिकोण को दूर करना चाहिए।
3. **लचीलापन (Flexibility)-** एक प्रभावशाली शिक्षण प्रणाली गतिशील, स्पष्ट तथा लचीली होनी चाहिए कि वह अध्यापकों के लिए विकास के विभिन्न स्तरों के अनुसार काम करने में सहायक हो। अच्छे स्कूलों में रचनात्मक एवं प्रयोगात्मक दिशा में काम करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। शिक्षण विधियों मे सुधार लाने के लिए प्रगतिशील अध्यापकों को प्रशासनिक अधिकारियों का सहयोग, सुधार का वातावरण, अध्ययनाध्यापन द्वारा प्रोत्साहन, विषय में कुशलता लाने के लिए सेवारत प्रशिक्षण, आवश्यक शिक्षण सामग्री आदि का उपलब्ध होना जरुरी है।

4. **नवीन शिक्षण विधियों का ज्ञान (Knowledge of new teaching methods)-** अभिनव कोसों, कार्यशालाओं, सेमीनार, प्रदर्शनों द्वारा अध्यापकों को सेवाकालीन प्रशिक्षण प्रदान कर नई शिक्षण विधियों का सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक ज्ञान देना चाहिए।

5. **शिक्षण सहायक सामग्री की सूची (Marking list of teaching aids)-** हर प्रकार के स्कूल के लिए अध्यापन सम्बन्धी आवश्यक सामग्री की सूची बनाई जाए और सामग्री स्कूल को शिक्षा की गुणवत्ता के आधार पर दी जाए। अध्यापकों को प्रशिक्षण देना चाहिए कि शिक्षण सहायक सामग्री को स्वयं तैयार करके उसका प्रयोग करे। प्रशिक्षण देने के लिए समय-समय पर कार्यशालाओं का आयोजन करना चाहिए। कार्यशालाओं में सस्ती एवं सरल सामग्री का निर्माण विस्तृत स्तर पर किया जाना चाहिए। महंगी सामग्री जैसे प्रोजेक्टर, टी.वी. का प्रयोग आस-पास के स्कूलों को मिल कर करना चाहिए।

6. **शिक्षा विभाग तथा आकाशवाणी में सम्पर्क (Coordination between Education Deparments and All India Radio)-** शिक्षा विभागों को आकाशवाणी के साथ सम्पर्क स्थापित करके रेडियो पाठो के प्रसारण का प्रबन्ध करना चाहिए। अध्यापकों तथा विद्यार्थियों के मार्गदर्शन के लिए आवश्यक सामग्री की अवस्था होनी चाहिए। अध्यापकों के लिए विशेष रेडियो कार्यक्रम प्रसारित किए जाने चाहिए जिससे अध्यापकों को अपने पाठ तैयार करने में सहायता मिलेगी। अध्यापक शिक्षण संस्थाओं में नई शिक्षण विधियों का प्रयोग करना चाहिए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. व्याख्यानयुक्त प्रदर्शन विधि द्वारा शिक्षण को किस प्रकार रुचिकर बनाया जा सकता है? स्पष्ट कीजिए।
   How teaching can be made interesting with the help of lecture cum demonstration method ? Explain.
2. उपयुक्त शिक्षण विधि का चुनाव करते समय किन-किन सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिए?
   What precatutions should be kept in mind while selecting proper teaching method?
3. स्कूल में प्रयुक्त होने वाली शिक्षण विधियों में क्या दोष है?
   What are the defects in the teaching methods used in Schools?
4. कोठारी आयोग ने माध्यमिक स्तर पर शिक्षण विधियों को सुधारने के लिए क्या सुझाव दिए है?

What recommendations are given by Kothari Commission for improving teaching methods at secondary level.

17.13 सारांश (Summary)

सर्वोतम पाठ्यसामग्री भी उचित शिक्षण विधियों के बिना निर्जीव हो जाती है। कई बार अरुचिकर पाठ्यक्रम भी प्रगतिशील शिक्षण विधियों द्वारा रुचिकर तथा प्रेरणापद बन जाता है। हम देख रहे है कि माध्यमिक स्तर पर प्रयोग की जाने वाली शिक्षण विधियों की वर्तमान, स्थिति उत्साहजनक नहीं हैं आज भी शिक्षण के लिए विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षण विधियों का प्रयोग न करके अध्यापक केन्द्रित विधियों का प्रयोग किया जा रहा है जिसमें अध्यापक सक्रिय होता है और विद्यार्थी मूक और निष्क्रिय श्रोता की भूमिका निभाते है। पुरानी और यांत्रिक शिक्षण विधियां विद्यार्थियों के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास नहीं करती, केवल उनका मानसिक एवं बौद्धिक विकास करती है। 21वीं शताब्दी में शिक्षण के लिए समस्या समाधान विधि, अन्वेषण विधि, परियोजना विधि, क्रियात्मक विधि, आगमन विधि, विश्लेषण विधि, आदि का प्रयोग करना चाहिए जो करो और सीखो के सिद्धान्त पर आधारित है। इन विधियों द्वारा केवल सैद्धान्तिक ज्ञान नहीं दिया जाता बल्कि दिया गया ज्ञान व्यावहारिक तथा वास्तविक जीवन से सम्बन्धित होता है। हमें उन विधियों का प्रयोग नही करना चाहिए जो केवल सुनो और समझो के सिद्धान्त पर आधारित है।

माध्यमिक स्तर पर शिक्षण के लिए कई शिक्षण विधियाँ तैयार की गई है क्योंकि कोई भी एक विधि ऐसी नहीं है जो सभी परिस्थितियो में उपयुक्त हो। शिक्षण के लिए प्रयोग में लाई जाने वाली शिक्षण विधि निर्धारित किए गए उद्देश्यों, विषय वस्तु वातावरण, विद्यार्थियों के मानसिक स्तर पर निर्भर करती है। शिक्षण विधि ऐसी होनी चाहिए जो विद्यार्थियों को सीखने के लिए अभिप्रेरित करे। शिक्षण विधियों मे सुधार लाने के लिए माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) तथा कोठारी आयोग (1964-66)ए ने कुछ सुझाव दिए है। जो काफी उपयोगी है। यह तभी संभव है जब अध्यापकों के ज्ञान का नवीनीकरण किया जाए।

NCERT और विभिन्न प्रशिक्षण कॉलेजों के विस्तार विभागों द्वारा अध्यापकों के नवीनीकरण के लिए सैमिनार, कार्याशालाएँ सम्मेलन आदि सेवाकालीन कार्यक्रम आयोजित किए जा रहे है। अध्यापक को चाहिए कि वे इन सुझावों को कार्यान्वित करके बिना किसी विलम्ब के माध्यमिक शिक्षा प्रणाली में आवश्यक सुधार लाने का प्रयास करे।

17.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Aggarwal, J.C. and S. Gupta : Secondary Education and Management, Shipra Publication, Delhi, 2007

Kulshrestha, A. K. : Teaching of Mathematics, Meerut, 2007

Mangal, S.K. : Teaching of physical Sciences, Arya Book Depot, Delhi, 2005.

Tripathi, Shaligram : Techniques of Teaching , Radha Publication, Delhi, 1992.

Walia, J.S. : Secondary Education and School and School Management, Ahim paul, publishers, Jallandhar, 2007

इकाई-18

माध्यमिक स्तर पर विशिष्ट विद्यार्थियों का शिक्षण (Teaching for Special Students at Secondary Level)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

18.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

18.1 प्रतिभाशाली बच्चों का संप्रत्यय (Concept of Gifted Children)

18.2 प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान (Identifiation of Gifted Children)

18.3 प्रतिभाशाली बच्चों का शिक्षण (Teaching for Gifted Children)

18.4 अधिगम अयोग्य बालक- अर्थ एवं पहचान (Learning Disabled Children-Meaning and Identification)

18.5 अधिगम असमर्थ बच्चों का शिक्षण (Teaching of Children with learning disability)

18.6 कुछ अधिगम कमियों को दूर करने के उपाय (Remedial learning disability measures of some specific learning deficiencies)

18.7 अधिगम अ२२मर्थ बच्चों के लिए, विशेष उपागम एवं तकनीक (Specialized approaches and techniques for learning disabled)

18.8 एकीकृत शिक्षा एवं अधिगम असमर्थ बालक (Integrated Education and learning Disabled Children)

18.9 समेकित शिक्षा (Integrated Education)

18.10 विशिष्ट बच्चों की शिक्षा के लिए नीतियां एवं कार्यक्रम (Policies and programmes for the education of exceptional children)

18.11 सारांश (Summary)

18.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

18.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की संप्राप्ति पर आप

- प्रतिभाशाली बच्चों के संप्रत्यय को अच्छी तरह समझ जाएंगे।
- प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान करने के विभिन्न तरीकों को जान सकेंगे।
- प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान में अपना योगदान दे सकेंगे।
- प्रतिभाशाली बच्चों को शिक्षा देने की विभिन्न विधियों से अवगत हो जाएंगे।

- प्रतिभाशाली बच्चों के सही विकास में अध्यापक की भूमिका को समझ सकेंगे।
- अधिगम असमर्थता के अर्थ को जान जाएंगे।
- अधिगम असमर्थ बच्चों की पहचान करने के विभिन्न तरीकों को समझ सकेंगे।
- अधिगम अयोग्यता के विभिन्न प्रकारों से अवगत हो जाएंगे।
- अधिगम अयोग्य बच्चों को शिक्षा के विभिन्न विधियों को समझ सकेंगे।
- अधिगम कमियों को दूर करने के तरीकों को जानकर, उनको दूर करने में अपना सहयोग दे सकेंगे।
- मुख्यधारा में रखकर विशिष्ट बच्चों को शिक्षा देने के तरीको की व्याख्या कर सकेंगे।
- विशिष्ट बच्चों की शिक्षा के लिए तैयार किए गए कार्यक्रमों एवं नीतियों को जान जाएंगे और आधुनिक समय के अनुसार उसमें परिवर्तन करने में सुझाव दे सकेंगें।
- नौंवी ओर दसवी पंचवर्षीय योजना में विशिष्ट बच्चों की शिक्षा के प्रावधानों की समीक्षा कर सकेंगे।
- समेकित शिक्षा के अर्थ एवं महत्व को जान जाएंगे।

18.1 प्रतिभाशाली बालक (Talented Children)

किसी भी देश की उन्नति इस बात पर निर्भर करती है कि वही के लोग किस प्रकार की मानसिक योग्यताएँ रखते है। अत: किसी भी देश की तकनीकी, उन्नति तथा सामाजिक परिवर्तन वही के लोगों की योग्यता पर निर्भर करता है। सृजनात्मक शक्ति ही समाज के दिशा निर्देशक होते है।

प्रतिभाशाली बालक समाज की बहु मूल्य सम्पति है। ये किसी भी समाज तथा सभ्यता के लिए एक उपहार के रुप में होते है, पुराने समय में इन बच्चों के प्रति लोगों के मन में गलत धारणाएँ थी। लेकिन अब पिछले 100 वर्षा से विश्वभर में प्रतिभाशाली बच्चों की शिक्षा के लिए विचार किया जा रहा है। शिक्षा शास्त्रियों का यह कहना है कि इन बालकों की तरफ विशेष ध्यान देना चाहिए ताकि मानसिक शक्तियों का पूर्ण रुप से अच्छे कार्यो के लिए उपयोग हो सके। अपने स्तर के सभी कार्यो को ये बालक कम समय में बिना सहायता के पूरा कर लेते है। खाली समय में ये बालक विशिष्ट या सृजनात्मक कार्य करना चाहते है। यदि इन्हें सृजनात्मक कार्य करने का मौका न दिया जाए तो ये समाज, परिवार तथा विद्यालय में कुसमायोजन की समस्या पैदा कर देते है और अपने आपको असामाजिक कार्यो में संलग्न कर शातिर अपराधी बन जाते है। प्रतिभाशाली बालकों की प्रतिभा को मुखरित करने के लिए विशेष शिक्षा की आवश्यकता है। विशेष शिक्षा देने के लिए विशेष विद्यालयों, कक्षाओं, अध्यापकों तथा व्यवसायों के प्रशिक्षण की व्यवस्था करना जरुरी है। इन सभी पहलुओं पर विचार करने से पहले यह जानना जरुरी है कि प्रतिभाशाली बालक से हमारा क्या अर्थ है-

कालसनिक (Kolesnik) के शब्दों में प्रतिभाशाली बालक वह बालक है जो अपने आयु स्तर के बच्चों में किसी योग्यता में अधिक हो और जो समाज के लिए कुछ महत्वपूर्ण तथा नया कार्य कर सकें

("The terms gifted is applied to every child child who, in his age group, superior in some ability, and which can do something new and outstanding for the society.")

ल्यूसिटो (Luceto) के शब्दों में "प्रतिभाशाली बालक वे है जिनकी क्षमता एवं बौद्धिक शक्तियाँ उत्पादनशील एवं मूल्यांकन सम्बन्धी दोनों ही प्रकार की वैचारिक प्रक्रिया में इतने उच्च स्तर की होती है कि पर्याप्त शैक्षिक अनुभवों के मिलने पर वे भावी संस्कृति के समस्या विचारक, खोजकर्ता एवं मूल्यांकन कर्ता बन सकेंगे।"

("The gifted children are those whose potential intellectual powers are of Such high level both in productive and evaluative thinking that if adequate educational experiences are provided to them, they could be future problem solvers, innovators and evaluators of the culture.")

उपरोक्त परिभाषाओं से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रतिभावान बालको की बुद्धि लब्धि सामान्य बालकों से अधिक होती है। टर्मन के अनुसार 140 बुद्धि लब्धि से उपर वाले बालकों को प्रतिभाशाली माना जाता है। प्रतिभाशाली बालक को सही शिक्षा देने से पहले उनकी पहचान करना बहुत जरुरी है। इनकी पहचान बुद्धि लब्धि परीक्षणों द्वारा, विशेषताओं के आधार पर तथा अध्यापकों, पुस्तकालय अध्यक्ष, माता-पिता का मत आदि के द्वारा कर सकते है।

18.2 प्रतिभाशाली बालकों की पहचान (Identification of Gifted Children)

निम्नलिखित चित्र से स्पष्ट होता है कि प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान करने की अनेक विधियां है:-

चित्र संख्या-18.1

1. **विशेषताओं के आधार पर (On the basis of characteristics):-** प्रतिभाशाली बालक अनेक गुणों एवं व्यवहार में सामान्य बालक से भिन्न होते है।

चित्र संख्या-18.2

उपरोक्त चित्र से स्पष्ट है कि प्रतिभाशाली बालक शारीरिक मानसिक, शैक्षिक, व्यक्तिगत, सामाजिक तथा संवेगात्मक विशेषताओं में सामान्य बालकों से भिन्न होते है। इनमें ज्ञानेन्द्रिय विकास उतम एवं शीघ्र होता है। ये जल्दी बोलना तथा चलना सीख जाते है। इनकी बुद्धि लब्धि 140 से अधिक होती हे। इनमें सीखने समझने की योग्यता, कल्पना शक्ति, मौलिक, चिन्तन, अवधान केन्द्रित करने की क्षमता, अन्तर्दष्टि, निरीक्षण शक्ति, स्मृति आदि अधिक होती है। हस्त कार्यो की अपेक्षा मानसिक कार्यो में इनकी रुचि अधिक होती है। पाठ्यक्रम के अलावा सहायक पुस्तकों को पढने में रुचि लेते है। सामान्य बालकों की अपेक्षा कम मेहनत से भी अधिक अंक प्राप्त करते है। कक्षा में सबसे अधिक अंक प्राप्त करते है।

संवेगात्मक रुप से प्रतिभाशाली बालक स्थिर और समायोजित होते है। सामाजिक रुप से अधिक परिपक्व तथा सर्वप्रिय होते है। ये विनम्र तथा आज्ञाकारी होते है और नेतृत्व की विशेष योग्यता भी रखते है।

2. **बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test)-** विभिन्न बुद्धि परीक्षणों जैसे भाटिया निष्पादन बुद्धि परीक्षण माला, रेवनस प्रोग्रेसिव मैट्रिसेज वेश्लर बालक बुद्धि मापनी, टण्डन सामुहिक मानसिक योग्यता परीक्षण आदि द्वारा प्रतिभाशाली बालकों की पहचान आसानी से की जा सकती है।

बुद्धि परीक्षणों के अतिरिक्त अध्यापक की राय, माता पिता, पुस्तकालय अध्यक्ष की राय, व्यक्तित्व परीक्षण, रुचि एवं अभिरुचि परीक्षण. उपलब्धि परिक्षण, सहगामी क्रियाओं में भागीदारी, संचयी रिकार्ड आदि के द्वारा भी प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान की जा 'सकती है।

स्वमूल्यांकन

(Self Evaluation Questions

1. प्रतिभाशाली बालक किसे कहते है? उनकी क्या विशेषताएँ है?
   Who is a gifted child? What are his characteristics.?
2. प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान कैसे की जा सकती है?
   How would you identify gifted children?
3. प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान करना क्यों जरूरी है?
   Why it is necessary to identify gifted child?
4. प्रतिभाशाली बच्चों की बुद्धि लब्धि कितनी होती है?
   What is the I.Q. of gifted children?

18.3 प्रतिभाशाली बच्चों का शिक्षण (Teaching for Gifted Students)

प्रतिभाशाली बालकों को उनके पूर्ण विकास के लिए के लिए ऐसी शिक्षा देनी चाहिए जो उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। प्रतिभासम्पन्नता एक घनात्मक विशिष्ट है इसलिए शिक्षा को बच्चों के अनुरुप बनाने की आवश्यकता होता है। इनकी शिक्षा की योजना निम्न उद्देश्यों को ध्यान में रखकर करनी चाहिए?

- उच्च स्तरीय ज्ञान एवं योग्यताओं का विस्तार करना
- विशिष्ट प्रतिभाओं का पूर्ण विकास करना।
- आलोचनात्मक विचारशीलता विकसित करना।
- जिज्ञासात्मक प्रवृति को सन्तुष्ट करने का प्रयास करना।
- उनके प्रतिभासम्बन्धी क्षेत्र में उच्चस्तरीय पाठ्यक्रम एवं अनुभव प्रदान करना।
- सृजनात्मक एवं क्रियात्मक शक्तियों की अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करना।

विशेष शिक्षा व्यवस्था

(Special Education Arrangement)

परिस्थितियों, समाज, प्रतिभाशाली बालकों की आवश्यकताओं उनकी प्रतिभा के स्तर एवं क्षेत्र तथा प्राप्त साधनों को ध्यान में रखते हुए विशेष शिक्षा व्यवस्था करने की मुख्य तीन प्रणालियों है जैसा कि चित्र में दिखाया गया है।

चित्र संख्या. 183

I. त्वरण (Acceleration)

त्वरण से अभिप्राय शैक्षिक परियोजनाओं के द्वारा बालक को दी जा सकने वाली ऐसी प्रगति से है जो उसे औसत आयु से कम आयु में प्राप्त होती है। Acceleration is a progress through an education programme at a rate faster of at an age younger than convention dictates').

त्वरण प्रदान करने के कई तरीके है।

1. **जल्दी दाखिला (Early Admission):-** निर्धारित आयु से पूर्व ही प्रतिभाशाली बालको को स्कूल में दाखिल करना चाहिए।
2. **शीघ्र उन्नति (Quick Promotion):-** बौद्धिक एवं शैक्षिक योग्यताओं के आधार पर एक ही वर्ष में एक से अधिक कक्षाओं के पाठ्यक्रम का अध्ययन करने की अनुमति देनी चाहिए। कई मनोवैज्ञानिक इसे ठीक नहीं समझते क्योंकि उनका मानना है कि शीघ्र उन्नति मिलने के कारण हर बार एक नए समूह के साथ समायोजित करने में बच्चे को कठिनाई का अनुभव होता है।
3. **अतिरिक्त कोर्स (Extra Courses):-** प्रतिभाशाली बच्चों के पाठ्यक्रम में विभिन्नता होनी चाहिए ताकि वे अपनी ऊर्जा का सही ढंग से प्रयोग कर सके। पाठ्यक्रम बच्चों की रुचि के अनुकूल होना चाहिए। इससे बच्चे अपने समय व उर्जा का प्रयोग नकारात्मक कार्यो के लिए नही करेंगे। यह शिक्षा प्रणाली थोडी मंहगी है।

त्वरण प्रणाली में कुछ कमियाँ है। लेकिन कमियां होने पर भी यह एक ऐसी प्रणाली है, जो सामान्य परिस्थितियों एवं सीमित साधनों में भी प्रतिभाशाली बालकों की प्रतिभा को विकसित करने में सहायक होती है।

II. सवंर्धित कार्यक्रम (Enriched Programme)

कुछ विद्वानों का मत है कि वर्ष में दो बार उन्नति देना और अलग से शिक्षा का प्रबन्ध करना बहुत सी कठिनाइयों को जन्म देता है। इसलिए साधारण विद्यालयों में ही प्रतिभावान बालकों के लिए विस्तृत एवं विशेष पाठ्यक्रम की योजना बनानी चाहिए। "विस्तृत पाठ्यक्रम का अर्थ है कि बच्चों को विभिन्न अनुभव तथा कार्य उच्चस्तर के दिए जाए।" '

-कालसनिक

विस्तृत पाठ्यक्रम प्रदान करने के दो तरीके है-

1. प्रतिभाशाली बच्चों को उसी विषय का गहन अध्ययन करने के लिए प्रेरित किया जाए जिनका अध्ययन औसत तथा सामान्य बच्चों ने भी किया है।
2. बच्चों को उन क्षेत्रों का अध्ययन करने के लिए प्रेरित करना जिनका अध्ययन सामान्य बालकों ने नहीं किया है। संबर्धित पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य बच्चों का अधिकतम विकास करना है। इसका प्रावधान निम्न रुपो में किया जा सकता है।
    1. **व्यक्तिगत कार्य (Individual Work):-** इस विधि में प्रतिभावान विद्यार्थी अपनी गति के अनुसार कार्य करता है पाठ्यवस्तु को इस प्रकार नियोजित किया जाता है कि छात्र उसे व्यक्तिगत रुप से आत्मनिर्भर होकर पूर्ण करता है। बच्चा कक्षीय अनुदेशनात्मक कार्य से स्वतन्त्र होता है।
    2. **पुस्तकालय सुविधा (Library Facilities):-** संबर्धित पाठ्यक्रम इस बात की तरफ संकेत करता है कि स्कूलों में अच्छा पुस्तकालय, प्रयोगशाला, संसाधन केन्द्र का होना जरुरी है ताकि प्रतिभाशाली बालक अपनी रुचि एवं क्षमता के अनुसार कार्य कर सके।
    3. **नाटकीयकरण (Dramatisation):-** अधिक योग्यता वाले बच्चे नाटकीयकरण विधि द्वारा सीखने में ज्यादा आनन्द लेते है। कठिन किस्से, कहानियों एवं घटनाओं को इस विधि द्वारा आसान, रोचक तथा वास्तविक बनाया जा सकता है।
    4. **योजनाविधि (Project Method):-** यह प्रतिभाशाली बच्चा को शिक्षा देने की सबसे अच्छी विधि है। अध्यापक कोई भी योजना जैसे शेक्सपीयर के नाटक का मंचन उन्हें सौंप देते है। विद्यार्थी स्वतन्त्र रुप से अपनी जिम्मेदारी समझ कर हर कार्य को करते है। इससे बच्चों में आत्मविश्वास तथा स्वतन्त्र रुप से कार्य करने की भावना का विकास होता है।
    5. **भ्रमण (Excursion):-** प्रतिभाशाली बच्चे जिज्ञासु एवं साहसी प्रवृति के होते है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए शैक्षिक भ्रमण आवश्यक है। भ्रमण द्वारा बच्चे वास्तविक ज्ञान प्राप्त करते है। जैसे ऐतिहासिक घटनाओं की तिथियों को

याद करने की अपेक्षा ऐतिहासिक स्थानों की यात्रा इनके लिए अधिक महत्वपूर्ण होती है।

III. पृथककरण (Segregation)

यह तकनीक प्रतिभाशाली बच्चों को औसत बच्चों से अलग कर शिक्षा प्रदान करती है। हॉलिंगबर्थ ने कहा है कि 'प्राथमिक स्तर से ही प्रतिभाशाली बच्चों के लिए विशेष कार्यक्रम होने चाहिए।''

("There should be separate programme for the gifted children at primary Level")

- Holling Worth.

प्रतिभाशाली बच्चों को विशिष्ट शिक्षा देने के कई तरीके हैं

1. **विशेष कक्षाएँ (Special Classes):-** प्रतिभाशाली बच्चों के लिए सामान्य स्कूलों में ही अलग कक्षाओं की व्यवस्था की जा सकती है। इन कक्षाओं में सभी बालक समान बौद्धिक स्तर तथा योग्यता के होते है। इनके लिए विस्तृत पाठ्यक्रम, अतिरिक्त कार्यकलापों, प्रयोगशाला कार्य आदि की व्यवस्था की जाती है। इनके लिए अध्यापक भी प्रशिक्षित, अनुभवी व कुशल होते है जो प्रतिभासम्पन्न बालकों की जिज्ञासा को शान्त कर सकें। विशेष कक्षाओं में बच्चों में समायोजन सम्बन्धी समस्याएँ भी उत्पन्न नही होती।
2. **शौक क्लब (Hobby Clubs):-** इन बच्चों के लिए शौक क्लब जैसे विज्ञान क्लब, भाषा क्लब आदि शुरु करने चाहिए ताकि बच्चा कक्षा के बाद इनमे भाग ले सके। क्लब में विद्यार्थियों की रुचि को अनुसार तरह-तरह की गतिविधियाँ होनी चाहिए। इससे बच्चों का सृजनात्मक विकास होता है।
3. **विशेष विद्यालय (Special Schools).-** इन विद्यालयों में केवल उच्च बौद्धिक क्षमता वाले बालकों को ही प्रवेश दिया जाता है। छात्रों में कार्य के प्रति नवीनतम दृष्टिकोण पैदा करने के लिए इनका पाठ्यक्रम विज्ञान एवं तकनीकी की नवीन उपलब्धियों को ध्यान में रखकर तैयार किया जाता है। इन विद्यालयों की शिक्षा प्रणाली, पाठ्यक्रम, मूल्यांकन पद्धति तथा अध्यापकों की नियुक्ति बच्चों की आवश्यकता के अनुसार की जाती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति

(National Policy of Education, 1986)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार ने प्रतिभाशाली बालकों को निःशुल्क गुणात्मक शिक्षा देने के उद्देश्य से भारत के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों मे नवोदय विद्यालयों की स्थापना की। इन स्कूलों के मुख्य उद्देश्य है

- प्रतिभाशाली बच्चों को निःशुल्क शिक्षा देना।
- बालकों की क्षमता का पूर्ण विकास करना।
- प्रतिभाशाली बच्चों के लिए विशेष शिक्षकों का प्रबन्ध करना।

उपरोक्त कार्यक्रमों द्वारा प्रतिभाशाली बच्चों को सही ढंग से शिक्षा दी जा सकती है लेकिन इनकी वास्तविक उपलब्धि

शिक्षकों की लग्न, प्रतिस्पर्धात्मक व्यक्तित्व, सृजनशीलता एवं अध्ययनशीलता पर आधारित है। प्रतिभाशाली बच्चों की शिक्षा की योजना आसान काम नहीं है। इनके लिए शिक्षा योजना बनाते समय कुछ सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए:-

1. इनकी शिक्षा व्यवस्था ऐसी हो जिससे बालकों में अहं तथा अभिमान की भावना विकसित न हो।
2. पाठ्यक्रम संबर्धित तथा विकसित होना चाहिए।
3. पाठ्यक्रम बच्चो के मानसिक स्तर, रुचि, अभिक्षमता एवं योग्यता के अनुसार हो ताकि वे अपने समय व उर्जा का प्रयोग नकारात्मक कार्यो के लिए न करे।
4. शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिससे बच्चों का केवल मानसिक विकास ही नहीं बल्कि उनका सर्वागीण विकास हो।
5. बच्चों को अपनी प्रतिभा के सर्वागीण विकास के लिए स्वतन्त्रता एवं अवसर मिलने चाहिए।

प्रतिभाशाली बच्चों को सही ढंग से शिक्षा प्रदान करने के लिए विभिन्न आयोगों एवं समितियों ने अपने सुझाव दिए हे।

I. कोठारी आयोग, 1964-66

(Kothari Commission, 1964-66)

1. **प्रतिभा की खोज (Search for Talent):-** हर स्तर पर विद्यार्थियों की प्रतिभा को खोजना चाहिए। यह प्रक्रिया लगातार चलनी चाहिए। लेकिन प्रतिभा खोजने का सबसे अच्छा स्तर माध्यमिक स्तर है।
2. **संबर्धित खोज (Enrichment Programme):-** प्रतिभासम्पन्न विद्यार्थियों के लिए संबर्धित कार्यक्रम शुरु करने चाहिए। स्कूल का पाठ्यक्रम लचीला होना चाहिए ताकि बच्चा अपनी रुचि के अनुसार कार्यक्रमों मे भाग ले सके।
3. **पाठ्यसहगामी क्रियाएँ (Cocurricular Activities):-** इन बच्चों के लिए तरह-तरह की पाठ्यसहगामी क्रियाओं का आयोजन करना चाहिए।
4. **ग्रीष्म अवकाश कार्यक्रम (Summer Vacation Programme):-** विभिन्न स्कूलों के प्रतिभाशाली बच्चों के लिए एक शैक्षिक केन्द्र पर पाँच से छह सप्ताह के ग्रीष्म अवकाश कार्यक्रम की व्यवस्था होनी चाहिए। केन्द्र पर विशेष स्टाफ,. पुस्तकालय, प्रयोगशाला, उपकरण की व्यवस्था होनी चाहिए। विद्यार्थियों को कई साल तक अपनी प्रतिभा के विकास के अक्सर प्रदान करने के लिए कार्यक्रम में हर साल नवीनीकरण होना चाहिए।
5. **भ्रमण (Visits):-** विभिन्न संग्रहालयों, प्रयोगशालाओं एवं महत्वपूर्ण स्थानों का भ्रमण कराना चाहिए।

6. **होस्टल सुविधा (Hostel Facilities):-** कोठारी आयोग ने कहा है कि जिन प्रतिभाशाली बच्चों के घर का वातावरण पढने के लिए उपयुक्त नहीं है उन्हें होस्टल सुविधा होनी चाहिए।
7. **छात्रवृतियां (Scholarships):-** सभी स्तर पर प्रतिभासम्पन्न बच्चों को छात्रवृतियां देनी चाहिए।
8. **प्रशिक्षित अध्यापक (Trained Teachers):-** अध्यापकों को प्रशिक्षण देना चाहिए ताकि वे कक्षा में ऐसे वातावरण का निर्माण कर सके जिससे बच्चों को सृजनात्मक कार्य करने का अवसर मिले।

II. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986

(National Policy of Education, 1986)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने देश के विभिन्न शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में नवोदय विद्यालय स्थापित करने का सुझाव दिया है ताकि प्रतिभाशाली बालकों को निशुल्क गुणात्मक शिक्षा दी जा सके और उनकी क्षमताओं का पूर्ण विकास किया जा सके। नवोदय विद्यालय आवासीय है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, क्रियान्वन प्रारुप, 1986

(NPE, Programme of Action, 1986)

- प्रतिभाशाली बच्चों की रुचि के अनुसार विभिन्न विषय के शिक्षण-अधिगम के लिए विशेष प्रबन्ध करने चाहिए। विशेष प्रबन्ध के लिए अच्छी सुविधाएं, उच्च अध्यापक-विद्यार्थी अनुपात, और शिक्षण कार्यक्रमों के लिए विभिन्न अध्यापकों का सहयोग जरुरी है।
- इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए विशेष रुप से तैयार की गई कमेटी के द्वारा एक योजना तैयार की जानी चाहिए।
- वर्तमान प्रणाली में योजना को क्रियान्वित करने के लिए कदम उठाने चाहिए।

राममूर्ति कमेटी, 1990

(Ramamurti Committee,1990

इस कमेटी ने सुझाव दिया कि प्रतिभासम्पन्न बच्चों को शिक्षा देने के लिए ज्यादा से ज्यादा नवोदय विद्यालय खोले जाए और इन स्कूलों में पर्याप्त सुविधाएं होनी चाहिए।

संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1992

(Revised National Policy on Education, 19921

आवासीय विद्यालय, नवोदय विद्यालय द्वारा ही प्रतिभाशाली बच्चों की प्रतिभा के अधिकतम एवं पूर्ण विकास के उद्देश्य को पूरा किया जा सकेगा।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evalutation Questions)

1. प्रतिभाशाली बालको को विशिष्ट शिक्षा प्रदान करने की विभिन्न विधियों का वर्णन कीजिए।

Explain different methods for imparting education to gifted children.

2. प्रतिभाशाली बच्चों की शिक्षा के लिए कोठारी आयोग ने क्या सुझाव दिए है?
What recommendations are given by Kothari Commission regarding education of gifted children?'

3. नवोदय विद्यालय का संप्रत्यय किसने दिया? इस विद्यालय के मुख्य उद्देश्य क्या है?
Who gave the concept of Navodaya Schools? What are the main objection of Navodaya Schools?

4. प्रतिभाशाली बच्चो की सहातया करने के लिए प्रयोग में लाये जाने वाले कुछ संबर्धित कार्यक्रमों का वर्णन कीजिए।
Explain the enriched programmes`that can be used for helping gifted children.

5. प्रतिभाशाली बच्चों की शिक्षा के मुख्य उद्देश्य क्या होने चाहिए ?
What should be the main objectives of education of gifted children?

18.4 अधिगम अयोग्य बालक (Learning Disabled Children)

अधिगम अयोग्य बालक मानसिक रुप से पिछड़े हुए नहीं होते। इनकी बुद्धि लब्धि सामान्य बच्चों जितनी होती है लेकिन शैक्षिक उपलब्धि सामान्य बच्चों से कम होती है। ये पढ़ने, लिखने, समझने तथा गणितीय तर्क-वितर्क में कम उपलब्धि का प्रदर्शन करते है। इस प्रकार की समस्याओं एवं कठिनाई का कारण भावात्मक, व्यवहारिक विक्षोभ अथवा सम्भवत: मानसिक दोष होता है। इसका कारण मानसिक मंदिता शारीरिक इन्द्रियों में कमी, अथवा दोष नहीं होता। इसका कारण सांस्कृतिक एवं अनुदेशानात्मक दोष भी नहीं होता।

सर्वप्रथम इस विशिष्ट क्षेत्र का उपयोग सेमुअल किर्क (Samuel Kirk) द्वारा 1962 में किया गया था जो आज सर्वमान्य एवं सार्वभौमिक हो गया है। इसके बाद इस शब्द का प्रयोग राष्ट्रीय परामर्श समिति (National Advisory Committee) के द्वारा किया गया। सन् 1963 के पश्चात् विद्वानों ने अधिगम असमर्थता को परिभाषित करने का प्रयास किया लेकिन अभी तक कोई भी ऐसी व्यापक परिभाषा विकसित नहीं हो पाई है जिसे हर व्यक्ति स्वीकार कर सके।

अधिगम अयोग्य बालक का अर्थ

(Meaning of Learning Disabled Children)

कैवेल और फोरनैस (Kavale & Forness) के शब्दों में

"अधिगम अयोग्य बालक वे है जो बौद्धिक रुप से सामान्य ही होते है लेकिन उनकी शैक्षिक उपलब्धि का स्तर सामान्य बच्चों से कम पाया जाता है। कुछ को गणित अधिगम में तथा कुछ को पढ़ने व लिखने में कठिनाई होती है।"

(people with learning disabilities refers to a group of individuals who possers normal intelligence but their academic performance is significantly behind their class mates. Some have difficulity in learning mathematics Wile some have in reading and writing.")

किर्क (Kirk) के विचार:- अधिगम अयोग्य शब्द उन बच्चों के लिए प्रयुक्त किया जाता है जिनकी योग्यताओं एवं शैक्षिक उपलब्धियों के बीच बहुत अधिक अन्तर होता है जिसकी व्याख्या उनकी मानसिक विकलांगता इन्द्रियजनक दोष, संवेगात्मक समस्या के रुप में नहीं की जा सकती।

("The trem learning disability is used for those children having severne discrepancy between ability and achievement in educational performance and that can not be explained by mental retardation, sensory impairment and emotional disturbance..")

अत: यह कहना उचित होगा कि सभी अध्यापकों को ऐसे बालकों की समस्या का सामना करना पडता है। इन बच्चों की तरफ विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। यह उतरदायित्व शिक्षक, स्कूल प्रशासन और समाज के अन्य सदस्यों के द्वारा निभाना चाहिए।

अधिगम बाधिता के प्रकार

(Types of Learning disability),

अधिगम बाधिता कई प्रकार की होती है जैसा कि चित्र संख्या 18.4 द्वारा स्पष्ट है

चित्र संख्या 18.4

अधिगम अयोग्य बच्चों को समूह विषम होता है। इनको शिक्षा देना कठिन कार्य है। सही शिक्षा देने के लिए और उनकी समस्या को दूर करने के लिए इनकी पहचान करना जरुरी है। विभिन्न परीक्षणों द्वारा ही हम पता लगा सकते है कि किस प्रकार की समस्या है ताकि उसी के अनुसार उसे सही उपचार प्रदान किया जा सके।

अधिगम अयोग्य बच्चों की पहचान

(Identification of Learning Disabled Children)

इनकी पहचान करने की मुख्य दो विधियां है:-

I. अपरीक्षण विधियां (Non- testing devices)

इस विधि में अधिगम अयोग्य बच्चों की पहचान करने के लिए विभिन्न तकनीकियों जैसे साक्षात्कार, रेटिंग स्केल निरीक्षण, प्रमाणक सूची आदि का प्रयोग किया जाता है। इनके द्वारा बच्चें के बारे में विस्तृत सूचना एकत्रित की जाती है और पता लगाया जाता है कि बच्चों में अयोग्यता कितनी डिग्री है। बच्चें का मानसिक स्तर, उपलब्धि स्तर और अधिगम अयोग्यता को जानने के लिए अध्यापक व दूसरे लोगों से भी विचार-विमर्श किया जाता है।

II. परीक्षण विधियां (Testing device)

इस विधि में विभिन्न प्रकार के अधिगम अयोग्य बच्चों की पहचान करने के लिए विभिन्न परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है।

1. मानकीकृत निदानात्मक परीक्षण (Standardized Diagnostic test')

इस विधि में बच्चे के स्कोर की उसी की उम्र के दूसरे बच्चे के स्कोर के साथ तुलना की जाती है। इस प्रकार हम विभिन्न शैक्षिक क्षेत्रों जैसे भाषा, गणित, सामाजिक, कौशल आदि में अधिगम कठिनाईयों का विश्वसनीय एवं वैध तरीको से निदान कर सकते है। हमारे देश में काफी निदानात्मक परीक्षण उपलब्ध है जैसे:-

Lava test of Basic Skills

Durrell Analysis of Reading Difficulty

The Stanford Diagnostic Arithmetic Test.

2. योग्यता या प्रक्रिया परीक्षण (Ability or process tests)

योग्यता परीक्षणों द्वारा यह पता लगाया जाता है कि किसी विषय वस्तु को समझने और याद करने की अयोग्यता बच्चे में कितनी डिग्री है।

3. उपलब्धि परीक्षण (Achievement Tests')

इन परिक्षणों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में बच्चे की उपलब्धि ज्ञान एवं कौशल का मूल्यांकन किया जात है। दो प्रकार के होते है- मानकीकृत एवं अध्यापक निर्मित इनके द्वारा हर विद्यार्थी को अधिगम योग्यता की प्रकृति एवं स्तर का व्यक्तिगत रुप से पता लगाया जा सकता है।

4. दैनिक मूल्यांकन प्रणाली (Daily Assessment System)

इन बच्चों की पहचान सही ढंग से करने के लिए इनका प्रतिदिन सुनियोजित एवं क्रमबद्ध ढंग से मूल्यांकन करना चाहिए।

स्वमूल्यांकन

(Self Evaluation Questions)

1. शब्द अधिगम असमर्थता को परिभाषित कीजिए।
   Define the term 'learning disability.
2. अधिगम अयोग्य बच्चों की पहचान किस प्रकार की जा सकती है?
   What are the various identification procedures for learning disabled children?
3. विभिन्न प्रकार की अधिमम अयोग्यता का वर्णन कीजिए।

Explain different types of learning disability.

4. सर्वप्रथम अधिगम असमर्थता शब्द का प्रयोग किसके द्वारा किया गया ?

Who introduced the term learning disability?

18.5 अधिगम असमर्थ बच्चों का शिक्षण (Teaching of Children with learning disability)

अधिगम अयोग्य बच्चों का समूह विषम होने के कारण हर बच्चे को व्यक्तिगत रुप से उपचार एवं शिक्षा की जरुरत है। इन बच्चों को शिक्षा प्रदान करने के निम्नलिखित तरीके है जैसा कि चित्र संख्या 18.5 द्वारा विदित है।

चित्र संख्या-18.5 अधिगम अयोग्य बच्चों को शिक्षा प्रदान करने के तरीके

1. **विशेष स्कूल या कक्षा को व्यवस्था Provision of Special Schools of Classes)-** यह व्यवस्था इस धारणा पर आधारित है कि अधिगम अयोग्य बालक अपनी कक्षा या स्कूल के सामान्य बच्चों से काफी अलग होते है। इनको पढ़ाने के लिए विशेष पाठ्यक्रम, विशिष्ट अध्यापकों, शिक्षण विधियों, मूल्यांकन विधियों एवं वातावरण की आवश्यकता होती है। इनकी शिक्षा के लिए या तो विशेष स्कूल या फिर सामान्य स्कूल में ही विशेष कक्षा व्यवस्था करनी चाहिए।

इस व्यवस्था की कुछ सीमाएं है। अधिगम अयोग्य बालकों का समूह विषम होने के कारण हर बच्चें को कमी दूर करने के लिए व्यक्तिगत रुप से ध्यान, देखभाल तथा उपचार की जरुरत होती है। इसलिए इन बच्चों को अलग स्कूल तथा कक्षा में रखना संभव नहीं है।

2. **विशेष उपचारात्मक एवं शैक्षिक कार्यक्रम की व्यवस्था (provision of Special remedial and educational programmes):-** इस तकनीक का प्रयोग सामान्य स्कूलों तथा वर्तमान शैक्षिक अवस्था में आसानी से किया जा सकता है। सबसे पहले अधिगम अयोग्यता की प्रकृति, प्रकार और स्तर को जानना जरुरी है ताकि उसी के अनुसार उपचारात्मक एवं शैक्षिक कार्यक्रम प्रदान किए जा सके। इस तरह की सेवाएं शिक्षण महाविद्यालयों के संसाधन केन्द्र, विश्वविद्यालयों के विभाग, राष्ट्रीय शैक्षिक, अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (NCERT), राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (SCERT), सामाजिक और सामुदायिक संगठनों, द्वारा प्रदान की जाती है। यहां से अध्यापकों को अधिगम अयोग्य बच्चों की समस्या दूर करने के लिए उपचारात्मक कार्यक्रम, सामग्री तथा निर्देशन आसानी से उपलब्ध हो जाता है।

3. **वर्तमान वातावरण प्रणाली में सुधार Improving the existing environmental steup):-** भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा शैक्षिक वातावरण में नकारात्मक तत्वों का होना भी अधिगम अयोग्यता का एक मुख्य कारण है। वातावरण को सुधारने की कोशिश करनी चाहिए। इस कार्य के लिए माता पिता, परिवार के सदस्य, अध्यापक, परामर्शदाता, शिक्षण संस्थाएँ, सामाजिक एवं सामुदायिक विभाग आदि सभी के सहयोग की जरुरत है ताकि उनकी कमियों को दूर करके शैक्षिक उपलब्धि को बढाया जा सके।

1. प्रशिक्षित अध्यापकों को नियुक्त करना चाहिए। अध्यापक का व्यवहार तथा दृष्टिकोण इन बच्चों के लिए सकारात्मक और पार भरा होना चाहिए। अध्यापक को इन्हें पढ़ाने की नई-नई विधियों का ज्ञान होना चाहिए। गलत शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
2. अध्यापकों और माता पिता को संप्रेषण कौशलों का विकास करना चाहिए।
3. स्कूल में उपलब्ध मानवीय एवं भौतिक संसाधनों में सुधार करना चाहिए जिससे हर बच्चें की आवश्यकता को पूरा किया जा सके। सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ व्यावहारिक ज्ञान भी देना चाहिए।
4. स्कूल में संसाधन कक्ष होना चाहिए जिसमें बच्चों की आवश्यकतानुसार अधिगम सामग्री तथा उपकरण उपलब्ध हो। अधिगम अयोग्य बच्चों की समस्या को दूर करने के लिए प्रशिक्षित अध्यापक होना चाहिए।

18.6 कुछ अधिगम कमियों को दूर करने के उपचार (Remedial Measures for Some Specific learning deficiencies)

(A) सुलेख में सुधार (Improving Handwriting):- साधारणत: अधिगम बाधित बालकों का सुलेख अच्छा नहीं होता जिससे उनकी शैक्षिक उपलब्धि कम होती है। उपलब्धि कम होने के कारण बच्चों में हीन भावना विकसित हो जाती है। इसलिए बच्चों को इस समस्या को प्रारम्भिक स्तर पर ही पहचान कर दूर करने के लिए उपचार करना चाहिए। एक सृजनात्मक अध्यापक अधिगम असमर्थ बालकों के हस्तलेखन में निम्नलिखित प्रविधियों का प्रयोग करके सुधार ला सकता है-

1. लेखन में सुधार लाने के लिए जरुरी है। कि बच्चे अक्षरों को सही ढंग से बनाए। इसके लिए फर्श पर अक्षरों को चिपका देना चाहिए और उन्हे रंगीन चाक का प्रयोग करके दोबारा अक्षर बनाने के लिए कहना चाहिए, इससे अनुकरण का अवसर मिलता है। !?
2. बच्चों को मिट्टी में उंगली से अक्षर बनाने के लिए कहना चाहिए।
3. पैंसिल तथा कागज का प्रयोग करने से पहले चॉक से लिखने का अभ्यास कराना चाहिए।
4. लिखते समय पेपर टेढा नहीं होना चाहिए।
5. लिखते समय पेन / पैसिल अंगुठे तथा बीच की उंगुली में होनी चाहिए और उस पर तर्जनी उगली से दबाब डालना चाहिए।

6. लाइनो में सीधा लिखने का अभ्यास कराने के लिए बालको को ग्राफ पेपर या लाईन पेपर देना चाहिए।
7. शब्दो, वाक्यों और दो लाइनों के बीच में सही दूरी होनी चाहिए ताकि लेख अच्छी तरह से पढा जा सके।
8. मांसपेशियों को शकितशाली बनाने के लिए अभ्यास कराना चाहिए ताकि शारीरिक अंगों में समुचित सामंजस्य बना रहे और लेख को सुधारा जा सके।
9. दस्तावेज में कोई कांट-छांट नहीं होनी चाहिए।

(B) वर्तनी में सुधार (Improving Spelling):- हम पढ़कर सूचना प्राप्त करते है और उनको लिखकर व्यक्त करते है। अधिगम अयोग्य बालक शब्दों को ठीक लिखने में कठिनाई महसूस करते है। इसलिए निम्नलिखित कार्य शिक्षण प्रविधि द्वारा उनकी समस्या को दूर किया जा सकता है-

1. शब्द को सही वर्तनी के साथ चॉक बोर्ड या कागज पर लिखो, बच्चे को सही शब्द देखने के लिए कहो और वह सही शब्द की तुलना उस शब्द से करे जो उसने लिखा है। बच्चे को सही वर्तनी के साथ शब्द को बार-बार उच्चारण करने के लिए कहना चाहिए, शब्द को ढको औंर फिर उसे कागज या चॉकबोर्ड पर दो या तीन बार शब्द लिखने को कहो। अभ्यास के लिए उसे बह दस्तावेज लिखने को दो जिसमें विशेष रुप से उस शब्द को बार-बार दोहराया गया हो। पहले बच्चे को देखकर लिखना चाहिए और फिर उसे अपनी स्मृति से लिखना चाहिए।
2. जब बालक कोई शब्द सुने तो उससे वही शब्द बोलने के लिए कहें। बालक से कहना चाहिए कि वह शब्द की वर्तनी को भली प्रकार बोले।

(C) पठन कौशलों का विकास (Development of Reading Skills):- अधिगम अयोग्य. बालकों की पढने में उपलब्धि कम होती है। उनमें पठन कौशलों का विकास कम होता है। पठन कौशलों में सुधार लाने के लिए कोई भी उपचारात्मक कार्यक्रम विद्यार्थी की आवश्यकता एवं योग्यता के अनुसार प्रयोग में लाना चाहिए।

1. विद्यार्थियों को पढने के ढंग में सुधार लाने के लिए आदर्श पठन विधि का प्रयोग करना चाहिए। इस उद्देश्य के लिए एक अध्यापक, विद्यार्थी, टेपरिकार्डर आदि का प्रयोग किया जा सकता है।
2. जो बच्चे अक्षर, शब्द या आवाज को ठीक ढंग से उच्चारण नहीं करते, उनकी कमी को दूर करने के लिए उच्चारण सम्बन्धी निर्देश देकर बार-बार अभ्यास करवाना चाहिए।
3. बच्चो को विषय-वस्तु का सही ढंग से बोध कराने के लिए बहुइन्द्रीय उपागम का प्रयोग करना चाहिए।

(D) सोच-विचार एवं तर्क योग्यता में सुधार (Improving Thinking and Reasoning Abilities)- सोचना और तर्क विर्तक योग्यता अधिगम प्रक्रिया के मुख्य साधन है। 'अधिगम

अयोग्य बालकों में इन योग्यताओं की कमी होती है। इस कमी को निम्न उपायों द्वारा कम किया जा सकता है-

1. शुरु में बच्चों को सुनकर, पढ़कर, निरीक्षण द्वारा या करके आंकडे इक्कठे करने के लिए कहना चाहिए
2. आंकडों का विश्लेषण करे और देखे कि उनमें क्या समानताएं और असमानतांए है।
3. आंकडों का विभिन्न समूहों में वंर्गीकरण करने के लिए कहे।
4. समूहों को वर्गीकृत करने के विभिन्न तरीके सोचे। इस प्रकार बच्चों को स्वतन्त्र रुप से सोचने के लिए अभिप्रेरित करके उनके दृष्टिकोण को कर सकते है। सृजनात्मक चिन्तन का विकास कर सकते है।
5. इक्कठे किए गए आंकडे और विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष, तक पहुंचने की योग्यता का विकास करना।

(E) सामाजिक कौशल (Social Skills):- अधिगम अयोग्य बालक सहयोगात्मक अधिगम, और समूह में अपने को कुसमायोजित और अकेला महसूस करते है। क्योंकि उनके अन्दर सामाजिक कोशलों का विकास कम होता है। बच्चों में सामाजिक कौशलों का विकास करना चाहिए।

1. सामान्य वातावरण में ही सामाजिक कौशलों का विकास करना चाहिए।
2. विद्यार्थियों की रुचि के अनुसार तरह-तरह की पाठ्य-सहगामी क्रियाओं, और शौक कक्षाओं की सुविधा होनी चाहिए ताकि विद्यार्थियों को समूह में काम करने का मौका मिले।
3. बच्चों को सामाजिक क्रियाओं और समूह क्रियाओं में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए ताकि उनमें आत्मविश्वास और आत्मसम्मान की भावना उत्पन्न हो।
4. अपने साथियों और पडोसियों के साथ विचार-विमर्श करने के अवसर प्रदान करने चाहिए।

(F) ध्यान सम्बन्धी सुधार: (Improving Attention):- अधिगम असमर्थ बालकों में ध्यान सम्बन्धी समस्या होती है। वे किसी भी कार्य मे ज्यादा देर तक ध्यान केन्द्रित नही कर सकते। शिक्षण में लगातार ध्यान बनाए रखने के लिए निम्न उपाय करने चाहिए -

1. ऐसे बच्चों को बैठने की अवस्था कक्षा के बीच मे होनी चाहिए ताकि अध्यापक का ध्यान उन पर केन्द्रित रहे। कक्षा में उनकी हर गतिविधि पर नजर रखनी चाहिए। कक्षा कक्ष अन्तक्रिया के अवसर प्रदान करने चाहिए ताकि विद्यार्थी हर समय सक्रिय और सजग रहे।
2. पढ़ाने से पहले विद्यार्थियों को पढने के लिए तैयार करना चाहिए।
3. सूचना प्रदान करने के लिए उपयुक्त और रुचिकर विधियों का प्रयोग करना चाहिए ताकि बच्चों का ध्यान लगातार शिक्षण अधिगम में बना रहे।
4. विषय वस्तु सार्थक, उद्देश्यपूर्ण एंव रुचिकर होनी चाहिए।
5. पुनर्बलन, प्रशंसा तथा ईनाम आदि देना चाहिए।

6. कक्षा का वातावरण सजीव, मैत्रीपूर्ण तथा सहयोगात्मक होना चाहिए।
7. अनुदेशन कार्य विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुसार होना चाहिए।
8. इस प्रकार अधिगम अयोग्य बच्चों की ध्यान सम्बन्धी समस्या को काफी हद तक दूर किया जा सकता हैं।

(G) अंकगणित योग्यता में विकास (Developing Arithmetic Abilities).- अधिगम अयोग्य बालकों में अंकगणित सम्बन्धी सुधार लाने के लिए ऐशलोक ने कुछ अनुदेशन दिए जैसे-

1. गिनती सिखाने के लिए बटन और छोटे टुकडों का प्रयोग करे।
2. दृश्य सामग्री का प्रयोग करें ओर बच्चों को पुनर्बलन दे।
3. वस्तुओं की ओ१ ध्यान आकर्षित करने के लिए रंगीन चाक का प्रयोग करे।
4. हर नियम कार्य के बाद समस्या हल करने के लिए देनी चाहिए।
5. पढाते समय चार्ट, गणक यंत्र, ओवरकेस आदि का प्रयोग करना चाहिए।
6. विभिन्न मानकीकृत सुधारात्मक कार्यक्रम जैसे DISTAR (Direct Instruction System for teaching Arithmetic), Computational Arithmetic Programme, Programmed Math,Project Math आदि का प्रयोग करना चाहिए।

(H) स्मृति योग्यता में सुधार (Improving Memory ability):- अधिगम अयोग्य बालकों की स्मृति को सुधारने की आवश्यकता है। इसको सुधारने के निम्न तरीके है -

1. लिखित और मौखिक संदेश का प्रत्यास्मरण करना
2. रटने की प्रवृति को कम करना
3. शब्दों और आवाज को सुनकर गाने याद करना
4. मौखिक निर्देशों को दोहराना
5. दृश्य एवं श्रव्य स्मृति को सुधारने के लिए विभिन्न क्रियाओं का अभ्यास करवाना
6. तरह-तरह के खेल खेलना जैसे-एफ बच्चा एक वाक्य बोले दूसरा बच्चा उस वाक्य को दोहराकर दूसरा वाक्य कहे, तीसरा बच्चा दूसरे वाक्य को दोहरा कर तीसरा कहे।
7. कुछ वस्तुएं दिखाकर फिर हटाकर उनके बारे में पूछना।

इस प्रकार अधिगम अयोग्य बच्चों की स्मृति में सुधार लाया जा सकता है। इन बच्चों की समस्याओं को दूर करने और शिक्षा देने के लिए अध्यापक को कुछ सिद्धान्त धान में रखने चाहिए। हैविट और फोरनेस के द्वारा 1984 में इन सिद्धान्तों का सुझाव दिया गया। ये सिद्धान्त इस प्रकार है-

- बहु इन्द्रियों पर आधारित साधनों की व्यवस्था
- शिक्षण को सजीव बनाना
- धैर्य से ध्यान देना
- पाठ्य वस्तु को सार्थक एवं मूर्त बनाना

- क्रमानुसार पढ़ाना
- आवश्यकता के अनुसार दोहराना
- बालको द्वारा किए गए कार्यो के परिणामों को महत्व देना
- कक्षा वातावरण तनावरहित होना
- बच्चों के साथ सहानुभूति तथा पार से व्यवहार करना
- सरल भाषा का प्रयोग करना
- पाठयोजना का निर्माण बच्चों की आवश्यकताओं, रुचियों, क्षमताओं और उनकी योग्यताओं को ध्यान में रखकर करना।

विलियम और हाउन्सेल (1998) ने अपने लेख 'अधिगम असमर्थी बालकों की शिक्षा व्यूहरचना' में कहा है किं अधिकांश अधिगम असमर्थी बालकों में शैक्षिक शक्ति सामान्य बालकों के समान होती है परन्तु उनकी शक्तियां छुपी हुई होती है जिन्हें उजागर करने तथा उपलब्धियाँ प्राप्त करने के लिए उन्हें कुछ सहायता की आवश्यकता होती है।

18.7 अधिगम असमर्थ बच्चों के लिए विशेष उपागम एवं तकनीक (Specialized Approaches and Techniques for Learning Disabled)

अधिगम अयोग्य बच्चों के लिए कुछ सुधारात्मक प्रविधियाँ तैयार की गई है। इन प्रविधियों के साथ-साथ कुछ विशिष्ट सैद्धान्तिक प्रारुप का भी प्रयोग किया जाना आवश्यक हैं-

1. व्यवहार सम्बन्धी उपागम (Behavioural Approach)

इस पद्धति में अधिगम सम्बन्धी वातावरणीय परिस्थितियों का पुन:गठन करके अधिगम अयोग्य बच्चों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन करने के प्रयत्न किए जाते है। वांछित अधिगम व्यवहार को पुनर्वलन प्रदान करना चाहिए।

2. मनोउपचार पद्धति (Psycho-analytic approach)

इस पद्धति में अयोग्य बच्चों के व्यवहार का पूर्ण विश्लेषण करके अयोग्यताओं के कारणों का पता लगाया जाता है ताकि उसी के अनुसार सुधारात्मक कार्यक्रम तैयार करके उसे लागु किया जा सके।

3. व्यक्तिगत अनुदेश उपागम (Individualized Instructional Approach)

इस उपागम में अधिगम अयोग्य बालकों की व्यक्तिगत रुप से या छोटे समूह में समस्याओं का हल किया जाता है। सहपाठी शिक्षण सबसे अच्छी तकनीक है। प्रतिभाशाली सहपाठी इन बच्चों की समस्या दूर करने में सहायता करते है।

4. रूस्रनदेशानात्मक पद्धति (Self- Instructional Approach)

यह पद्धति अधिगम असमर्थ बच्चों को अपनी रुचि, योग्यता एवं आवश्यता के अनुसार सीखने के अवसर प्रदान करती है। इस उद्देश्य के लिए अभिक्रमित अधिगम सामग्री, कम्पयूटर सह अनुदेशन, शिक्षण मशीन, टेप रिकार्डर, वीडियो डिस्क आदि का प्रयोग किया जाता है। कक्षा

अध्यापक या विशिष्ट अध्यापक द्वारा इनकी उपलब्धि का निरीक्षण करके निर्देशन प्रदान किया जाता है।

5. बहु - इन्द्रिय उपागम (Multisensory approach)

मस्तिष्क तक सूचना पहुंचाने के लिए एक से अधिक इन्द्रियों का प्रयोग बहु इन्द्रिय उपागम कहलाता है। विषय वस्तु की प्रकृति एवं अधिगम उद्देश्यों के अनुसार बच्चे विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों जैसे सुनना, चखना, देखना, सूंघना, छूना आदि का प्रयोग सीखने के लिए करते है।

6. तकनीकी पद्धति (Technological Approach')

आज विज्ञान और तकनीकी का युग है। सुधारात्मक कार्यक्रम में नई-नई तकनीक का प्रयोग करना चाहिए।

1. पठन, बोलना, बातचीत कौशलो का विकास करने के लिए टेपरिकार्डर और भय टेप का प्रयोग करना चाहिए। भाषा सम्बन्धी समस्याएँ जैसे उच्चारण, बोलने का ढंग आदि में सुधार लाने के लिए भी टेपरिकार्डर का प्रयोग किया जा सकता है।
2. वीडियों डिस्क का प्रयोग अनुदेशन के लिए करना चाहिए।
3. कम्पयूटर सह अनुदेशन- कम्पयूटर द्वारा अधिगम अयोग्य बच्चों की हर प्रकार की कमियों को सुधारा जा सकता है। इसके द्वारा पठन, लेखन, वार्तालाप, अंकगणित, विज्ञान और दूसरे विषयों की कमियों को व्यक्तिगत रुप से दूर किया जा सकता है। विभिन्न उद्देश्य जैसे ज्ञान, प्रयोग, कौशल, दृष्टिकोण, रुचि आदि की प्राप्ति की जा सकती है। उदाहरण के तौर पर विज्ञान में किसी भी प्रयोग का प्रदर्शन सी0डी0 रोम तकनीकी के प्रयोग द्वारा आसानी से किया जा सकता है। अधिगम अयोग्य बच्चों को अंकगणित कौशलो की कमी को कम्पयूटर सह अनुदेशन द्वारा-दूर किया जा सकता है। कम्पयूटर में शब्द बैंक होता है। जहां से बच्चों को नए-नए शब्दों का ज्ञान होता है। जिससे उनका शब्दकोष बढ़ता है।

इस प्रकार नई तकनीकियों का प्रयोग करके अधिगम अयोग्य बच्चों की कमियों को काफी हद तक दूर किया जा सकता है। सुधार सम्बन्धी उपरोक्त पद्धति एक दूसरे से अलग नहीं है। एक अध्यापक परिस्थितियों के अनुसार एक या अधिक उपागमों का प्रयोग कर सकता है। कोपिज (Koppiz,1973) ने कहा है कि - "केवल विशिष्ट शिक्षण प्रणाली या प्रशिक्षण प्रविधि के ब्राश अधिगम बाधिता को समाप्त नहीं किया जा सकता, यह स्पष्ट है कि अध्यापकों के पास बहुत सी अनुदेशनात्मक सामग्री तथा प्रविधियां होती है, वह कल्पनाशील होते है तथा वे स्वयं उन्हें अपने विद्यार्थियों की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुसार समायोजित कर लेते है।"
("Learning disabilities can not be corrected or cured by a specific teaching method or training techniques.It is imperative that teachers have a wide range of instructional materials and techniques and they are imaginative enough to opt these to specific needs of their pupils.")

18.8 एकीकृत शिक्षा एवं अधिगम असमर्थ बालक (Integrated Education and Learning disabled Children)

एकीकृत शिक्षा से अभिप्राय है असमर्थ बच्चो को कम नियंत्रित तथा अधिक प्रभावशाली वातावरण में शिक्षा देना। कम प्रतिबंधित वातावरण केवल सामान्य शिक्षण संस्थाओं में ही दिया जा सकता है। एकीकृत शिक्षा असमर्थ बच्चों को विशिष्ट सेवायें देकर सामान्य कक्षा में सामान्य बच्चों के साथ शिक्षा प्राप्त करने में सहायता करती है। अधिगम असमर्थ बच्चों का समूह विषम होने के कारण इन्हें शिक्षा देने के लिए विभिन्न प्रतिमान प्रयोग में लाए जाते है-

1. संसाधन प्रतिमान (Resource Model)

इस कार्यक्रम में अधिगम असमर्थ बालकों को प्रतिदिन कुछ समय के लिए संसाधन कक्ष में संसाधन अध्यापक (Resource Teacher) द्वारा विशेष अनुदेशन दिया जाता है। संसाधन अध्यापक का मुख्य कार्य बच्चों मे उन कौशलों का विकास करना है। जिसकी कमी के कारण वे अधिगम अयोग्य है। पाठ्यक्रम सामान्य कक्षाकक्ष अध्यापक द्वारा पढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार एक ही अध्यापक काफी बच्चों की समस्या हल कर सकता है। कार्यक्रम लचीला होना चाहिए ताकि उसे बच्चों की आवश्यकतानुसार बदला जा सके। यह माडल ज्यादा मंहगा नहीं है। इस माडल के द्वारा अधिगम असमर्थ बच्चा सामान्य कक्षाकक्ष में औसत बच्चों के साथ शिक्षा प्राप्त करता है। एकीकृत वातावरण में बच्चे के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है।

2. भ्रमणशील माडल (Itinerant Model)

यह प्रणाली भी एकीकृत शैक्षिक कार्यक्रम पर आधारित है। अधिगम असमर्थ बच्चे सामान्य स्कूल में सामान्य बच्चों के साथ ही शिक्षा प्राप्त करते है। बच्चों की संख्या कम होने के कारण हर स्कूल में अलग-अलग एक संसाधन अध्यापक भी नियुक्त करना महंगी प्रक्रिया है। इस स्थिति में एक परिभ्रामी/ भ्रमणशील अध्यापक नियुक्त किया जाता है जो आसपास के कई स्कूलों के बच्चों की समस्या हल करता है। हर बच्चे को विशिष्ट अध्यापक द्वारा सप्ताह में दो या तीन बार निर्देशन दिया जाता है। विभिन्न स्कूल 5 किमी. के दायरे में स्थित होने चाहिए ताकि अध्यापक घूमने की बजाय ज्यादा समय बच्चों को दे सके। इस प्रणाली में एक ही स्कूल में संसाधन कक्ष बनाया जाता है। अध्यापक विशिष्ट अनुदेशन सामग्री, उपकरण और दूसरा समान अपने साथ लेकर जाता है। सामान्य कक्षाकक्ष अध्यापकों को भी प्रशिक्षण दिया जाता है कि उन्हें कक्षा में इन बच्चों की किस प्रकार देखभाल करनी चाहिए।

3. दोहरा शिक्षण प्रतिमान (Dual teaching model)

इस प्रतिमान में सामान्य अध्यापक की दोहरी जिम्मेदारी होती है। बह अधिगम अयोग्य बालकों की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति सामान्य कक्षा कार्य के साथ-साथ करता है। इन अध्यापकों को प्रेरित करने के लिए अलग से भता दिया जाता है। इनके लिए सेवाकालीन प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए ताकि उनके ज्ञान का नवीनीकरण किया जा सके। जैसा कि चित्र संख्या 18.6 द्वारा विदित है कि एकीकृत शिक्षा प्रदान करने के कई तरीके है। इसमें से कौन सा तरीका बच्चों के लिए प्रयोग में लाना है वह तीन बातों पर निर्भर करता है।

1. अयोग्यता का स्तर (Degree of disability)
2. कीमत (Cost for service)
3. वातावरण में पाबंदी (Restrictiveness in Environment)

सामान्य कक्षा में ही सहायता प्रदान करना
सामान्य कक्षा के साथ भ्रमणशील अध्यापक द्वारा सेवा
सामान्य कक्षा के साथ सप्ताह में कुछ समय के लिए संसाधन कक्ष का प्रयोग करना
प्रतिदिन संसाधन कक्ष में अनुदेशन प्राप्त करना।

चित्र संख्या 18.6 एकीकृत शिक्षा के कार्यक्रम

18.9 समेकित शिक्षा (Inclusive Education)

समेकित शिक्षा का मुख्य उद्देश्य अपंग बच्चों को सामान्य स्कूलों में शिक्षा प्रदान करना है। यह इस धारणा पर आधारित है कि सामान्य स्कूलों में सभी बच्चों को शिक्षा के समान अवसर प्रदान किए जाए। -यह संप्रत्यय औपचारिक रुप से 1994 में स्पेन में विशिष्ट आवश्यकताओं सम्बन्धी शिक्षा पर यूनेस्को (UNESCO) विश्व सम्मेलन में प्रारंभ किया गया। इस सम्मेलन में सभी राष्ट्रों को समेकित शिक्षा के सिद्धान्तों को लागू करने के लिए कहा गया। समेकित शिक्षा का मुख्य सिद्धान्त है- उपयुक्त पाठ्यक्रम, भौतिक एवं मानवीय संसाधनों, शिक्षण व्यूहरचनाओं, संसाधन केन्द्र एवं समुदाय के सहयोग द्वारा विभिन्न आवश्यकताओं वाले बच्चों की आवश्यकता को पूरा कर शिक्षा प्रदान करना।

वर्तमान में सभी के लिए शिक्षा Education for All) के उद्देश्य को पूरा करने के लिए जिला प्राइमरी शिक्षा कार्यक्रम (District primary Education programme, DPEP)) ने विश्व बैंक एवं मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार की सहायता से शुरु किया गया समेकित शिक्षा को कार्यक्रम का एक हिस्सा बनाया। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य विशिष्ट आवश्यकताओं वाले बच्चों को सामान्य बच्चों के साथ शिक्षा देने की जिम्मेदारी प्राथमिक विद्यालयों को सौंपना है।

समेकित/ समावेशित शिक्षा क्या है

(What is Inclusive Education?)

बैंग के अनुसार (Wang)- समेकित शिक्षा से अभिप्राय: 'सामान्य तथा विशिष्ट बालकों के एकीकरण से है जहां सभी बच्चों को सीखने के लिए एक जैसे संसाधन तथा अवसर प्रदान किए जाते है।"

("Inclusive education means the integration of regular and exceptional children in a school setting where all share the same resources and opportunities for learning on a full time basis.")

मानी (Mani) के शब्दों में:- समेकित शिक्षा वह शिक्षा है 'जो अपंग बच्चे को सामान्य विद्यालय में प्रशिक्षित एवं विशिष्ट अध्यापक की सहायता द्वारा शिक्षा के समान अनुभव एवं अवसर प्रदान करती है।"

("Inclusive education is that education which provides equal educational opportunities and experiences to children with disabilities with the assistance of a trained specialist teacher in the least restrictive environment such as a regular school")

समेकित शिक्षा के उद्देश्य

(Objectives of Inclusive Education')

1. विकलांग बच्चों को सामान्य बच्चों के साथ शिक्षा प्रदान करना।
2. बाधिक छात्रों को शैक्षिक कक्षाओं के साथ अन्य कार्यक्रमों में शामिल करना जैसे संगीत, कला, भ्रमण, गोष्ठी आदि।
3. अपंग छात्रों को सामान्य छात्रों के साथ क्रीडा-स्थल, पुस्ताकलय तथा अन्य सुविधाएं उपलब्ध कराना।
4. सामान्य तथा अपंग बच्चों में एक दूसरे के प्रति सहयोग की भावना उत्पन्न करना।
5. व्यक्तिगत कार्यक्रम उपलब्ध कराना।
6. सामान्य विद्यालय में ही विशिष्ट सेवाएँ उपलब्ध कराना।
7. अपंग बच्चों को शिक्षा के समान अवसर प्रदान कर आत्मनिर्भर बनाना।

   इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए समेकित शिक्षा की आवश्यकता है।

समावेशित शिक्षा की आवश्यकता

(Need of Integrated Education)

कुछ मनोवैज्ञानिक विशिष्ट शिक्षा के पक्ष में नहीं है। यह शिक्षा अपन बच्चों में हीन भावना पैदा करती है। शिक्षाविदों का विचार है कि अपंग बच्चों को शिक्षा के समान अवसर देने के लिए सामान्य विद्यालयों में समावेशित शिक्षा देनी चाहिए। चित्र 18.7 में विदित है कि निम्न कारणों से यह शिक्षा उचित है-

चित्र 18.7

1. सामान्य मानसिक विकास Normal mental growth)

समेकित शिक्षा व्यवस्था अपंगों को सामान्य बालकों के साथ शिक्षा प्रदान कर मानसिक रुप से प्रगति करने का अवसर प्रदान करती है। जिससे अपंग बच्चों को सोचने का मौका नहीं मिलता कि वह किसी प्रकार से अन्य बच्चों से तुच्छ है। इस प्रकार समावेशित शिक्षा पद्धति बालकों की सामान्य मानसिक प्रगति को अग्रसर करती है।

2. सामाजिक एकीकरण (Social Intergration)

समेकित शिक्षा सामाजिक एकीकरण को भी प्रोत्साहित करती है। इसके द्वारा अपंग छात्रों में सामाजिक नैतिक, गुण, प्रेम, सहानुभूति आपसी सहयोग, समायोजन आदि गुणों का विकास होता है।

3. समानता का सिद्धान्त (Principle of equality)

भारतीय संविधान में हर व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने के समान अधिकार प्राप्त है। समावेशित शिक्षा वातावरण के माध्यम से समानता के उद्देश्य की भी प्राप्ति की जानी चाहिए जिससे कोई भी छात्र अपने को दूसरों की उपेक्षा हीन न समझे।

4. शैक्षिक एकीकरण (Academic Integration)

शैक्षिक समानता समावेशित शिक्षा द्वारा संभव है। अपंग बच्चों को विशेष विद्यालयों में रखने से उनका सोचने, कार्य करने का क्षेत्र सीमित हो जाता है। बच्चा बहुत सी शैक्षिक क्रियाओं में भाग नहीं लेता। विशेष विद्यालयों में बच्चों की संख्या कम होने के कारण पाठ्यसहगामी क्रियाएँ और पाठ्यसहगामी क्रियाएं सीमित होती है जिससे हर बच्चें को अपनी रुचि के अनुसार विभिन्न क्रियाओं में भाग लेने का मौका नहीं मिलता। शैक्षिक एकीकरण तभी संभव है जब अपंग बच्चों को सामान्य बच्चों के साथ रखा जाए ताकि वह अपनी रुचि के अनुसार विभिन्न क्रियाओं में भाग लेने का मौका ले सके। शैक्षिक एकीकरण तभी संभव है जब अपंग बच्चों को सामान्य बच्चों के साथ रखा जाए ताकि वह अपनी रुचि के अनुसार विभिन्न क्रियाओं में भाग ले सके।

5. कम खर्चीली (Less Expensive)

यह शिक्षा कम खर्चीली और ज्यादा लाभदायक है। जबकि विशिष्ट शिक्षा अधिक मंहगी और खर्चीली है। मानी 2009 (Mani, 2000) में कहा कि विशिष्ट आवश्यकताओं वाले बच्चों की शिक्षा सामान्य शिक्षा का विकल्प नहीं बल्कि अनिवार्य भाग होना चाहिए।

18.10 विशिष्ट बच्चों की शिक्षा के लिए नीतियाँ एवं कार्यक्रम (Policies and programmes for the Education of Exceptional Children)

हमारे देश में विशिष्ट आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए कुछ कार्यक्रम तैयार किए गए है:-

1. भारतीय शिक्षा आयोग

(Indian Education Commission,1964-66)

कोठारी आयोग ने सलाह दी कि उचित शिक्षा द्वारा ही अपंग बच्चों की अयोग्यता को दूर करके उन्हें देश का अच्छा नागरिक बनाया जा सकता है। विकसित देशों में

इन बच्चों के लिए नई शिक्षण विधियाँ, सहायक सामग्री मूल्यांकन विधियाँ तथा अनुदेशानात्मक सामग्री तैयार की गई है। आयोग ने इस बात पर भी जोर दिया है कि अपंग बच्चों को शिक्षा देने का मुख्य उद्देश्य उनको सामाजिक वातावरण में समायोजित करने के योग्य बनाना है। इन बच्चों की शिक्षा सामान्य शिक्षा प्रणाली का एक भाग होना चाहिए। हमारे देश में शिक्षा सेवाओं का विस्तार करने की आवश्यकता है ताकि हर अपंग बच्चे को विशिष्ट या एकीकृत कार्यक्रम द्वारा शिक्षा प्रदान की जा सके। विशिष्ट शिक्षा कार्यक्रम में बच्चे को अलग स्कूल मे रखकर शिक्षा दी जाती है जबकि एकीकृत कार्यक्रम में अपंग बच्चा सामान्य बच्चों के साथ रहकर ही शिक्षा प्राप्त करता है जिससे उसका सर्वागीण विकास होता है।

2. बच्चों के लिए राष्ट्रीय नीति

(National policy for Children)

केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार को अपंग बच्चों के विकास के लिए स्वीकृत शिक्षा उपागम तैयार करने हेतु दिशा निर्देश देने के लिए अगस्त 1974 में राष्ट्रीय नीति लागू की गई।

3. अपंगों की शिक्षा के लिए राष्ट्रीय रुपरेखा योजना

(National Draft Plan for the Education of Handicapped)

संयुक्त राष्ट्र की सामान्य सभा मे वर्ष 1981 को विकलांग बच्चों के अन्तर्राष्ट्रीय दिवस के रुप में घोषित किया। इस योजना के निम्नलिखित उद्देश्य है।

- विकलांग बच्चों को समायोजित करने में सहायता करना
- बच्चों को उचित सहायता, देखभाल, निर्देशन तथा परामर्श प्रदान करना ताकि समाज के हर कार्यो मे उनका सहयोग लिया जा सके।
- विकलांग बच्चों के अधिकारों के बारे में आम जनता को सूचना देना और शिक्षित करना।
- विकलांगता को रोकने और विकलांग व्यक्तियों के पुनर्वास लिए ठोस कदम उठाना।

इस वर्ष का मुख्य उद्देश्य था समानता के साथ पूर्ण योगदान (Full participation with equality) दूसरे शब्दों में-

1. पृथक्करण शिक्षा की जगह एकीकृत शिक्षा का प्रावधान
2. विकलांग बच्चों को सामान्य स्कूलों में दाखिला देना।
3. शरणागत कार्यशालाओं का आयोजन करना।
4. अपंग बच्चों के रोजगार के लिए प्रयास करना।

संयुक्त राष्ट्र द्वारा उद्देश्यों को निर्धारण करने के बाद भारत सरकार ने भी कुछ विशिष्ट उद्देश्य निर्धारित किए जो इस प्रकार है:-

- पुनर्वास की योजना तैयार कर पुनर्वास की सेवा प्रदान करना।
- अपंग बच्चों को एकीकरण के लिए कार्यक्रम तैयार करना।

- ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले विकलांग बच्चों को सेवाएं प्रदान करना।
- विकलंगता को रोकने के लिए राष्ट्रीय विकलांग रोकथाम कार्यक्रम तैयार करना।
- राष्ट्रीय संस्थान, तकनीकी संस्थान आदि द्वारा अनुसंधान कार्य करना और नई विधियों और तकनीकियों का विकास करना।
- अध्यापकों, कार्यकर्ताओं और सामाजिक कार्यकर्ताओं को नई तकनीक, विधियों, कार्यक्रमों के बारे में सूचना ' प्रदान करना और इन बच्चों के रोजगार एवं शिक्षा के लिए सजग करना।
- देश के विकलांगों के लिए समय-समय पर उपयुक्त आंकडे इक्कठे करना।

इन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर राज्य सरकार द्वारा हर राज्य में विशिष्ट शिक्षा कोष्ठ स्थापित किए गए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986

(National policy of Education, 1986)

शारीरिक व मानसिक रुप से बाधितों और सामान्य व्यक्तियों की समाज में भागीदारी हो और सबके जीवन में समन्वयता हो, ऐसा उद्देश्य होना चाहिए। बाधितों को सामान्य विकास के लिए अवसर दिए जाए। जिससे मे साहस तथा आत्मविश्वास से जीवन का सामना कर सके। इसके लिए निम्नलिखित कदम उठाने चाहिए।

- जहां तक संभव हो कम बाधित बच्चों की शिक्षा सामान्य बच्चों के साथ हो।
- गम्भीर रुप से बाधित बच्चों के लिए विशिष्ट शिक्षण संस्थायें आवासीय सुविधा के साथ स्थापित हो।
- ऐसी संस्थाओं में बाधितों के व्यावसायिक प्रशिक्षण की उपयुक्त व्यवस्था होनी चाहिए।
- अपंग बच्चों की कठिनाईयों को दूर करने के लिए अध्यापकों का प्रशिक्षण कार्यक्रमों द्वारा विकास करना।
- अपंग बच्चों की शिक्षा के लिए प्रयास करना।

राममूर्ति कमेटी के सुझाव, 1990

(Recommendations of Ramamurty Committee, 1990)

भारत सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति / क्रियान्वन प्रारुप (NPEPOA) के कार्यो एवं नियमों पर टिप्पणी देने के लिए राममूर्ति कमेटी का गठन किया। क्रियात्मक कार्यक्रमों में (POA) बाधितों की शिक्षा के क्षेत्र में विस्तृत साधनों, अध्यापकों का प्रशिक्षण, प्रशासकों के उत्थान के लिए कार्यक्रम आदि के विकास पर जोर दिया। शिक्षा के क्षेत्र में विकलांगों की संख्या में अभी भी कमी है जिसके कुछ कारण है:

1. विकलांगों की शिक्षा को सामाजिक कल्याण कार्य के रुप में देखा जाता है।
2. बाधितों की शिक्षा के लिए अधिकांश विशिष्ट केन्द्र महानगरों और नगरों में स्थित है। जिला स्तर और तहसील स्तर पर गैर सरकारी शिक्षा संस्थाएं बहुत कम है। उपलब्ध आंकडों के अनुसार 215 जिलों में विशेष स्कूल नहीं है।

3. समाज कल्याण विभाग की देखरेख में विकलांग 'बच्चों के लिए समन्वित शिक्षा का कार्यक्रम 1974 में प्रारंभ हुआ जिसके अन्तर्गत सामान्य स्कूलों के साथ विशेष स्कूल स्थापित किए गए।

समन्वित शिक्षा के लिए शिक्षा विभाग द्वारा योजना शुरु की गई है जिसके अन्तर्गत राज्यों को 100 प्रतिशत सहायता दी जा रही है। वर्तमान में यह योजना 19 राज्यों तथा केन्द्रशासित राज्यों में लागू की जा रही है। प्रत्येक वर्ष इस योजक पर लगभग 2 करोड रु. खर्च किए जा रहे है और लगभग 20,000 छात्र इस योजना के अन्तर्गत शिक्षा ग्रहण कर रहे है। विकलांग बच्चों की विशिष्ट आवश्यकताओं तथा समस्याओं पर विचार करते हुए तथा विपिन शिक्षा कार्यक्रमों के इतिहास का अवलोकन करते हुए कमेटी ने निम्नलिखित सुझाव दिए है-

1. संचार साधनों द्वारा जनता को विकलांगों की समस्या से अवगत कराना।
2. प्रत्येक परिवार जिसमें कोई विकलांग बच्चा हो, की सहायता करना।
3. इनकी शिक्षा प्रणाली लचीली होनी चाहिए। तरह-तरह की व्यवस्था जैसे विशेष विद्यालय, सामान्य स्कूल मे विशेष कक्षा, एकीकृत शिक्षा, व्यावसायिक केन्द्र आदि होनी चाहिए।
4. विकलांगों की शिक्षा सेवापूर्व शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम का एक भाग होना चाहिए।
5. सेवारत अध्यापकों के लिए कार्यक्रम लाग होने चाहिए जिसमें दूरस्थ शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा, शिक्षा का व्यावसायीकरण आदि सम्मिलित हो।
6. शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों अपंग बच्चों की शिक्षा हेतु विशिष्ट पाठ्यक्रम होना चाहिए। इसे वी0एड0 कोर्स में भी शामिल करना चाहिए।
7. विशेष विद्यालयों की भूमिका स्पष्ट होनी चाहिए:-
   - बाधित बच्चों की प्रारम्भिक स्तर से पहचान करना तथा उनके लिए कार्यक्रम बनाना।
   - सामान्य स्कूलों में एकीकृत शिक्षा कार्यक्रमों को लाग करने के लिए संसाधन केन्द्रों के रुप में सेवाएँ उपलब्ध कराना।
   - विकलांग बच्चे जो सामान्य स्कूल में शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते, उनके लिए विशेष विद्यालयों की व्यवस्था करना।
8. बाधित बच्चों के लिए उपयुक्त यन्त्र तथा नई-नई प्रविधियाँ तैयार करनी चाहिए ताकि उनकी अपंगता को कम किया जा सके।

क्रियान्वन प्रारुप, 1992

(Programme of Action,1992)

क्रियान्वन प्रारुप द्वारा पाया गया कि 1991-92 के अन्त तक लगभग 30,000 गम्भीर पूर्व से बाधित बालक समन्वित शिक्षा योजना के अन्तर्गत लाभ उठा रहे थे। समाज कल्याण मंत्रालय ने विशेष स्कूलों में प्रशिक्षित अध्यापकों की मांग की पूरा करने के लिए कदम उठाए है और राष्ट्रीय विकलांग संस्थान के सहयोग से इन स्कूलों का स्तर सुधारने के लिए प्रयास कर रही है। श्रम मंत्रालय की देखरेख में 17 व्यावसायिक पुनर्वास केन्द्र कार्यरत है।

सितम्बर 1991 तक इस योजना के अंतर्गत लगभग 66000 अपंग व्यक्तियों का पुनर्वासन हो चुका था। औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान में विकलांग व्यक्तियों के दाखिले के लिए 3 प्रतिशत आरक्षण है। इन प्रशिक्षण संस्थानों के अनुदेशकों को इन बच्चों की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता है।

अपंग बच्चों की शिक्षा शैक्षिक योजनाकर्ता, प्रशासनकर्ता सेवापूर्व और सेवारत अध्यापकों के प्रशिक्षण का एक मुख्य भाग होगी। जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, अध्यापक शिक्षा महाविद्यालय शिक्षा के विकसित अध्ययन संस्थान प्रशिक्षण जिन्हें प्रशिक्षण के लिए हर प्रकार की सुविधा दी गई है, अध्यापक प्रशिक्षण के इस पक्ष की तरफ विशेष ध्यान देंगे। आपरेशन ब्लैकबोर्ड योजना के तहत इन बच्चों की आवश्यकता के अनुसार सामग्री उपलब्ध कराई जाएगी। विशेष विद्यालय उन जिलों में खोलने की आवश्यकता है जहां इस प्रकार का कोई विद्यालय नहीं है। स्कूल की इमारत, फर्नीचर बच्चों की असमर्थता के अनुसार होगा। ग्रामीण इलाकों में अयोग्य बच्चों के लिए एकीकृत शिक्षा के कार्यक्रम को लाग करने के लिए गैरसरकारी संगठनों को प्रोत्साहित करना है। विकलांग बच्चों की शिक्षा को आधारभूत शिक्षा परियोजना का एक महत्वपूर्ण अंग बनाने की आवश्यकता है।

विकलांग बच्चों के लिए एकीकृत शिक्षा (1992)

(Integrated Education for Disabled Children(IEDC)

सभी के लिए शिक्षा' के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए भारत सरकार द्वारा विकलांग बच्चों को शिक्षा के लिए ग्रह प्रणाली लागु की गई। इस प्रणाली का मुख्य उद्देश्य हर स्तर के विकलांग बच्चों को सामान्य समुदाय के साथ एकीकृत करना है ताकि वे जीवन का सामना हिम्मत और विश्वास के साथ करने के योग्य बन सके। इसको लाग करने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्य और केन्द्रित शासित राज्यों को सहायता प्रदान की जाती है। इस प्रणाली के अंतर्गत अपंग बच्चों की शिक्षा उच्च माध्यमिक स्तर तक दी जाएगी और शिक्षा के साथ-साथ व्यावसायिक प्रशिक्षण भी दिया जाएगा।

हमारे संविधान में भी इन बच्चों को शिक्षा देने का प्रावधान है। संविधान की धारा 46 के अंतर्गत विकलागं बच्चों की शिक्षा और आर्थिक सुधार संघीय सरकार की जिम्मेदारी बन जाती है। भारतीय पुनर्वासन परिषद कानून, 1992 (Rehabilitation Council of India, Act, 1992) बनाया गया है जिसमें विशिष्ट शिक्षा के कार्यो के नियन्त्रण हेतु परिषद को अधिकार दिए है।

विशिष्ट शिक्षा ने बालकों के विकास से सम्बन्धित सभी क्षेत्रों जैसे चिकित्सा, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र और सामाजिक कार्य सभी को आकर्षित किया है। विभिन्न विश्वविद्यालयों विभागों तथा शिक्षण संस्थाओं में विशिष्ट शिक्षा के स्नातकोतर, प्रशिक्षित स्नातक पाठ्यक्रमों का प्रारम्भ होना इस तथ्य का परिचायक है।

नवीं पंचवर्षीय योजना में विशिष्ट बच्चों के लिए शिक्षा का प्रावधान

(Provision of Education' for Exceptional Children in Ninth Five Year Plan)

अपंग बच्चों के लिए कानून (1995) (Persons with Disabilities Act, 1995) लागू होने के बाद, 1

के उम्र के अपंग बच्चों की शिक्षा कानूनी रुप से अनिवार्य है। इस कानून में सामान्य स्कूलों में ही अपंग बच्चों को शामिल करने पर बल दिया गया है। इस योजना के अंतर्गत NCERT,NCTE and SCERT द्वारा इन बच्चों के पाठ्यक्रम को पुर्नगठित करने के कार्यक्रम को शामिल किया गया है। रोजगार को बढ़ावा देने के लिए 10+ के बाद शिक्षा का व्यावसायीकरण करना जरुरी है। राष्ट्रीय और राज्य मुक्त विद्यालयों द्वारा दूरस्थ शिक्षा के कार्यक्रम को बढ़ावा देना है। अपंग बच्चों को मुख्यधारा में रखकर शिक्षा देने के उद्देश्य को एकीकृत स्कूलों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इन बच्चों को कुछ प्रेरक जैसे मुफ्त किताबें, वर्दी, परिवहन, उपकरण आदि प्रदान करने चाहिए। नवीं पंचवर्षीय योजना में अपंग बच्चों के लिए एकीकृत शिक्षा (IEDC) के कार्यक्रम को भी बढ़ावा दिया गया।

नवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक भारत सरकार द्वारा सभी को शिक्षा देने के उद्देश्य से शिक्षा अभियान शुरु किया गया। भारत पुनर्वास केन्द्र (1992), अपंग बच्चों के लिए कानुन (1995) राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (1993) मानसिक मंदबुद्धिता कानुन (1999) ने अपंग बच्चों एवं व्यक्तियों की शिक्षा पर बल दिया। संविधान में 86वें संशोधन अधिनियम 2002 (Constitution: 86th Amendment Act, 2002) के अनुच्छेद 21- ए के अनुसार 6 से 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने मार्च 2005 में संसद में अपंग बच्चों और व्यक्तियों की शिक्षा के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना तैयार करना स्वीकार किया। कोठारी आयोग द्वारा दिए गए सुझावों के आधार पर एकीकरण के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना 40 साल बाद तैयार की गई। राष्ट्रीय न्यादर्श सर्वेक्षण संगठन NSSO-2002) के अनुसार देश में अपंग व्यक्तियों की संख्या लगभग 2.07 करोड है। जनगणना 2001 के अनुसार इन व्यक्तियों की संख्या लगभग 2.19 करोड़ है। कुल जनसंख्या 2 प्रतिशत भाग विकलांग है। आंकडों को निम्न तालिका द्वारा प्रस्तुत किया गया है।

तालिका-18.1

अपंग व्यक्तियों की संख्या लाखों में

अपंगता	राष्ट्रीय न्यादर्श सर्वेक्षण संगठन, 2002	जनगणना, 2001
गति सम्बन्धी	106.34	61.05
दृष्टि	28.26	106.35
श्रवण	30.62	12.62
वाणी	21.55	16.41
मानसिक	20.96	22.64

विकलांग व्यक्तियों की संख्या राष्ट्रीय न्यादर्श सर्वेक्षण संगठन (NSSO) की अपेक्षा जनगणना (Census) के अनुसार ज्यादा है। तालिका 18.2 में अपंग व्यक्तियों के अनुपात का तुलनात्मक अध्ययन दर्शाया गया है।

तालिका -18.2

अपंग व्यक्तियों का अनुपात (प्रति लाख)

	NSSO-36th round 1981	NSSO-47th round 1991	NSSO-58th round 2002	Census 2001
ग्रामीण				
पुरुष	2045	2277	2118	2453
महिलाएं	1632	1694	1556	1950
व्यक्ति	1844	1995	1846	2210
शहरी				
पुरुष	1532	1774	1670	2164
महिलाएं	1297	1361	1311	1686
व्यक्ति	1420	1579	1499	1933

स्त्रोत :- (Source): 36th, 47th, 58th Round and Census 2001

दसवीं पंचवर्षीय योजना, 2002-2007

(Tenth Five year plan, 2002-2007

दसवीं पंचवर्षीय योजना में विकलांग व्यक्तियों के सही वातावरण तैयार करने की बात कही गई है ताकि विकलांग व्यक्तियों को अपने अधिकारों का प्रयोग करने का समान अवसर मिले।

IEDC प्रणाली ने वितरण दिया है कि

- विकलांग बच्चों का केन्द्रीय विद्यालयों में 3 प्रतिशत आरक्षण
- बच्चों की आवश्यकता के अनुसार NCERT द्वारा पाठ्यक्रम का पुनर्गठन
- विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) भारत के पुनर्वास परिषद् (RCI) द्वारा अध्यापक तैयार करने के लिए विशेष योजना
- शिक्षण अधिगम सामग्री, मूल्यांकन विधियाँ तैयार करना तथा विकलांग बच्चों की शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान करना। इस प्रकार मानसिक और शारीरिक रुप से विकलांग बच्चों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए समेकित शिक्षा को बढ़ावा देने के ज्यादा से ज्यादा प्रयास करने होंगे।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. विशिष्ट बच्चों की शिक्षा के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986, 1992) ने क्या सुझाव दिए है।

What are the policy guidelines on the education of handicapped as per NPE 1986, 1992 (R)?

2. अधिगम अयोग्य बच्चों को शिक्षित करने के लिए प्रयोग मे लाए जाने वाले विशेष उपागमों का वर्णन कीजिए?

What kinds of specific techniques can be used to teach learning disabled children?

3. एकीकृत कक्षा में अधिगम असमर्थ बालक किस प्रकार शिक्षित किए जा सकते है?

How education can be provided to LD children in a integrated mainstreamed class?

4. समेकित शिक्षा के अर्थ एवं महत्व का वर्णन कीजिए?

Explain the meaning and importance of inclusive education?

5. नौवी पंचवर्षीय योजनाओं में विशिष्ट बच्चों की शिक्षा के लिए क्या प्रावधान है?

What provision are made for education of exceptional children in Ninth five year plan?

18.11 सारांश

(Summary)

सृष्टि के अभ्युदय से आज तक यह विशिष्टता रही है कि कोई भी दो बालक एक समान नहीं होते। वे न तो एक जैसा व्यवहार करते है और न ही उनकी शिक्षा एक जैसी होती है। कुछ बालक सामान्य होते है तथा कुछ विशिष्ट। विशिष्टता के क्रम में प्रखर बुद्धि वाले बालकों से लेकर मानसिक रुप से अक्षम बालकों को रखा गया है। भारत जैसे प्रजातांत्रिक प्रणाली वाले राष्ट्र में सरकार, समाज तथा शिक्षा संस्थाओं का यह कर्तव्य है कि वे इन विशिष्ट बालकों को पहचान कर उनकी आवश्यकताओं के अनुकूल शिक्षा एवं निर्देशन प्रदान करे।

प्रतिभाशाली बालक अपनी विलक्षण बुद्धि तथा क्षमताओं के कारण वर्तमान शिक्षा पद्धति द्वारा सामान्य कक्षाओं मे लाभान्वित नहीं हो पाते है। इन बच्चों की प्रतिभा को मुखरित करने के लिए विशेष कक्षाओं, अध्यापकों, विद्यालयों की व्यवस्था करना अति आवश्यक है। कोठारी आयोग ने कहा है कि हर स्तर पर विद्यार्थियों की प्रतिभा को खोजकर उसके सही विकास के लिए संबर्धित कार्यक्रम शुरु करने चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986, राममूर्ति कमेटी, 1991 तथा संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1992 ने सुझाव दिया है कि केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रतिभाशाली बालकों को निःशुल्क गुणात्मक शिक्षा देने तथा उनकी प्रतिभा के अधिकतम एवं पूर्ण विकास को ज्यादा से ज्यादा नवोदय विद्यालय की स्थापना करके पूरा किया जा सकता है।

अधिगम आयोग्य बालक सामान्य बुद्धि होने पर भी पढने, लिखने तथा गणित में कम उपलब्धि का प्रदर्शन करते है। इनकी समस्या को दूर करने तथा इन्हें सही शिक्षा देने के लिए

इनकी पहचान करना जरुरी है ताकि सही उपचारात्मक एवं शैक्षिक कार्यक्रम द्वारा इनकी समस्या को दूर किया जा सके। इन बच्चों के लिए विशेष उपागम जैसे व्यवहार सम्बन्धी उपागम, व्यक्तिगत अनुदेशन उपागम, बहु इन्द्रिय उपागम, तकनीकी उपागम आदि तैयार किए गए है ताकि इनकी शैक्षिक उपलब्धि में सुधार लाया जा सके। इन्हें सामान्य बच्चों के साथ शिक्षा देने के लिए संसाधन प्रतिमान, भ्रमणशील प्रतिमान, दोहरा शिक्षण प्रतिमान आदि का प्रयोग करना चाहिए।

भारत सरकार द्वारा विकलांग बच्चों की शिक्षा के लिए एक योजना सभी के लिए शिक्षा लागू की गई, जिसका मुख्य उद्देश्य विकलांग बच्चों को सामान्य समुदाय के साथ एकीकृत करके उन्हें जीवन का सामना हिम्मत तथा विश्वास के साथ करना सिखाना है। भारत पुनर्वास केन्द्र, 1992, अपंग बच्चों के लिए कानून, 1995, राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद, 1993, मानसिक मंदबुद्धिता कानून, 1999 ने अपंग बच्चों एवं व्यक्तियों की शिक्षा पर बल दिया। हमारी कुल जनसंख्या का लगभग 2 प्रतिशत भाग विकलांग है। अपंग बच्चों को मुख्य धारा में रख कर ही शिक्षा देने के उद्देश्य को किया जा सकता है। विकलांग बच्चों की शिक्षा को आधारभूत शिक्षा परियोजना का एक महत्वपूर्ण अंग बनाने की आवश्यकता है।

18.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Bhargava, Mahesh : Exceptional Children- their Education and Rehabilitation, Vedant Publication, Lucknow, 2003

Kirk, S.A. and J.J. Gallagher : Educating Exceptional Children, Houghton Mifflin Company, Boston, 1989.

Panda, K.C. : Education of Exceptional Children, Vikas Publishing House, New Delhi, 1992.

Sharma, R.A. : Fundamental of Special Education, Surya Publication, Meerut, 2003.

Report of the Indian Education Commission, Educational and National Development, 1964-66, New Delhi, Ministry of Education.

The National Policy of Education : Challenges in Education, 1986, MHRD.

इकाई- 19

माध्यमिक स्तर पर विचारणीय विषय

(Specific Issues at Secondary Level)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

19.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

19.1 स्त्री शिक्षा (Women Education)

19.2 धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा (Religious and Moral Education)

19.3 दूरस्थ शिक्षा एवं मुक्त अधिगम (Distance Education & Open Learning)

19.4 सारांश (Summary)

19.5 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

19.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य

(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप-

1. स्त्री शिक्षा की वर्तमान स्थिति को जान कर उसको सशक्त बनाने का प्रयास कर सकेंगे।
2. स्त्री शिक्षा की धीमी प्रगति के कारणों से अवगत हो जाएंगे।
3. नारी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय नारी शिक्षा समिति राष्ट्रीय नारी शिक्षा परिषद, भक्त वत्सलम कमेटी,, कोठारी आयोग राष्ट्रीय शिक्षा नीति द्वारा दिए गए सुझावों को समझ सकेंगे।
4. नैतिकता और धर्म के अर्थ को समझ सकेगे।
5. धर्म और नैतिकता में क्या सम्बन्ध है उसको जान जाएगें।
6. माध्यमिक स्तर पर धार्मिक और नैतिक शिक्षा देने के विभिन्न तरीकों से अवगत हो जाएंगे।
7. शिक्षा प्रणाली में धार्मिक और नैतिक शिक्षा को किस प्रकार स्थान देना चाहिए, को समझ सकेंगे।
8. नैतिक और धार्मिक शिक्षा के महत्व को समझ सकेंगे।
9. दूरस्थ शिक्षा के अर्थ एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से परिचित हो जाएंगे।
10. दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता एवं महल को समझ सकेंगे।
11. दूरस्थ शिक्षा देने के विभिन्न माध्यमों से परिचित हो जाएंगे।
12. दूरस्थ शिक्षा के लाभ एवं सीमाओं को जान सकेंगे।
13. मुक्त विद्यालय के महत्व को समझ सकेंगे।

14. दूरस्थ शिक्षा को सशक्त बनाने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति द्वारा दिए गए सुझावों को समझ सकेंगे।
15. माध्यमिक स्तर पर स्त्री शिक्षा, धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा तथा दूरस्थ शिक्षा एवं मुक्त अधिगम की आवश्यकताओं तथा महल पर विचार-विमर्श कर सकेंगे।
16. इन विषयों से सम्बन्धित माध्यमिक स्तर पर शिक्षा का विश्लेषण कर सकेंगे।

माध्यमिक स्तर पर शिक्षा संरचना का महत्वपूर्ण स्तर माना जाता है और इसीलिए इस स्तर को सुधारने के लिए कुछ विशिष्ट स्त्री शिक्षा, धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा, दूरस्थ शिक्षा आदि। भारतीय सामाजिक एवं राष्ट्रीय विकास के लिए भी ये अत्यन्त आवश्यक हैं। आधुनिक शिक्षा में सबसे बड़ा दोष यही है कि इसमें ऐसे स्पष्ट लक्ष्य एवं कार्यक्रमों का अभाव है जिनसे नैतिक एवं धार्मिक शिक्षा का विकास संभव हो। इस इकाई में हम इन्हीं विषयों पर विस्तारपूर्वक चर्चा करेंगे।

19.1 नारी शिक्षा (Women Education)

स्त्री शिक्षा प्रत्येक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। आज हम इस बात को स्वीकार करते है कि माता बालक की प्रथम शिक्षक है, तो हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम नारी की शिक्षा के महत्व को भी स्वीकार करे। वर्तमान समाज में किसी भी नारी को पुरुष के समान ही शिक्षित होने का अधिकार प्राप्त होना चाहिए। एक सुशिक्षित नारी ही पारिवारिक जीवन को अधिक सुखी एवं आकर्षक बनाने के लिए अपने कर्तव्यों का पालन सही ढंग से कर सकती है। स्त्री शिक्षा के बिना राष्ट्रीय विकास अधूरा है। नारी शिक्षा की उपेक्षा करके कोई भी राष्ट्र आगे नहीं बढ़ सकता। कोठारी आयोग ने ठीक ही कहा है, "मानवीय साधनों के पूर्ण विकास के लिए, परिवार के सुधार के लिए और शिशु अवस्था के प्रभावशील वर्षों में बच्चों के चरित्र निर्माण के लिए पुरुषों की अपेक्षा नारियों की शिक्षा अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ("The education of women is more important than that of men for the complete development of human resources, improvement to homes and character development in the impressionable years of childhood period")

पं० जवाहर लाल नेहरु ने भी स्त्री शिक्षा पर बल देते हुए कहा है- 'लड़के की शिक्षा केवल एक ही व्यक्ति की शिक्षा है परन्तु लड़की की शिक्षा सम्पूर्ण परिवार की शिक्षा है। ("Education of a boy is the education of one person but education of girl is all फॅमिली'family's education")

वास्तव में परिवार में माता एक केन्द्र बिन्दु की भांति होती है जिसके इर्द-गिर्द सारी व्यवस्था घूमती है। यदि माताएँ शिक्षित होंगी तो सन्तान भी योग्य बनकर राष्ट्र को महान बना सकेगी। विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने कहा भी है कि शिक्षित स्त्रियों के बिना शिक्षित पुरुष नहीं हो सकते।

स्त्री शिक्षा की वर्तमान स्थिति

(Present Position of women Education)

भारतीय शिक्षा पटल पर उभरती हुई नारी शिक्षक संस्थाओं तथा प्राइमरी स्तर से विश्वविद्यालय स्तर तक बढ़ती हुई छात्राओं की संख्या से यह पता चलता है कि नारी शिक्षा विकास एवं प्रगति की तरफ अग्रसर है। लड़कियों में शिक्षा प्राप्त करने की रुचि बढ रही है। आज की नारी अपने सामाजिक, आर्थिक, बौद्धिक एंव आत्मिक विकास के प्रति सचेत है। अत: उसे शिक्षा से वंचित नहीं रखा जा सकता। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भी नारी शिक्षा को विकसित करने पर बल दिया गया है।

"नारी शिक्षा को केवल सामाजिक न्याय के आधार पर ही बल नहीं मिलना चाहिए अपितु इसलिए भी कि नारी शिक्षा सामाजिक परिवर्तन को तीव्र गति प्रदान करती है"।

हम मानते है कि आज स्त्री शिक्षा में काफी प्रगति हुई है परन्तु फिर भी अपेक्षित लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं हो रही हे। तालिका 19.1, 19.2 द्वारा स्पष्ट है कि 6-11 वर्ष की आयु में अब भी 70 प्रतिशत लड़कियाँ ही स्कूल जाती है। यह संख्या 11 से 14 आयुवर्ग तक ओर कम हो जाती है। इस प्रकार महाविद्यालयों में 100 'लड़की की तुलना में क्रमश: 45 लड़कियां ही शिक्षा ग्रहण कर पाती है। नारी शिक्षा के विकास एवं प्रसार में बहुत सी समस्याएँ बाधा बन कर खड़ी है।

2001 की जनगणना के अनुसार पुरुष साक्षरता दर 75 प्रतिशत से भी अधिक है। जबकि स्त्री साक्षरता दर लगभग 54.16 प्रतिशत है जैसा कि तालिका 19.3 और 19.4 द्वारा स्पष्ट है।

तालिका 19.1

1950 -51 के प्श्चात् लड़कियों के नामांकन का प्रतिशत

(Percentage of Girls enrolment since 1950-51)

वर्ष	माध्यमिक (IX-X)	उच्च माध्यमिक	उच्च शिक्षा
1950-51	16.1	(10+2)	(स्नातक और उच्च स्तर)
1960-61	23.9	13.3	10.0
1970-71	29.3	20.5	16.0
1980-81	32.9	25.0	20.0
1990-91	36.7	29.6	26.7
2000-01	40.9	32.9	33.3
2001-02	41.8	38.6	36.9

तालिका 19.2

सौ पुरुष विद्यार्थियों के अनुपात में महिला विद्यार्थियों का नामांकन

(Women Student Enrolment per Hundred Men Student)

वर्ष	कुल	महिला	नामांकन	प्रति सौ पुरुषों के अनुपात में नामांकन

	(000s)	
1950-51	40	14
2004-05	4234	18

तालिका 19.3

पुरुष और स्त्रियों की साक्षरता दर 1951-2001

(Literacy Rates of Men and Women (1951-2001)

जनगणना वर्ष	कुल व्यक्ति	पुरुष	महिलाएँ	पुरुष और महिला साक्षरता दर में अंतर
1951	18.33	27.16	8.86	18.30
1961	28.30	40.40	15.75	25.05
1971	34.45	45.96	21.98	23.98
1981	42.37	56.38	29.76	26.62
1991	52.21	64.13	39.29	24.84
2001	65.38	75.85	54.16	21.69

तालिका 19.4

साक्षरता दर, 2004

(Literature Rate, 2004)

कुल साक्षरता	61 प्रतिशत
पुरुष	73 प्रतिशत
महिला	48 प्रतिशत

आंकडों से स्पष्ट है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् स्त्री शिक्षा में काफी वृद्धि हुई है, परन्तु अभी भी लड़के एवं लड़कियों की शिक्षा में काफी अंतर है।

स्त्री शिक्षा की धीमी प्रगति के कारण

(Causes of slow progress of Women Education)

निम्न चित्र से स्पष्ट है कि स्त्री शिक्षा के धीमी प्रगति के बहुत से कारण है।

चित्र संख्या 19.1

1. **माता पिता की निरक्षरता (Illiteracy of the Parents):-** भारत की अधिकतर जनसंख्या आज भी निरक्षर एवं रुढिवादी है। निरक्षर माताएँ लड़कियों की विद्यालयों में नहीं भेजती। क्योंकि उनका मानना है कि पढ़ लिखकर लड़कियों का नैतिक पतन हो जाता है।
2. **निर्धनता (Poverty):-** नारी शिक्षा को भी निर्धनता का शिकार होना पड़ रहा है। जो लोग बहुत गरीब है। वे लड़की की शिक्षा पर पैसा खर्च न करके लड़के की शिक्षा पर खर्च करना पसन्द करते है।
3. **स्कूलों की कमी (Shortage of Schools):-** ग्रामीण इलाकों में लड़कियों को शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाएं बहुत कम है। इसलिए लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए काफी दूर जाना पड़ता है। माता पिता लड़कियों को ज्यादा दूर भेजना पसंद नहीं करते।
4. **महिला अध्यापकों की कमी (Dearth of Women Teachers)-** स्कूलों में महिला अध्यापकों के न होने के कारण ग्रामीण लोग अपनी लड़कियों को स्कूल भेजना पसंद नही करते।
5. **अनुचित पाठ्यक्रम (Unsuitable Curriculum):-** हमारी शिक्षा प्रणाली में लड़के एवं लड़कियों के लिए एक जैसे पाठ्यक्रम की व्यवस्था की गई है। जबकि लड़कियों का पाठ्यक्रम उनकी मनोवृति एवं रुचि के अनुसार भिन्न होना चाहिए। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने सुझाव दिया कि लड़कियों के लिए गृह सज्जा गृह-विज्ञान, कढ़ाई, शिशु-पालन, संगीत, गृह कौशल आदि विषयों की व्यवस्था होनी चाहिए।
6. **सरकार की तरफ से उपेक्षा भाव:** (Indifferent attitude of Government):- सरकार का दृष्टिकोण भी नारी शिक्षा के प्रति उचित नहीं है। लड़कों की शिक्षा पर नारी शिक्षा की अपेक्षा अधिक पैसा खर्च किया जाता है। सरकार द्वारा जो महिला संस्थाएं चलाई जा रही है, उनका प्रबन्ध पुरुषों के हाथों में दे दिया जाता है जो नारी शिक्षा विकास में बाधक का कार्य करती है।
7. **सहशिक्षा: (Co-education)-** कुछ माता पिता आज भी अपनी लड़कियों को सहशिक्षा संस्थानों में भेजने से हिचकिचाते है। उच्च स्तर पर लड़कियों के लिए पर्याप्त अलग स्कूल नहीं है।
8. **अपव्यय एवं अवरोधन (Wastage and Stagnation):-** बहुत से सामाजिक एवं आर्थिक कारणों से नारी शिक्षा में अत्याधिक अपव्यय एवं अवरोधन होता है।
9. **माता पिता की उदासीनता (Apathy of the Parents):-** भारतीय परिवार विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में माता-पिता लड़कियों की शिक्षा को अनावश्यक मानते है। लड़कियों को केवल खाना बनाने तथा अन्य गृह-कार्य को करने तक ही सीमित रखा जाता है। इस प्रकार हम कह सकते है कि नारी शिक्षा शहरी क्षेत्र में अवश्य विकास कर रही है। परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में अभी और प्रोत्साहन की आवश्यकता है। जब तक गांवों में नारी शिक्षा का समुचित विकास नहीं होगा तब तक स्त्री शिक्षा

की स्थिति में पर्याप्त सुधार नहीं लाया जा सकता। इस क्षेत्र में विभिन्न शिक्षा आयोगों एवं कमेटियों ने अपने-अपने सुझाव दिए है।

नारी शिक्षा पर राष्ट्रीय समिति के सुझाव:

(Recommendations of National Committee on Women Education)

सन् 1958 में श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख की अध्यक्षता में इस कमेटी ने नारी शिक्षा के विकास एवं प्रसारण के लिए बहुत महत्वपूर्ण सुझाव दिए है-

1. नारियों तथा पुरुषों की शिक्षा में विद्यमान खाई को जल्दी समाप्त करना चाहिए।
2. राष्ट्रीय नारी शिक्षा परिषद् एवं प्रान्तीय नारी शिक्षा परिषदों की स्थापना होनी चाहिए।
3. स्त्री शिक्षा के प्रसार के लिए विभिन्न सरकारी, अर्ध-सरकारी एवं ऐच्छिक संस्थाओं का सहयोग लेना चाहिए।
4. नारी शिक्षा सम्बन्धी फिल्मों का निर्माण कर तथा उन्हें प्रदर्शित करके नारी शिक्षा के कार्यक्रम को सशक्त बनाना चाहिए।
5. ग्रामीण, पिछड़े हुए तथा पहाडी इलाकों मे नारी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए लड़कियों को अधिक सुविधाएं देनी चाहिए जैसे निशुल्क यातायात, रिहायश आदि।
6. लड़कियों की शिक्षा निशुल्क होनी चाहिए तथा उन्हें छात्रवृतियां प्रदान करनी चाहिए।
7. सहशिक्षा को प्रोत्साहित करना चाहिए।
8. लड़कियों के लिए तकनीकी संस्थानों की स्थापना की जानी चाहिए।
9. सरकार को होस्टल, प्रयोगशालाएं एवं पुस्तकालय स्थापित करने में ऐच्छिक संगठनों की मदद करनी चाहिए।

राष्ट्रीय नारी-शिक्षा परिषद्

(National Council for Women Education)

राष्ट्रीय नारी शिक्षा कमेटी के सुझावों के परिणामस्वरूप शिक्षा मन्त्रालय ने 1964 में 27 सदस्यों की परिषद् की स्थापना की। इस परिषद के निम्नलिखित कार्य है:-

1. नारी शिक्षा के सम्बन्ध में जनता को सुशिक्षित करने के उपाय बताना।
2. नारी शिक्षा के विकास सम्बन्धी लक्ष्यों, नीतियों, कार्यक्रमों तथा प्राथमिकताओं का सुझाव देना।
3. लड़कियों की शिक्षा से सम्बन्धित समस्याओं पर सरकार को सलाह देना।
4. समय-समय पर प्राप्त उपलब्धियों के मूल्यांकन का सुझाव देना।
5. स्त्री शिक्षा में उत्पन्न समस्याओं से सम्बन्धित आंकडे इक्कठे करना।

भक्तवत्सलम कमेटी (1963) के सुझाव

(Recommendation of Bhaktavtsalam Committee, 1963)

राष्ट्रीय नारी शिक्षा परिषद ने 1963 में भक्तवत्सलम कमेटी की स्थापना की। इस कमेटी ने नारीशिक्षा को लोकप्रिय बनाने के लिए कुछ सुझाव दिए।

1. **सभी इलाकों के लिए स्कूल (School in all areas):-** सभी इलाकों में चाहे वे कितने छोटे क्यों न हो, स्कूल स्थापित करने चाहिए।
2. **अध्यापिकाओं की नियुक्ति (Appointment of Women Teachers):-** नारी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए यह अनिवार्य है कि स्कूल में अध्यापिकाओं की संख्या अधिक होनी चाहिए।
3. **अध्यापकों के लिए अच्छे वेतन (Improved Salary for teachers):-** अध्यापकों को अच्छा वेतन देना चाहिए ताकि वे अपने शिक्षण कार्य को मन लगा कर करे। अध्यापिकाओं को गांवों के पास नियुक्त करना चाहिए। ग्रामीण इलाकों तथा पहाडी इलाकों मे काम करने वाली अध्यापिकाओं को अतिरिक्त भत्ता तथा रिहायश प्रदान करनी चाहिए।
4. **पाठ्यक्रम (Curriculum):**- मिडल स्तर पर पाठ्यक्रम में वैकल्पिक विषयों की व्यवस्था होनी चाहिए ताकि लड़कियाँ अपनी रुचि के अनुसार विषय का चयन कर सके।
5. **लचीलापन (Flexibility):-** मौसम के अनुसार स्कूल समय में परिवर्तन होना चाहिए। कटाई के दिनों में स्कूल देर से लगाना चाहिए ताकि लड़कियां काम मे माता पिता की मदद कर सके।
6. **अनिवार्य शिक्षा अधिनियम (Compulsory Education, Act):-** हर प्रान्त में अनिवार्य शिक्षा अधिनियम होने चाहिए। जहां ये अधिनियम नही बने हुए है वहां ये अधिनियम बनाए जाने चाहिए।
7. **लड़कियों के लिए निशुल्क शिक्षा एवं केन्द्रीय सहायता (Free Education for girls and Central Assistance):-** माता पिता को लड़कियों की शिक्षा के लिए प्रोत्साहित करने के लिए यह जरुरी है कि इनकी शिक्षा को निशुल्क करने की व्यवस्था करनी चाहिए तथा इस काम के लिए केन्द्र की ओर से वितीय मदद मिलनी चाहिए।
8. **स्कूल सुधार सम्मेलन (School Improvement Conferences):-** सभी प्रान्तों में शिक्षा सम्बन्धी जागृति उत्पन्न करने के लिए स्कूल सुधार सम्मेलन आयोजित करने चाहिए।
9. **प्रान्तीय नारी शिक्षा परिषद् (State Council for Women Education):-** प्रान्तों में नारी शिक्षा परिषदों की स्थापना करनी चाहिए ताकि परिषद् के सदस्य क्रियात्मक क्षेत्रों में काम करने वाले लोगों के साथ सम्पर्क स्थापित कर सके और उन्हें समय-समय पर उचित मर्गदर्शन, प्रोत्साहन एवं परामर्श प्रदान कर सके।

कोठारी आयोग के सुझाव, 1964-66

(Recommendation of Kothari Commission, 1964-66)

कोठारी आयोग ने नारी शिक्षा को विशेष महत्व दिया है। विभिन्न स्तरों पर लड़कियों की शिक्षा के सम्बन्ध में आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिए है-

1. **स्त्री - पुरुष शिक्षा के अंतर को दूर करना (Remove the Gap between women and men education):-** स्त्री पुरुष शिक्षा के वर्तमान अंतर को दूर किया जाना चाहिए। लड़कियों के लिए अंशकालीन कोसों व्यावसायिक कोसों, पृथक स्कूलों तथा छात्रवृतियों की व्यवस्था की जानी चाहिए।
2. **पाठ्यक्रम (Curriculum):-** कोठारी आयोग का मानना है कि लड़कों तथा लड़कियों का पाठ्यक्रम समान होना चाहिए। गृह-विज्ञान ऐच्छिक विषय होना चाहिए। विज्ञान एवं गणित के शिक्षण को अधिक प्रोत्साहन मिलना चाहिए।
3. **महिला अध्यापिकाएँ (Women Teachers):-** महिला अध्यापकों को विशेष सुविधा जैसे विशेष भत्ता, आवासीय सुविधा आदि प्रदान करनी चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के सुझाव

(Recommendations of N.P.E., 1986)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने नारी समानता के लिए शिक्षा पर बल दिया है। विभिन्न स्तरों पर तकनीकी, व्यावसायिक विषयों में भाग लेने के लिए स्त्रियों को विशेष प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। महिलाओं को शक्ति प्रदान करने में राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली सकारात्मक भूमिका निभाएगी। महिला विकास के लिए शैक्षिक संस्थाओं को प्रोत्साहन दिया जाएगा। शिक्षा स्वरुप के पुनर्गठन के माध्यम से नए मूल्यों का विकास किया जाएगा।

शिक्षा की संशोधित राष्ट्रीय नीति, 1992

(Revised National Policy on Education, 1992)

इस नीति में स्त्रियों की शक्ति को बढ़ाने के लिए कई योजनाएं बनाई गई जैसे:-

1. नवोदय विद्यालय तथा केन्द्रीय विद्यालयों में लड़कियों की शिक्षा निःशुल्क होनी चाहिए।
2. सम्पूर्ण साक्षरता अभियान में स्त्रियां मुख्य केन्द्र हो। महिलाओं की संख्या 60 प्रतिशत से अधिक होनी चाहिए।
3. श्यामपट्ट अभियान योजना के अनुसार भविष्य में नियुक्त किए जाने वाले अध्यापकों में 50 प्रतिशत महिलाएं होनी चाहिए।

इस प्रकार पिछले कुछ वर्षों में नारी शिक्षा को काफी प्रोत्साहन मिल रहा है। किन्तु अभी भी विकास के लिए प्रत्येक योजना में प्राथमिकता होने की आवश्यकता है। नारी शिक्षा से ही देश की योग्यता में वृद्धि होगी। इस बारे में गांधी जी का कथन कितना सत्य है "बच्चों की शिक्षा के प्रश्न को तब तक हल नहीं किया जा सकता जब तक साथ-साथ स्त्री शिक्षा को हल करने के लिए निरन्तर प्रयत्न किए जाए। एक शिक्षित नारी ही पुरुषों के चरित्र एवं सामाजिक, आर्थिक एवं राष्ट्रीय विकास की सच्ची संरक्षिका है।"

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. स्त्री शिक्षा की धीमी प्रगति के क्या कारण है? वर्णन कीजिए।
   What are the causes of slow progress of women education? Explain.
2. स्त्री विकास के विकास के सम्बन्ध में भक्तवत्सलम कमेटी तथा कोठारी आयोग के क्या विचार है व्याख्या कीजिए।
   What are the recommendations of Bhakatvatsalam committee and Kothari Commission regarding women education? Explain.
3. नारी शिक्षा की वर्तमान अवस्था का आलोचनात्मक विवरण दीजिए।
   Examine critically the present position of women education.
4. नारी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 तथा शिक्षा की संशोधित राष्ट्रीय नीति, 1992 ने क्या सुझाव दिए है?
   What suggestions are given by N.P.E., 1986 and Revised National Policy on Education, 1992 to enhance women education?

19.2 धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा (Religious and Moral Education)

आज का युग विज्ञान एवं भौतिकवाद का युग है। विज्ञान ने अनेक परिवर्तनों को जन्म दिया। मानव ने प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति की है। परन्तु दुर्भाग्य की बात यह है कि आज का मानव जीवन के नैतिक मूल्यों को भुला बैठा है। जगह-जगह असंतोष, मारपीट, घेराव, लूटपाट, धोखाधड़ी, शोषण, साम्प्रदायिकता, रिश्वतखोरी, चोर बाजारी आदि नजर आता है। यह सब हमारी आधुनिक शिक्षा के दोषों को प्रकट करते है। नैतिक शिक्षा के बिना कोई भी प्रणाली व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं कर सकती। इसलिए आज यह आवश्यक है कि शिक्षा में नैतिक शिक्षा को उचित स्थान दिया जाए जिससे हम बच्चों में मानवीय मूल्यों को उत्पन्न करके लोकतन्त्रात्मक गुणों का विकास कर सके। नैतिक मूल्यों का विकास करने के लिए यह जानना जरुरी है कि नैतिकता और धर्म का अर्थ क्या है?

नैतिकता का अर्थ

(Meaning of Morality)

श्री प्रकाश कमेटी का मत (View of Shri Prakash Committee):- "'नैतिकता मनुष्य का दूसरे मनुष्य के प्रति व्यवहार उन विभिन्न परिस्थितियों में है जिनमें मानव प्राणी सम्पर्क में आते है।"

("Morality is the conduct of man towards man in various situation, in which human beings come together")

सैडलर का मत (View of sadler):- "नैतिक प्रशिक्षण का उद्देश्य अच्छी आदतों का निर्माण करना है।;" (The aim of moral learing is formation of good habits.")

अच्छा जीवन बिताने के लिए नैतिकता का होना आवश्यक है। नैतिक शिक्षा के बिना कोई भी व्यक्ति पूर्ण रुप से मानव नहीं बन सकता। इमानदारी, सच्चाई, वफादारी, सद्भावना, न्याय तथा आत्मनियन्त्रण आदि नैतिक गुण मनुष्य की सामाजिक कुशलता को विकसित करते है।

धर्म का अर्थ

(Meaning of Religion)

Religion शब्द की उत्पति Religare शब्द से हुई है जिसका अर्थ है 'व्यक्ति को व्यक्ति से बांधना" (To bind man to man)

भारतीय शिक्षा आयोग (Indian Education Commission) ने ठीक ही कहा है-

"स्वयं के ज्ञान, जीवन को अर्थ, मनुष्य का मनुष्य एवं अन्तिम सत्य के साथ सम्बन्ध की खोज ही धर्म है।" (Religion is a search for the knowledge of the self of the meaning of life, of the relationship of man to other human beings to and to the ultimate reality")

संक्षेप में धर्म में अच्छे नैतिक चरित्र के सभी गुण सम्मिलित है। यह नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का स्त्रोत है। धर्म नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का स्त्रोत है। धर्म नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों द्वारा सच्चे हृदय का निर्माण करके जीवन को सुन्दर बनाता है।

नैतिकता का जन्म धर्म से होता है। नैतिकता धर्म का सार है। धर्म और नैतिकता का अटूट सम्बन्ध है। यह एक दूसरे के पूरक है। इन दोनों को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। सब धर्म सच्चाई, ईमानदारी, भाईचारा, सदाचार, बडो का आदर, भलाई आदि की शिक्षा देते हैं और दूसरी और नैतिकता मनुष्य के आचरण में इन्हीं पर आधारित है। गांधी जी ने कहा भी है कि मेरे लिए नैतिकता, नीति जीवन के समस्त नैतिक मूल्यों का स्त्रोत हैं।

स्प्रिंग (Spring) के अनुसार "धर्म के बिना नैतिकता का और नैतिकता के बिना धर्म का अस्तित्व नही है।" (There is no religion without morality and no morality without religion).

बरतोल (Bartol) के अनुसार, "कुछ लोग नैतिकता को धर्म से अलग करना चाहते है, पर धर्म के आधार के बिना नैतिकता का अन्त हो जाएगा।" (Some would divorce morality from religion is the root without which morality would die.")

यदि गहराई से सोचा जाए तो धर्म नैतिकता को निर्धारण कर नैतिक मूल्यों का निर्माण करता है। यदि नैतिक मूल्यों को धर्म से निकाल दिया जाए तो धर्म केवल अन्धे व्यक्ति के समान नजर आएगा। धर्म और नैतिकता दोनों मनुष्य के दृष्टिकोण को विकसित करते है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. धर्म से आपका क्या अभिप्राय है?

What do you mean by religion?

2. नैतिकता का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

Explain the meaning of morality.

3. धर्म और नैतिकता में क्या सम्बन्ध है?

What is the relationship between religion and morality?

4. धार्मिक और नैतिक शिक्षा का क्या महत्व है?

What is the importance of moral and religion education?

भारत में धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा का कार्यक्रम

(Programme of moral & Religious Education in India)

भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य है। संवैधानिक रुप से सब नागरिकों को धार्मिक स्वतन्त्रता है। अनुच्छेद 28 के अनुसार सरकारी या सरकारी सहायता से चलने वाली संस्थाएं किसी एक धर्म का प्रचार नहीं कर सकती। धार्मिक संस्थाएं अपने माध्यम एवं साधनों से अपने-अपने धर्म के प्रचार के लिए स्वतन्त्र है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् शिक्षा जगत से सम्बन्धित गठित आयोगों एवं कमेटियों ने इस शिक्षा के महत्व पर जोर दिया है। डा० राधाकृष्णन आयोग (1948-49), माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53), भारतीय शिक्षा आयोग (1964-66) ने हमारी शिक्षा प्रणाली में धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा को उचित स्थान देने की सिफारिश की है।

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग, 1948-49 के सुझाव

(Recommendation of University Education Commission, 1948-49)

डा० राधा-कृष्णन की अध्यक्षता में नियुक्त किए जाने वाले इस आयोग ने कुछ सुझाव दिए-

1. सभी शिक्षण संस्थाओं में मौन-ध्यान पर बल दिया जाए।
2. विद्यार्थियों को नैतिक एवं धार्मिक सिद्धान्तों को व्यक्त करने वाली कहानियों और महान व्यक्तियों की जीवनी को पढ़ाने पर बल देना चाहिए।

माध्यमिक शिक्षा आयोग की सिफारिशे

(Recommendation of Secondary Education Commission, 1952-53)

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने सुझाव दिया कि धार्मिक शिक्षा देने से पहले माता पिता तथा प्रबन्धकों की सहमति लेनी चाहिए। धार्मिक शिक्षा में ऐच्छिकता के सिद्धान्त को अपनाना चाहिए और यह शिक्षा स्कूल समय के पश्चात् देनी चाहिए। यह सम्बन्धित धर्म को मानने वाले बच्चों तक सीमित होनी चाहिए।

श्री प्रकाश कमेटी के सुझाव

(Recommendations of Shri Prakash Committee)

इस समिति का गठन भारत सरकार द्वारा अगस्त 1959 मे किया गया था और समिति ने अपनी रिपोर्ट जनवरी 1960 में प्रस्तुत की। कमेटी ने सुझाव दिया कि पाठ्यक्रम में

उच्च नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों को सम्मिलित किया जाए। नैतिक एवं धार्मिक शिक्षा निम्न ढंग से देनी चाहिए -

क) प्रात:कालीन सभा (Morning Assembly):- प्रात:कालीन सभा मे धार्मिक ग्रन्थों या महान साहित्य के कुछ अंश पढ़े जाए या भाषण दिया जाए। सामूहिक ज्ञान को भी प्रोत्साहन देना चाहिए।

ख) विश्व के महान धर्मों की शिक्षा (Teaching of Great World Religion):- विश्व के महान धर्मों की शिक्षा को इतिहास में शामिल करना चाहिए भाषा तथा सामान्य अध्ययन में संसार के धर्मो से सम्बन्धित पाठ पठायें जाए।

ग) नैतिक शिक्षा के लिए प्रति सप्ताह एक घंटा (Programme of social Service):- सप्ताह में एक घंटा नैतिक शिक्षा के लिए होना चाहिए। लेखों, प्रतियोगिताओं तथा वाद विवाद द्वारा अपने धर्मा के अतिरिक्त शेष धर्मों का ज्ञान करवाया जाए। सभी धर्मों के महत्वपूर्ण त्याहारों को मिलकर मनाना चाहिए।

घ) समाज सेवा का कार्यक्रम: (Programme of Social Service):- समाज सेवा पाठ्यक्रम का एक आवश्यक भाग होना चाहिए इसका उद्देश्य मानवता से प्रेम, देश प्रेम, हाथ के काम का आदर तथा स्वनियन्त्रण सिखाना है। खेलो में भाग लेना अनिवार्य होना चाहिए।

ङ) चारित्रिक गुण (Qualities of character):- विद्यार्थियों के कार्य का मूल्यांकन करते समय उसके शुद्ध आचरण एवं व्यवहार का भी अनिवार्य अंग समझना चाहिए। संक्षिप्त रुप में कहा जा सकता है कि धर्म पढ़ाया नहीं जाता बल्कि सिखाया जाता है। इसलिए प्रातःकालीन सभाओं, धार्मिक त्यौहारों, समाज सेवाओं धार्मिक कहानियों तथा अध्यापकों के व्यक्तिगत प्रभाव द्वारा धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा दी जा सकती है।

कोठारी आयोग 1964-66 के सुझाव,

(Recommendations of Kothari Commission, 1964-66)

कोठारी आयोग ने धार्मिक तथा नैतिक मूल्यों की समस्या पर विचार करने के पश्चात् निम्नलिखित सुझाव दिए -

1. सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्य (Social, Moral & Spirtiual Values)

शिक्षा प्रणाली में सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों के विकास पर बल देना चाहिए। इस दृष्टि से-

- समय-सारिणी में कुछ पीरियड नैतिक शिक्षा के होने चाहिए।
- केन्द्रीय एवं प्रान्तीय सरकारों को सभी संस्थाओं में नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा आरंभ करनी चाहिए।
- निजी शिक्षा संस्थाओं को भी विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग द्वारा दिए गए सुझावों के अनुसार यह शिक्षा प्रारम्भ करनी चाहिए।

2. धर्मो की शिक्षा (Education about religious)

भारत अनेक धर्मों का देश है। इसलिए सभी धर्मों के अध्ययन को उत्साहित करना चाहिए ताकि नागरिक एक दूसरे को जानकर मिल कर रह सकें। संसार के प्रसिद्ध धर्मों के विषय

में नागरिकता सम्बन्धी जानकारी के लिए पाठ्यक्रम बनाना चाहिए। पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकें योग्य धार्मिक विद्वानों द्वारा तैयार कराई जाए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 का मत

(Views of National Policy of Education, 1986)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने निम्नलिखित सुझाव दिए है:-

- आज के युग में जीवन के लिए आवश्यक मूल्यों का दिन प्रतिदिन ह्रास हो रहा है। इसलिए पाठ्यक्रम में ऐसे परिवर्तन की आवश्यकता है जिसके द्वारा नैतिक मूलों का विकास कर सके।
- शिक्षा द्वारा धार्मिक अंधविश्वास, कट्टरता, हिंसा, असहिष्णुता को खत्म करने में सहायता मिलनी चाहिए। विद्यार्थियों में शाश्वत मूल्यों का विकास करना चाहिए ताकि उनमें एकता की भावना को पैदा किया जा सके।

अत: हमारी शिक्षा तथा समाज में प्रचलित बुराइयों को खत्म करने के लिए नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का शिक्षण उतना ही आवश्यक है जितना कि जीवित प्राणियों के शरीर में आत्मा का होना आवश्यक है। यदि हमने बच्चों में संतोष, शान्ति तथा जीओ और जीने दो' की भावना उत्पन्न करनी है तो शिक्षा द्वारा बच्चों को नैतिक तथा धार्मिक मूल्यों की प्ररेणा देनी होगी। यदि समस्त समाज केन्द्रीय तथा राज्य सरकारें मिल कर प्रयास करें तो हम स्वस्थ मानव की कल्पना कर सकते है। मारिशियन के शब्दों में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है - मनुष्य का निर्माण करना या विकासशील गतिमयता का मार्गदर्शन करना जिसके द्वारा मनुष्य मानव के रुप में अपना निर्माण करता है। अत: शिक्षा और धर्म का अटूट सम्बन्ध है। शिक्षा रुपी दर्शन में धर्म तथा नैतिक दृष्टिकोण स्पष्ट रुप से झलकना चाहिए।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. क्या आप नैतिक एवं धार्मिक शिक्षा से सम्बन्धित भारतीय शिक्षा आयोग (1964-66) के सुझावों से सहमत है? कारण सहित लिखो।
   Do you agree with recommendations of Indian Education Commission (1964-66) regarding religious and moral education? Gives reasons.
2. भारत जैसे धर्मनिरपेक्ष राज्य में नैतिक तथा धार्मिक शिक्षा किस आधार पर न्यायोचित है?
   On what grounds would you justify moral and religious education in a secular state like India?
3. स्कूलों में धार्मिक शिक्षा किस प्रकार दी जा सकती है?
   How religious education can be imparted in schools?
4. नैतिक एवं धार्मिक शिक्षा के लिए श्री प्रकाश कमेटी ने क्या सुझाव दिए है? वर्णन कीजिए।

What are the recommendation of Shri Prakash Committee regarding moral and religious education? Explain.

5. लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था में धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा के महल की अवहेलना नहीं की जा सकती। व्याख्या करे।

In a democratic set up the importance of religious and moral education can not be minimized'. Comment.

19.3 दूरस्थ शिक्षा एवं मुक्त अधिगम (Distance Education and Open Learning)

दूरस्थ शिक्षा वह शिक्षा है जो विद्यार्थी अपनी गति तथा अपने समय के अनुसार प्राप्त करता है। जो विद्यार्थी किसी कारणवश औपचारिक शिक्षा से वंचित रह गए है वह दूरस्थ शिक्षा द्वारा शिक्षा प्राप्त कर सकते है। इस शिक्षा में विद्यार्थी घर बैठे ही पत्राचार, रेडियो, दूरदर्शन, ओडियो तथा वीडियो कैसेटस आदि द्वारा शिक्षा प्राप्त कर सकता है।

दूरस्थ शिक्षाकी शुरुआत 1856 में बर्लिन (जर्मनी) में हुई जहां पत्राचार द्वारा भाषा शिक्षण शुरु किया गया। जर्मनी के बाद रुस और इसके पश्चात अन्य देशों ने दूरस्थ प्रणाली को अपनाया। भारत में दूरस्थ शिक्षा का प्रारम्भ 1962 में हुआ। स्कूल स्तर पर दूरस्थ शिक्षा को प्रारंभ करने का विचार, 1964, में माध्यमिक शिक्षा बोर्डो की सम्मेलन की सिफारिशों के परिणामस्वरुप हुआ था। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968, ने भी इस विचार को बढ़ावा दिया। स्कूल स्तर पर दूरस्थ शिक्षा आरम्भ करने का मुख्य उद्देश्य स्कूल छोडने वाले और दूसरे बच्चों को माध्यमिक और उच्च माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए अवसर प्रदान करना है। विभिन्न राज्यों और केन्द्रशासित राज्यों के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने दिल्ली, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, उडीसा, मध्यप्रदेश आदि में पत्राचार कोर्स शुरु किए गए।

अगस्त 1974 में राष्ट्रीय शैक्षिक, अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने मुक्त स्कूलों को स्थापित करने की तर्कसंगतता को जानने के लिए कार्यकारिणी समूह की स्थापना की। नवम्बर 1978 में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड और एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा मुक्त विद्यालय शिक्षा पर अन्तर्राष्ट्रीय सेमीनार का आयोजन किया गया। जुलाई 1979 में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा एक मुक्त विद्यालय स्थापित किया गया। 1989 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय स्थापित किया गया। इसके बाद 1991 में आन्ध्र प्रदेश मुक्त स्कूल (APOS) की स्थापना की गई। इसी तरह 1995-96 में उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान में भी मुक्त विद्यालय खोलने के लिए कदम उठाए गए। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय द्वारा भारत में मुक्त विद्यालय राष्ट्रीय संघ स्थापित किया गया। ये विद्यालय विभिन्न स्तर के विद्यार्थियों के लिए विभिन्न कार्यक्रम जैसे माध्यमिक कोर्स, उच्च माध्यमिक कोर्स, व्यावसायिक कोर्स प्रदान करते है। विद्यार्थियों को अनुदेशन देने के लिए मुद्रित सामग्री, दृश्य-श्रव्य सामग्री और व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम आयोजित किए जाते है। पूरे देश में 160 से

अधिक प्रत्यायन (Accreditated) संस्थाएं विभिन्न प्रकार की सेवाएं जैसे दाखिला, व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम का आयोजन करना, विद्यार्थियों को निर्देशन एवं परामर्श देना, अध्ययन सामग्री वितरित करना, मूल्यांकन करना आदि उपलब्ध करा रही है।

दूरस्थ शिक्षा का अर्थ

(Meaning of Distance Education)

जैक फाक्स के अनुसार (Jack Focks):- 'दूरस्थ शिक्षा अधिगम विधि की कुछ ऐसी विशेषताओं को प्रकट करती है जो उसे शिक्षा संस्थाओं की अधिगम विधि से अलग करती है।"

("Distance Education is a mode of learning with certain characteristics which distinguish it from the campus based mode of learning.")

एफ.आर. एर्डोस के शब्दो में (F.R. Erdos):- "दूरस्थ शिक्षा शिक्षण की अप्रत्यक्ष विधि है जिसमें अध्यापक ऐसे विद्यार्थियों को ज्ञान और कौशल प्रदान करने का दायित्व संभालता है, जो मौखिक रुप से शिक्षा प्राप्त करना नहीं बल्कि ऐसे समय तथा स्थान पर शिक्षा प्राप्त करना चाहता है जो उसकी व्यक्तिगत परिस्थितियों के अनुरुप हो।"

("Distance education is a mode of indirect instruction in which the teachers bears the responsibility of imparting knowledge and skills to a student who does not receive instruction orally but who studies in a place and at a time determined by his individual differences.")

दूरस्थ शिक्षा विद्यार्थी को अपनी सुविधा के अनुसार सीखने का अवसर प्रदान करती है। यह उन लोगों को भी प्राप्त हो सकती है, जो शारीरिक एवं मानसिक बाधाओं के कारण नियमित रुप से शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते, जन - माध्यमों का प्रयोग करके इस शिक्षा को लाखों, करोडों लोगों तक पहुँचाया जा सकता है।

दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता एवं महल

(Need and importance' of Distance Education)

दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता के कारण निम्नलिखित है:-

1. **कमाते हुए सीखना (Earning While learning):-** दूरस्थ शिक्षा उन व्यक्तियों के लिए जरुरी है जो कमाते हुए सीखना चाहते है।
2. **जनसंख्या विस्फोट (Population Explosion)-** भारत की जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है। औपचारिक पद्धति द्वारा हर किसी को शिक्षित करना संभव नहीं है। बहुत से विद्यार्थी शैक्षिक एवं व्यावसायिक कक्षाओं में प्रवेश नही कर पाते अत: उन्हें शिक्षित करने के लिए दूरस्थ शिक्षा आवश्यक है।
3. **ज्ञान में वृद्धि (Increase in knowledge):-** आज के वैज्ञानिक युग में ज्ञान तेजी से बढ़ रहा है। नई - नई खोज तथा अविष्कार हो रहे है। स्कूलों तथा कॉलेजों में प्राप्त किया गया ज्ञान जल्दी पुराना हो जाता है। दूरस्थ शिक्षा द्वारा ज्ञान को आधुनिकतम बनाने में सहायता मिलती है।

4. **शैक्षिक योग्यता बढ़ाना (Improve Qualification):-** दूरस्थ शिक्षा ऐसे व्यक्तियों को अपनी शैक्षिक योग्यता बढाने का अवसर प्रदान करती है जो रोजगार करते हुए योग्यता बढ़ाना चाहते है।
5. **स्वतन्त्र अधिगम (Independent Learning) : -** दूरस्थ शिक्षा द्वारा व्यक्ति स्वतन्त्र रुप से अपनी गति तथा समय के अनुरुप शिक्षा प्राप्त कर सकता है।
6. **आसान पहुँच (Easy Access) : -** दूरस्थ शिक्षा उन लोगों को भी शिक्षा प्रदान करने का अवसर देती है जो किसी कारणवश शिक्षा से वंचित रह जाते है।
7. **शिक्षा प्राप्ति का अधिकार (Right of Education) : -** शिक्षा प्राप्त करना प्रत्येक नागरिक का लोकतान्त्रिक अधिकार है। शिक्षा की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए दूरस्थ शिक्षा ही सबसे अच्छा तथा सश्क्त साधन है।
8. **विभिन्न आवश्यकताएं (Varied Needs) : -** विद्यार्थियों की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए दूरस्थ शिक्षा जरुरी है। क्योंकि इतनी आवश्यकताओं को औपचारिक शिक्षा पद्धति द्वारा पूरा नहीं किया जा सकता।
9. **सार्वभौमिक साक्षरता (Universal Literacy) : -** सार्वभौमिक साक्षरता भारत जैसे सभी विकासशील देशों का लक्ष्य है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए सस्ते साधनों की आवश्यकता पड़ती है। दूरी-प्रदत शिक्षा औपचारिक शिक्षा की अपेक्षा कम खर्चीली है।
10. **आधुनिक जीवन की गतिशीलता (Mobility of Modern Life) : -** जो लोग किसी व्यवसाय से जुडे होने के बाद शिक्षा प्राप्त करना चाहते है उनके लिए किसी संस्था में प्रवेश प्राप्त कर शिक्षा प्राप्त करना कठिन होता है। क्योंकि उन्हें व्यवसाय के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना पडता है। ऐसी स्थिति में दूरस्थ शिक्षा ही शिक्षा प्राप्त करने का सशक्त माध्यम है।

स्व-मूल्यांकन प्रश्न

(Self-evaluation Questions)

1. दूरस्थ शिक्षा से आप क्या समझते है?
   What do you understand by distance education?
2. दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व का वर्णन कीजिए।
   Describe the need and importance of distance education.
3. दूरस्थ शिक्षा की शुरुआत भारत में कब और कहा हुई?
   Where and when the distance education was started in India?

दूरस्थ शिक्षा प्रदान करने के माध्यम

(Media of Imparting Distance Education)

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में कई प्रकार के माध्यमों का प्रयोग किया जाता है जैसा कि उपरोक्त चित्र 19.2 द्वारा स्पष्ट है।

1. पत्राचार शिक्षा (Correspondence Education)

पत्राचार शिक्षा में विद्यार्थियों को पढने के लिए अध्ययन सामग्री घर बैठे ही भेजी जाती है। इस शिक्षा की निम्नलिखित आवश्यकताएं है-

1. **अध्ययन सामग्री (Study Material)-** अध्ययन सामग्री विशेषज्ञों द्वारा तैयार करवाई जाती है। यह पुस्तकों अथवा मुद्रित व्याख्यानों के रुप में हो सकती है। विषय वस्तु उचित, रोचक तथा दैनिक जीवन से सम्बन्धित होनी चाहिए?
2. **उतर पत्रियां (Response Sheet)-** हर पाठ या पाठ इकाई के अन्त में उतर पत्री संलग्न होती हैं जो विद्यार्थियों को भर कर भेजनी होती है। उतर पुस्तिकाओं का मूल्यांकन करने के बाद ग्रेडों एवं सुझावों के साथ वापिस भेज दी जाती है।
3. **व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम (Personal Contact Programme (PCP):-** व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम द्वारा विद्यार्थियों में रुचि तथा सक्रियता उत्पन्न की जा सकती है। इस कार्यक्रम द्वारा विद्यार्थियों को उचित मार्गदर्शन, कक्षीय शिक्षण प्रदान किया जाता है। विद्यार्थियों को अपनी समस्याओं पर अध्यापकों से विचार विमर्श करने का मौका मिलता है। इस कार्यक्रम की अवधि ज्यादा लंबी न होकर 15-20 दिन होनी चाहिए।
4. **निर्देशित अध्ययन केन्द्र (Guided Study Centre)-** निर्देशित अध्ययन केन्द्र में विद्यार्थी अपने कोसों में निर्देशन प्राप्त करते है। ये केन्द्र रविवार तथा छुट्टी के दिनों में खुले रहने चाहिए। विद्यार्थियों की सहायता के लिए अध्यापक भी उपस्थित होने चाहिए।

2. दूरदर्शन (Television)

दूरदर्शन दूरस्थ शिक्षा प्रदान करने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। इसे शिक्षण माध्यम के रुप मे 1972 में अपनाया गया। यह दृश्य-श्रव्य साधन है। इसलिए इसके द्वारा क्रियात्मक विषयों की शिक्षा भी दी जा सकती है। किसी प्रयोग का प्रदर्शन आसानी से कर सकते है। इसके द्वारा हम काफी लोगों को एक ही समय में शिक्षित कर सकते है। इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय भी सप्ताह में तीन दिन अपने कार्यक्रम प्रात: 6:30 से 7:00 तक प्रसारित करती है। शैक्षिक कार्यक्रम निरक्षरों के दैनिक जीवन से सम्बन्धित समस्याओं से जुडे हुए होने

चाहिए। कार्यक्रम छोटी- छोटी इकाइयों में बांट कर प्रसारित करना चाहिए ताकि हर व्यक्ति उसका लाभ उठा सके।

3. रेडियो (Radio)

रेडियों भी निरौपचारिंक शिक्षा का एक अति प्रभावशाली साधन है। रेडियों पर प्रसारित विषय वस्तु विशेषज्ञों द्वारा तैयार की जाती है। रेडियों कार्यक्रमों को रिकार्ड किया जा सकता है ताकि आवश्यकता पड़ने पर पुन: सुना जो सके। रेडियो प्रसारण विषय-वस्तु का समय से पहले ही पर्याप्त प्रचार करना चाहिए ताकि हर व्यक्ति कार्यक्रम का लाभ उठा सके।

4. मुक्त विद्यालय (Open Schools)

मुक्त विद्यालय सैकेण्डरी स्तर पर शिक्षा सम्बन्धी मांगों को पूरा करते है। मुक्त विद्यालय के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार है:-

1. आर्थिक रुप से कमजोर विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान करना जो औपचारिक शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ है।
2. वे विद्यार्थी जो 6 या 7 के बाद स्कूल छोड गए है।
3. 10वीं और 12वीं में फेल होने वाले विद्यार्थी।
4. कामकाजी प्रोढौ एवं महिलाओं के लिए।

इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा 1989 में राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय (National Open School) स्थापना की गई। मुक्त विद्यालय प्रारंभ करने का विचार 1974 में आया जब NCERT के निर्देशक प्रो. रईस अहमद (Prof. Rais Ahmed) ने एक कार्यकारिणी समूह का गठन किया। इस समूह ने रिपोर्ट दी कि 14 साल तक तथा इससे अधिक आयु वर्ग वाले बच्चों के लिए मुक्त विद्यालय स्थापित करना बहुत जरुरी है। यह विचार जो 1974 में शुरु हुआ था, 1979 में पूरा हुआ जब केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE) के चैयरमैन डा० आर०पी० सिंघल (Dr. R.P.Singhal) ने एक खाका (Blue Print) तैयार किया। 1979 में मुक्त विद्यालय मुक्त विद्यालय शुरु किया गया। जिसे 1989 में राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय का नाम दिया गया। वर्तमान में इस स्कूल मे दो लाख विद्यार्थी नामांकित है। इसके अतिरिक्त दस प्रान्तीय मुक्त विद्यालय है जो राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय से वित्तीय सहायता प्राप्त करते है।

मुक्त विद्यालय का कार्यक्षेत्र व्यापक है। देश के किसी भी कोने में रहने वाले विद्यार्थी इसमें दाखिला ले सकते है। इनमें दाखिला लेने के लिए कोई आयु सीमा नहीं है। इन स्कूलों की अध्ययन प्रणाली लचीली है। विद्यार्थी हिन्दी या अंग्रेजी में से किसी एक विषय को चुनकर बाकी विषय अपनी इच्छा से चुन सकते है। इन विद्यालयों की परीक्षा प्रणाली की काफी लचीली है। वर्ष में दो बार (मार्च, अप्रैल, सितम्बर-अक्टूबर) परीक्षाओं का आयोजन किया जाता है। मुक्त विद्यालय द्वारा क्षेत्रीय संसाधन केन्द्र स्थापित किए गए जो उसी क्षेत्र के विद्यार्थियों को शैक्षिक परामर्श प्रदान करते है। पहला केन्द्र 1980-81 में सिक्किम में स्थापित किया गया। वर्तमान में राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय के 1500 अध्ययन केन्द्र तथा 10 क्षेत्रीय केन्द्र है। यह विद्यालय कई तरह के पाठ्यक्रम प्रदान करता है।

1. **माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education) : -** यह पाठ्यक्रम उन बच्चों के लिए है जो आठवीं कक्षा के पश्चात दसवीं तक शिक्षा प्राप्त करना चाहते है।
2. **उच्चतर माध्यमिक शिक्षा (Higher Secondary Education):-** यह उन विद्यार्थियों के लिए है जो दसवीं की शिक्षा पूरी करने के बाद बारहवीं तक की शिक्षा जारी रखना चाहते है।
3. **व्यावसायिक शिक्षा (Vocational Education):-** राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय अनेक व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की शिक्षा भी प्रदान करता है।

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों के लिए विशेषज्ञों द्वारा तैयार की गई उच्च गुणवता की मुद्रित पाठ्य सामग्री, विद्यार्थियों को उपलब्ध कराता है। मुद्रित सामग्री के साथ आडियो तथा विडियो सामग्री भी दी जाती है ताकि विद्यार्थी विषय सामग्री को अच्छी प्रकार देख सके व सुन सकें। व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रमों द्वारा विद्यार्थियों की निजी समस्याओं को दूर किया जाता है और उन्हें शैक्षिक परामर्श एंव मार्गदर्शन प्रदान किया जाता है। उच्चतर माध्यमिक शिक्षा पाठ्यक्रम पूरा करने के बाद विद्यार्थी महाविद्यालय में प्रवेश ले सकता है।

मुक्त विद्यालय द्वारा दिए गए प्रमाण पत्र पूरी तरह से वैध है। महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय एवं हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार ने इस प्रणाली द्वारा प्राप्त मानपत्रों को मान्यता प्रदान कर दी है। यदि इस प्रकार के विद्यालय देशभर में खोल दिए जाए तो कमजोर वर्ग के लोगो को शिक्षा प्रदान कर उनका भविष्य उज्जवल बनाया जा सकता है।

5. टैली गोष्ठी (Tele Conferencing)

टैलीगोष्ठी एक ऐसी विद्युत विधि है जो किसी प्रकरण पर विचार विमर्श करने के लिए दो विभिन्न स्थानों पर बैठे हुए दो या अधिक जातियों को एक दूसरे के समीप लाती है। शैक्षिक टैलीगोष्ठी दूरस्थ शिक्षा का अत्यन्त उपयोगी साधन है। इसके द्वारा विद्यार्थी दूर बैठे हुए अध्यापकों अथवा विशेषज्ञों से सम्पर्क स्थापित कर सकते है। प्रश्न-उत्तर टैलीगोष्ठी को अधिगम का प्रभावशाली माध्यम बना देते है। टैलीगोष्ठी श्रव्य और वीडियो दो प्रकार की होती है। विडियों टैलीगोष्ठी अधिक लाभदायक है क्योंकि इसमें अध्यापक और विद्यार्थी एक दूसरे को देख सकते है। यह दूर-दूर तक फैले हुए शिक्षार्थियों के लिए बहुत उपयोगी है। यह शिक्षार्थियों को उच्च स्तर की विशेषज्ञों द्वारा तैयार की गई अनुदेशनात्मक सामग्री प्रदान करता है।

दूरस्थ शिक्षा पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1966 के सुझाव

(Recommendations of National Policy of Education, 1986 on Distance Education)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 ने दूरस्थ शिक्षा पर निम्नलिखित विचार व्यक्त किए -

1. उच्चतर शिक्षा के अवसरों में वृद्धि करने के लिए मुक्त विश्वविद्यालय पद्धति को बढ़ावा देना।

2. इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय को अधिक सशक्त बनाना राष्ट्रीय शिक्षा नीति को कार्यान्वित करने के लिए कार्यान्वयन कार्यक्रम तैयार किया गया। इसकी बातें निम्नलिखित है।

क) **मुक्त विश्वविद्यालय पद्धति (Open University System) : -** मुक्त विश्वविद्यालय पद्धति उच्च शिक्षा के अवसरों में वृद्धि करती हे।

ख) **इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (Indira Gandhi National Open University):-** की स्थापना दूरस्थ शिक्षा के उद्देश्यों को सामने रख कर की गई। इसे देश में दूरस्थ शिक्षा पद्धति का स्तर निर्धारित करने का दायित्व सौंपा गया। मुक्त विश्वविद्यालय पद्धति को सशक्त बनाने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जाऐंगे।

1. शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर अधिगम तथा उपलब्धी का मूल्यांकन करने के लिए मानक निर्धारित करना।
2. सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय से रेडियों एवं दूरदर्शन के पृथक चैनल स्थापित करने के लिए बातचीत करना।
3. राज्य सरकार द्वारा विकास कार्यो के लिए उचित वितीय मदद प्रदान करना।
4. कोसों का नैटवर्क विकसित करना ताकि एक मुक्त विश्वविद्यालय में प्रदेश प्राप्त करने वाला विद्यार्थी दूसरे मुक्त विश्वविद्यालय के कोर्स में प्रवेश ले सके।
5. कार्यक्रम की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए नए विश्वविद्यालयों को इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के सहयोग से कार्यक्रमों को विकसित करना चाहिए।

दूरस्थ शिक्षा के गुण (Merits of Distance Education)

- दूरस्थ शिक्षा समय तथा स्थान के बंधन से मुक्त है।
- यह व्यक्ति को अपनी गति से अपने आप सीखने का अवसर प्रदान करती है।
- यह समय, उर्जा तथा धन की दृष्टि से कम खर्चीली है।
- दूरस्थ शिक्षा को सार्वजनिक बनाने के लक्ष्य को पूरा करती है।
- विकलांग, व्यवसाय से जुड़ा व्यक्ति, दूर क्षेत्रों में रहने वाला व्यक्ति आदि सभी दूरस्थ शिक्षा का लाभ उठा सकते है।

दूरस्थ शिक्षा के जहां इतने लाभ है वहां इसमें कुछ कमियां भी है।

दूरस्थ शिक्षा की सीमाएं (Limitation of Distance Education)

- दूरस्थ शिक्षा द्वारा सैद्धान्तिक ज्ञान अधिक और क्रियात्मक ज्ञान न के बराबर दिया जाता है।
- पाठ्यसामग्री की उपयोगिता पर विद्यार्थियों से कोई सुझाव नहीं लिए जाते।
- व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रमों में व्याख्यानों पर अधिक जोर दिया जाता है और विद्यार्थियों को विभिन्न क्रियाओं को करने के लिए मौका नहीं दिया जाता।

अत: दूरस्थ शिक्षा के गुणों एवं अवगुणों का गहनता से अध्ययन करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचते है कि देश के दूर-दराज के इलाकों में रहने वाले लोगों को शिक्षा प्रदान करना अति आवश्यक है। यह शिक्षा उनके लिए हर दृष्टि से सहायक होगी। यह शिक्षा उनके

लिए भी उपयोगी एवं सार्थक होगी जो नवीनतम ज्ञान, कौशल और नई तकनीकी शिक्षा में रुचि रखते है और शिक्षा के प्रति सचेत तथा जागरुक है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self-Evaluation Questions)

1. मुक्त विश्वविद्यालय की विशेषताएँ कौन सी है? इसके लक्ष्यों एवं लाभों की व्याख्या करे।
   What are the characteristics of Open University? Explain its objectives and advantages.
2. दूरस्थ शिक्षा पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के क्या सुझाव है?
   What suggestions are given by N.P.E. (1986) regarding distance education?
3. दूरस्थ शिक्षा प्रदान करने की कौन-कौन सी विधियाँ है? वर्णन कीजिए।
   Explain different modes of imparting distance education.
4. दूरस्थ शिक्षा के गुणों एवं सीमाओं का वर्णन करे।
   Describe the merits and demerits of distance education.

19.4 सारांश

(Summary)

राष्ट्रीय, सामाजिक तथा राजनैतिक विकास की दृष्टि से स्त्री शिक्षा को बढ़ावा देना हर राष्ट्र के लिए अनिवार्य है। एक शिक्षित नारी ही पुरुषों के चरित्र एवं सामाजिक, आर्थिक एवं राष्ट्रीय विकास की सच्ची संरक्षिका है। शिक्षित नारी ही बालक के सम्पूर्ण विकास का आधार है। यदि कोठारी आयोग, भक्तवत्सलम कमेटी, राष्ट्रीय शिक्षा नीति आदि द्वारा दिए गए सुझावों का अनुसरण करें तभी नारी शिक्षा को अधिक सशक्त बनाया जा सकता है।

विभिन्न क्रियाकलापों के साथ - साथ विद्यार्थियों को प्राथमिक स्तर से ही धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा देनी चाहिए क्योंकि यह शिक्षा किसी भी समाज के लिए रीढ़ की हडडी है। यह शिक्षा संस्कृति के संरक्षण-संवर्द्धन तथा मूल्यों के पुनरुद्धार-पुनर्निमाण का कारण है। आज समाज में फैली बुराईयों को दूर करने के लिए केवल एक ही उपाय है कि पाठ्यक्रम में नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा को सम्मिलित किया जाए नही तो इनके अभाव में राष्ट्र प्राणहीन बन जाएगा।

दूरस्थ शिक्षा द्वारा हम उन लोगों को भी शिक्षित कर सकते है जो किसी व्यवसाय में जुडे होने के बाद भी अपनी शैक्षिक योग्यता को बढ़ाना चाहते है। दूरस्थ शिक्षा अनेक माध्यमों जैसे पत्राचार शिक्षा, दूरदर्शन, रेडियो, मुक्त विद्यालय, मुक्त विश्वविद्यालय, ऑन लाइन शिक्षा आदि द्वारा प्रदान की जाती है। इसमें समय व स्थान की कोई सीमा नहीं है। व्यक्ति स्वतन्त्र रुप से जब चाहे अपनी इच्छानुसार किसी भी समय तथा स्थान पर शिक्षा प्राप्त कर सकता है।

19.5 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Aggarwal, J.C. and Gupta's	:	Secondary Education and Management, Shipra Publication, New Delhi, 2008
Aggarwal, V.K.	:	Indian Education System - Structure and Problems, Prakash Publication, Ludhiana 1995.
Walia J.S.	:	Modern Indian Education and Problems, Ahim Paul Publication, Jalandhar, 2007.
Safaya, R.N.	:	Current Problems in Indian Education Dhanpat Rai & Sons Publication, Delhi, 1976
Yadav & Yadav	:	Indian Education System - Structure and Problems, Tandon Publication, Ludhiana, 1995.

इकाई - 20

माध्यमिक शिक्षा में भविष्य प्रवृतियां

(Future Trends in Secondary Education)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

20.0 लक्ष एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

20.1 माध्यमिक शिक्षा का दर्शन (Philoshophy of Secondary Education)

20.2 माध्यमिक स्तर पर नामांकन प्रलंबता (Enrolment Projection at Secondary Level)

20.3 माध्यमिक स्तर पर कक्षाकक्ष (Classrooms at Secondary Level)

20.4 मुक्त अधिगम प्रणाली (Open Learning System)

20.5 अध्यापक आवश्यकता (Teacher Requirement)

20.6 शैक्षिक व्यक्तियों का क्षमता निर्माण (Capacity Building of Educational Personnel)

20.7 वित्तीय नीति (Financial Policy)

20.8 माध्यमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण (universalization of Secondary Education)

20.9 भविष्य में माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए सुझाव (Suggestions for the Development of Secondary Education in Future)

20.10 सारांश (Summary)

20.11 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

20.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य

(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप:

1. माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के सार्वभौमीकरण की आवश्यकता को समझ सकेंगे।
2. भारत की वर्तमान शिक्षा व्यवस्था का अवलोकन कर सकेंगे।
3. प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण का माध्यमिक शिक्षा पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण कर सकेंगे।
4. भविष्य में माध्यमिक शिक्षा के विस्तार के लिए वित्त व्यवस्था का अनुमान लगा सकेंगे।
5. मध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण पर केन्द्रीय परामर्श शिक्षा बोर्ड समिति के सुझावों का विश्लेषण कर सकेंगे।
6. मध्यमिक स्तर पर अध्यापकों की गुणवत्ता की आवश्यकता का अनुभव कर सकेंगे।

7. माध्यमिक स्तर पर नामांकन की प्रलंबता का अनुमान लगा सकेंगे।
8. माध्यमिक शिक्षा के लिए सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयत्नों का प्रभाव जान सकेंगे।
9. माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए सुझाव दे सकेंगे।
10. माध्यमिक शिक्षा के विस्तार तथा गुणवत्ता सुधार में अपना योगदान दे सकेंगे।

यह कहा जाता है कि सम्पूर्ण विश्व में 20वीं शताब्दी प्राथमिक शिक्षा की शताब्दी थी जबकि 21वीं शताब्दी माध्यमिक शिक्षा की सदी होगी। 20वी शताब्दी मे विश्व के सभी देशों में जाति, वर्ग, ऐथनिक उद्भव आदि से उठकर सभी लोगों के लिए प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार को सार्वभौमिक रुप से स्वीकार किया गया। 21वीं सदी में यह आशा की जाती है कि यह अधिकार माध्यमिक शिक्षा तक विस्तृत हो जाएगा।

21वीं शताब्दी भारत से सम्बन्धित है। विभिन्न अनुसन्धानों तथा शैक्षिक अध्ययनों के द्वारा यह संकेत दिया जा रहा है कि भारत शीघ्र ही विकसित देशों में अग्रणी होगा। ऐसा संकेत हम सब भारतवासियों पर एक उतरदायित्व डाल रहा है कि यदि हम विकसित देश होने का लाभ उठाना चाहते है तो देश के प्रत्येक कोने में रहने वाले प्रत्येक नागरिक को देश के विकास में योगदान देना होगा। ऐसे विकास को हमें जीवन की गुणवत्ता के साथ-साथ समता व सामाजिक न्याय पर आधारित बनाना होगा। हमें वैश्विक प्रतियोगी के रुप में आगे बढ़ाना होगा जो सदा रहने वाला होगा। भारत में यदि हम विकास प्रक्रिया को बनाए रखना चाहते है तो हमें सबके लिए शिक्षा पर अधिक से अधिक मात्रा में निवेश करना होगा। यह माना भी जा रहा है कि जो माता पिता अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेजते है वे वास्तव में अपने बच्चों के दुश्मन है। सर्वशिक्षा अभियान की बढ़ती हुई सफलता आवश्यक रुप से यह प्रदर्शित करती है कि हमारा देश इस सत्य को मान रहा है कि शिक्षा ही विकास का आधार है। आवश्यक रुप से सर्वशिक्षा अभियान तथा इसका सार्वमौमिक प्रारंभिक शिक्षा का लक्ष्य विकास प्रक्रिया को बनाए रखने के लिए सुदृढ़ आधार प्रदान करता है। परन्तु इतना ही पर्याप्त नहीं है। प्रारंभिक स्कूल प्रणाली में बालकों की बढ़ती हुई संख्या आगे की शिक्षा की आवश्यकता पर दबाव डाल रही है।

यह प्रदर्शित होता है कि पिछले 70 से 80 वर्षों में बहुत से विकसित देशों में मुफ्त तथा अनिवार्य शिक्षा की आयु को बढ़ाकर 16 वर्ष कर दिया गया है। वैनजुअला जैसे विकासशील देश में कक्षा नौंवी तक शिक्षा को अनिवार्य बना दिया गया है। भारत में हमें 16 से 17 वर्ष तक के नवयुवकों को गुणात्मक माध्यमिक शिक्षा देनी होगी। यह अवश्यम्भावी है यदि भारत को विकास की प्रक्रिया में अन्य देशों से पीछे नहीं रहना है। ज्ञान, कौशलों तथा तकनीक में निरन्तर आधुनिकता आ रही है और भारत को स्वयं को इस आधुनिकता के अनुसार बनाए रखना है और इसके लिए उसे अपने बच्चों तथा नवयुवकों को पर्याप्त रुप से शिक्षित करना होगा।

अब हमारा लक्ष्य माध्यमिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण होना चाहिए। यह मानव पूंजी में वृद्धि करेगा तथा वृद्धि तथा विकास को बढ़ावा देने में पर्याप्त अवस्थाएं प्रदान करेगा और इससे भारत में प्रत्येक के जीवन में गुणवत्ता का ह्रास होगा इसीलिए अब समय है कि माध्यमिक

शिक्षा के सार्वभौमीकरण के विषय पर विचार विमर्श किया जाए तथा इस लक्ष्य को 2020 तक प्राप्त करने का प्रयास किया जाए।

20.1 माध्यमिक शिक्षा का दर्शन (Philosophy of Secondary Education)

माध्यमिक शिक्षा का भविष्य केवल इसकी संख्या में बढ़ावा करने में नहीं अपितु इसके नवीन उदीयमान दर्शन में भी निहित है। अब तक भारत में माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित कोई विशेष दर्शनशास्त्र नहीं है, केवल माध्यमिक शिक्षा आयोग के अतिरिक्त, जिन्होंने स्पष्ट शब्दों में इसके उद्देश्यों की व्याख्या की है। इसके पश्चात् आने वाले आयोगों तथा समितियों ने इस स्तर को किसी विशेष दर्शनशास्त्र पर केन्द्रित नहीं किया। उन्होंने साधारण रुप से सम्पूर्ण राष्ट्रीय शिक्षा नीति के संदर्भ में सुधार के सुझाव दिए। इसमें कोई संदेह नहीं कि माध्यमिक शिक्षा के दर्शन को किसी भी देश या समाज में अपनाए जाने वाले शिक्षा दर्शन से पृथक नहीं किया जा सकता, परन्तु इस स्तर की कुछ विशिष्ट विशेषताएँ है जिन्हें पहचानना आवश्यक है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) यद्यपि माध्यमिक शिक्षा की 'विशिष्टता के बारे में जागरुक था। उन्होंने कहा है। माध्यमिक शिक्षा स्कूल को स्वयं को उतरदायी बनाना होगा जिससे वह विद्यार्थियों को पर्याप्त रुप से नागरिक तथा व्यावसायिक कुशलता के साथ चारित्रिक गुणों से युक्त कर सके जिसके परिणामस्वरुप वे राष्ट्रीय जीवन के सुधार में योग्यता से व श्रेष्ठता से अपनी भूमिका अदा कर सके।

आयोग ने माध्यमिक शिक्षा की भूमिका को सामाजिक, राजनैतिक, औद्योगिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र में नेतृत्व प्रदान करने की भूमिका अदा करने के योग्य बनने के रुप में माना है। माध्यमिक शिक्षा को अन्तिम अवस्था तथा माध्यमिक स्तर भी माना जाता है अन्तिम अवस्था के रुप में इसके लक्ष्य शिक्षा के सामान्य लक्ष्यों, जो शिक्षा के सभी स्तरों पर लागू होते है, से भिन्न नहीं है तथा माध्यमिक स्तर के रुप में इसके लक्ष्य है शारीरिक, संवेगात्मक, बौद्धिक तथा सामाजिक रुप से शिक्षा के अगले स्तर के लिए तैयार करना। भविष्य में इसकी प्रवृति इसको अन्तिम अवस्था समझने की दिशा हो सकती है और इसी कारण इसी संबंध में इसके दर्शनशास्त्र को समझना होगा।

माध्यमिक शिक्षा का दर्शन जो 21वीं शताब्दी में उदय हो सकता है वह है विश्व के वातावरण के अनुसार परिवर्तन। 21वीं शताब्दी ने मानव ने तकनीकी तथा वैज्ञानिक विकास में अत्यधिक उन्नति की है। इसने विश्व के रहने के लिए एक खतरनाक स्थान बना दिया है। विभिन्न राष्ट्रों के पास विनाश के अस्त्र है और अधिक विनाशक शास्त्रों का विकास करने की आपस में होड लगी हुई है। विश्व का वातावरण अत्यधिक प्रदूषित हो चुका है। आंतकवाद अपना सिर उठाए खडा है। एक तरफ राष्ट्र युद्ध के लिए तैयारी कर रहे है तथा दूसरी ओर वे शांति की बात करते है। यह अनुमान लगाया जा रहा है कि भविष्य में अधिकतर बालक अपनी शिक्षा को माध्यमिक शिक्षा तक समाप्त कर लेंगे ओर कार्य के विश्व में कदम रख लेंगे इसलिए इसी स्तर पर नवयुवकों को आतंकवाद की शक्तियों का सामना करने के लिए तैयार करना होगा।

माध्यमिक शिक्षा का लक्ष्य धरती को प्रदूषण तथा युद्ध के विनाशक शस्त्रों से बचाना होना चाहिए। इसका दर्शन इस बात पर आधारित होना चाहिए कि एक ऐसे व्यक्ति का विकास किया जाए जो मानव जाति के कल्याण के लिए आपसी सहयोग में विश्वास करे, जिसका समरुप विकास हो और वह एक एकीकृत मानव हो, जो अपने अधिकारों व कर्तव्यों को समझे और जो प्रेम, दया, सहानुभूति, मित्रता तथा सहयोग से रहने के लिए तैयार हो।

इस प्रकार हमने भविष्य में माध्यमिक शिक्षा के विनाशकारी दर्शन का उल्लेख किया है क्योंकि 21वीं सदी में यही ऐसा स्तर होगा जहां मानव जाति को आकार देना होगा। प्रारंभिक स्तर ऐसी अवस्था नहीं है जहां मनुष्य / बालक 'वसुधैव कुटुम्बकम 'का अर्थ समझ सके और उच्च शिक्षा या विश्वविद्यालय शिक्षा भी बाद का स्तर है जहां संकुचित दृष्टिकोण पक्षपातपूर्ण व्यवहार को नकारा जाता है।

20.2 माध्यमिक स्तर पर नामांकन प्रलम्वता (Enrolment Protection at Secondary Level)

सर्वशिक्षा अभियान के द्वारा सार्वभौमिक प्रारंभिक शिक्षा पर बल दिए जाने के परिणामस्वरुप 2010 तक माध्यमिक शिक्षा के लिए मांग में अत्याधिक वृद्धि होना अश्वम्भावी है। नामांकन प्रलम्बता विभिन्न परिस्थितियों पर आधारित हो सकती है और इसी कारण यहां वैकल्पिक प्रलम्बन हो सकते है। यहां हमने सर्वशिक्षा अभियान की सफलता के आधार पर प्रलम्बन बनाए है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार 2010 तक सार्वभौमिक प्रारंभिक शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त कर लिया जाएगा, इसी आधार पर सर्वशिक्षा अभियान में 100 प्रतिशत सफलता प्राप्त होने पर प्रलम्बन नीचे दिया गया है।

सारणी 20.1 Additional Enrolment from 2003-04 to 2009-20 at Secondary Level (Based on 100% Success of SSA)

Year	Additional Enrolment (Grades IX-X) in millions			Additional Classrooms Required	Additional Teachers Required
	Boys	Girls	Total		
2003-04	1.81	1.75	3.56	119488	179232
2004-05	0.97	1.11	2.08	698115	104716
2005-06	1.03	1.22	2.25	75573	113359
2006-07	1.10	1.35	2.45	81810	122715
2007-08	1.17	1.48	2.65	88562	132844
2008-09	1.25	1.64	2.89	95872	143808
2009-10	1.33	1.80	3.13	103785	155677
2010-11	1.42	1.99	3.41	112351	168526

2011-12	1.33	1.07	2.40	79995	119992
2012-13	1.40	1.13	2.53	84360	126540
2013-14	1.49	1.18	2.67	88965	133447
2014-15	1.57	1.24	2.81	93822	140733
2015-16	1.66	1.31	2.97	98964	148419
2016-17	1.76	1.37	3.13	104351	156527
2017-18	1.86	1.44	3.30	110053	165080
2018-19	1.97	1.51	3.46	116069	174103
2019-20	2.08	1.59	3.67	1122414	183621

यदि हम सर्वशिक्षा अभियान के लागू होने के परिणामस्वरुप उच्च प्राथमिक स्तर पर नामांकन पर दृष्टिपात करे तो सर्वशिक्षा अभियान के लक्ष्य की 100 प्रतिशत प्राप्ति संभव नहीं लगती, परन्तु कम से कम हम 75 प्रतिशत सफलता प्राप्त कर सकते है। माध्यमिक कक्षाओं में नामांकन के प्रलंबन के लिए 2002-03 को नामांकन का आधार वर्ष माना गया है। स्तर नौंवी के लिए नामांकन प्रलंबन पहले वर्ष में स्तर आठवीं में नामांकन पर आधारित है। यह भी अनुमान लगाया जाता है कि लड़कियों के नामांकन की वृद्धि दर जो 2004-05 तथा 2010-2011 के बीच लड़कों के नामांकन में वृद्धि दर से अधिक है वह 2012 के पश्चात् कम हो जाएगी! माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिए लक्ष्य वर्ष 2010-20 की जनसंख्या के बराबर है। 2010-11 तथा 2019-20 के बीच नामांकन प्रलंबन लड़कियों के वार्षिक औसत वृद्धि दर 5.02 प्रतिशत तथा लड़कों के 5.8 प्रतिशत के आधार पर अनुमानित किया गया है। 2003-04 से 2019-20 तक कक्षा नौंवी में नामांकन प्रलंबन को दो से गुना करके माध्यमिक कक्षाओं में कुल नामांकन को प्राप्त किया गया है।

इन आंकडों के आधार पर यह अनुमान लगाया जाता है कि 2010-11 तक कक्षा नौंवी तथा दसवीं में लगभग 22 मिलियन विद्यार्थियों के लिए अधिक स्थान की आवश्यकता होगी।

20.3 माध्यमिक स्तर पर कक्षाकक्ष (Classroom at Secondary Level)

कक्षाकक्ष ऐसा स्थान है जहां अध्यापक तथा विद्यार्थी परस्पर अन्तक्रिया करते है। जैसाकि पहले भी कहा गया है कि सार्वमौमिक प्रवेश की प्राप्ति के लिए माध्यमिक शिक्षा सुविधाओं का विस्तार करना अत्यन्त आवश्यक है जैसे-

- परिभाषित निवास स्थान पर जहां कोई माध्यमिक स्कूल नहीं है वहां नए स्कूलों की स्थापना करना।
- अतिरिक्त कक्षाकक्षों तथा अन्य सुविधाओं को बढ़ाकर प्रारंभिक स्कूलों को हाई स्कूलों में परिवर्तित करना, और

- विद्यमान माध्यमिक स्कूलों में अतिरिक्त कक्षाकक्षों तथा अन्य संबंधित सुविधाएं प्रदान करना जिससे अधिक विद्यार्थियों को स्थान दिया जा सके।

तीनों गृह-रचनाओं के लिए वित्त की व्यवस्था करना महत्वपूर्ण है तथा व्यय की मात्रा भिन्न-भिन्न है। सबसे अधिक स्कूलों में कुछ सामान्य समर्थन प्रदान करना चाहिए जिससे अधिक विद्यार्थी अध्ययन कर सके। कुछ राज्यों ने गति प्रक्रिया में सभी प्रारंभिक स्कूलों को हाई स्कूलों में परिवर्तन करने का निर्णय लिया है। नीति का विस्तार राष्ट्रीय स्तर पर किया जाता है। लगभग 2.50 लाख अतिरिक्त हाई स्कूलों को प्रारंभिक स्कूलों से परिवर्तित करके वर्तमान माध्यमिक स्कूलों में जोडा जा सकता है। उपरोक्त तीनों विकल्पों में से चयन करना प्रत्येक खण्ड की परिस्थितियों तथा स्कूल मैपिंग पर आधारित होगा। NIEPA के द्वारा प्रारंभिक शिक्षा पर स्कूल मैपिंग के महत्वपूर्ण प्रयत्न किए गए है। इसी को माध्यमिक स्तर पर विस्तृत किया जा सकता है। जो वास्तव में आवश्यक है, वह है प्रत्येक जिला तथा ब्लाक स्तर पर वर्तमान माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक स्कूलों की गणना की जाए वही सूचना नए स्कूल स्थापित करने तथा प्रारंभिक स्कूलों को अपग्रेड करने तथा विद्यमान माध्यमिक स्कूलों में कक्षाकक्ष तथा सुविधाओं का विस्तार करने के निर्णय को सुदृढ आधार प्रदान के लिए मानकों में परिवर्तन किया जाए। उदाहरण के लिए जैसे प्राथमिक स्कूल स्थापित करने का मानक है एक कि.मी. के अंदर तथा प्रारंभिक स्कूल स्थापित करने का दायरा 3 कि.मी. है और माध्यमिक स्कूल के लिए दूरी 5 कि.मी. निश्चित की गई है। यह मानक स्कूल जाने के लिए लगने वाले श्रम तथा समय को ध्यान में रखकर उस समय बनाए गए थे जब सड़कें तथा यातायात प्रक्रिया अत्यन्त अविकसित थी। ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों तथा परिवहन के साधनों के विकास के कारण स्कूल जाने के लिए श्रम तथा समय में कमी आई है। उदाहरण के लिए 1950 व 1960 के मध्यांश में जब गांव की सडकें टूटी हुई थी तो विद्यार्थी को कभी खेतों में से और कभी पानी में से स्कूल जाने के लिए 5 कि.मी. की दूरी को पैदल चलकर पूरा करने में लगभग 75 से 90 मिनट का समय लगाता था। आज उसी दूरी को साइकल पर लगभग 30 मिनट में तय किया जाता है। देश के लगभग सभी भागों में यह स्थिति है। कुछ पहाड़ी इलाकों व आदिवासी इलाकों में स्थिति इसके विपरीत हो सकती है। शहरी क्षेत्रों में विद्यार्थी गुणात्मक स्कूल के लिए 20 से 30 कि.मी. की दूरी तय करता है।

इसी के साथ-साथ महत्वपूर्ण है लड़कियों की शिक्षा पर ध्यान देना क्योंकि अभी भी हमारे समाज में कुछ रुढिवादिताएं तथा सामाजिक रुकावटें विद्यमान है। जो लड़कियों को लम्बी दूरी में स्कूल में जाने से तथा सहशिक्षा स्कूलों में अध्ययन करने से मना करती है। ऐसे क्षेत्रों में आवासीय स्कूलों की व्यवस्था की जानी चाहिए। ध्यान में रखने वाली महत्वपूर्ण बात यह है कि स्कूल स्थापित करने के लिए केवल दूरी को ही ध्यान में नहीं रखा जाना चाहिए अपितु प्रत्येक जिले को कुछ ऐसी मानदण्डों को निर्माण करना चाहिए जो माध्यमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने में सहायक हो। सारणी 20.1 यह दर्शाती है कि आने वाले समय में स्कूलों की आवश्यकता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है और इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए सरकार तथा जनता को मिलकर कुछ प्रयास करने होंगे।

कक्षाकक्ष के साथ-साथ उच्च माध्यमिक स्तर पर एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है पाठ्यक्रम में परिवर्तन करने की। साइंस कोर्स तथा व्यावसायिक कोर्स में वितरण इतना विस्तृत नहीं है जितना कि वाणिज्य तथा साहित्य विधाओं में है। यदि विज्ञान तथा व्यावसायिक शिक्षा के लिए सुविधाओं का वितरण संमान करता है तो इसके लिए प्रत्येक जिले तथा ब्लाक में कोर्स के लिए योजना बनानी होगी। कक्षाकक्ष तथा कोर्स के लिए एक ही योजना पूरे देश में उपयुक्त नहीं हो सकती। सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य को समक्ष रखकर राज्यों के परामर्श के साथ प्रत्येक राज्य तथा स्थानीय विशेष के लिए विशिष्ट मानक विकसित करने होंगे।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. 21वीं शताब्दी में माध्यमिक शिक्षा का दर्शन क्या होना चाहिए?
   What should be the philosophy of Secondary Education in 21st Century?
2. 20वीं शताब्दी में शिक्षा के किस स्तर पर अधिक बल दिया गया?
   In 20th century on which level of education more stress was given?
3. माध्यमिक स्तर पर नामांकन प्रलंबन के लिए किसे आधार वर्ष माना गया है?
   Which year was considered as the base year for the projection enrolement at secondary level?
4. माध्यमिक स्तर पर सार्वभौमिकरण के लिए कक्षाकक्ष की बढ़ती आवश्यकता की पूर्ति के लिए किन व्यूह- रचनाओं को अपनाया जा सकता है?
   What straegies can be adopted for fulfilling the increased demand of classrooms for universal education?
5. कोर्स मैपिंग क्या है?
   What is course mapping?

20.4 मुक्त अधिगम प्रणाली (Open Learning System)

माध्यमिक स्कूलिंग में शैक्षिक सुविधाओं में वृद्धि होने के बावजूद भी संबंधित आयु वर्ग के सभी व्यस्क तथा नवयुवक निश्चित दिन के घण्टों मे, औपचारिक स्कूलिंग का लाभ नहीं उठा पाते क्योंकि कुछ विद्यार्थियों का समय ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि में मजदूरी करने का होता है तथा शहरी क्षेत्रों में विशेष रुप से निम्न मध्यम वर्ग तथा गरीब परिवारों के बालक आय कमाने संबंधी विभिन्न क्रियाओं में संलग्न रहते है। ऐसे भावी अधिगमकर्ताओं के लिए वैकल्पिक शैक्षिक प्रावधानों का प्रारुप तैयार करना, निर्माण करना तथा स्थापित करना आवश्यक होगा।

यद्यपि भारत मे राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय की स्थापना की गई है परन्तु इसके साथ-साथ विभिन्न राज्यों ने मुक्त विद्यालयों की स्थापना की है जो औपचारिक विद्यालयों की

भांति गुणात्मक शिक्षा प्रदान कर रहे है। मुक्त विद्यालय प्रणाली का विस्तार करना आवश्यक है और इससे यह विश्वास दिलाना होगा कि प्रत्येक राज्य क्षेत्रीय भाषा के अंतर्गत मुक्त विद्यालय सुविधाएं प्रदान कर रहा है। वर्तमान मुक्त विद्यालय अधिकतर मुद्रित सामग्री तथा व्यक्तिगत कान्टेक्ट कार्यक्रम जिसे औपचारिक स्कूल के द्वारा चलाया जाता है, पर निर्भर करते है मुक्त विद्यालयों में पढने वाले अधिकतर विद्यार्थी इन कार्यक्रमों तथा निर्देशन सेवाओं का लाभ नहीं उठा पाते है वे मुख्य रुप से मुद्रित सामग्री पर निर्भर करते है जो प्राय: गुणवत्ता में भिन्न होती है। इसीलिए भविष्य में मुक्त विद्यालय। की गुणवत्ता में सुधार करना आवश्यक है और इसके लिए उपाय अपनाए जाने चाहिए और विशेष रुप से निर्देशन तथा ट्यूटोरियल सेवाओं की उपलब्धता सितम्बर 2004 में शिक्षा उपग्रह (Educational Satellite) प्रारंभ किया गया जिससे विद्यार्थियों को शिक्षा प्राप्त करने के अधिक अवसर मिले, राज्य के चैनलों कें अंतर्गत क्षेत्रीय भाषाओं में वीडियों कान्फ्रेंसिंग के माध्यम से स्कूल शिक्षा के लिए गुणात्मक कक्षाकक्ष सुविधाएं प्रदान की जा सकती है। निर्देशन तथा ट्यूटोरियल सेवाओं के पूरक के रुप में एजूसेट (EDUSAT) के द्वारा वीडियों कान्फ्रेसिंग का पूरा लाभ उठाने के लिए आवश्यक है कि ऐसे सभी माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्कूल जो अध्ययन केन्द्रों के रुप में कार्य करते है, उपग्रह अन्तःक्रिया तकनीकी (Satellite Interactive Technology) सुविधाओं से युक्त होने चाहिए। इसके साथ केबल नेटवर्क के द्वारा शिक्षा विद्यार्थियों के घर तक पहुंचाने का प्रबंध किया जाना चाहिए।

औपचारिक माध्यमिक स्कूलों की विकेन्द्रीकृत योजना के साथ-साथ इरा प्रक्रिया के लिए भी योजना का निर्माण करना अत्यन्त आवश्यक है। प्रत्येक राज्य में मुक्त विद्यालय प्रावधान के लिए योजना बनाना आवश्यक होगा। मुक्त विद्यालय व्यवस्था जब पूर्ण रुप से विकसित हो जाएगी तो इसके द्वारा माध्यमिक शिक्षा के कम से कम 15 प्रतिशत विद्यार्थियों की आवश्यकताओं की पूर्तिr की जानी चाहिए। जहां संभव हो कार्यकारी नवयुकों के लिए स्कूलों में दूसरी शिफ्ट का प्रबंध किया जाना चाहिए।

20.5 अध्यापक आवश्यकता (Teacher Requirement)

एक अध्यापक में कौन सा गुण है जो विद्यार्थियों के लिए सीखने एवं न सीखने में अतर प्रदर्शित करता है। क्या यह सत्य है कि अध्यापक बनते नहीं अपितु पैदा होते है? इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि लोग कुछ विशेष गुणों के साथ जन्म लेते है जो व्यावसायिक कौशल की प्राप्ति को आसान या कठिन बनाते है। भारत में प्राचीन समय से अध्यापक को शुरु का स्थान दिया जाता है। कहां भी गया है

गुरु ब्रहमा, गुरु विष्णु गुरु देवोमेहेश्राय

गुरु साक्षात् परम् ब्रहम, तस्मै भी गुरुवे नम:।

माध्यमिक शिक्षा का अध्यापक सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। यदि अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता को निर्धारित करता है, तो वह एक राष्ट्र की भविष्य में प्रगति का उतरदायी भी होता

है। भविष्य में अध्यापक की भूमिका बहु लवादी होगी। नवीन तकनीकी सभ्यता की व्यवस्था में, वैज्ञानिक प्रवृति, तार्किक दृष्टिकोण, नियन्त्रित स्वभाव तथा भौतिक वातावरण कुछ ऐसी प्रवृत्तियां है जो आने वाले समय में निश्चित है इस पर कुछ का ही अधिपात्य नहीं होगा। माध्यमिक शिक्षा के लिए मांग के प्रलंबन के आधार पर सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा के लिए अतिरिक्त अध्यापकों की आवश्यकता का प्रलंबन करना ही महत्वपूर्ण तथा आवश्यक कार्य होगा। कोर्स और विषय सामग्री के स्तरीकरण करने के फलस्वरुप माध्यमिक शिक्षा में विशेष रुप से विज्ञान, गणित तथा सामाजिक विज्ञान के विशेष विभाग में विशिष्ट व कुशल अध्यापकों की आवश्यकता है। इसके साथ-साथ यह भी सत्य है कि माध्यमिक स्तर पर कक्षाकक्ष तथा अध्यापक का अनुपात निश्चित नहीं किया गया है। सारणी 20.1 यह दर्शाती है कि भविष्य में माध्यमिक शिक्षा के विस्तार के फलस्वरुप प्रतिवर्ष अतिरिक्त अध्यापकों की आवश्यकता में वृद्धि हो रही है। 2003-04 से 2010-11 तक यह निंरतर बढ़ रही है परन्तु इसके पश्चात् 2011-12 में जैसे कक्षाकक्ष की संख्या में कमी आ रही है इसी प्रकार से अध्यापकों की आवश्यकता में भी कमी हो रही है। इसके पश्चात् निरंतर 2019-20 तक वृद्धि हो रही है। कक्षाकक्ष की संख्या का प्रलंबन 30:1 के विद्यार्थी शिक्षक के अनुपात पर आधारित है। क्योंकि 2001-02 में माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी शिक्षक अनुपात 34:1 था और यह अनुमान लगाया जा रहा है कि यह 30.:1 होना चाहिए।

सारणी 20.1 में अध्यापकों की आवश्यकता को दर्शाने का आधार है माध्यमिक स्तर पर विषय में पारंगत अध्यापक। इसीलिए यह अनुमान लगाया गया है कि माध्यमिक स्कूलों में प्रति अतिरिक्त कक्षाकक्ष के लिए 1:5 अध्यापक की आवश्यकता होगी। जब माध्यमिक शिक्षा के लिए विभिन्न विषयों में कुशल अध्यापकों की आवश्यकता होगी तो अध्यापकों की आवश्यकता का अनुमान लगाने के लिए अध्यापक विद्यार्थी अनुपात को एक कसौटी मानना उपयुक्त नहीं होगा। अध्यापकों की आवश्यकता विभिन्न स्कूलों में विषय निपुण की आवश्यकता पर आधारित होगी। अध्यापक विद्यार्थी अनुपात एवं अध्यापक कक्षाकक्ष अनुपात अध्यापकों की आवश्यकता को निश्चित करने का पूरक मापदण्ड हो सकता है। जिला तथा काक स्तर पर विकेन्द्रीकृत योजना के लिए, ब्लॉक स्तर अध्यापकों की आवश्यकता का निर्धारण किया जाना चाहिए तथा जिला स्तर पर उसका जोड किया जाना चाहिए। इस प्रकार यह प्रक्रिया जिला स्तर पर अध्यापकों के विकास को सुविधाजनक बनाएगी। भविष्य में अध्यापक में निम्नलिखित गुणों की अपेक्षा की जाती है।

- विषय में निपुणता
- सामाजिक कुशलता
- नई तकनीक का ज्ञान
- अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना
- मेहनती
- विभिन्न शिक्षण विधियों एवं कौशलों में निपुण

इस प्रकार यह आशा की जाती है कि भविष्य में अध्यापक माध्यमिक स्तर पर क्रांति लाएगा, न केवल आर्थिक सामाजिक कार्यो से प्रबंधन में परिवर्तन लाएगा, अपितु मानव में भी परिवर्तन लाएगा।

20.6 शैक्षिक व्यक्तियों का क्षमता निर्माण (Capacity Building of Educational Personnel)

सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा को केवल सार्वभौमिक स्थिरता तथा गुणवत्ता से प्राप्त किया जा सकता है। आठवीं कक्षा से नौंवी कक्षा में तथा नौंवी से दसवीं कक्षा में अवस्थान दर 90 प्रतिशत से भी अधिक है। नौवीं और दसवीं के बीच पढ़ाई छोडने वालों की संख्या 10 प्रतिशत से भी कम है। बोर्ड परीक्षा में फेल होने वालों की संख्या बहुत अधिक होती है। प्राय: यह 50 प्रतिशत से भी अधिक रहती है जबकि प्री-बोर्ड परीक्षा में भी विद्यार्थियों की छंटनी कर दी जाती है। इसके परिणामस्वरुप जो बच्चे 9वीं कक्षा में आते है उनकी सफलता की दर 42 प्रतिशत से भी कम रहती है। यदि हम माध्यमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण चाहते है तो इसे परिवर्तित करना होगा।

परिवर्तन की चाबी स्कूल की गुणवत्ता में निहित है। क्योंकि अध्यापक ही गुणात्मक स्कूलिंग का सबसे महत्वपूर्ण घटक होता है, इसलिए सेवा-पूर्व प्रशिक्षण, सेवाकालीन शिक्षा कार्यक्रमों तथा अन्य विभिन्न तकनीकों की सहायता से अध्यापकों की गुणवत्ता को निरंतर विकसित करने का प्रयत्न करना चाहिए। देश में माध्यमिक अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं के लिए प्रावधान में अत्यधिक क्षेत्रीय विभिन्नता पाई जाती है। भारत में बहुत से ऐसे क्षेत्र उदाहरण के लिए उतर पूर्वी क्षेत्र जहां अध्यापक प्रशिक्षण सुविधाएं पर्याप्त नहीं है जबकि इनकी तुलना में महाराष्ट्र कर्नाटक तथा ऐसे ही अन्य राज्य है जहां अधिक मात्रा मे निजी अध्यापक प्रशिक्षण संस्थान पाए जाते हैं। पिछले 2 वर्षा से हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र आदि ऐसे राज्य है जहां आवश्यकता से अधिक निजी अध्यापक प्रशिक्षण संस्थान खुल चुके है जो राज्य की आवश्यकता के अनुरुप नहीं है। इसलिए अध्यापकों की पूर्ति को निरन्तर बनाए रखने के लिए तथा उनकी गुणवत्ता में सुधार के लिए राज्य स्तर पर सावधानीपूर्वक योजना का निर्माण करना होगा। ऐसी राज्य विशेष योजना विभिन्न विषयों में निपुण अध्यापकों की आवश्यकता के अनुरुप भी होनी चाहिए। 21 वीं शताब्दी के लिए शिक्षा पर अर्न्तराष्ट्रीय आयोग ने यह संकेत भी दिया है कि काम-प्रशिक्षण-काम-प्रशिक्षण चक्र लम्बी अवधि सेवा-पूर्ति अध्यापक प्रशिक्षण से अधिक प्रभावी है।

अध्यापकों में गुणात्मक सुधार के लिए यद्यपि सेवाकालीन प्रशिक्षण पर बल दिया जाता है, परन्तु इस बात पर ध्यान देना भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है कि अध्यापक शिक्षा संस्थाओं द्वारा रुढिवादी सेवाकालीन प्रशिक्षण के अन्तर्गत वास्तव में उपयुक्त कौशलों के विकास में योगदान नहीं दिया जाता है। जिसके फलस्वरुप अध्यापकों की निर्देशन प्रक्रिया, अभिवृत्तियों तथा विद्यार्थी अधिगम में कोई सुधार नहीं होता है। रुढिवादी सेवाकालीन शिक्षा कार्यक्रम के अतिरिक्त, एक ऐसे यंत्र. का विकास करना भी आवश्यक होगा जिससे माध्यमिक स्कूल अध्यापक अपने अनुभवों को एक दूसरे से बांटने तथा एक दूसरे से सीखने के योग्य

बनेंगे। इससे एक अधिगम समुदाय व संस्कृति का विकास होगा। सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत बी0आर0सी0 (BRC) तथा सी0आर0सी0 (CRC) में इसमें सबन्धित अनुभवों से बहुत कुछ सीखने का प्रावधान है। अध्यापकों के स्तर को उंचा उठाने के लिए आवश्यक है कि ब्लाक स्तर पर सामूहिक रुप से प्रत्येक स्कूल में प्रत्येक अध्यापक के विकास के लिए एक रुपरेखा का निर्माण किया जाए जिससे एक समान विकासात्मक आवश्यकताओं वाले अध्यापकों को विशिष्ट केन्द्रित परीक्षण प्रदान किया जा सके। कुछ राज्य सरकारों ने नियमित व्यावसायिक रुप से योग्य पूरे वेतन सहित अध्यापकों के विकल्प के रुप में पैरा अध्यापकों की नियुक्ति की नीति को अपना लिया है। कुछ राज्यों में शिक्षण / अध्यापन को मरता हुआ क्षेत्र घोषित कर दिया है। यह शिक्षा प्रणाली पर दीर्घकालीन दुर्बल प्रभाव की लागत पर अल्प-अवधि उपाय है जो एक खतरनाक प्रवृत्ति है। कोई भी समाज अपने बच्चों को शिक्षित करते हुए अध्यापकों को गैर व्यावसायिक करके भविष्य निश्चित नहीं कर सकता।

अध्यापकों की गुणवता को सुधारने के लिए विभिन्न आयोगो ने यही सुझाव दिया है कि व्याक्सायिक रुप से शिक्षित अध्यापकों को पूरे वेतन तथा सुविधाओं के साथ नियुक्त किया जाना चाहिए। यदि कुल घरेलू उत्पाद का 6 प्रतिशत भाग शिक्षा के क्षेत्र पर खर्च किया जाए तो पूर्ण रुप से शिक्षित अध्यापकों को पूरे वेतन तथा सुविधाओं के साथ नियुक्त करना संभव हो पाएगा।

इसी आधार पर अध्यापकों पर लागत प्रलंबन की गणना की गई और केन्द्रीय विद्यालय संगठन में अपनाए जाने जले मानक को आधार बनाया गया। यदि अध्यापकों के वेतन व सुविधाओं में कोई कमी करके लागत को कम करने का प्रयत्न किया गया तो यह माना जाता है कि यह राष्ट्र के भविष्य के साथ खिलवाड़ होगा। स्कूल के मुखिया ही स्कूल के गुणातक प्रबन्धन की कुंजी होते है। ऐसी विचारधारा पिछले पांच दशकों से समूर्ण विश्व में आनुभाविक अनुसंधान का परिणाम है। किसी भी स्कूल को चलाना व उसका प्रबंधन करना एक विशेषज्ञ का कार्य है। यद्यपि इस कार्य में शिक्षा कौशल एवं अनुभव सहायक होते है परन्तु यह अध्यापक की क्रियाओं का यांत्रिक विस्तार नही है। स्कूलों के मुखिया को छः महीने की अवधि का स्कूल के प्रबंधन में व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिए जिसमें 3 महीने का प्रायोगिक अनुभव शामिल हो।

अध्यापको की भांति प्रत्येक तीन या पांच वर्ष के पश्चात् मुख्याध्यापक को भी स्कूल प्रबंधन में लघु अवधि प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिए। आने वाले वर्षा में निरीक्षण तथा पर्यवेक्षण दोनों अलग-अलग कार्य माने जाएंगे। शैक्षिक सुविधाओं, स्कूलो तथा अध्यापकों में विस्तार होंने के साथ साथ पर्यवेक्षकों में कोई वृद्धि नहीं हुई। कुछ निरीक्षक स्टाफ ही विभिन्न प्रकार के प्रशासकीय कार्य में लगा हुआ है। शैक्षिक पर्यवेक्षण सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा की मांग निरीक्षण एवं पर्यथेक्षण की एक सुविकसित प्रणाली है। निरीक्षण स्टाफ में बढ़ोतरी होनी चाहिए। पर्यवेक्षणों को निरीक्षण तथा पर्यवेक्षण में वैज्ञानिक ढंगों से व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाना अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. भविष्य में गुणात्मक सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा के लिए मुक्त अधिगम प्रणाली का क्या योगदान होगा?
   What contribution will be provided by open learning system for quality universal?
2. एजूसेट से क्या अभिप्राय है?
   What do you mean by EDUSAT?
3. भविष्य में माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए किस प्रकार के अध्यापक की आवश्यकता है?
   What type of teacher is needed in future for the development of secondary education?
4. 2001-02 में माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी - शिक्षक अनुपात क्या था?
   What was the pupils-teacher ratio at secondary level in 2001-02?
5. नौंवी और दसवीं कक्षा के बीच पढ़ाई छोडने वालों की दर कम होने का क्या कारण है?
   What is the cause of low dropout rate between 9th and 10th class?

20.7 वित्तीय नीति
(Financial policy)

सर्वशिक्षा अभियान की 100 प्रतिशत सफलता के आधार पर माध्यमिक स्तर की मांग की पूर्ति के लिए अतिरिक्त वित्त आवश्यकता का अनुमान कुछ लागत मानकों तथा मान्यताओं के आधार पर लगाया गया। अतिरिक्त वित्तीय आवश्यकता के अनुमान में कुछ महत्वपूर्ण घटकों को शामिल किया गया जैसे- अध्यापक लागत, अन्य आवर्तक लागत, निरीक्षण एवं पर्यवेक्षण , पूंजी लागत तथा गुणात्मक सुधार पर लागत।

सारणी-20.2

Estimation of Financial Requirement for Additional Enrolement from-2003-2004 to 2019-20 (Based on 100% success in SSA)

(Rs. In Millions)

Year	Exp. On salary	Other Recurring Exp.	Ins. Sup. Exp.	Capital Cap.	Total
2003-04	24734	6184	618	17923	49459

2004-05	40889	10222	1022	10472	52605
2005-06	59596	14899	1490	11336	87321
2006-07	81123	20281	2028	12272	115704
2007-08	105764	26441	2644	13284	148134
2008-09	133841	33460	3346	14381	148134
2009-10	165709	41427	4143	15568	185028
2010-11	201758	50439	5044	16853	226847
2011-12	230802	57700	5770	11999	274094
2012-13	262543	65636	6564	12654	306271
2013-14	297170	74292	7429	13345	347396
2014-15	334884	83721	8372	14073	392236
2015-16	375902	93976	9398	14842	441051
2016-17	420452	105113	10511	15653	494117
2017-18	468779	117195	11719	16508	551729
2018-19	521144	130286	13029	17410	614201
2019-20	577826	144456	14446	18362	681869

माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिए वित्तीय प्रलंबन जिसमें गुणात्मकता की लागत भी शामिल है कुल घरेलू उत्पादन का 2.33 प्रतिशत आवश्यक होगा। प्रारंभिक शिक्षा के ' का लगभग 3 प्रतिशत आवश्यक है। इस प्रकार प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिए कुल मिलाकर 5.33 प्रतिशत पर्याप्त होगा। कोठारी आयोग ने जो 6 प्रतिशत शिक्षा के लिए खर्च करने का सुझाव दिया था, यदि उसको लागू कर दिया जाए तो हम आने. वाले समय में स्कूल स्तर पर शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगे! प्रत्येक राज्य कों प्रत्येक जिले में अध्यापकों व कक्षाकक्षों की उपलब्धता का विश्वास दिलाना होगा और इसके पश्चात् पुस्तकालय, प्रयोगशाला, खेल सुविधाएं आदि की ओर ध्यान देना होगा। अगले 10 वर्षो में माध्यमिक स्कूलिंग के मानकों को प्राप्त करने का लक्ष्य बनाना होगा।

भारत में लगभग 25 प्रतिशत माध्यमिक विद्यालय ऐसे है जौ किसी प्रकार की सरकारी सहायता प्राप्त नहीं करते। परन्तु ऐसे निजी स्कूल केवल 8.72 प्रतिशत (छठे अखिल भारतीय सर्वेक्षण के अनुसार) बच्चों को ही शिक्षा प्रदान कर रहे है। इसकी तुलना में निजी सहायता प्राप्त स्कूलों में 46 प्रतिशत से भी अधिक बच्चें शिक्षा प्राप्त कर रहे है। स्कूल स्थापित करने का अधिकार भारतीय संविधान के द्वारा प्रदान किया गया है। परन्तु यह देखा गया है कि माध्यमिक शिक्षा के लिए सरकार छ प्रतिशत से भी अधिक विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान कर रही है। निजी स्कूलों में 10 प्रतिशत से भी कम विद्यार्थी समाज के क्रीमीलेयर से है। यद्यपि इन निजी संस्थानो की संख्या में तथा इनमें पढने वाले विद्यार्थियों की संख्या में

दिन प्रतिदिन वृद्धि हो रही है, परन्तु ये स्कूल उन बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ है जो माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त करने से पहले ही स्कूल छोड चुके हैं और उन्हें माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिए स्कूल में वापिस लाना है। इसलिए सरकार को उनकी शिक्षा का प्रबंधन करना चाहिए।

सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा के तीन प्रमुख सिद्धांत है-

1. सरकार को यह विश्वास दिलाना चाहिए कि वित्त की कमी के कारण किसी भी बालक को शिक्षा सुविधाओं से वंचित नहीं रखा जाएगा।
2. किसी भी विद्यार्थी का आर्थिक शोषण नहीं किया जाएगा, और
3. जैसा कि सुप्रीम कोर्ट ने भी घोषणा की है कि स्कूलों का प्रयोग व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए नहीं किया जाएगा।

हम सब जानते है कि शिक्षा को समवर्ती सूची में शामिल किया गया है और माध्यमिक शिक्षा के विकास का उतरदायित्व राज्य सरकारों का है। परन्तु माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण को राज्यों पर छोड़ना अधिक लाभकारी नहीं होगा। राज्य सरकारें केवल शिक्षा पर अपने शर्षिक बजट का औसतन 22 प्रतिशत खर्च कर चुकी है और माध्यमिक शिक्षा पर कुल खर्च का लगभग 92 प्रतिशत भाग केवल वेतन भत्तों पर खर्च होता है। राज्यों की वित्तीय परिस्थितियों को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि माध्यमिक शिक्षा के विस्तार तथा गुणवत्ता प्रसार के लिए उनके पास पर्याप्त धन नहीं होगा और इसी कारण सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा की वित्त व्यवस्था केन्द्र, राज्य और समुदाय का सामूहिक उतरदायित्व होना चाहिए। केन्द्र-राज्यों में वित्तीय भार को सर्वशिक्षा अभियान की प्रणाली के आधार पर 11 वीं योजना के अन्त तक 75:25 के अनुपात में बांटना होगा। विशेष वर्गो के राज्यों के लिए, जिन्हें संविधान के अनुच्छेद 6 में शामिल किया गया, केन्द्रीय सहायता 11 वीं योजना के अन्त तक 100 प्रतिशत होनी चाहिए और 12वीं योजना के अन्त तक 90:10 के अनुपात में होनी चाहिए।

20.8 माध्यमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण (Universalization of Secondary Education)

दवे के अनुसार माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण की आवश्यकता में तीन अन्त: सम्बन्धित कारक उतरदायी है-

1. ज्ञान, कौशलों तथा तकनीकी में निरन्तर प्रगति,
2. रोजगार, व्यावसायिक विकास, उद्यम और स्व-रोजगार प्राप्त करने के लिए उच्च स्तर के कौशलों तथा योग्यताओं की आवश्यकता, और
3. निरंतर सामान्य के साथ-साथ व्यावसायिक शिक्षा के लिए स्व-अनुदेशित अधिगम एवं स्व-अधिगम की उच्च स्तर की योग्यताओं से समूर्ण जीवन स्वयं को शिक्षित व युक्त करने की आवश्यकता।

माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के समर्थन में उपरोक्त कारक कुछ कारणों पर बल देते है जैसे ज्ञान का विस्फोट, नवीन तथा अच्छी व्यावसायिक कौशलों का विकास एवं स्व

रोजगार की आवश्यकता, स्वअधिगम एवं जीवन पर्यन्त शिक्षा की आवश्यकता। यह आशा की जाती है कि 21 वीं शताब्दी तकनीक तथा विकास का युग होगी। इस युग में जिस व्यक्ति के पास पर्याप्त शिक्षा नहीं होगी वह इस नवीन संसार में, जो वैज्ञानिक अविष्कारों तथा खोजों के उच्च स्तर से भरपूर होगा, स्वयं का समायोजन नहीं कर पाएगा। माध्यमिक शिक्षा उसे सीखना कैसे है यह सिखाएगी।

यदि हम अब तक के शिक्षा के सभी स्तरों पर नामांकन पर दृष्टि डाले तो यह ज्ञात होता है कि नामांकन में अत्यधिक वृद्धि तो हुई है परंतु अभी भी बच्चों की एक बहुत बड़ी संख्या स्कूल से बाहर है। जब तब हम इन बच्चों को शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत नहीं लाएंगे, तब तक हम सार्वभौमिक नामांकन के लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकते। यह भी सत्य है कि जब तक हम प्राथमिक स्तर पर सार्वभौमिक नामांकन प्राप्त नहीं कर लेते, तब तक सार्वभौमिक प्रारंभिक शिक्षा के लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो सकती। प्राथमिक नामांकन 6- 11 आयु वर्ग की जनसंख्या पर निर्भर करता है, परन्तु यही उच्च प्राथमिक स्तर पर नामांकन के लिए सत्य नहीं है। उच्च प्राथमिक नामांकन 11-14 आयु वर्ग की जनसंख्या का कार्य नहीं है अपितु यह प्राथमिक स्तर के पास विद्यार्थियों का कार्य है। केवल प्राथमिक पास बच्चों को ही उच्च प्राथमिक स्तर पर दाखिल किया जा सकता है। यह संभव है कि 11-14 आयु वर्ग के बड़ी संख्या में बालक शिक्षा प्रणाली से बाहर है और कुछ बच्चे पढाई छोड़ने वाले भी हो सकते है और उनमें से कुछ प्राथमिक कक्षाओं में भी हो सकते है। 13-14 आयु वर्ग का बालक जिसका कभी स्कूल में नामांकन नही किया गया या स्कूल छोड गया उसे उच्च प्राथमिक कक्षाओं में दाखिला नहीं दिया जा सकता और इसके लिए किस वैकल्पिक शिक्षा प्रणाली का प्रबंध किया जाना चाहिए। ऐसे बच्चों को औपचारिक या निरौपचारिक शिक्षा प्रणाली में लाए बिना प्रारंभिक स्तर पर सार्वभौमिक नामांकन के लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता। इस प्रकार उच्च प्राथमिक स्तर की शिक्षा का विस्तार निम्न प्राथमिक स्तर से पृथक रहकर संभव नहीं है।

यही माध्यमिक शिक्षा के लिए भी सत्य है, जिसे उच्च प्राथमिक स्तर के बिना विस्तृत नहीं किया जा सकता। 14-16 आयु वर्ग के सभी बच्चों को कक्षा नौंवी - दसवीं में शिक्षा प्रणाली में तब तक नहीं लाया जा सकता जब तक सार्वभौमिक प्रारंभिक शिक्षा के लक्ष्य की प्राप्ति संभव न हो। इस आयु वर्ग के बडी संख्या में बालक अब तक प्राथमिक या उच्च प्राथमिक कक्षाओं में या स्कूल के बाहर भी हो सकते है। अत: प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक स्तर पर पास विद्यार्थी, प्राथमिक से उच्च प्राथमिक पर स्थानान्तरित एवं उच्च प्राथमिक से माध्यमिक स्तर पर स्थानान्तरित विद्यार्थी ही उच्च प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर की शिक्षा के भविष्य विस्तार को निश्चित करेंगें।

भारत सरकार ने सितम्बर 2004 में केन्द्रीय परामर्श शिक्षा बोर्ड की समिति को माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिक विषय पर नियुक्त किया जिसके अध्यक्ष राजस्थान के शिक्षा मंत्री, भी घनश्याम तिवारी थे। अध्यक्ष के अतिरिक्त इसमें 9 अन्य सदस्य थे। कमेटी ने 2005 में अपने सुझाव दिए। इनका कार्य प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण की प्राप्ति के आधार पर माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिए एक रुपरेखा तैयार करना था। कमेटी का यह सुझाव

था कि निम्नलिखित चार निर्देशित सिद्धांत चार खंभों की तरह कार्य करेंगे जिन पर सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा के भवन का निर्माण किया जाना चाहिए।

माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के निर्देशित सिद्धांत

(Guiding Principles of Universalization of Secondary Education)

1. **सार्वभौमिक पहुंच (Universal Access) -** पहुंच से अभिप्राय है कि भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व आर्थिक शब्दों को एक ही संप्रत्यय में शामिल करना।

2. **समानता एवं सामाजिक न्याय (Equality and Social Justice)-** समानता एवं सामाजिक न्याय के छः पक्ष है जिनके लिए स्कूल प्रणाली को प्रयत्न करने चाहिए।

    1. लिंग
    2. आर्थिक असमानता
    3. सामाजिक (अज व अजा)
    4. सांस्कृतिक (धार्मिक तथा भाषायी विभिन्नता भी शामिल)
    5. अपंगता (शारीरिक एवं मानसिक दोनों)
    6. ग्रामीण-शहरी

इन सभी पक्षों को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम का निर्माण इस प्रकार किया जाए कि प्रत्येक बालक के स्वयं के अस्तित्व का निर्माण हो सके। ऐसा करना आवश्यक है क्योंकि इसी के आधार पर यह निश्चित हो पाएगा कि सभी बालक माध्यमिक शिक्षा पूरी करने के योग्य है।

3. **प्रासंगिक एवं विकास (Relevance and Development)** आज के समय में किसी भी स्तर की शिक्षा को प्रासंगिक नहीं माना जा सकता है जब तक वह बालक में निहित सम्पर्क क्षमता को बाहर निकालने में सहायक न हो, और समाज एवं इसके राजनैतिक, उत्पादक तथा सामाजिक-आर्थिक पक्षों के साथ बालक के विकास में संबंध स्थापित करने में भूमिका अदा न करे। शिक्षा निम्नलिखित पांच पक्षों में अपनी विकासात्मक भूमिका अदा कर सकती है।

    1. एक देश के लिए नागरिकता का निर्माण करना जो एक लोकतांत्रिक, सामाजिक तथा धर्म निरपेक्ष समाज बनने का प्रयत्न कर रहा है।
    2. ज्ञान एवं संप्रत्यय निर्माण के लिए अन्तः अनुशासित उपागम तथा इसका दैनिक जीवन में उपयोग एवं आलोचनात्मक चिन्तन तथा सृजनात्मकता आदि गुणों का विकास।
    3. बहुलवादी समाज में मूल्यों का विकास।
    4. जान एवं कौशलों को प्रयोग करने की योग्यता का विकास।
    5. अधिगमकर्ता की वैश्विक ज्ञान तथा चुनौतियों तक पहुंच।

4. **संरचनात्मक एवं पाठ्यचर्या पक्ष (Structural and Curricular Aspects)-** पाठ्यचर्या में ज्ञान की प्राप्ति, मूल्यों के निर्माण तथा कौशलों के विकास के लिए उत्पादक कार्यो को शामिल किया जाना चाहिए। व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण का एक राष्ट्रीय स्तरीय कार्यक्रम बनाया जाना चाहिए और इसे स्कूल से बाहर भी सम्बन्धित किया जाए।

20.9 भविष्य में माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए सुझाव (Suggestions for the Development of Secondary Education in Future)

यदि हम भविष्य में माध्यमिक शिक्षा को उन्नत व लोगों की पहुंच तक बनाना चाहते है तथा इसके सार्वभौमिकरण के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहते है तो इसके लिए निम्नलिखित सुझावों को अपनाया जाना आवश्यक है-

1. केन्द्रीय परामर्श शिक्षा बोर्ड की समिति के द्वारा दिए गए सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा के निर्देशित सिद्धांतों- सार्वभौमिक पहुंच, समानता एवं सामाजिक न्याय, प्रासंगिकता एवं विकास तथा संरचनात्मक एवं पाठ्यचर्चा सुझावों को अपनाया जाना चाहिए।
2. माध्यमिक शिक्षा में सुविधाओं के विस्तार के माध्यम से सभी बच्चों का नामांकन करना माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण में अर्थपूर्ण भूमिका अदा नहीं करेगा। इसे यदि हम प्रभावी बनाना चाहते है तो माध्यमिक शिक्षा के संप्रत्यय में ही परिवर्तन करने की आवश्यकता है। नवीन माध्यमिक शिक्षा बहुल बुद्धि के विकास के लिए व्यस्कों की शिक्षा होनी चाहिए। जिससे बालक की सम्पूर्ण क्षमता को बाहर निकाला जा सके। इसी के अनुसार पाठ्यक्रम को भी रुचि एवं योग्यता के आधार पर लचीला बनाना होगा, अधिगम के लिए निर्माणात्मक उपागम को अपनाना होगा तथा विद्यार्थियों के मूल्यांकन के लिए लचीले वैज्ञानिक ढंग का निर्माण करना होगा।
3. स्कूलिंग के लिए मानकों का निर्धारण करना चाहिए। समान राष्ट्रीय पैरामीटर के साथ साथ राज्य विशेष पैरामीटर के साथ प्रत्येक राज्य के लिए ऐसे मानकों का विकास किया जाना चाहिए।
4. 20वीं शताब्दी में सामाजिक जीवन में निरन्तर मूल्यों का हांस हो रहा है। यह हमारे स्कूलों में मूल्यों की शिक्षा की अवहेलना के परिणामस्वरुप हो रहा है। इसका दुष्प्रभाव प्रत्यक्ष रुप से रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार, पक्षपात, आदि के दबाव रुप में दिखाई देता है। इसलिए माध्यमिक शिक्षा में मूल केन्द्रित शिक्षा का प्रावधान रखा जाना चाहिए।
5. राष्ट्रीय स्तर पर अध्यापकों, विद्यार्थियों के नामांकन, कक्षाकक्षों तथा वित्त की प्रलंबता को सूचक माना जाना चाहिए। इसी प्रकार के प्रलंबन तथा अनुमान प्रत्येक राज्य के लिए अलग-'अलग प्रकार से किए जाने चाहिए।
6. प्रत्येक राज्य में सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा के लिए प्रस्तावित योजना का निर्माण करना चाहिए। व्यापक माध्यमिक शिक्षा की प्रस्तावित योजना के निर्माण के लिए अतिशीघ्र माध्यमिक शिक्षा प्रबंधन सूचना प्रणाली का विकास किया जाना चाहिए। इसके द्वारा विशेष रुप से लड़कियों, अनुसूचित जातियों /, अनुसूचित

कबीलों, अन्य पिछड़े वर्गो, अल्पसंख्यक एवं विकलांग बच्चों से सम्बन्धित आंकडे प्रदान करने का प्रयास किया जाना चाहिए।

7. सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा के लिए योजना निर्माण एवं क्रियान्वयन के लिए विकेन्द्रीयकृत स्तरीय योजना प्रमुख उपागम होनी चाहिए। ऐसी सूक्ष्म स्तरीय योजना के लिए लॉक को इकाई के रुप में लेना चाहिए।

8. सार्वभौमिक गुणात्मक माध्यमिक शिक्षा के लिए राज्यों के द्वारा पैरा अध्यापकों की प्रणाली को न अपनाकर पूर्ण रुप से शिक्षित व योग्य अध्यापकों को पूरे वेतन के साथ एवं सम्पूर्ण सुविधाओं के साथ नियुक्त करने पर विचार किया जाना चाहिए।

9. अध्यापक शिक्षा की प्रचलित प्रणाली में अत्याधिक सुधार व विस्तार की आवश्यकता है। यह माना जाता है कि आने वाले वर्षा में प्रांरभिक शिक्षा के विस्तार के फलस्वरुप व्यावसायिक रुप से शिक्षित अध्यापकों की मांग में वृद्धि होने वाली है। वर्तमान अध्यापक शिक्षा प्रणाली केवल ज्ञान पर आधारित है और अधिकतर अध्यापक शिक्षा संस्थाओं में संरचनात्मक सुविधाओं की कमी पाई जाती है। और शिक्षा प्रणाली के लक्ष्य के प्रति उनमें ' उतरदायित्व की भी कमी है। राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा के द्वारा ज्ञान तथा शिक्षण के प्रति निर्माणात्मक प्रक्रिया अपनाने का प्रस्ताव रखा गया है, जिसके अंतर्गत शिक्षण विधियों में अध्यापक को प्रशिक्षित करने के लिए अथक प्रयास करने होंगे, जिसके परिणामस्वरुप बालकों को पाठ्यक्रम के सभी पक्षों को समझने के लिए व्यक्तिगत अनुभव प्राप्त करने की सुविधा प्राप्त हो सके। नवीन राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रुपरेखा के क्रियान्वयन में सेवापूर्व अध्यापक शिक्षा को अधिक उन्नत बनाने के लिए आवश्यक है कि इसके पाठ्यक्रम मे सुधार किया जाए तथा वित्तीय निवेश की मात्रा को बढाया जाए। इसके साथ-साथ आवश्यक है कि सेवाकालीन अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए शैक्षिक रुप से समृद्ध क्रियाओं को बढ़ावा दिया जाए जिसकी देश के विभिन्न भागों में कमी पाई जाती है।

10. स्कूलों के मुखिया के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की जानी चाहिए जिसके लिए 6 महीने का डिप्लोमा कार्यक्रम प्रांरभ किया जाए जिसमें तीन महीने का अभ्यास तथा प्रायोगिक कार्य शामिल हो।

11. सार्वभौमिक प्रारंभिक माध्यमिक शिक्षा की लागत की पूर्ति के लिए वित्तीय आवश्यकता लगभग कुल घरेलू उत्पादन का 5.1 प्रतिशत होगी। इसलिए शिक्षा के लिए कुल घरेलू उत्पादक का 6 प्रतिशत खर्च किया जाना तथा आने वाले समय मे इसी अनुपात में इसमें बढ़ोतरी करना माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिए आवश्यक होगा।

12. स्कूल शिक्षा तथा अध्यापक शिक्षा संस्थाओं के व्यावसायीकरण पर शिक्षा की नीति के अन्तर्गत रोक लगानी चाहिए जिसके अनुसार शिक्षा संस्थाओं को चलाना राज्य एवं समाज का उतरदायित्व है। आज के समय में यह विशेष रुप से अत्यधिक

महत्वपूर्ण है। क्योंकि आज अत्यधिक निजी संस्थाएं और उनमे से कुछ जिन्हें विदेशों से निवेश के लिए धनप्राप्त हो रहा है, निरंतर स्थापित हो रही है। निजी संस्थाओं का भी, संवैधानिक संशोधन के संदर्भ में, जिसके अंतर्गत, प्रारंभिक शिक्षा को प्रत्येक बालक का मौलिक अधिकार बनाया गया है सामाजिक उतरदायित्व है। यही सब माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के बारे में भी कहा जा सकता है। किसी भी परिस्थिति में किसी को भी हमारे समाज का शोषण करने की अनुमति नहीं है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

(Self Evaluation Questions)

1. प्रारंभिक एवं माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिए कितने वित्त की आवश्यकता है?
   How much finance is needed for the universalization of Secondary as well as elementary education?
2. सार्वभौमिक माध्यमिक शिक्षा के प्रमुख सिद्धांतों का उल्लेख कीजिए।
   Describe the major principles of universal secondary education.
3. माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिए कौन-कौन से कारण उतरदायी है?
   What are the factors responsible for the universalization of secondary education?
4. माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के निर्देशित सिद्धांतों का वर्णन कीजिए।
   Explain the guiding principles of universalization of secondary education.
5. भविष्य में माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दीजिए।
   Give some recommendations for the development of secondary education.

20.10 सारांश

(Summary)

यह आशा की जाती है कि 21वी शताब्दी माध्यमिक शिक्षा की शताब्दी होगी। यह आवश्यक है कि भारत में सार्वभौमिक शिक्षा की सुविधाओं का जितना जल्दी संभव हो सके 16 से 17 वर्ष तक विस्तार किया जाना चाहिए। इस कार्य के लिए निरौपचारिक शिक्षा संस्थाओं को भी सुदृढ़ किया जाना चाहिए। हमारे देश में अभी तक माध्यमिक शिक्षा के लिए किसी पृथक दर्शन का विकास नही किया गया है। यदि इस अवस्था को अन्तिम या सक्रिय अवस्था माना जाए तो इसका अपना दर्शन होना आवश्यक है। इस दर्शन का सूत्र / आधार हो सकता है कि

विश्व के सभी नागरिकों का स्वयं का जीवन है तथा सभी का वैयक्तिक जीवन है और मानव जीवन के निर्माण के लिए शिक्षा का माध्यमिक स्तर उपयुक्त स्तर है।

माध्यमिक शिक्षा की गुणात्मकता में शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया से सम्बन्धित विभिन्न तत्व शामिल है। यह शिक्षा की गुणात्मकता का सुधार ही है जिसके द्वारा हम शिक्षा के विशिष्ट लक्ष्यों को प्राप्त कर सकते है। इसलिए माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने के लिए हर समय प्रयास किए जाने चाहिए। 1993 में माध्यमिक शिक्षा पर एक सम्मेलन हुआ जिसमें माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने के लिए सात चरणों का सुझाव दिया गया। इसके द्वारा इस स्तर पर सामान्य शिक्षण के साथ - साथ विशेष रुप से विद्यार्थियों की नैतिक व चारित्रिक शिक्षा पर बल देने का सुझाव दिया गया।

ज्ञान के विस्फोट, नवीन तथा अच्छे व्यावसायिक कौशलों के विकास के कारण एवं स्व-अधिगम तथा जीवन पर्यन्त शिक्षा के लिए माध्यमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण किया जाना आवश्यक है। इसके साथ साथ विद्यार्थियों में यह सीखने के लिए कि कैसे सीखना है कि योग्यता का विकास करने के लिए भी यह आवश्यक है। भविष्य में इसके लिए सामान्य स्कूल अवस्था को अपनाया जाना चाहिए। भविष्य में स्कूलिंग प्रणाली का केन्द्र स्वयं को बनाए रखना नहीं अपितु अपनी विशिष्टता को बनाए रखना होगा।

माध्यमिक शिक्षा पर दबाव को अभी से अनुभव किया जाने लगा है इसलिए यह बुद्धिमानी नहीं होगी कि हम 2010 का इंतजार करते रहे जब यह दबाव असहनीय हो जाएगा। माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए निवेश की मात्रा को जल्दी से जल्दी बढा देना चाहिए जिससे इसकी गुणवत्ता तथा विस्तार को बनाए रखा जा सके।

20.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Grambs J.D. etc.	Modern Methods in Secondary Education ,N. York William Solan, 1952
Mathur S.S.	Teacher and Secondary Education, Vinod Pustak Mandir ,Agra 1997
Mehta, Arun C.	Education for all in India Enrolement Projections: NIEPA and Vikas Publishing House, New Delhi 1998
MHRD	Sarva Shiksha Abhiyan: A People Movement for Education for All, Draft Guidelines, New Delhi, Govt, of India, 2000.
MHRD	Education in India (Vol. I and Vol. II) New Delhi, Govt. of India, 1995-96.
Tanner, Laujal, N.	Classroom Discipline for Effective Teaching and

Larning. Holt Rinehart and Winson, New York,1978.

Vyas, R.N. Ethical philosophy of Nuclear Age, Akshat Publication, Delhi, 1989

ISBN - 13/978-81-8496-048-8